और श्वेताम्बरियोंने उसे मोल ले लिया। इसी प्रकार अन्तरीक्ष पार्श्वनाथका मुकदमा भी बहुत कुछ श्वेताम्बरोंके पक्षमें फैसल हुआ। जब हम यहांसे और आगे किसी हर्षकी आशामें चढ़ते हैं तो फिर निराश होना पड़ता है। लज्जा एवं दुःखकी बात है खंडगिरीसे ३ जैन मूर्तियोंको पटना अजायबघरवालोंका उठा ले जाना। जो अभी हालमें जैन समाजके घोर आन्दोलन और सत्याग्रहकी आवाजसे बिहार सरकारने वापस लौटाई हैं। इसके बाद ही फिर जैन समाजको धार्मिक आघात सहना पड़ा। वह है कलकत्तेके कोल्हूटोला मंदिरका लूटा जाना, शास्त्रोंको फाड़ा जाना और मूर्तिको तोड़ा जाना एवं चुरा ले जाना। यदि यहीं पर इन धार्मिक आघातोंकी इति हो जाती तो भी अच्छा था परन्तु नहीं उधर बटेश्वरमें जिनेन्द्र देवकी मूर्तिका निकालना रोका गया और इधर आबूके मंदिरमें साहब लोग जूते पहिने घुस गये। इस प्रकार आघातों पर आघात सहते हुये समाज जर्जरित हो ही रही थी कि इतनेमें फिर शोलापुरसे समाचार आया कि दानवीर सेठ बालचंद रामचंद और सेठ फूलचंद रामचंदको विकराल कालने जैन समाजसे सदाके लिये छीन लिया। लिखते हुए दुःख होता है कि समाजके ये घाव पूरे भी नहीं थे कि युद्धज्वर, एन्फ्लुआने भी समाजके क्षत शरीरमें एकदमसे कई घाव कर दिये। ये घाव—जातिमत्रोधकके सम्पादक, सुलेखक और सुवक्ता बाबू दयाचंद्रजी गोयलीय, सेठ दामोदरदासजी मथुरा, पं० उमरावसिंहजी सुनपत, बाबू छेदीलालजी रईस बनारस, उपसभापति स्या० म० वि० काशी, बाबू छेदीलालजी अग्रवाला, कलकत्ता और पं० ब्रजलालजीके वियोगसे हुए हैं। इसी वर्ष जैन सिद्धांतों पर भी खूब हाथ साफ किये गये—अनेक जैनशास्त्रोंका खंडन हुआ है और कहा गया है कि ये सर्वज्ञ भाषित नहीं हैं। इस प्रकार जैन समाजको इस वर्ष अनेक दुःखप्रद घटनाओंका सामना करना पड़ा है। संतोष केवल यही हुआ है कि इस वर्ष इन्दौरके दानवीर रायबहादुर सेठ हुकमचंदजी 'सर' की पदवी से विभूषित किये गये हैं और दिल्लीमें महिला आश्रम, कारंजामें महावीर ऋषभ-ब्रह्मचर्याश्रम, और शिमलेमें जैन मन्दिरकी स्थापना हुई है। श्रीयुक्त पं० अर्जुनलालजी सेठीकी नजरबन्दीका दुःख इस वर्ष भी ज्योंका त्यों बना रहा।

हमें इस बातका भी खेद है कि अनेक विघ्न बाधाओंके कारण इस वर्ष दिगम्बरजैन नियमित प्रकार पाठकोंकी सेवामें नहीं पहुंच सका है। ग्राहकगण संतोष रखें इस वर्ष समय ही पर सेवामें पत्र भेजनेका पूर्ण ध्यान रखा जायगा।

* * *

शिखर सम्मेदका मामला।

चार वर्षसे युरोपमें जो युद्ध चल रहा था—जिसमें लाखों मनुष्योंकी प्राणाहुति दे दी गई और अरबों रुपया अग्नि और पानीमें झोंक दिया गया—वह भी शान्त हो गया। भारतवर्षमें जो हिन्दू मुसलमानोंका वैमनस्य शताब्दियोंसे

चला आ रहा था वे भी आज कन्धेसे कन्धे मिलाकर देशकी उन्नतिमें लग गये; परन्तु शोकके साथ लिखना पड़ता है कि दिगम्बरियों और श्वेताम्बरियोंका युद्ध-पारस्परिक वैमनस्य जो वीस वर्षसे भी अधिक समयसे चल रहा है अभी तक शान्त न हुआ। दोनों पक्षोंके कई नेता इसी युद्धमें वीरगतिको प्राप्त हो गये और अब तक लाखों रुपये सरकार और वकीलोंके जेवमें गये, पर परिणाम वही जो पहिले था। हम एक वार फिर दोनों पक्षोंके नेताओंसे निवेदन करते हैं कि यदि जैन धर्म और जैन समाजकी उन्नति अभीष्ट है तो किसी उपायसे इस धार्मिक युद्धको बन्द करो। अदालतके फैसले पर ही भरोसा रखनेसे यह युद्ध शान्त नहीं होनेका। इसके लिये सबसे उत्तम उपाय यही है कि दोनों पक्षवाले आगे बढ़कर हाथमें हाथ मिलायें और कहें कि हम दोनों परमपिता महावीर स्वामीके पुत्र हैं—भाई भाई हैं—हमारा और तुम्हारा लड़ाई झगड़ा कैसा।

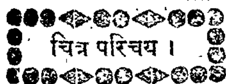
❀ ❀ ❀

विशेष अंक- हम पहिले ही निवेदन कर चुके हैं कि इस वर्ष विशेष अंक निकालनेका पूर्ण विचार नहीं था परन्तु पीछेसे हमारा विचार हो गया। समय बहुत हो चुका था इस कारण शीघ्रतासे काम हुआ—इसीसे हम इस अंकको सर्वांग सुन्दर नहीं बना सके हैं। तब भी इसमें विद्वानोंके लेख और कविताएं सुपाठ्य हैं। हिन्दी भाषाके लेखोंमें पं० उमरावसिंहजी न्यायतीर्थ, बाबू सूरजभानजी वकील, बाबू ज्योतिप्रसादजी आदिके लेख ध्यानसे पढ़ने योग्य हैं। मि० हरबर्टवारेन लन्डन और मि० चंपतराय जैन बैरिस्टर हरदोईके अंग्रेजी भाषाके लेख भी पठनीय हैं।

गत वर्षोंमें हम पाठकोंकी सेवामें अनेक तीर्थों, प्रसिद्ध स्थानों, संस्थाओं, धनवानों, विद्वानों, त्यागियों और मुनियोंके चित्रोंके सिवाय विदेशीय विद्वानोंके भी चित्र समर्पण कर चुके हैं। इस वर्ष भी अजमेर, रामटेक, सिंहपुरी, चन्द्रपुरीके भव्य दर्शनीय दि० जैन मन्दिरोंके चित्रोंके सिवाय स्वर्गवासी सेठ बालचन्द रामचन्द और फूलचन्द रामचन्दजी शोलापुरके चित्र उनकी कृतियोंके स्मरण करानेके लिये पुनः दिये गये हैं। हमें विश्वास है कि इस वर्ष हम जो कुछ लेकर पाठकोंकी सेवामें उपस्थित हो सकें हैं उसे अवश्य स्वीकार करेंगे जिससे हम भी अपने परिश्रमको सफल समझेंगे।

❀ ❀ ❀

इस वर्षका उपहार। दि० जैन समाजमें यही एक मात्र ऐसा पत्र है जो साल भर तक पत्र देनेके अतिरिक्त तीन चार रुपयेकी पुस्तकें भी ग्राहकोंको भेट स्वरूप देता है। इस वर्ष भी दि० जैनके ग्राहकोंको **स्व० दानवीर सेठ माणिकचन्दजीका ९०० पृष्ठका जीवनचरित्र** सुंदर पक्की जिल्दका १।) उपहारी मूल्य और डाकव्यय ।) लेकर उपहारमें दिया जायगा। जीवन चरित्र तैयार हो गया है शीघ्रही नय पत्रके मूल्य ३)- की वी० पी० से ग्राहकोंकी सेवामें भेजा जायगा।



चित्र परिचय।

स्वर्गवासी सेठ बालचन्द्रजी रामचन्द्रजी और सेठ फूलचन्द्रजी रामचन्द्रजी सोलापुरके चित्र हैं–इनके विषयमें विशेष वर्णन–'दो सेठोंकी शोचनीय मृत्यु' शीर्षक लेखसे ज्ञात होगा।

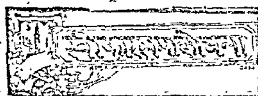
अजमेरका दि० जैन मन्दिर और नशियां–यह दोनों मन्दिर और नशियां (बाहरी मन्दिर) श्रीयुत रायबहादुर सेठ नेमीचन्द्रजी टीकमचन्द्रजीके निर्माण कराये हुये हैं। मन्दिरके भीतर काशी अयोध्या आदि तीर्थों और नगरोंकी रचना सोनें चांदीसे की गई है जिसमें लाखों रुपया व्यय हुआ है–सेठजी ऐसे प्रभावनाके कार्यको करके अपना नाम अमर अमर कर गये हैं। यह दोनों स्थान दर्शनीय हैं–अजमेर जानेवालोंको इन स्थानोंको देखना न भूलना चाहिये।

श्री अतिशय क्षेत्र सिंहपुरीका दि० जैन मन्दिर–यह श्री श्रेयांसनाथ महाराज ग्यारहवें तीर्थंकरका मन्दिर जन्मकल्याणकके समयका है। मंदिरजीमें एक पद्मासनस्थ प्रतिबिम्ब श्यामवर्ण श्रेयांसनाथ स्वामीकी ३ फुटके अनुमान ऊँची विराजमान है–प्रतिबिम्ब पर स्थापनाका संवत १९०० लिखा है। यह स्थान बनारससे छः मील दूर सारनाथ स्टेशनसे एक मीलपर सारनाथ ग्राममें है। यहां जैनी कोई नहीं है। ५०–६० मनुष्योंके रहने लायक एक धर्मशाला है। यहांका प्रबन्ध बनारसके जैनी भाइयोंकी ओरसे होता है।

श्री अतिशय क्षेत्र चन्द्रपुरी वा चन्द्रावतीका दि० जैन मन्दिर–यह मन्दिर बनारससे १४ मील और सारनाथ रेल्वे स्टेशनसे ५ मील गंगा नदीके किनारे है। चन्द्रपुरी–चन्द्रावती यह तीनसौ वर्ष पहिले रघुवंशी सरदार देवमनका देवस्थान था। उनका बनाया हुआ किला भी गंगाके किनारे है। यह मन्दिर श्री भगवान चन्द्रप्रभके जन्म कल्याणके समयका है। इसमें श्यामवर्ण पद्मासन दो फुटके अनुमान ऊंची प्रतिमा महाराज चन्द्रप्रभकी विराजमान है। छोटी बड़ी ६ प्रतिबिम्ब और हैं। यह मन्दिर स्वर्गवासी बाबू देवकुमारजी आराके पितामह बाबू प्रभूदयालजीका बनवाया है। इसका प्रबन्ध भी उन्हींकी ओरसे होता है। मंदिरके पास एक धर्मशाला है।

श्री अतिशय क्षेत्र रामटेकके दि० जैन मन्दिर–यह स्थान मध्य प्रदेशमें नागपुरसे २४ मील दूर है–जी० आई० पी० रेल्वेका यहां स्टेशन भी है। यहां कुल आठ मंदिर हैं। कई मंदिर प्राचीन हैं–सबसे पुराना मंदिर लाल पत्थरका बना है। इसमें श्री शान्तिनाथ स्वामीकी प्रतिमा चतुर्थ कालकी जो अति मनोज्ञ और १५ फुट ऊँची है। इन्हींमेंसे कई मंदिरोंका यह दृश्य है।

श्री अतिशय क्षेत्र रामटेकके मंदिरके–समवशरणका यह प्रतिबिम्ब है–यह ऐसी शिल्पकलाका उदाहरण है जो देखते ही बनता है।



चतुर्थ वार्षिक रिपोर्ट–जैन श्वेताम्बरी तेरापंथी सभा कलकत्ता। यह रिपोर्ट माघ शुक्ल सं० १९७२ से चैत्र शुक्ल १९७५ तककी है। विवरणके पश्चात सभाश्रित पुस्तकालयका परिचय है। इसके बाद उक्त समयके आय व्ययका आंकड़ा है। आय ८४१२।=॥ है और खर्च ५३४०|||=)||| हुआ है। सभामें पूंजी ६०७७॥)-है। सभा द्वारा कोई आदर्श कार्य हो यह हमारी इच्छा है। रिपोर्ट केशरीचंद कोठारी ११९ केनिंगस्ट्रीट कलकत्ताको लिखनेसे मिल सकती है।

जैन समाचार–श्री जैन सिद्धान्त भुवन बम्बईका यह मुख पत्र है। इसी वर्षसे निकलना प्रारम्भ हुआ है। आसोज मासका दूसरा अंक हमारे पास समालोचनार्थ आया है। इसमें ४ पेज हैं। पत्रके आधे भागमें भुवनके उद्देश्य और सूचीपत्र है। शेषमें तीन लेख हैं। जैन समाचार एक भी नहीं है। वार्षिक मूल्य सर्व साधारणसे १) रुपया, भुवनके सभासदोंको मुफ्त दिया जाता है। इसके लिये मैनेजर श्री जैन सिद्धान्त भुवन बम्बई नं० ४ से पत्रव्यवहार करना चाहिये।

द्वारिकादास ग्रन्थमालाका छठा और दसवां पुष्प। दोनोंका नाम भजनाम्रत है। ६ठे पुष्पके रचयिता बाबू फूलचन्द्र जैन फिरोजाबाद हैं और 'प्रकाशक' श्रीमती वसुधादेवी जैन हैं–मूल्य -)॥ है। १० वें पुष्पकी 'संग्रहकर्त्ता' स्व० विदुषीरत्न श्रीमती वसुधादेवी जैन हैं और प्रकाशक ६ठे पुष्पके रचयिता हैं–मूल्य =)॥ है। दोनों पुष्पोंमें गजल रसिया आदि छन्दोंमें स्त्री और पुरुषोंके गाने लायक उपदेशी भजन हैं। ६ठा पुष्प बी. ए. सी. डी. जैन एण्ड कम्पनी और १० वां पुष्प मैनेजर आनन्द पुस्तकालय शिकोहाबाद (यू० पी०) से मिलता है।

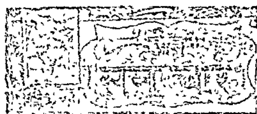
जैनधर्मके विषयमें सम्मतियां प्रथम भाग–इस पुस्तकमें जैन धर्मके विषयमें अजैन विद्वानोंकी सम्मतियोंका संग्रह है–जिसे श्रीयुत मास्टर पं० विहारीलालजी बी० ए० अमरोहाने संग्रह किया है। यह पुस्तक सर्व साधारणमें प्रचार करने योग्य है जिससे जैन धर्मके विषयमें जो सम्भ्रान्त विचार फैल रहे हैं वह दूर हों। पुस्तकका मूल्य)॥ सैकड़ा ३) है। अजैन विद्वानोंको विना मूल्य। मंत्री जैन धर्म संरक्षिणी सभा अमरोहाको लिखनेसे प्राप्त कीजिये।

श्री सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र–४२ पृष्ठकी पुस्तक है। इसमें श्वेताम्बर शास्त्रानुसार सामायिक और प्रतिक्रमण सूत्रका विधि सहित Mr L. C. Ranka ने वर्णन किया है। मूल्य एक प्रतिका =) सैकड़ा १५) **श्री आनुपूर्वी या नित्यस्मरण**–इसमें नित्यस्मरण किसका और किस प्रकार करना चाहिये इसका वर्णन है। मूल्य एक प्रतिका)॥ १०० प्रति ४।) इन दोनों पुस्तकोंके प्रकाशक गीरतनमल कोठारी और प्रचारक मंत्री श्री आत्मशोधक जैन पुस्तक मंडल अजमेर हैं।

कच्छी जैनमित्र—का विशेष अंक। इसके मुखपृष्ठ पर म० गांधीकी कई अवस्थाओंका चित्र बड़ा ही मनोहर और आकर्षक है जिससे महात्मा गांधीके सारे जीवनचरित्रका परिज्ञान हो जाता है। इसमें अनेक लेख, कविता और गल्पें हैं जो अच्छे लेखकोंकी लेखनी द्वारा लिखी गई हैं। हम सम्पादक और प्रकाशकके उत्साहकी सराहना करते हुए गुजराती जाननेवाले ग्राहकोंसे कहेंगे कि इसके ग्राहक अवश्य बनें। मेनेजर 'कच्छी जैनमित्र' काथाबाजार बम्बईको लिखनेसे मिलता है। वार्षिक मूल्य ४) है।

जैनलोकांचा इतिहास अथवा प्रथमानुयोग शास्त्र। यह पुस्तक मराठीमें श्री चन्द्रसागर ग्रन्थमालाका द्वितीय पुष्प है। लेखक हैं अनंततनय और प्रकाशक ग्रन्थमालाके सेक्रेटरी भैरप्पा पद्मप्पा पाटील होगूर (बेलगांव)। पुस्तकमें, चौबीस तीर्थंकरों, १२ चक्रवर्ती आदि त्रेशठ शलाका पुरुषोंका संक्षेपमें वर्णन है फिर वीर निर्वाणके ७०० वर्ष बाद तक केवली, श्रुत केवली और ग्यारह अंग, दश पूर्वके पाठी जो महात्मा हो गये उनके नाम निर्देश हैं, फिर वीर निर्वाण सं. २०.से १८०० वर्ष तक जो आचार्य और कवि हो गये उनके जीवन काल और नाम दिये हैं तथा उनका संक्षेपमें वर्णन भी दिया है। उनके बाद कर्णाटक जैन कवियोंका वर्णन देकर जैन राजाओंका वर्णन है फिर, जैन ग्रन्थों, तीर्थों, पर्वों और अजैन विद्वानोंकी जैन धर्मके विषयमें सम्मतियां देकर पुस्तक समाप्त की गई है। पुस्तकका कागज, छपाई आदि उत्तम है। मूल्य १२ आने। प्रकाशकसे प्राप्य।

श्री ओसवाल जैन संस्थाएं अजमेरकी रिपोर्ट है। इसमें ता० २७ अप्रेल सन् १९से ३० जून १८ तकका हिसाब और दातारोंकी नामावली है। अजमेरमें ओसवाल जैन स्कूल, छात्रावास (जो आजकल बंद है) और कन्याशाला यह तीन संस्थाएं हैं परन्तु कागज और छपाईकी मंहगाईके कारण केवल स्कूलका ही व्योरा दिया जा सका है। इतने समयमें करीब ८०००) का खर्च हुआ और आमदनी भी ९०००)से अधिक ही हुई है। ओसवाल भाइयोंको इन संस्थाओंकी सहायता करना और इनसे लाभ उठाना चाहिए।



मन्दिर निर्माण—शिमले जैसे महत्वके स्थानमें श्री जिनेन्द्रदेवके मंदिरकी स्थापना हो गई।

अनाथाश्रम—देहलीके भारतवर्षीय जैन अनाथाश्रममें उन बालकोंके पालन पोषणका प्रबन्ध किया गया है जिनका कोई रक्षान्वेषण करनेवाला न हो। जैन विधवा स्त्रियों और अपाहिज स्त्री पुरुषोंको भी मासिक वृत्ति आश्रमकी ओर से दी जाती है। पत्रव्यवहार बा० महावीरप्रसाद जैन मेनेजर आश्रमसे करना चाहिये।

सेठीजीके लिये कमीशन—श्रीयुत पं० अर्जुनलाल सेठी बी० ए० जो कई वर्षोंसे वेल्लोरके किलेमें नजरबंद हैं उनके मुकदमेकी जांचके लिये भारत सरकारने एक कमीशन

बैठाया है। बाबू अजितप्रसादजी वकील लखनऊने कमीशनके पास एक प्रार्थना पत्र भेजा है आशा है सेठीजी अब शीघ्र बंधनमुक्त होंगे क्योंकि वे निर्दोष हैं।

ब्रह्मचर्याश्रम-कारंजा (आकोला)में श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रमकी स्थापना हुई है। बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त अविवाहित नवयुवक दुधनी (शोलापुर) निवासी देवचंद सूरचंदजीने इस आश्रमके लिये जीवन अर्पण कर दिया है। शीघ्र ही इसके लिये एक लाखका ध्रुवफंड किया जायगा। धर्मशिक्षा देनेके लिये श्रीमान पं० वंशीधरजी शास्त्री नियत हैं।

सूचना-श्री ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रमकी प्रबन्ध कारिणी कमेटीकी बैठक पहाड़ी पर दिहलीमें ता० ३१ दिसम्बर और १ जनवरी सन् १९को होगी। जिसमें स्थान, उद्देश्य और पठनक्रम तथा कार्यकर्त्ताओंकी नियुक्ति पर विचार होगा।

मिलगई-खण्डगिरीसे जो तीन जैनमूर्त्तियां पटनाके अजायबघरवाले ले आये थे वह ता० ११ नवम्बरको वापस मिलगई।

शोकजनक मृत्युएं- थोड़े ही दिनमें जैनसमाजकी गोदमें कई सज्जनोंको निर्दयी कालने छीन लिया। उनमेंसे सेठ दामोदरदासजी मथुरा, ला० प्रभूदयालजी, बाबू छेदीलालजी रईस बनारस उपसभापति श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशी, जाति प्रबोधकके संपादक श्रीयुत बाबू दयाचंदजी गोयलीय बी० ए०, पं० उमरावसिंहजी गुजरान, पं० प्रभुलालजी सिद्धान्तशास्त्री, बा० छेदीलालजी अग्रवाल कलकत्ताका स्वर्गवास होनेसे जैनसमाजकी बहुत क्षति हुई। हम उक्त लोकान्तरित आत्माओंके लिये हृदयसे शोक प्रकाश करते हैं और उनके कुटुंबियोंसे समवेदना प्रगट करते हैं तथा उनकी आत्माओंको शांति मिले एतदर्थ इष्ट देवसे प्रार्थी हैं।

रथ यात्रा-श्री कुलभूषण देशभूषणके *निर्वाण स्थान कुंथलगिरीमें मि० मार्गशीर्ष सु०* १९ को रथोत्सव और सेतवाल जैन सभा होगी।

दानवीर दो सेठोंकी शोचनीय मृत्यु।

हमको लिखते हुए अत्यंत दुःख होता है कि सोलापुरके सुप्रसिद्ध दानवीर व्यापारी गांधी हरीभाई देवकरणजी नामकी फॉरमके मालिक व भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्थाके परम संस्थापक व संरक्षक दानवीर सेठ वालचंदजी रामचंदजी गांधीका गत कार्तिक वदि ८ रविवारके दिन मारात्मक इन्फुलयंजा ज्वरसे स्वर्गवास हो गया। इनके छोटे भ्राता सेठ फूलचंद रामचंदजी गांधीका ७ दिन पहिले कार्तिक वदि २ सोमवारको स्वर्गवास हो गया। बड़े २ प्रसिद्ध वैद्य डाक्टरोंसे इलाज कराया परन्तु निर्दयी विकराल कालने जैन समाज और इनके लोगोंपर कुछ भी दया नहीं करके अकालमें ही इन दोनों महानुभावोंके आश्रयसे सबको पृथक् कर दिया। बड़े सेठ वालचंदजी अत्यंत शांत प्रकृतिके होकर बड़े ही हिम्मतवान महात्मा थे। निराश्रय गरीबोंपर बड़े ही दयालु थे, उन पर बड़ा प्रेम प्रगट करते थे। धर्मके विषयमें बड़े ही अनुरागी व अभिन

भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्थाके

परमसंस्थापक और संरक्षक—



दानवीर स्वर्गीय शेठ वालचंद रामचंदजी गांधी, सोलापुर।

जन्म संवत् १९२१. फाल्गुन सुदी ८.

मृत्यु संवत् १९७४। आश्विन वदी ८ रविवार.





दानवीर स्वर्गीय सेठ फूलचंद रामचंदजी गांधी, सोलापुर।

जन्म सं० १९२७. चैत्र वदी ८।

मृत्यु सं० १९७४. आश्विन वदी २ सोमवार।

रखनेवाले थे इन सब गुणोंके होने हुये बड़े ही पुण्यशाली धनाढ्य होने पर भी इनके घरवाले सब ही को गर्व क्या है सो नहीं जानते। सब ही अत्यंत निरभिमानी थे। गरीबसे लेकर धनाढ्य श्रीमंतों तक सबके साथ एकसा सरल वर्त्ताव था। इसी कारण सबकी इनके घरानेपर पूज्यबुद्धि थी। बालचंद सेठकी मृत्यु होने ही सारे शोलापुर शहरमें बिजलीकी तरह शोकदुःख फैल गया। सबका सब बाजार एकदम बंद होगया और अंतके समय हजारों मनुष्य इनके मकानपर आये और इनकी रथीके साथ हजारों लोग शोकसंतप्त चेहरा लिये इनकी दग्ध क्रियामें सामिल हुये। शहरका ऐसा कोई भी घर वा शिक्षित अशिक्षित, धनाढ्य गरीब, हाकिम, वकील मुखत्यार नहीं था जो इनकी रथीके साथ न हो। जो लोग मिलके मालिक थे वे बीमार थे। उन्होंने अपना २ प्रतिनिधि भेजा था। जिनमें सुशिक्षित जनता ही बहुत थी। इन्ही सब बातों परसे देखनेमें आया कि इनके घरानेपर सब ही की पूज्य-बुद्धि थी। इनके लघु भ्राता फूलचंदजी सेठ भी बड़े आनंदी पुरुष और दयालु थे। इन दोनों सद्गुणी भ्राताओंके वियोगसे इनके घराने पर दुःखका बड़ा भारी पहाड़ ही गिर गया परन्तु आयु कर्मके अंत होनेपर किसीका भी जोर नहीं चलता। लाचार इनके दोनों पुत्रों व इनके छोटे भ्राता (जो फूलचंदजीसे बड़े हैं) को इस दुःखको धैर्यके साथ सहन करना ही चाहिये। आज समस्त शोलापुर व समस्त जैन समाजको इनके दुःखमें परम सहानुभूति है।

इस घरानेके मूल पुरुष ईडर जिलेके जादर नामक ग्रामके रहनेवाले थे। इनके मूल पुरुष सेठ हरिचंद्र मूलचंदजी विक्रम संवत् १८४९ में पंढरपुर तालुकाके अंतर्गत तारापुर गांवमें आये थे और प्रथम ही पंढरपुर शहरमें कारबार किया। तत्पश्चात् थोड़ा सा द्रव्य उपार्जन किये बाद संवत् १८६० में शोलापुर नगरमें गांधी हरिभाई देवकरणके नामका फारम खोला और वि० संवत् १८६४ में मूलचंद नानचंद नामका पूनामें फारम खोला था जो अबतक विद्यमान है। संवत् १८७० में बहुतसा द्रव्य लगाकर पूनेकी वेताल पैठमें चंद्रप्रभ भगवानका एक मंदिर बनवाया। तत्पश्चात् सं० १९०९ में हजारों रुपये खर्च करके शुक्रवार पैठ शोलापुर में आदिनाथ महाराजका एक सुंदर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई। इसके सिवाय इस घराने-वालोंने तथा सेठ हेमचंद दलजीने मांगीतुंगीजीपर १ उत्तम मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई। तत्पश्चात् संवत १९३२ में कुंथलगिरी तीर्थपर व संवत १९३४ में सम्मेद शिखरजी तीर्थपर मंदिर बनवा कर प्रतिष्ठा कराई। तत्पश्चात् सं० १९९१ में सेठ मोतीचंद परसचंदजी व इस घरानेने काठियावाड़ पालीताना तीर्थपर एक सुंदर मंदिर बनवाकर प्रतिष्ठा कराई। इसी प्रकार अनेक जगहकी दानशाला व पाठशाला ओंमें इनकी तरफसे सहायता मिलती है।

कलकत्ते शहरमें जो भारतीय जैनसिद्धांत प्रकाशिनी संस्था अनेक प्राचीन ग्रंथोंका जीर्णोद्धार करके प्रचार कर रही है उसको ५०००) देकर हरीभाई देवकरण जैन ग्रंथमाला प्रारंभ

कराई और १० हजार देकर प्रसिद्ध महान ग्रंथ गोम्मटसारजीका संस्कृत भाषाटीका सहित जीर्णोद्धार करा रहे हैं इसके सिवाय एक और भी महान कार्यके लिये प्राइवेट इच्छा प्रगट की हुई है वह कालांतरमें सबके जाननेमें आवेगी। इसके पश्चात् स्वर्गीय न्यायवाचस्पति पंडित गोपालदासजी व पं० धन्नालालजी वगैरह डेप्युटेशन लेकर शोलापुर गये थे तो ३८०००) हजार रुपया मोरेनाके जैनसिद्धांत विद्यालयमें प्रदान करके अपनी दानवीरता प्रगट की। तथा पूनेके पास हिंगणे बुद्रकमें प्रोफेसर कर्वेका चलाया हुआ अनाथबालिकाश्रम है उसमें अपनी मातुश्री मेनाबाईके स्मरणार्थ 'मेनाबाई श्राविकाश्रम' नामक संस्थाकी बिल्डिंगके लिये ४०००) रुपये दिये और दश दश रुपयेकी १० स्कालरशिप जैन भगिनियोंको देना स्वीकार किया था। इसके सिवाय शोलापुरके हाईस्कूलमें सर्व साधारण विद्यार्थियोंको पढ़नेका स्थान न मिलनेसे एक और भी हाईस्कूलकी आवश्यकता प्रतीत होनेपर ६७०००) हजार रुपये प्रदान करके हाल ही में हरीभाई देवकरण हाईस्कूल स्थापित किया है। इसके सिवाय और भी अनेक संस्थाओंमें बराबर सहायता देते रहे हैं। इनके दातृत्व वीरतामें जैनसमाज बहुत ही ऋणी है यह बात प्रसिद्ध है। इस घरानेके स्त्री पुरुषोंने धर्म कार्योंमें बहुत द्रव्य लगाया है। ऐसे घरानेके एक साथ दो दानी पुरुषोंके पृथक् होनेसे जैन समाजकी बड़ी भारी हानि होनेके सिवाय शोलापुर शहरकी बड़ी भारी हानि हुई है।

उक्त स्वर्गीय सेठ वालचंदजीका जन्म संवत् १९११ में शोलापुरमें हुआ था। मुंबई दिगंबर जैन प्रांतिक सभाके सभापतिका मान मिला था। तथा इनकी सर्व प्रकारसे योग्यता जानकर सरकारकी तरफसे आनरेरी मजिस्ट्रेटके अधिकार भी देनेमें आये थे परन्तु शरीरकी अस्वस्थताके कारणसे इस पदको त्याग दिया था। सेठ फूलचंद भाईका जन्म संवत् १९२७ में शोलापुरमें हुआ था। ये होशियार सात्विक प्रकृतिके आनंदी पुरुष थे। हमेशा नैतिक व धार्मिक व्यवसायमें मग्न रहते थे। इस कारण इन्हें अनेक महाशय राजा फूलचंद कहा करते थे। ये गायन विद्याके परम भक्त होकर बड़े मार्मिक थे। मृत्यु समयमें भी धर्मार्थ बड़े सेठने ११०००) हजार रुपये और छोटे सेठने ८०००) रुपये देना किये हैं सो किस धर्म कार्यमें किये हैं सो अभी खुलासा प्रगट नहीं हुआ है।

इस घरानेके अनेक जगह कारबार चलते हैं। जिनमेंसे वालचंद उगरचंद नामके प्रसिद्ध फॉर्मने ईस्वी सन् १९१२ में रूईकी खरीदका बड़ा भारी सट्टा किया था ऐसा सट्टा हिंदुस्थानमें आज तक किसी व्यापारीने नहीं किया।

उपर्युक्त दोनों सेठोंके परलोकवाससे सबको बड़ा भारी दुःख हो रहा है। तथापि इस कारोबारके मालिक वर्तमान सेठ हीराचंद रामचंदजी गांधी भी बड़े प्रसिद्ध व्यापारी हैं। इनकी प्रकृति भी दातृत्वगुणसे भूषित है। गरीब लोगोंपर इनकी कितनी दया है सो गत वर्तमान महंगाईमें दिखाई हुई मनकी उदारता व दान

धर्म परसे दिखती है। गरीबोंके कष्ट दूर करनेके लिये आपने स्वयं प्रत्येक घर पर जा जाकर कपड़े धान्य वगैरह दिये हैं। इसी कारण सबको अपने भ्राताओंकी स्मृति बराबर बनी रहेगी इसमें कोई शक नहीं। शेषमें हम उक्त श्रेष्ठिवर्य हीराचंदजी व उनके भ्रातृपुत्र वगैरहकी दीर्घायु व धर्म कार्यमें दान देनेकी वीरताकी वान्छा करते हुये इस शोकसंवादको पूरा करते हैं।

संपादक।



"नूतन वर्षाभिनन्दन"

स्वागत नूतन वर्ष तुम्हें है स्वागत आओ,
आओ पावन हृदय शुभग अभ्यागत आओ।
गत-गौरव-स्मृति स्वाभिमानके केन्द्र अब्दवर!
उच्च गौरवादित्य-स्मृति! सत् भारत! आओ॥१
गौरवास्पद घटनाएं तुम इस भारतकी,
अपने वक्षस्थलमें धरे हुए हो गतकी।
तुम प्रातस्मरणीय 'वीर' की याद दिलाते,
महिमा और दिखाते भारतीय-यौवतकी॥२
कल्याणास्पद! क्षेमङ्कर! शुभधाम! निहारो-
निज प्रिय भारत-दशा पतित जो हुई विचारो।
जाति समाजिक-दशा-पतन कितना गहरा है?
नव जीवन-सञ्चार करो फिर हमें उबारो॥३
निष्ठा, साहस, सत्य, स्नेहकी झलक नहीं है,
जीवनका साफल्य नहीं अब प्राप्य कहीं है।
ऐक्य-सलिल-कण जहां बरसते रहे साम्यसे,
द्वेषानल प्रज्वलित हुई चहुं ओर वही है॥४
पहिले जैन-विकास आपने होगा देखा,
सत्य-तत्व सिद्धान्त-स्नेहकों होगा पेखा।
फेर पतन भी दृष्टि आपके आया होगा,
और हमारी लखो भाग्यकी अब तुम रेखा॥५
भिन्न भिन्न मत पन्थ और समुदाय चलाए,
बीज द्वेषका बो फल फूट वैर उपजाए।
तिस पीछे यवनोंसे मति गति भ्रष्ट हुए हम,
कर्म धर्म कुल लाज खो, न कुछ भी शरमाए॥६
अहो! कहें क्या? सभी बात तुम स्वयं जानते,
किन्तु न तब भी दुख रोए बिन हृदय मानते।
अतः मान्य! कुछ हमें और भी कह लेने दो,
क्षमा करो! हम निज दुखड़ा रो तुम्हें सानते॥७
दशा बिगड़ने लगी अब्दवर! फेर हमारी,
चहुं दिशि छाने लगी अविद्याकी अंधियारी।
धर्म चिह्न फिर भ्रष्ट कर दिए गए हमारे,
भारत भू होगई यवनपति अधिकृत सारी॥८
पहिले क्षत्रिय लड़े कीर्ति अति जिससे पाई,
पर पीछे सब त्याग मान मर्य्याद बड़ाई।
अकबर आदि यवन-सम्राटोंकी सेवा की,
कुल-महिमा, गरिमा, सुकीर्ति निज सभी गंवाई॥९
तब भी पर सत् भारतीय महिमाके आकर,
क्षात्र-वंश-अवतंश, वीर, गुण-गण पति नागर।
वीर वंश-मर्य्यादा-रक्षक थे 'प्रताप' से,
जो थे क्षत्रिय-निशा हेतु उद्दीप्त क्षपाकर॥१०
पीछेसे फिर देखा होगा पतन ही पतन,
जलते तुम भी रहे न होगे क्या मन ही मन।
जब स्वातन्त्र्य-विचार हृदयमें जाता होगा,
विगत हुआ जब होगा भारत-मा-जीवन धन॥११
भारतवासी दास बने होवेंगे हा! फिर,
सब स्वातन्त्र्य विचार गया होगा नीचा गिर।
तभी स्वावलम्बन, उत्साह गया सब होगा,
नहीं हृदय यह क्यों जाता है हाय! आज चिर॥१२
फिर वीराब्द! श्रवण-सम्पुटमें अब प्रिय तेरे,

आख्यायन्ते । यद्यपि लवणविद्रुमादिप्रभृतिषु विभक्तजीवचिन्हानि न उपलभ्यन्ते तदपि विशिष्टमदिरापानादिभिर्मूर्छितानां नराणां श्वासोश्वासादीनामव्यक्तजीवचिन्हानामपि च तत्र समानजात्यंकुरादीनामव्यक्तजीवचिन्हानां दर्शनेन सम्यग्जीवज्ञानं भवति, तथा पृथिव्यादयः कदापि चेतना सहिताः संघातत्वात् इत्यादीनि सूक्ष्मविचारपरिपूर्णानि नैकानि प्रमाणानि पृथिव्यादीनां सचेतनाय. विशेषावश्यकादिग्रंथेषु महाप्रमाणकत्वमलंकुर्वाणेषु निर्दिष्टानि सन्ति, कृमिप्रभृतयो द्वीन्द्रियाः कथ्यन्ते, तेषां स्पर्शजिहवास्वरूपेन्द्रियद्वयमात्रात् । पिपीलिकादीनि स्पर्शजिहवाघ्राणसंज्ञकत्रीन्द्रियमात्रात्त्रीन्द्रियनाम, भ्रमरादयः चक्षुरिंद्रियसहिताः चतुरिंद्रियाः कथ्यन्ते । संपूर्णपंचेंद्रियाणां पुन नारकतिर्यग्मनुष्यदेवरूपाश्चत्वारो भेदा वर्णिताः । तत्र नारकाणां निवासो रत्नप्रभादिषु सप्तस्वधोऽधोभूमिष्वस्ति. तिरश्चामपि जलेषु चरमाणानां मकरादीनां जलचरेति नाम, स्थले विहरतां गोमहिषादीनां स्थलचरेति, आकाशभागे स्वेच्छापूर्वकं गमनागमनक्रियां कुर्वन्तं च खेचरेत्यर्थसमानार्गतनामभिराख्यानं भवति तृतीयभेदेनोच्यमाना मनुष्या जम्बु–धातकी–पुष्करार्द्धस्वरूपार्द्धद्विकनाम्ना जैनशास्त्रसुप्रसिद्धे पञ्चचत्वारिंशद्योजनमात्रे क्षेत्रे उत्पत्तिमासादयन्ति, देवाश्च पुनर्भुवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिकभेदेन चतुर्विधास्सन्ति एतेषां सर्वेषामपि जीवानामायुस्थितिशरीरादिनां संवर्णनमनेकेषु ग्रन्थेषु निरूपितमस्ति, श्रीमत्तत्त्वबोधपटुभिरशास्त्रकारैः । तादृश्यस्वरूपस्य जीवस्य मूलस्वभावो निर्मलः सच्चिदानन्दमयश्च विद्यते, परन्तु कर्मरूपपौद्गलिकावरणे तस्य मूलस्वरूपमाच्छादितमस्ति, यदा पौद्गलिकावरणं सम्यग्ज्ञानादिना दूरं भवति तदा जीवो मुक्तावस्थां प्राप्यानुपममक्षयमविनष्टमव्याबाधं सुखमनुभवति, कर्मणा सह जीवस्य मृत्तिका सुवर्णवदनादिसम्बन्धोऽस्ति, अनादिकर्माणि जीवेन सह संबधितानि भवन्ति, परं शुभाशुभकारणाधीनजीवप्रदेशैस्साधं तेषां परिवर्तनं भवति तानि कर्माणि जिनेर्ज्ञानावरणीयदर्शनावरणीयवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायभेदतो ऽष्टविधानि मुख्यतया निर्दिष्टानि, तत्र चक्षुषः वस्त्राद्यावरणवज्ज्ञानस्यावारकं यत्कर्म तज्ज्ञानावरणीयमिति कथ्यते, तस्य पंचभेदास्सन्ति मतिश्रुतावधिमनःपर्यायकेवलावरणभेदात्, यथ यथावरणानि नष्टतां यान्ति तथा तथा तस्य तस्य ज्ञानस्य संपत्तिःप्रादुर्भवति दर्शनस्यावारकं कर्म दर्शनावरणीयमिति नाम्ना प्रसिद्धिमर्हति तस्यापि चक्षुरचक्षुरवधिकेवलनिद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धिश्चैवं नवभेदा उक्ताः। मदखेदक्लम विनोदनार्थः स्वापो निद्रा, उपर्युपरितद्वृत्तिर्निद्रानिद्रा, प्रचलयत्यात्मानमिति प्रचला, पौनः पुन्येन सैवाहितवृत्तिः प्रचलाप्रचला, स्वप्ने यया वीर्यविशेषाविर्भाव.सा स्त्यानगृद्धिरुच्यते, यस्य कर्मण उदयेन जीवानां सुखस्य दुःखस्यचोपलब्धिर्भवति तद्वेदनीयं कर्मेति कथ्यते, तदसातासातारूपभेदतः द्विविधं प्रज्ञप्तमस्ति, जीवं कृत्याकृत्यविवेकरहितं क्रियमाणं कर्म मोहनीयम् तस्य हास्यादिषट्पुरुषस्त्रीनपुंसकरूपास्त्रयो वेदा,अनन्तानुबन्ध्यादीनां क्रोधमानमायालोभरूपाः षोडशभेदाः

सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयमोहनीयमिति सर्वे मिलित्वा विंशतिर्भेदा भवन्ति, यस्य कर्मण उदयेन जीवा पृथग्गतीनामनुभवं कुर्वन्ति तदायुःकर्मेत्यभिधीयते, तस्य देवमनुष्यतिर्यग्नरकायुरूपाश्चत्वारो भेदा भवन्ति, जात्यादीनां पर्यायाणामनुभवं कुर्वाणस्य नामकर्मणः द्विचत्वारिंशद्भेदा स्सन्ति, सप्तमस्य गोत्रकर्मणः नीचमुच्चमिति भेदद्वयं वर्तते, यस्योदयेन जीवानां नीचोच्चरूपा संपत्तिः प्रादुर्भवति। अष्टममन्तरायकर्मम्, यस्य बलेन जीवानां दानादिकर्मणि क्रियमाणेऽन्तरायो भवति तदन्तरायकर्मेति गीयते, तस्यापि दानलाभभोगोपभोगवीर्यरूपा पंचभेदास्सन्ति। एतेषां कर्मणां विस्तारयुक्तं संवर्णनं बहुषु शास्त्रेषु ख्यातमस्ति अत्रत्वतीवसंक्षिप्ततया दिग्मात्रं दर्शितमस्ति।

द्वितीयमजीवतत्वम् उक्तं जीवस्वरूपं तद्विपरीतलक्षणोऽजीवो भवति, तस्य धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायपुद्गलास्तिकायकालाश्चेति पञ्चप्रकारास्सन्ति, अस्तिकायस्य प्रदेशसमुदायार्थत्वात् धर्माधर्माकाशपुद्गलानां च प्रदेशसमूहरूपत्वादस्तिकायैर्युक्तार्थैर्नामभिः ते व्यवह्रियन्ते। तत्र धर्मास्तिकायो लोकव्यापी, स्वभावान्नित्योऽवस्थितः, रूपरहितं चैतद्द्रव्यमस्ति जीवपुद्गलानां गतिकरणे साहाय्यको भवति, यथा मत्स्यः आत्मनि गमनशक्तिः सत्यपि जलसाहाय्यं विना गन्तुं न शक्नोति, तथैव जीवपुद्गलौ गमनसामर्थ्यविद्यमाने सत्यपि धर्मास्तिकायसाहाय्यरहितं यातुं नैव शक्नुतः, अधर्मास्तिकायस्यापि स्वरूपं धर्मास्तिकायसादृश्यमस्ति, विशेषं पुनर्जीवादिनां स्थितिकरणे उपकारं कुरुते। आकाशः लोकालोकव्यापी, नित्योऽवस्थितोऽरूपी पदार्थोऽस्ति, योऽवकाशदाने स्वकीयसामर्थ्यं प्रगटयति। एतेषां त्रयाणां स्कन्धदेशप्रदेशा इति त्रयो विभागास्सन्ति, तत्र समूहरूपः एकः पदार्थः स्कन्धः, समूहस्य लघुभागः देशः, पुनर्विभक्तुं नैव शक्यते यः स प्रदेशो विज्ञेयः। स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तीः सर्वाणि वस्तूनि पुद्गलेति नाम्ना संकीर्त्यते, तेषु पुद्गलेष्वेव चान्योन्यं श्लेषसूक्ष्मतास्थूलताकारशब्दान्धकारछायाछेदनभेदनादीनि च भवंति। ते पुद्गला परमाणुस्कन्धभेदतः द्विप्रकाराः कथितास्सन्ति, 'अणवः स्कन्धा'श्चेति तत्वार्थसूत्राधिगमपञ्चमाध्यायस्य पंचविंशत्तमसूत्रानुसारात्, तत्रातिसूक्ष्मो, नित्यः स तोऽणुरेकैकरसवर्णगन्धवान्, निरवयवोऽन्योन्यं विसंयुक्तः पदार्थः परमाणुः, तथा सावयवः परमाणुसंघातस्कन्ध उच्यते, बालत्वयुवत्ववृद्धत्वाद्यवस्थानं, परिणामस्य कारणं, वर्तमानादिक्रियानामनुग्राहकं सार्धद्विकद्वीपसंवर्ती परमसूक्ष्मनिर्विभागः समयः कालोऽस्ति, जैनशास्त्रेषु कालस्य मुख्यौ द्वौ विभागौ कृतौ स्तः प्रथमोत्सर्पिण्यभिधानोऽस्ति यस्मिन् रूपरसादीनामनुक्रमेण वृद्धिर्भवति, द्वितीयोऽवसर्पिण्यभिधः स पूर्वतो विपरीतोऽस्ति, अर्थाद्रूपादीनां तत्र प्रक्षीणता भवति एतादृश्योऽनेकोत्सर्पिण्यो व्यतिक्रान्ता आसन्, भविष्यन्ति च सर्वस्मिंस्तस्मिन् चतुर्विंश श्चतुर्विंशाः पृथक्जीवाः स्वकीयजातिशुभकर्मसामर्थ्यबलेन तीर्थंकरा भवन्ति।

तृतीयमाश्रवतत्त्वं—ज्ञानावरणीयादीनां पूर्वप्रतिपादितानां कर्मणां सम्बन्धे कारणभूता मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगा आश्रवतत्व-

मिति संज्ञां लभन्ते तत्र सत्येऽसत्यमतिरसत्ये सत्यमतिर्मिथ्यात्वेति, हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्योऽनिवृत्तिरविरत्याख्याता. विषयाणां सेवनमिन्द्रियाणामदमनं सुरापानादिकरणं प्रमादः, क्रोधमानमायालोभाश्चेति चत्वारः कषाया उच्यन्ते तथा मनवचनकायानां शुभाशुभव्यापारः योग कथ्यते।

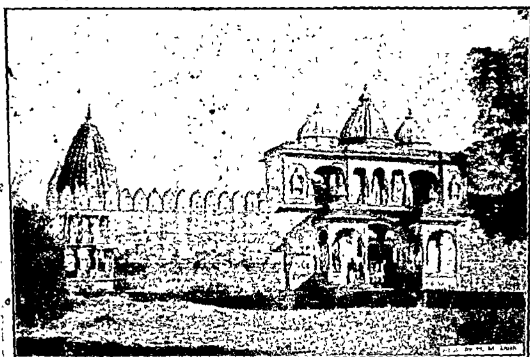
चतुर्थसंवरतत्त्वम्ः-तद्भवति यत्तेषां पंचानामप्यास्रवाणां सम्यग्दर्शनेन विरतिना प्रमादाकरणात् कषायरहितत्वाद्धर्मानुप्रेक्षणादिना निवारणं कर्त्तव्यमर्थात् कर्मग्रहणहेतुभूतस्य परिणामस्याभावः संवरतत्वं जैनशासने प्रतिपादितमस्ति।

पञ्चमं बन्धतत्त्वम्-कर्मजीवानां क्षीरनीरवदग्निलोह्पिंडवद्वा योऽन्योन्यसम्बन्धस्तद्वंधाभिधानं तत्वं भाष्यते, तस्य प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशाश्चेति चत्वारः प्रकारास्सन्ति कर्मस्वभावः प्रकृतिः कर्मपरिणामकृतकालविभागः स्थितिः, तस्य रसोऽनुभागः कर्मपुद्गलसंचयः प्रदेश उक्तो भवति।

षष्ठंनिर्जरातत्त्वम्ः-अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशाश्चेति षड्प्रकारै र्बाह्यतपोभिः, प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानमित्येवं षड्प्रकारैरभ्यंतरतपोभिः कृत्वा यः जीवसंबद्धानां कर्मणां क्षयः तन्निर्जराख्यं तत्वं निर्दिष्टमस्ति, सा निर्जरा द्विधा भवति, सकामाकामभेदात्, तत्र बाह्याभ्यन्तरसर्वपरिग्रहं त्यजतां निर्वाणाभिलाषिणां जीवानां सकामनिर्जरा भवति, अन्यजीवानां च सौख्यगनेकदुःखक्लेशदुःखज्ञानेन जायमाना निर्जराऽकामनिर्जरा ज्ञेया।

सप्तमं मोक्षतत्त्वम्-शरीरेन्द्रियायुपुण्यपापवर्णगन्धरसस्पर्शपुनर्जन्मग्रहणवेदत्रिकरागद्वेषमोहाविद्यादीनां समूलक्षयो मोक्षतत्त्वमित्युच्यते, अजरामरस्थानममृतपदं, निर्वाणं, मुक्तिरपुनर्भवः, सिद्धिपदं इत्यादयः तस्यैव मोक्षपदस्य पर्यायास्सन्ति, ऊर्ध्वगमनस्वभावस्य जीवस्य सकलकर्ममलनाशाज्जलतुम्बिकान्यायेनोर्द्धा गतिर्भवति. स जीवः उर्ध्वं गच्छमानो लोकांतं यावद्याति; तत्रैव च तस्य स्थितिर्भवति, उच्चगमनशीलस्य तस्य जीवस्य ततोऽप्युच्चगमनं कथं न भवतीतिचेद्-जीवप्रकरणे निरूपितस्य धर्मास्तिकायस्य गतिसहायकस्य लोकव्यापित्वात्, तत्र च लोकाभावेन तस्याभावादिति। प्राप्य निर्वाणमपि जीवशब्देनैव व्यवह्रियते, तेषामिन्द्रियादिबाह्यप्राणाभावेऽप्यनन्तज्ञानदर्शनवीर्यसुखरूपानां भावप्राणानां विद्यमानत्वात्, 'जीव प्राणधारणे' इति धातुना जीवति प्राणान् धारयतीति जीवः, तदेवं व्युत्पत्तिः क्रियते, निर्वाणगतानां सुखं चाविनश्वरं केनचिद्वस्तुनानुपमेयं संसारसुखाद्विलक्षणं परमानन्दमयं भवति, यस्य सुखस्यानन्तभागेऽपि सुरासुरनरेन्द्राणां सर्वमपि सुखं भवितुं न प्रभवति।

निरूपितं चैवं जैनदर्शनाभिमतानां सप्तानामपि तत्त्वानां संक्षिप्तं स्वरूपं विस्तरेणाद् ज्ञातुमिच्छद्भिर्मज्जनैः तेषु तेषु ग्रन्थेषु द्रष्टव्यमिति प्रार्थ्यते।



श्री दिगम्बर जैन मन्दिर श्री अतिशयक्षेत्र रामटेकका दृश्य.



अतिशयक्षेत्र श्री रामटेकजीके मन्दिरोंके समवशरणका दृश्य.

...नहीं
...जाड़ी तैयार करके है। यदि इस समय उसे उचित मात्रा देकर

जातीय जीवनका ह्रास और हमारा कर्तव्य।

(लेखक-मास्टर छोटेलाल जैन, सुई।

मनुष्य समाजके उस विभागको जाति कहते हैं जो निवासस्थान, वंश परम्परा व धर्मके विचारसे किया जाता है जैसे आर्यजाति, पारसीजाति, मुगलजाति, जैनजाति आदि। इसी जातिके जीवित रहनेकी अवस्थाको जातीय जीवन कहते हैं। प्रत्येक जातिके जीवनका ह्रास या विकाश उस जातिके लोगोंकी संख्या व शिक्षाका क्रमशः उन्नत या अवनत होना इन दो कारणोंसे जाना जाता है। मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी व जातिकी शारीरिक, मानसिक, व आध्यात्मिक शक्तियोंके विकाश करनेका जी जानसे प्रयत्न करे।

अब जब हम उपर्युक्त सिद्धान्तोंकी ओर एकवार विचारपूर्वक लक्ष्य देते हैं तो विदित होता है कि जो जाति लौकिक व आध्यात्मिक अभ्युदयके ऊंचेसे ऊंचे शिखरपर बिराजमान थी; मनुष्यसंख्या, शिक्षामें सारे संसारकी आदर्श थी वही आज संसारकी सभ्य जातियोंमें गणना करानेके सर्वथा योग्य नहीं है। उसमें अपने जीवनकी अनेक उपयोगी बातोंका ऐसा शोचनीय अभाव है जो कदाचित ही मनुष्य जाति कहलानेवाली मानव किसी जातिमें न होगा। जैन जाति ही नहीं किन्तु सारे भारतवर्षकी आर्यजाति जिसने कि संसारकी समस्त सभ्य जातियोंको धर्म, कला कौशल्य और परिश्रमके द्वारा कपाससे कपड़ा तैयार करके उनको उसका पहिनना बतलाया था। वही आज अपना शरीर ढकनेके लिये फटे पुराने चिथड़ोंके लिये लालायित हो रही है। खेतको जोतने, बखरने और अन्न बोने काटनेवाले किसानों ही को अब बेतरह कालके गालमें कवलित होना पड़ता है। सारे व्यापार और उदरपोषणकी दारमदार जिन पर है वही इतने ऋणी हैं कि कदाचित ही उनको कई पीढ़ी तक उससे छुटकारा मिल सके। सारा भारतवर्ष मन्दाग्निसे प्रयाण किया जा रहा है। नागरिक नहीं किन्तु एक ग्रामीण वणिक सूर्योदयसे सायंकाल तक पीठ पर थैला रख सर्दी गर्मीमें दो चार गांव चक्कर लगाता है; परन्तु शोक! इतने पर भी उनकी सन्तानोंको भर पेट अन्न नहीं मिलता है। नर्ककी भांति कुटुम्बीगन भाई भाई, पिता पुत्र आदिमें द्वेषका साम्राज्य स्थापित होता जाता है। जिससे कि घरके घर नष्ट हो गये और होते जा रहे हैं। बाल्यविवाह चरम सीमा तक पहुंच चुका—नव जाति बाल्यविधवाओंकी संख्या अधिकाधिक बढ़ रही है—तिस पर भी युवा पुरुषोंको दाम्पत्य प्रेमसे वञ्चित रहना पड़ता है। सन्तान दुर्बल, निस्तेज और निरुद्योगी हो रही है। उद्योग और साहस समाजसे निकल चुका। कुछ लोग धर्मका ठेका लेकर उस पर अपना प्रभुत्व बतला रहे हैं।

राजयक्ष्माके रोगसे ग्रसित मनुष्यकी भांति यह जैन जाति भी अब अत्यन्त कृश, अशक्त निरी हड्डियों मात्र रह गई है। स्वर्गवासका समय सन्निकट है, उसी ओर चल रही है। यदि इस समय उसे उचित मात्रा देकर

धर्म भी साधारणतया पालती रहती है। कभी कभी एकाध व्याख्यान देकर भी बहुत बड़ा परोपकारका कार्य कर दिया करती है। पैसे भर भलाई करके रुपये भर दिखाना और जिसपर भलाई की है उसपर अपना रौब जमाना, आज कलका फैशन हो रहा है, यह भी इस फैशनसे अलग नहीं है। समाज सुधारकी भी यह बहुत बड़ी बड़ी बातें किया करती है। जाति-भेद मिटा देना; एक धर्मके सब अनुयायियोंका रोटी बेटी व्यवहार करना; स्त्री शिक्षाका प्रचार करना; विधवाओंको दुःखसे निकालना आदि सुधारोंकी बहुत पक्षपातिनी है; परन्तु केवल जबानी पक्षपातिनी है, आचरणके लिए तो बस 'पापड़का नाम गोल गप्पा' ही है, और यही कारण है कि विमला अबतक कुमारी है।

वह विमलाके लिए उसके मन माफिक सुंदर धनी व विलासप्रिय वर चाहती है, और साथ ही यह भी चाहती है कि वह अच्छा विद्वान भी हो।

इनकी जातिमें विद्याप्रचार वैसे ही बहुत कम है; शिक्षित और धनी थोड़े बहुत हैं, वे बचपनमें ही ब्याहे जा चुके हैं। शिक्षित और धनी ही क्यों इस समय कोई अशिक्षित या गरीब भी तो ऐसा नजर नहीं आता है कि जिसके साथ विमलाका ब्याह कर दिया जाय।

* * *

गुणचन्द्र एक सुन्दर युवक है। आयु बीस बाईस वर्षकी होगी। बी० ए० पास कर चुका है। धनी भी है और सुशील भी है। विमलाकी माता उसको बहुत स्नेहकी दृष्टिसे देखती है। वह प्रायः विमलाके यहां आया जाया करता है। उसे भी गायनका बहुत शौक है। विमलाकी और उसकी तालमेल अच्छी जुड़ती है। घंटे घंटेभर प्रायः विमला उसे दिलरुबा पर गायन सुनाती है; गुणचंद्र भी हारमोनियमके साथ कोई चीज़ सुनाता है। विमलाकी माता इनके इस आनंदको देखकर प्रसन्न होती है और मन ही मन न जाने क्या क्या घाट घड़ा करती है।

एक दिन गुणचंद्र अपने घर वापिस जा रहा था। वह फाटकके पास पहुँचा होगा कि विमला चिल्लाई:—"देखना, देखना तुम्हारी धोतीमें कोई जानवर घुस गया है।" गुणचंद्रने इधर उधर देखा परन्तु कोई जानवर नजर नहीं आया उसने फिरकर विमलाकी ओर देखा—वह मुंह पर हाथ देकर हँस रही है; उसकी आंखोंसे एक दिव्य तेज निकल कर वासना उत्पन्न कर रहा है। उस समयकी उसकी मुखश्रीको देखकर गुणचंद्रका शरीर रोमांचित हो आया। यह पहिला ही समय था कि उसने विमलाकी इस प्रकारकी मुखश्रीको देखा। गुणचंद्र टेढ़ी निगाहसे देखता हुआ वहांसे चला गया। विमला भी गुणचंद्रको दृष्टिपथसे अलोप होने तक देखती रही और फिर कुछ अनमनी होकर कमरेमें चली गई।

* * *

मंगला बहुत दिनोंसे उदास रहती है। उनकी उदासीका मुख्य विषय है—गुणचंद्र। वह एक धर्मका माननेवाला होकर भी दूसरी जातिका है। घर, वर सब अच्छे हैं तो भी वह [illegible]

तिका नहीं है। वह सोचती है दूसरी जातिका होनेसे क्या हो गया? है तो अपने ही धर्मका माननेवाला। दोनोंकी जोड़ी भी अच्छी है, दोनोंको परस्पर प्रेम भी है। तब व्यर्थ दूसरी जातिका विचारकर अपनी स्वर्णकी प्रतिमाको क्यों न उस भक्तके हाथ सौंप दूँ; जो आशा भरी दृष्टिसे उसकी और टकटकी लगाकर देखता रहता है, जो पूजा करनेके लिए बहुत उत्सुक है और जिसकी पूजा ग्रहण करनेके लिए मेरी प्रतिमा भी लालायित हो रही है। कभी सोचती है—जाति-बंधन कैसे तोड़ूँ? अपने बड़ोंकी रीतिको कैसे छोड़ूँ? यदि मैं छोड़ना भी चाहूं तो जातिके लोग कब राजी होंगे? वे इस संबंधको कैसे पसंद करेंगे?

मगर करेंगे क्यों नहीं? इसमें हानि क्या है? धर्म इसके लिए मना नहीं करता। वास्तवमें तो धर्मके साथ इसका कुछ विशेष संबंध भी नहीं है। भगवान ऋषभदेवने जो कि धर्मके आद्य संस्थापक और कर्मभूमिके आद्य रचयिता हैं—तो केवल क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ऐसे तीन वर्ण ही स्थापन किये थे। फिर भरतचक्रवर्तिने ब्राह्मणवर्ण स्थापन किया था। आगे उच्चवर्णवाले नीचे वर्णकी लड़कियां लेते थे; ब्राह्मण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी; क्षत्रिय, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रकी; वैश्य वैश्य और शूद्रकी; और शूद्र शूद्रकी। क्या उस समय धर्म कोई दूसरा था? नहीं। तब?

इसी समय एक व्यक्तिने आकर मंगलासे नमस्कार किया। उसकी विचार परम्परा टूट गई। आगन्तुकने इधर उधरकी बातें कर कहा:— "विमलाका व्याह यदि आप मानचंद्रसे कर देंगी तो अच्छा है। यद्यपि वह दूजवर है तथापि उसकी आयु विशेष नहीं है। आदमी बड़ा परिश्रमी है। पूंजी भी पन्द्रह बीस हजार की है। रंगरूपका भी अच्छा है। लोग लड़कीकी आयु बड़ी हो जानेसे दुलखते हैं। जातिमें इस समय कोई लड़का खाली नहीं है अतः आपकी और उसकी दोनोंकी भलाई सोचकर मैं आपको इस मर्म चेताने आया हूं।

मंगलाने झट छूटते ही कहा:—"क्या मैं अपनी सोने जैसी लड़कीको उस मवालीके हाथ सौंप दूं? सालमें अक्कल तो कौड़ी भरकी नहीं है।

आगन्तुक मंगलाकी बातसे कुछ चमका। उसने मंगलाकी ओर जरा म्लान होकर देखा और कहा:—आप क्या कह रही हैं? वह मवाली है तो फिर इसे कौनसे राजाके पुत्रको दोगी।"

मं.—क्यों? जैनियोंमें क्या कोई वर नहीं है?

आ.—हाँ, अपनी जातिमें तो कोई नहीं है।

मं.—मैं अन्य जातिमें करूंगी। जैनियोंमें बहुतसे अच्छे २ लड़के हैं।

आगन्तुक आश्चर्यान्वित होकर बोला:—"तो क्या आप किसी गैर जातिके लड़केके साथ व्याह करोगी?"

मं.—हाँ, इसमें क्या कोई हानि है?

आ.—हानि नहीं होती तो हमारे बापदादे ही क्यों नहीं आपसमें शादी व्याह करने लग जाते?

मं.—मगर उस कालमें और वर्तमान कालमें तो अन्तर है?

आ.—हाँ, इतना अन्तर है कि उस समय

लोग धर्मात्मा थे, भगवानकी आज्ञानुसार चलते थे और आज सब कूडापंथी होना चाहते हैं। सिवा इसके तुम और पढ़े लिखे करोगे ही क्या? मगर याद रखना यदि आप ऐसे विचार करोगी तो आपको जातिसे च्युत होना पड़ेगा।

'जातिसे च्युत होना पड़ेगा' वाक्य मंगलाके निर्बल हृदयमें तीर सा लगा। वह निस्तब्ध हो रही। आगन्तुक मंगलाकी ऐसी स्थिति देख यह कहता हुआ चला गया कि-मेरी बात पर पूरा विचार करना नहीं तो पछताना होगा।

* * *

गुणचन्द्र न जाने क्यों आजकल मंगलाके घर नहीं आता। विमला बड़ी उदास रहती है। उसका दिलबहला भी उसके दिलसे नहीं हुआ था। ऊंची ऊंची सांसें लेनेके सिवा उसे कुछ नहीं सूझता।

अब हाय! दिलके गये प्यारे कहां जायेंगे॥ध्रु.॥"

उस दिन किसी कार्यवश गुणचंद भी उधर आ निकला। मंगला कहीं बाहिर गई हुई थी। इसलिए गायन सुनकर वह भी बागमें चला गया, और एक लताके पीछे खड़ा होकर उन्मत्त बनानेवाले विमलाके गायनको सुनने लगा।

" तड़पत हूं रैन दिना, चैन नहीं तुम बिना।"

इस वाक्यको ही विमला बार बार गा रही थी। उसका स्वर बहुत करुणोत्पादक होरहा था। गुणचंद्रकी आँखोंमें पानी भर आया वह सोचने लगा—क्या करूं? कुछ वश नहीं है। दोनोंमें कितनी आग लग चुकी है। कौन जानता था कि हमारा खेल तमाशा ऐसा रंग लायगा। मेरे बिना अब यह कैसे दिन निकालेगी? हम लोगोंके माता पिता हमारा ब्याह कर देनेको राजी नहीं हैं। परमात्मा,

चन्द्रपुरी (काशी) के श्री चन्द्रप्रभुका दि० जैन मन्दिर.

सिंहपुरी (काशी) के श्री श्रेयांसनाथका दिगम्बर जैन मन्दिर.

है। मैंने बहुत प्रयत्न करके देखा। तुम्हारा और विमलाका व्याह होना किसी तरह स्थिर नहीं हो सका। इसमें प्रधान विघ्न जाति बाहिर होनेका भय है। धर्मके धूर्तोंने भोले लोगोंको न मालूम क्यों, यह कह कह कर परस्पर जातियोंको नहीं मिलने देते हैं कि यदि तुम अपना रोटी बेटी व्यवहार एक कर लोगे तो धर्म डूब जायगा? भोले लोग धर्म डूबनेके भयसे अपना सर्व नाश होना नहीं देख सकते। मगर क्या किया जाय? जातिमें रहना होगा और मान मर्यादा बचाना होगा तो जातिके अनुसार ही चलना पड़ेगा। अतः अब तुम विमलासे इस तरह न मिला करो; क्योंकि वह अब कभी तुम्हारी नहीं हो सकेगी ....।

गर्विष्ट गुणचंद्र विशेष कुछ न सुन सका। वह "बहुत अच्छा" कह कर दुखवेगके साथ चला गया।

* * *

विमला उस दिन—"प्रभु, ऐसे जीवनसे मौत अच्छी है" आदि बातें बहुत देर तक बड़बड़ाती रही। एक दासीने सब सुनी और उसने मंगला-को आकर सुना दीं। मंगलाको कुछ चिन्ता हुई; परन्तु जाति बाहिर होजानेके भयसे वह अपनी पुत्रीके सुख दुःखकी और न देख सकी।

कई दिन बीत गये। संध्या समय मंगला और विमला कमरेमें बैठी हुई बातें कर रहीं थीं। इतने हीमें मंगलाकी बहिन शिवगौरी आगई। उसने कुछ देरके बाद विमलाके व्याहकी बात छेड़ी। विमला वहांसे उठकर चली गई।

शि०—बहिन आजकल लोग बहुत निंदा करते हैं; जो जो हो उसकी ओर अँगुली उठाता है और कहता है—घोड़ा जैसी बेटी हो रही है तो भी अभी तक व्याह करना नहीं सूझता।

मं०—जीजी, मुझे भी चिन्ता है; परन्तु क्या करूं? किसी कागजके पुतलेके साथ व्याह कर दूं? कोई वर भी तो मिले।

शि०—क्यों मानचंद्र क्या अच्छा नहीं है?

मं०—जीजी, तुमसे छिपानेकी क्या बात है? पहिले तो वह मुझे ही पसंद नहीं, मैं जैसे तैसे पसंद भी करूं तो विमला उसे बिल्कुल नहीं पसंद करती। एक दिन उसकी सहेली प्रभाने उससे पूछा तो उसने उत्तर दिया मैं उसके साथ कभी व्याह नहीं करूंगी और मां अगर जब-र्दस्ती करेंगी तो मैं जहर खाकर मर जाऊंगी।

शि०—अरी, बावली तू तो भोली हुई है। कोई मरा करता है क्या? सच्ची बात तो यह है, कि उपन्यास पढ़ पढ़ कर उसके भी जीमें उपन्यासकी नायका बननेकी धुन समाई है; मुझे मालूम होगया है, कि वह गुणचन्द्रके साथ वह प्रेम करती है। बहिन, लड़का तो बड़ा अच्छा है; परन्तु क्या करें अपनी जातिका नहीं है। सोनेकी कटार पेटमें थोड़े ही खाई जाती है? तुम तो मानचंद्रके साथ व्याह ठीक कर लो। व्याह करके पतिके घरमें जाते ही मरना वरना सब भूल जायगी।

मंगलाने एक अन्तर-वेदना प्रकाशिनी निश्वास छोड़कर कहा:—"जीजी तुम कहोगी वैसा ही करूंगी, परन्तु मुझे डर लगता है।"

विमलाने बाहिर खड़े होकर इनकी सब बातें सुन लीं।

* * *

नीचे आकर विमलाने देखा कि बॉक्समें उसके नामका एक लिफाफा पड़ा हुआ है। उसने शीघ्रताके साथ उसे खोला, और पढ़ा, लिखा था:--

" शुष्क हृदयको लहलहानेवाले अमृत तूने बरस कर हृदयको हरा किया; हृदयवीणाके तार तूने हृदयको बजनेवाला बनाया।

खेती हरी हुई, मगर कैसी ? जिसमें कभी फल नहीं आयगा, जो कभी पकना नहीं जानती, जो दाने देकर किसीकी भूख नहीं मिटाली। फूल खिले हैं, बड़े ही सुन्दर हैं? परन्तु उनमें हृदयको गंधामोदित करनेवाली सुगंधी नहीं है। आंखें सौन्दर्य देखकर प्रसन्न होती हैं; परन्तु सुगंधके विना मन कैसे प्रमुदित हो सकता है ? पांच पक्वान्नसे भरा हुआ थाल सामने होनेपर भी खाए विना क्षुधा कैसे मिट सकती है ?

विमला! दुनिया सब आशा पर जीती है। मरणासन्नको भी फिरसे जी उठनेकी आशा रहती है; परन्तु हमारे लिए अब कोई आशा अवशेष न रही। हमारे बीच माता पिताकी जातिच्युतिका अनन्त समुद्र गर्जना कर रहा है; शोक-लज्जा रूपी अनन्त विकट झाड़ झकाड़ पूरित पृथ्वी बीचमें पड़ी है। आशा विनष्ट मनुष्य के लिए दुनियामें क्या है ? कुछ भी नहीं। चैतन्य आशा में रहता है, परन्तु जहां आशा नहीं वहां चैतन्य कैसा ?

.......को मैं तुम्हारे यहां आया था। तुम कमरेमें बैठी गा रही थीं। गायन बहुत हृदय भेदक था, साथ ही वासनोत्पादक भी था; हृदय विह्वल हुआ, परन्तु तृप्ति नहीं हुई। वह नन्दवनकी सी सुगंध लाया था; परन्तु निराशाकी निश्वास उसे वापिस उड़ा ले गई।

थोडी देरमें मैंने सुना कि तुम्हारे हाथसे दिलरुबा गिर पड़ा, और तुम बड़बड़ाने लगीं:– " भगवान, जीनेसे तो मरना लाख दर्जे अच्छा है। " मुझे बहुत दुःख हुआ। मैं तुम्हारे पास आना चाहता था; परन्तु उसी समय तुम्हारी माताने मुझे बुला लिया और कहा–तुम्हारा और विमलाका व्याह होना असंभव है इस लिए अब तुम उससे न मिला करना, लोग निंदा करते हैं। प्राण, मैं उसी समय मन मारकर चला आया। बस अब फिर मिलेंगे जब परमात्मा मिलायगा। हृदय-दशा लिखना व्यर्थ है। न मालूम ये जातिके बंधन हमारे जैसे कितनोंका रात दिन गला घोटते रहते होंगे।

तुम्हारा–गुणचंद्र"

पत्र पढ़कर विमलाकी कैसी दशा हुई सो लिखना व्यर्थ है।

* * *

गुणचंद्र को कुछ दिन बाद एक पत्र मिला। लिखा था:—

" उपास्य देवता,

गला घुटता है, इसीलिये निर्लज्ज होकर लिख रही हूं। तुम्हारा पत्र मिल गया है। मां और मामीने मेरा व्याह मानचन्द्रके साथ करना ठीक किया है। रमणी एकबारमें ही सब कुछ अपने देवताके चरणोंमें चढ़ा देती है। मैंने सब कुछ तुम्हारे अर्पण कर दिया। अब मेरे पास क्या है जिसको लेकर मैं दूसरोंके पास जाऊंगी।

तुम ही मेरे इस जीवनके स्वामी हो। मरना जीना सब तुम्हें सौंप चुकी हूं। अस्तु। ता०.... को पांच बजे मैं चौपाटी अपनी मासीके यहां मिलने जाऊंगी। मुझे तुम मिलना। कई-आवश्यकीय बातें करना है। अगर मेरा जीवन न चाहते हो तो मत आना।

तुम्हारी-विमला"—

* * *

नियत समयपर गुणचन्द्र, अपेक्षित स्थानपर जाकर मिला। विमलाकी विचित्र मूर्ति देखकर गुणचन्द्रको भय लगा। विमलाने कठोर स्वरमें कहा:-"बोलो मुझे चाहते हो, या अपनी काल्पनिक मान-मर्यादाको और जातिको?"

न मालूम इन शब्दोंमें क्या बिजली थी? सुनकर गुणचन्द्रका हृदय कांप उठा। आज तकके उसके सब विचार हवा हो गये। अबतक वह सोचता रहा था कि सब कुछ खो देने पर भी स्वर्गीं मान सुरक्षित रखना चाहिए। ये विचार तत्काल ही उड़ गये। उसने टकटकी लगाकर विमलाके मुखकी ओर देखते हुए भर्राई हुई आवाजमें कहा:-"तुझे।"

उसी तरहके स्वरमें विमलाने कहा "तो सुनो, एक काम करना होगा। आजके पन्द्रहवें दिन मेरा व्याह निश्चित हुआ है। तुम तेरहवें दिन यहांसे चलनेके लिए तैयार रहना।"

विमलाकी बात सुनकर गुणचंद्र चमका। उसने जरा घबराहटके साथ कहा "कहाँ?"

वि०-क्यों, इतने घबरा क्यों गये? क्या डरते हो? हम लाहौर चलेंगे और वहीं जाकर व्याह कर लेंगे।

गु०-वहाँ कैसे व्याह कर लेंगे?

वि०-मैं माताके साथ दो मास पहिले सांताक्रुज आर्यसमाजियोंके गुरुकुलके उत्सवमें गई थी। उसी दिन यह बात प्रकट की गई थी कि-एक ब्राह्मणके लड़केके साथ कोलीकी लड़कीका कल व्याह होनेवाला है। जातियाँ सब गुण व कर्मसे होती हैं; जन्मसे नहीं होतीं। उनके व्याहमें कोई भी बाधा नहीं डाल सकेगा। जातिवालोंका इन्हें कुछ भी भय नहीं है। पांच करोड़ आर्यसमाजी भाई इनके साथ हैं। उसी समय मुझे भी अपना खयाल आया। मैंने सोचा हम भी आर्यसमाजियोंमें जाकर व्याह कर लें तो कैसा अच्छा हो?"

जलसा खतम हो गया। आर्यसमाजकी एक बाई जो सामाजिक कार्योंमें बहुत भाग लेती है, विद्वान है, मेरी मातासे बहुत स्नेह रखती है; और मुझे भी पहिचानती है, वहां अकेली टहलने लग रही थी। मैं धड़कते सीनेसे अपनी हार्दिक इच्छा उनको सुनानेके लिए उनके मार्गमें जा खड़ी हुई। उन्होंने मुझे आवाज दी। मेरा हृदय और ज्यादा धड़कने लगा। मेरी आंखोंमें पानी भर आया। मैं कुछ उत्तर न दे सकी। टगर टगर उनके मुंहकी ओर देखने लगी। दयालु अन्तःकरण बाईने मेरी ऐसी दशा देखकर मुझे बगलमें दबा ली, और पूछा:-"क्यों बेटी, बताओ क्या बात है? रोती क्यों हो?" मेरी आंखोंसे पानी गिरने लगा। वे बार बार आंसू पोंछती थीं और पूछती थीं। आखिर मैंने धैर्य धरके कहा-" यदि माँसे न कहो तो कहूं।"

उन्होंने नहीं कहनेका विश्वास दिलाया। तब मैंने अपनी सब बातें उनको सुना दीं और पूछाः—"क्या आप हमारा व्याह भी इसी तरहसे नहीं करवा देंगी?"

उन्होंने कुछ देर सोचनेके बाद कहाः—"हां हो सकता है। मगर यहां नहीं। यहां तो तुम लोगोंके माता पिता तुम्हारा व्याह नहीं होने देंगे। और खास इसलिए कि तुम सरकारी नियमानुसार नाबालिग समझी जाती हो। तुम दोनों लाहोर चले जाओ। मैं वहां चिट्ठी लिख दूँगी। तुम्हारा सब प्रबंध हो जायगा।" सुनकर मेरा हृदय खिल गया। उन्होंने मुझे फिर मिलनेको कहा। मैं भी उस समय दूरसे मांको आती देखकर उनके पास चली गई।

कुछ दिन बाद उनसे मैं फिर मिली। उन्होने लाहोरसे भी पत्र मंगवा लिया था। अब उन्होंने लाहोरवालेके नामका एक खत मुझे दे दिया है। यह तुम अपने पास रक्खो। नियत समय पर तैयार हो रहना। बस जाती हूं। ज्यादा बात करनेका समय नहीं है....."।

गुणचंद्रको पत्र देकर विमला तत्काल ही यहांसे चली गई। गुणचंद्र मंत्र-मुग्धकी तरह खड़ाका खड़ा ही रह गया।

* * *

विमलाके और गुणचंद्रके घरोंमें हाहाकार मच गया, आठ रोजसे दोनोंके घरोंमें चूल्हा नहीं जला। चारों ओर जान पहिचानवालोंके यहां तार दिये गये। मगर कहींसे कुछ संतोषजनक समाचार नहीं आये। विमला अपनी मांकी इकलौती लड़की थी और गुणचंद्र भी अपने घरका अकेला उजेला था। गुणचंद्रके पिताने और विमलाकी माताने तो आठ रोजसे अन्न भी मुँहमें नहीं डाला है। दोनों चारपाइयों पर पड़े हुए अपने जीवनकी घड़ियां गिनते हुए सन्तान वियोगसे दुखी हो उत्सुकताके साथ यमराजको पुकार रहे हैं। शिवगौरी मंगलासे कुछ खानेको आग्रह कर रही है और बीचबीचमें गुणचंद्रको भी गालियां देती जा रही है। इसी समयमें दासीने लाकर मंगलाको एक लिफाफा दिया। अशक्त पड़ी हुई मंगलाके शरीरमें लिफाफेके अक्षर देख कर बिजली दौड़ गई। वह तत्काल ही उठ बैठी और लिफाफा खोलकर पढ़ने लगी। शिवगौरी बड़े ध्यानसे सुनने लगी। लिखा थाः—

"जननी प्रणाम,

घरसे मैं विना कुछ कहे सुने अचानक चली आई। इससे आपको अवश्य बहुत दुःख हुआ होगा; परन्तु इसके सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं था। इसलिये विवश होकर मुझे यह मार्ग ग्रहण करना पड़ा। क्षमा करें।

स्वतंत्रता मनुष्य मात्रका जन्म-सिद्ध हक है। अपना जीवन किस तरह और कैसी संगतिमें रहकर बिताना चाहिए इसका फैसला करना भी प्रत्येक मनुष्यके स्वाधीन है और होना ही चाहिए, यह आप सदैव ही कहती रहती थीं। आप यह भी कहती थीं कि क्या स्त्री और क्या पुरुष दोनोंका यह प्रकृति-दत्त स्वत्व है कि वे अपना जन्मभरका साथी अपनी इच्छानुसार चुनें। अर्थात् स्त्री अपनी इच्छा-

नुरूप पति पसंद करे और पति अपनी इच्छा-नुसार पत्नि। इसमें हस्तक्षेप करनेका किसीको अधिकार नहीं है और जो करता है वह अन्यायी है, अत्याचारी है, पापी है।

मगर माँ, मुझे आपने मेरा जन्मसिद्ध हक देना पसंद नहीं किया। जन्म-सिद्ध हक ही क्यों-आपने मेरा प्राण लेना भी एक तरहसे निश्चित कर लिया। मैंने स्पष्ट यह कह दिया था; कि माँ मानचंद्रके साथ मुझे व्याह करनेके लिए विवश करोगी तो मैं प्राण दे दूँगी। यह आप भली प्रकारसे जानती थीं; तो भी आपने कुछ परवाह नहीं की और मानचंद्रके साथ ही मेरा व्याह स्थिर कर दिया। तब मैं क्या करती?

एकबार मैंने प्राण देना ही निश्चित किया था। परन्तु आप कहा करती थीं कि आत्महत्या करनेवाले घोर नरकमें जाते हैं, इसीसे मैं डर गई। एक ओर मानचंद्रके साथ व्याह करके इसी जन्ममें नरकवास करना था और दूसरी ओर आत्महत्या करके परभवमें नरक भोगना था। मुझे नहीं सूझता था कि मैं कौनसा नरक पसंद करूँ; परन्तु दैवने मुझे दोनों नरकोंसे बचनेका मार्ग बताया। आप कईवार कहा करती थीं कि सब जैनी मिलकर परस्पर रोटी बेटी व्यवहार एक कर लें तो इसमें धर्म बाधक नहीं है। और इसीलिए आपने मेरा व्याह गुणचंद्रके साथ करा देनेके लिए प्रयत्न किया था; परन्तु आप इस प्रयत्नमें हत-सफल हुई। जातिच्युतिके भयसे ही आप अधर्म-कृत्य करनेको उतारू हुई; मेरा जन्मसिद्ध हक छीन लेनेको तैयार हुई।

मगर माता, धर्म जब बाधक नहीं, तब मैं क्यों जान बूझकर नरकमें पड़ती? क्यों आपकी काल्पनिक, क्षणिक, जातिकी मान-मर्यादाके लिए अपना यह लोक और परलोक बिगाड़ती?

एक बात और भी, हे रमणी एकबार ही, हृदयसे अपना पति पसंद करती है और फिर उसीके चरणोंमें अपना तन, मन, मान-मर्यादा माता, पिता, भाई, कुटुंब कबीला आदि अर्पण कर देती है। मैंने भी अपना पति पसंद कर लिया था और उस पसंदगीमें आपका भी अपरोक्ष ही नहीं वरन प्रत्यक्ष हाथ था। मैंने जिसको अन्तरंगसे पति माना, जिसके चरणोंमें मैंने अपना सर्वस्व समर्पण किया उसको छोड़कर आपकी कल्पनाके अनुसार क्या मैं दूसरेको पति बनाती?

अब मैंने यहां गुणचंद्रके साथ व्याह कर लिया है। अब जिस देवताकी पूजा करनेके लिए मैं लालायित रहती थी उसीकी पूजाका मैंने पूरा अधिकार पा लिया है। अब संसारकी कोई भी शक्ति मुझे अपने देवताकी पूजा करनेसे नहीं रोक सकती।

माँ, व्यर्थकी कल्पना करके मुझे दोषी मत बताना। संसार अपनी इच्छानुसार दूसरेको कार्य न करते देखकर उसे खराब बताता है; परन्तु वह दूसरेके सुख दुःखकी परवाह नहीं करता। सुख दुःख क्यों दूसरेके जीवनको नष्ट करनेके और दूसरेका प्राण तक ले लेनेमें भी आगा पीछा नहीं करता। मगर दूसरे सिर झुका कर क्यों चुपचाप अत्याचार सहलें? जिस प्रकार समाजको स्वतंत्रताके साथ विचार

करनेका हक है उसी प्रकार क्या प्रत्येक व्यक्तिको स्वतंत्रताके साथ विचार करनेका हक नहीं है?

माता, आपकी और आपके समाजकी कल्पनानुसार यदि मुझे नरकमें जाना पड़ेगा तो वह नरकवास भी—जो अपने जन्म-सिद्ध हककी रक्षा करनेके अपराधमें पाऊँगी—आपके अत्याचारी समाजके अंदर रहनेसे ज्यादा अच्छा लगेगा। अपने जन्म-सिद्ध हककी रक्षा न कर स्वर्गवास प्राप्तिकी लालसा करना, मैं नरकसे भी ज्यादा समझती हूँ। समझती क्यों हूँ? ऐसा है ही। समाजने स्त्रियोंके इस हकको छीन लिया इसी लिए समाजमें कैसी नारकीय लीला हो रही है? जिसका स्मरण करनेसे भी कलेजा कांप जाता है।

माता, अपनी पुत्रीके इस कृत्यको यदि अच्छा समझती हो तो उसे क्षमा करना। यदि नहीं समझती हो तो उसे मरी समझकर विस्मृतिके अनन्त सागरमें डुबो देना।

अन्तमें एक बात और कह देना चाहती हूं। यहां आकर मुझे विदित हुआ है, कि सैकडों ही जैनी हमारी ही भांति समाजके अत्याचारोंसे पीड़ित होकर आर्यसमाजी और ईसाई बन रहे हैं और समाजके हेतु 'जैनधर्मको भी नमस्कार' कर रहे हैं। जान पड़ता है धीरे धीरे सारे जैनी समाजके अत्याचारोंसे पीड़ित होकर इन महासमुद्रोंमें डूब जायंगे और साथ ही जैनधर्मको भी डुबो जायंगे। अस्तु।

आपकी पुत्री—

विमला ,,

मंगलाकी आंखें फटीकी फटी ही रह गईं। किशोरी कठपुतलीकी तरह खड़ी रह गई और....।



(लेखकः-पण्डित लोकमणि, जैन गोटेगांव. C. P.)

मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु। 'तत्वार्थसूत्र'

सत्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदं
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं।
माध्यस्थ भावं विपरीतवृत्तौ
सदा ममात्मा विदधातु देव!

हे प्रभु! मुझे इस भावनाका अविर्भाव कर दीजिए जिससे प्राणीमात्रमें मित्रता, गुणाधिकोंमें प्रमोद, दुःखी जीवोंपर परम कृपा और विपरीत वृत्तिवालोंमें मेरे सदा मध्यस्थ भाव बने रहें।

सत्वेषु-मैत्री। समस्त विश्वके जीवात्मा मेरे मित्र हैं, अ. ह. ह. इस दिव्य मंत्रका भी क्या कोई मूल्य कर सकता है क्या? इस मंत्रके प्रभावसे भी भेद बुद्धि नष्ट नहीं हो सकती!!! 'सत्वेषु मैत्री' यह शब्द क्या १ अलौकिक शक्तियोंका भंडार है। इस शब्दके अंतःकुहरमें प्रवेश करते ही क्या ही अपूर्व आनन्दका स्रोत निकलना चाहता है। चित्त शान्त हो जाता है, दिव्यनेत्रोंके सामने आ जाता है। सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म जीवात्मा दिखने पड़े और सुहावने दृष्टिगत होने लगते हैं, इन्द्रियां कैसी व्यापाररहित हो जाती हैं, मेरा कैसे स्वच्छ भावको निरीक्षण करने लगे

हैं, मन कैसा आनन्दामृतमें 'पनडुब्बी' सा वारंवार गोते लगाने लगता है,—रोमावली कैसी एकदमसे खड़ी हो जाती है। अन्धकारका परदा कैसा एकाएक आगेसे खिसक जाता है तथा एकदमसे इस शब्द—श्रवणसे कैसी २ अपूर्व पुण्य भावनाओंके हृदयमें संचार होने लगता है।

प्राणी मात्रमें मैत्रीभावना—क्या ही उत्तम भावना है। इस भावनाका आविर्भाव जिस पुण्यात्माके हो गया भला वह व्यक्ति क्या सत्पूज्य नहीं है? क्या उसका पराजय भी तीन लोकमें किसीके द्वारा होना संभव है? नहीं—नहीं कदापि नहीं। प्राणी मात्रमें मित्रत्वकी भावनाका जन्म साधारण शक्तियोंको लेकर नहीं होता उसका जन्म अनन्त, अचिन्त्य शक्तियोंको साथमें लेकर होता है। इस भावनाके उदयसे प्राणी अपने सामने शान्ति समुद्र देखता है—अतुलनीय आनन्दके अनेकों प्रवाह अपने सारे शरीरमेंसे निकलते हुए देखता है। उस महाभाग्यके चारों ओर शुभ भावनाएं तो किन्नरियों जैसी गान करती फिरती हैं।

सत्वेषु मैत्रीकी भावनामें जाति आदि भेद नहीं है-वहीं संकोच विचार नहीं है-इस भावनामें राजा रंक समान भासते हैं-सबको स्थान दान देनेमें हृदय आनाकानी नहीं करता। इस भावनाके साम्राज्यमें मूर्खोंकी अवज्ञा नहीं—नीचोंका तिरस्कार नहीं—विजातियोंसे घृणा नहीं—विदेशियोंसे द्वेष नहीं—चाण्डालसे प्रेमाभाव नहीं। क्या कहें इस भावनामें जिन अगणित रत्नोंका समावेश है—उनका मूल्य, उनकी सुन्दरता वही जान सकता है—जो कभी अपने हृदय मंदिरमें इस पूज्य भावनाका स्वागत कर चुका है।

भगवान! सत्वेषु मैत्री इस दिव्य भावनाका संचार मेरे हृदयमें कर दीजिए, जिससे मैं अपने हृदयमें सबका आह्वानन कर सकूं। मैं जातिगत,—कुलगत, आदि मैत्रियोंको लांघता हुआ विश्वगत मैत्रीको मित्रता समझने लगूं। जिस समय मुझे इस भावनाका उदय होगा उस समय चींटीसे ले हाथी, मगर मच्छादि पर्यन्त मेरी समदृष्टि रहेगी। मैं चींटीको तकलीफ न दे सकूंगा। हाथीका बध न करूंगा—किसी पर कुदृष्टि न डालूंगा—इस समय जो हम नीचोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं—हम अपनेसे नीचे दरजेवाले प्राणियोंसे बातचीत करना पाप समझते हैं—हम विजातियोंसे प्रेम नहीं करते—ये सब हमारी नीच वासनाएं फिर शीघ्र ही नष्ट हो जावेंगी। आजकल जितने अनर्थ हो रहे हैं या आगामी होवेंगे, उन सबका कारण एक प्रेमाभाव ही है—सच्चे प्रेमके न होनेसे ही संसारमें नाना अनर्थ हुआ करते हैं। यदि हमारा सबसे प्रेम हो जावे—हम सबको अपना मित्र समझने लगें तो फिर संसारमें अनर्थोंका नाश एकदम हो जाय। विश्वगत मैत्री ही सच्ची मित्रता कहला सकती है। यों तो सब ही प्रेमके उपासक हैं। थोड़ा बहुत प्रेम थोड़े बहुत प्राणियों पर सब ही किया करते हैं पर प्रेमका ध्येय विश्वगत प्रेम ही होना चाहिए।

प्रेमीका हृदय एक सुन्दर सरोवर है जिसमें सद्गुण रूपी बहुतसे कमलोंका विकास हो रहा है।

प्रेमीका चित्त शांतिनिकेतन ही समझिए। प्रेमीका ध्यान एक विचित्र समाधि है जो सबको सुखी देख लग जाया करती है। और दुःखित देख खुल जाती है। प्रेमीकी समाधिमें विश्वके सब ही प्राणी शान्त दिखाई देते हैं। प्रेमीका वैरी दुनियामें कोई हो ही नहीं सकता। प्रेमीका हृदय एक सुन्दर कानन जहांपर छोटे छोटे अनेक प्रेमके स्रोत बहा करते हैं—जहां पर प्रेमामृतकी छोटी २ अनेक नदियां बहा करती हैं—जहां पर प्रेमामृतके पिपासी चातक अपनी तृष्णाको शान्त किया करते हैं, जिस काननमें प्रेमामृतसे वृक्ष सींचे जाते हैं। जिन वृक्षोंमें प्रेममयी ही पत्ते हिलते हैं और जिनमें प्रेममयी ही फल फलते हैं। और जिन फलोंको प्रेमी ही खाया करते हैं उस वनकी शोभा क्या ही विचित्र शोभा है। जिस प्रेमवनमें प्रेमके ही शब्द पशु, पक्षी बोला करते हैं जहां पर शेर बकरीसे प्रेम करता है—गायका बच्चा सिंहनीका और सिंहनीका बच्चा गायका दुग्धामृत पान करता है—जिस वनमें प्रेमामृतकी सुगंधिसे सुरभित समीर वृक्षोंसे अठखेलियां करती रहती है। कभी वृक्षोंको हिलाती, कभी उनका नीचे सिर झुका देती और कभी २ उनके प्रेमपुष्पोंका रस लेकर जंगलमें भाग जाती है कभी कभी जब सूखे पत्तोंसे जब वह समीर प्रेमका सबक सुनने बैठ जाती है। तब वे पत्ते—खरखरा कर हंस पड़ते हैं—कई वृक्ष पत्र तो मारे हर्षके वृक्षोंसे नीचे कूद कूद कर तमाशा देखने लगते हैं। तब वह—सुन्दर समीर जलमें क्रीड़ा करने लगती है। प्रेममयी लहरें पवनका स्वागत करतीं और विलीन होती जाती हैं। अ-ह-ह कैसा पुनीत प्रेमीका हृदय है जहां पर यह सब पुण्यमयी लीला होती रहती है। कहिए ऐसे परम पवित्र प्रेमीके प्रेमवनमें निवास करनेको किस सहृदयका मन उल्लसित न होता होगा ?

तब आइए प्रेमीगण, हम सब मिलकर सत्वेषु मैत्रीको लक्ष्य बनाकर एक प्रेम मंदिरकी स्थापना करें। उसमें हम प्रेमकी ही मूर्ति स्थापित करें, और हम सब मिलकर प्रेमदेवकी पूजा कर प्रेमपुजारी बनें और प्रेमामृतका पान करें।

गुणिषु-प्रमोदं भगवन्! आप हमें गुणग्राही बना दीजिए। गुणवानोंको देख हम परम हर्षित हों—यही हमारी भावना है।

जिस जाति या देशमें गुणवानोंका सन्मान नहीं है—उन्हें देख लोग प्रमुदित नहीं होते उस देश और उस जातिका प्रलय अवश्यम्भावी है। जिस तरह चुम्बकमें लोहेको खींचनेकी शक्ति है उसी तरह—मोदमें—आनन्दमें—हर्षमें भी दूसरेके गुण आकर्षण करनेकी शक्ति भी अवश्य है—योगीश्वर परमात्माका नाम बड़े मोदसे लेते हैं उनका स्वागत बड़े आमोदसे करते हैं—उनके गुणोंका आदर करते हैं इसीलिए योगी परमात्म-रूप ही हो जाते हैं—परमात्मीय समस्त गुणोंको वे आकर्षित कर लेते हैं—सत्य है जो जिसमें सच्ची लगन रखता है—वह उसे प्राप्त कर ही लेता है। गुणवानोंको देख हर्षित होना, उत्थापन देना, सेवा सुश्रूषा करना यह सब उनके गुणोंको आकर्षित करनेका एक दिव्य मंत्र है।



अजमेरके सुप्रसिद्ध श्री दिगम्बर जैन मन्दिरका दृश्य.

अजमेरके दिगम्बर जैन मन्दिर (नशियां) के समवशरणका दृश्य.

जिन्हें उच्च बननेकी अभिलाषा है—जिन्हें गुणी बननेकी भावना बड़े जोर शोरसे उठ रही है—जिन्हें लोकोत्तम बनना सुहावना लगता है-जिनको सरस्वतीके पदपंकजोंमें भ्रमर बनकर गुंजार करना है वे सब ही सज्जन इस भावनाको हृदयंगत करें। गुणियोंमें प्रमोद करनेसे अवश्य ही सफलताकी संभावना है अन्यथा नहीं।

क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वं—

संसारके प्राणी दो भागोंमें विभाजित किए जा सकते हैं। १दयालु, २दयापात्र। ऐसा कोई भी दयालु नहीं है जो दया करनेमें अनुदार हो। प्रत्येक सहृदयका कर्तव्य यही होना चाहिए कि दयापात्रों पर दया करे। आज इस भूमण्डलमें—देशमें इतने दुखारी प्राणी हैं कि जिनकी गणना नहीं हो सकती। यदि अनाज कम हो और खानेवाले अधिक हों तो उतने ही प्राणी जीवित रह सकते हैं कि जितनोंके लिये खाद्य वस्तु है। इसी तरह संसारमें दयापात्र क्लिष्ट जीव अधिक हैं और दयालु थोड़े हैं इसलिए उतने ही क्लिष्ट जीव-दुखी प्राणी जीवित रह सके हैं जितनोंके रक्षणमें दयालु लगे हुए हैं। इसलिए यह दुःखी संसार अवलम्ब चाहता है।

परमात्मन्, मम हृदयमें अवतरण कर मुझे इस भावनाका आविर्भाव कर दीजिए—जिससे कि मैं दुःखित प्राणियोंपर करुणा करूं—सेवामें दत्तचित्त रहूं। ये निर्बलमेद देखिए कैसे पीड़ित हैं, घरमें धन नहीं है, शरीरमें बल नहीं है, सदा रोगी रहा करते हैं। इन्हें देख हृदय चाहता है—इनका दुःख विमोचन करूं—इनको औषधि दूं—इनकी सेवासे चित्त न मोडूं। केवल दयाका पात्र मनुष्यको ही नहीं मानूं पर पशु पक्षियोंके भी दयादानमें कमी न करूं; बस प्रभु यही मम भावना है।

माध्यस्थ्य भावं-विपरीतवृत्तौ

जो दिन रात हमारी खराबी चाहते हैं—जो हमें पद पद पर सताते—पराजय करनेमें, दत्तचित्त रहा करते हैं, जो हमसे सदा रुष्ट रहकर हमको पददलित करना चाहते हैं, जो हमारे उत्कर्षको सहन नहीं कर सकते—ऐसे प्राणियोंपर भी क्षमा करनेको वीरोंने उपदेश दिया है। यों तो साधारण अपराधीको तो प्रत्येक व्यक्ति क्षमा कर दिया करते हैं पर जो हमारे नाश करनेपर भी उतारू हैं उनपर क्षमा करना वीर पुरुषोंका लक्षण है—क्षमा वीरस्य भूषणं—यह नीति भी है।

विपरीतवृत्ति—वाले प्राणियोंसे मैं द्वेष न करूं, उनका अनर्थ मैं न चाहूं, साथ २ उनसे मैं अत्यन्त मित्रता भी न जोडूं। कारण कि ऐसे प्राणियोंसे न वैर भला न हेत ही अच्छा—कहा भी है—

> हित हू भलो न नीचको नाहिन भलो अहेत।
> चाट अपावन तन करे काट स्वान दुःख देत॥

इस लिए ऐसे प्राणियोंपर माध्यस्थ ही रखना उत्तम है, बस प्रभो यही मैं चाहता हूं।

यदि इन समस्त भावनाओंका आदर हमारे देशवासियोंमें हो जाय, यदि हमारा भ्रातृमंडल इन शुभ भावनाओंको हृदयमें स्थान देनेमें अपनी भलाई समझे, तो यही भारत स्वर्गपुरीसे भी बढ़कर हो जावे—फिर हमें मुकुट आदिसे विभूषित सर्वगुण सम्पन्न भारतपिताके सुन्दर दर्शन प्राप्त हों इसमें सन्देह नहीं।

परमात्मन्, इन भावनाओंका उदय प्रत्येक सहृदय प्राणीके हृदयमें हो—सबही परस्पर प्रेम-प्रमोद-दया और क्षमासे सुसज्जित हों यही मम भावना है।

शुभंभूयात्—

जातीयता कैसे उत्पन्न होगी ?

(लेखक-जुगमन्दिरलाल जैवरिया, सूरत।)

आज समाजके सामने उक्त प्रश्न उपस्थित हो रहा है, क्योंकि इससमय जैन समाजमें जातीयता नहीं, प्रेम नहीं उसके खंड २ हो रहे हैं, कोई किधर लुढ़क रहा है कोई किधर। कुछ लोग तो जैन शास्त्रोंको खंडन करके जैन धर्मको एक नया जामा पहिनाकर जातीयताके उत्पन्न होनेका स्वप्न देख रहे हैं, कोई समाजमें विधवा विवाह आदि जैसे सुधारोंको करके जातीयता उत्पन्न करना चाहते हैं-तथा इन्हीं लोगोंने कार्यसिद्धिके लिये समाजके नवयुवकोंको एक नवीन-समाज बनानेका उपदेश भी दे डाला है, परन्तु हम कहते हैं कि उनके इन कार्योंसे जैन समाजकी उन्नति कदापि न होगी उल्टे वह अवनति-नास्तिकता भ्रष्टाचारके गर्त्तमें गिर जायगी।

जिस समाजने अपनी उन्नति की है उसने शिक्षाबलसे ही की है। जिस प्रकारकी शिक्षाका जातिमें प्रचार किया जाता वह जाति भी वैसी ही बन जाती है। परन्तु हम देखते हैं कि समाज सुधारका दम भरनेवालोंका ध्यान इस ओर बिलकुल नहीं है। वर्तमान समयमें पूर्वकी अपेक्षा समाजमें शिक्षाका प्रचार अधिक है। किन्तु जिस शिक्षाका प्रचार जिस प्रकार समाजमें होना चाहिये वैसा नहीं होता। समाजको इस समय पौर्वात्य और पाश्चात्य दोनों ही शिक्षाओंके विद्वानोंकी आवश्यकता है जिनकी वर्तमान शिक्षा प्रणालीसे पूर्ति नहीं होती। संस्कृत विद्यालयोंमें इसकी परमावश्यकता है कि उनमें अंग्रेजी शिक्षाका गौणतासे उत्तम प्रबन्ध हो। उक्त विद्यालयके छात्रोंको इस बातकी आवश्यकता नहीं कि वे अंग्रेजीके भूगोल, इतिहास, गणित आदिकी भी शिक्षा प्राप्त करें, केवल आचार्य तथा तीर्थ-कक्षा पास करनेवाले छात्रको अंग्रेजीके साहित्यका इतना ज्ञान हो जाय कि वह वर्तमान अंग्रेजीके पत्रोंकी भाषा भलीप्रकार समझ सके।

अब हम उस शिक्षाके विषयमें कहेंगे जिसको प्राप्त करना बालक तथा उनके माता पिता आवश्यक समझते हैं। वह है अंग्रेजी स्कूलों और कालिजोंकी शिक्षा। समाजमें जितने छात्र इस शिक्षाको प्राप्त करनेवाले होंगे उतने संस्कृतके न होंगे इस कारण समाजका ध्यान हम इधर विशेष आकर्षित करते हैं। हम देखते हैं कि प्रायः कालिजोंसे निकले हुए छात्र अपने धर्मसे अज्ञान और श्रद्धाविहीन होते हैं। इसी कारण फिर नवयुवकोंका धर्मका प्रचार, समाजका उत्थान आदि करना कर्तव्य था वही आज ऐसा कार्य कर रहे हैं, जिससे धर्म और समाजके उत्थान होनेकी आशा नहीं। यदि इसका कारण देखा जाय तो यही कहना होगा कि समाज इन नवयुवकोंको धार्मिक शिक्षा देनेका कोई प्रबन्ध नहीं करती। वे विचारे जैसी कालिजोंमें शिक्षा प्राप्त करते हैं, जैसे आदर्श उनके सामने रखे जाते हैं उन्हींका वे समाजमें भी प्रचार करना चाहते हैं।

साथ एक अच्छा छात्रालय हो। इसमें पढ़नेवाले छात्रोंको नियमसे धार्मिक शिक्षा दी जाय। १२॥ लाख जैनियोंमें—अनेक करोड़पतियों-लक्षाधिपतियोंके मौजूद होते हुए—एक कालिजका होना कोई मुश्किल बात नहीं। केवल आवश्यकता है कर्मवीरोंकी और स्वार्थत्यागियोंकी। जिस दिन वे इसका बीड़ा उठा लें उसीके छःमास बाद जैन कालिज भी स्थापित हो जाय।

जैनकालिजके स्थापित होजानेपर जिस प्रकार एंग्लो दयानंद कालिज, थियोसोफिकल कालिज और सनातनधर्म कालिजसे निकले हुए ग्रेजुएटोंमें अपने धर्म पर दृढ़ आस्था होती है, देशसेवा और समाजसेवाकी लगन होती है, उसी प्रकार जैन कालिजसे भी वैसे ही ग्रेजुएट निकलेंगे जिनका धर्मप्रचार समाजसेवा, देशसेवा करना मूल मंत्र होगा और उसी समय जैनसमाजमें जातीयता उत्पन्न होगी।

वर्तमान अकाल।

(लेखक-मास्टर छोटेलाल जैन, खुर्द)

चहुँ दिशि अति भारी आपदा है दिखाती।
प्रभुवर! सहसा जो धैर्यको भी हटाती॥१॥
अहह! प्रथम हमारे पास पैसा नहीं है।
तिसपर दुखदाई काल भी तो यहीं है॥२॥
इस समय हमारा आज दुर्भाग्यसे है।
प्रियवर अबलोंको "कोढ़में खाज" ये है॥३॥
अतिश्रम करते हैं जीविकाके लिये ही।
पर बहु जन सोते पेट भूखा लिये ही॥४॥
निशिदिन करते जो देशका काम भारी।
कृषि गण उपकारी दीनताके भिखारी॥५॥
पर इनके बिचारोंकी दशा देखते ही।
जल निकल पड़ेगा हाय पाषाणसे भी॥६॥
वह नव शिशु जो है सर्वथा अज्ञानी।
बिलख बिलख रोता भूख ही की व्यथामें॥७॥
यह लख उसको माँ प्रेमसे गोद लाती।
पर विवश निराशा वारि धारा बहाती॥८॥
यदि कुछ दिनमें ही दुःखका अन्त होता।
तब फिर मन ऐसा धैर्य क्यों आज खोता?॥९॥
हर समय हमें तो व्यग्र होना पड़ा है।
यह तन रखनेका हेतु क्या आपदा है?॥१०॥
प्रिय कृषक हमारे देशके रोजगारी।
अब सब जनको है पेटका प्रश्न भारी॥११॥
पद पद पर कांटे हा! बिछे देखते हैं।
प्रति पल हम पूरा वर्ष सा लेखते हैं॥१२॥
नर तन यह पाके सौख्य थोड़ा न पाया।
अतिशय दुःखमें ही काल सारा गमाया॥१३॥
मनुज हम हुए क्यों हा! यही खेद होता।
जनम समयमें ही ठीक प्राणान्त होता॥१४॥
फिर यह दुखदाई ठोकरें तो न खाते।
इस दिवस हमारे देखनेमें न आते॥१५॥
अति पतित कहाती भूमिकी धूलि सारी।
पर वह चढ़ती है शत्रुके शीस न्यारी॥१६॥
लघुतर उससे भी नीचता है हमारी।
सब गति मति प्यारी भीरुता में बिसारी॥१७॥
धन अमित कहां—जो विश्वव्यापी कटाएं!
अब हम सब तो हैं देखते आपदाएं॥१८॥
इस समय हमें जो पूर्वकी याद आती।
वह बनकर ज्वाला है कलेजा जलाती॥१९
तन सब जलके हा! शेष हड्डी रही है।
अहह! कुछ दिनोंको मांस भी तो नहीं है॥२०॥
अब विनय हमारी है प्रभो! दो सहारा।
तब फिर बह जावे देशमें शान्ति धारा॥२१॥

GOALS.

(The following is a lecture given to the Buddhist Society of Great Britain and Ireland in October, 1918, in London).

The last time I had the pleasure of being here, when I spoke about the Jain view of dharma—of duty, something in the subsequent discussion led your secretary, Mr Balls, to remark that althoght Buddhism did not teach that there is such a thing as soul, yet Buddhism taught the doctrine of illumination. I did not at the time make any futher reference to this idea, but on the way home thoughts about it occured to me, and I eventually took the liberty of writing your Secretary a letter expressing my reflection on the subject. He acknowledged the letter, and asked me if I would give a lecture on "The Goal of Illumination'. I consented, but of course in doing so it is the Jain doctrine that I shall chiefly be dealing with; and although the phrase is a Buddhist one, still it is sufficiently similar to the Jain idea as far as I understand it, to enable me to use it.

When a lecturer gives a lecture it is natural for the audience to expect him to lecture on something he knows about, but the nature of this subject is such that to have a knowledge of it is for the ordinary person impossible. We can not speak about the goal of illumination with knowledge unless we have ourselves reached that goal. So in asking me to speak on the subject, what is it that is expected? What shall I be expected to say? Probably what is expected is a description of the goal as far as I am acquainted with it from hearing about it or reading about it: and this is what I will try to give you. I will try to tell you what I know about the Jain idea of the goal of life as far as I have heard and read about it.

There is, however, another way of dealing with the subject. We certainly can not describe the goal of life from exeperience, but it may perhaps be reasonably expected of any one that he has in mind a goal of some sort or other which he is trying to reach; and as far as this goal is concerned any man is in a position to speak about it with knowledge, in so far as a man knows what he is aiming at, to that extent he is able to tell you. If he knows what he wants, he can tell you, and he will be speaking about what he knows. If we know what we want we can describe it to other people. Do we know what we want? And if knowing what we want, but not knowing how to get it; we come across somebody else who has got it, by his own efforts, deliberately, we can ask him to tell us how he did it, and if he is a kindhearted person he may perhaps be willing to tell us.

But supposing we are not satisfied with our present condition, and yet do not know what we want, or what is most worth having, we can enquire of others and find out if there is anybody who can tell us what is most worth having.

The Jain goal is omniscience. In Jainism soul is acknowledged, and knowledge is its essential nature Knowledge

illuminates, and full illumintion would be, the same as omniscience. It is simply different language for the same thing, and omniscience or illumination implies or proves the existence of an omniscient or illuminated being, in other words a soul.

Now as both faiths, Buddhism and Jainism, put forward practically the same idea as the goal, the question is, is it worth having ? It must be worth having, because, granting that there is something worth having, then if we are omniscient we shall know what that something is, and we shall know how to get it.

Now as regards description of the goal. Illumination or enlightenment means, of course, spiritual enlightenment. What does a spiritually enlightened person do ? This introduces ethics, and in dealing with ethics we are apt to become preachy, which I wish to avoid. But obviously a spiritually enlightened person would do no harm, and he would do good to his fellow beings. But what the nature of the good that he would do when he has attained his goal would be, is difficult to conceive. Granting that the illumined ones who have been and gone are still in existence in the universe somewhere, what is the nature of the good that they are now doing? One answer would be to say that their teaching is still doing good to mankind; but that is not what they themselves are now doing. It seems to me, however, that it is impossibe to conceive what is the nature of the life that is led when once we have attained our ideal condition. And yet we must have some idea of the goal, for we could not strive for something of which we have no idea. As far as I have heard about the Buddhist goal, its description is chiefly negative; it is a condition of no pain, no misery, no disease, old age, or death, no grief, no quarrels, etc. And yet there seems to be the one positive condition of illumination. Illumination means enlightenment, and enlightenment means knowing. But as far as I know this is the only positive condition that is mentioned. In the Jain teachings there are one or two other positive conditions mentioned besides knowing. As well as being omniscient or fully enlightened, there is the positive condition of blissfulness; and there is also infinite capacity of activity. But what the nature of the activity is I do not quite know, I do not quite understand this point myself; I do not understand how there can be any activity when there is nothing to accomplish. But even with regard to this point there may be some possibility of getting an idea about it from the fact that time is always the future to come, no matter what condition we are in, and the activity may be whatever activity is necessary to cause the future when it comes, to be satisfactory, and right. But this is only my own idea, and I have no authority from any books for making the statement. At any rate there are those three positive conditions mentioned which are descriptive of the goal, infinite capacity of activity, which is not quite the same as omnipotence; there is blissfulness, and there is omniscience. Then further is continued existence, there is no ceasing to be; It is

life everlasting and the condition in that life is always ideal. And another positive fact about it is that there is individuality, there is no losing of one's individuality by any merging into a universal ocean of life. But of course one is not the only one, there is an infinity of others, of other individuals in a like condition who have reached it by their own deliberate efforts. And then the description of the goal is positive with regard to another point, namely, belief; there is right belief, all the time. This is a positive condition. And another one, namely right action. Whatever the activity, it is always right and never wrong. But I understand that all worldly activity is stopped in the ideal condition. There is no movement of body, no walking, running, jumping, no eating or drinking, no sleeping, no money-making, no wars, no pleasure seeking, no ship-building, no building of houses, or temples, no making of parks or gardens, no digging of mines, no buying or selling, no speech no murders, lying, or stealing, no law-courts, prisons, asylums, schools, hospitals, no fishing or hunting, or picnics, no boating parties, no theatres or dancing, or concerts. All these things are stopped. But of course although there is no participation in such things, still plenty of entertainment. And there is another interesting point here, namely, in view of the fact of omniscience, it would mean that the future as well as the past and the present, we knowd. But alothough the future is known, when it becomes present knowledge instead of future, there is a difference in the quality of the knowledge. Yesterday I knew I was going to be here; that was knowledge of the future. Now I am here and I know it, the present knowledge is different in quality. So that although the future is known in advance, still when it arrives it is not stale. And another point too comes in here, namely the question of predestination. If the future is knowable, we might at first sight think that it is already all predestined and that there is no freedom. But this is not the case directly we remember, that our own choice is part-cause of the events that take place. For instance, the omniscient beings knew a thousand years ago that I was going to give a lecture here to night; but then I give the lecture of my own free choice, and the fact that they knew that I should make the choice and that therefore the lecture would take place does not in any way deny the freedom of my action. My own choice, although foreknown by others, was part-cause of

from all combination with other substance than its own. When we speak of water, we generally mean water in its pure condition." But at present we are not souls in the sense of being pure souls. A quantity of soapsuds, another quantity of seawater, a quantity of milky water could all be called water, but they are not pure water, or water in its natural condition; and in the same sense the living beings around us are souls, but they are not pure souls in their natural condidition," and just as the natural condition of water is what we know it to be so the final goal is the soul in its pure natural condition. That is another way of describing the goal of life. And it is perfectly real and concrete, and not in any way imaginary or fanciful. In knowing anything we know at least four things about it, namely, the substance that it is, the place where it is, at the time, and the condition it is in. We know these four things, place, time, and condition; and if we knew a pure soul we should know these four things about it; we should know the substance of it, we should know where it was at the time, and the condition it was in. The Jain teaching is that there is one part of the universe and only one where those who have reached their final goal exist; they are of a real living substance, and their condition is as I have already described, omniscient, etc.

to be omnipresent in order to be omniscient.

Well, so much for the goal of illumination or omniscience as the Jains call it, as far as a description of it is concerned, both negative and positive, what it is and what it is not. Also the theory upon which the possibility of omniscience is based, namely, that there is such a thing as a soul and that its nature is to know and to have full knowledge or omniscience. The next question is how to reach the goal, or how to be in this condition, for we know that at present we are neither omniscient nor blissful. And yet it is only from one point of view that this is true namely, from the same point of view that soapsuds are not water. From another point of view we are now truly omniscient and blissful, in the same sense that soapsuds are water, that is to say all the qualities of water are there in the soapsuds, but they are obscured by the presence of soap. And so with us souls, all the qualities of the soul, omniscience, etc., are in us, but they are obscured by the presence of what is called 'Karma', and the way to reach the goal of life is by removing this karma, just as the way to get the water in the soapsuds to its natural condition is by removing the soap. Or a better example would be to take seawater, because in this case we start with something (seawater) which has never been in the past water in its natural condition—seawater has always been salt, but this is no reason why it should always remain so. And in the same way the soul in embodied living beings

has always been in an impure unnatural condition, combined with karma; but that is no reason why it should always continue to be so.

So the why to get into the desired condition, that is to say reach the goal of life, is by removing the causes of the present embodied condition in which we find ourselves We must remove the cases one by one. There are four chief causes, namely, delusion, carelessness, passions, and other activities of mind, speech, and body technically called tyoga'. The goal of illumination is not generally attained in a minute, although theoretically it might be if only we could remove all the karmas in a minute. But partial illumination is possible, and we may get this here and now in this life by supressing gross anger, pride, deceitfulness, and greed, which passions, disturb the mind and prevent us from relishing the truth when we hear it, or prevent it from rising in us spontaneously. One of the greatest delusions is the notion that we are our body. "He who says 'let me say this', he is the self, the tongue is but the instrument of saying". This is I Believe quoted from the Upanishads. The knower is the self; the body does not know, it is the self that knows. Delusion is much the same as wrong belief, especially when it is put in to action. We get right belief by keeping the worst degree of anger etc. from rising when it is felt to be rising.

Life is something like a journey, we are travelling. There is a tale about an ordinary plain man who once when travelling met another traveller, and the plain man enquired of the traveller "Where are you going to?" The traveller replied; "Well, now I come to think of it, I do not know". The plain man was annoyed and expostulated etc. etc. Now, if we think of eternity, I may safely say that most of us do not know where we are going; we are simply travelling, but we do not really know where we are going in any precise manner. Most of the faiths of world offer some sort of a goal or destination, and it is for each of us to chose, if we are so inclined, after examination, from among the various goals that are offered; and see what we think of them, and whether they are worth trying for. As far as the future is concerned, of course, we want to be safe; we want to be safe in the future and we want to be in a condition of enjoyment. But alothough religions generally deal with the future, and especially the future beyond the grave, they also deal with the present. Not only do we want to be safe in the future, but we want a fairly decent life here and now, and the rules of life as given by Jainism will, if followed, as I believe, cause us to enjoy the present; will make our present lives at least more tolerable and more enjoyable. We all want peace and happiness, and peace and happiness are in ourselves, and according to the Jain teaching the more we lead a life of doing good and not injuring other living beings the more will our life be peaceful, happy and enjoyable here and now.

H. warren



(લે. કેશવલાલ ચુનીલાલ શાહ.)

શારીરિક અને માનસિક ઉન્નતિ એજ સર્વ ઉન્નતિનું મૂળ છે. આવા પ્રકારની ઉન્નતિ મેળવવા "બ્રહ્મચર્ય" ની અવશ્ય જરૂર છે. પણ બ્રહ્મચર્ય એટલે શું એ ઘણા થોડાજ લોકો સમજે છે, અને જેઓ સમજે છે તેઓ પણ બ્રહ્મચર્યના પાલનના સર્વ નિયમોથી અને તેના ભંગ કરનારાં વર્તનોથી સારી રીતે જાણીતા હોય એમ જણાતું નથી.

વિર્યનું રક્ષણ એજ સાચું બ્રહ્મચર્ય છે, અને વીર્યનો મિથ્યા ઉપયોગ કરવાથી બ્રહ્મચર્યનો ભંગ થાય છે. પણ કેવાં કેવાં ખાનપાનો, આચરણો, વિચારો અને વ્યવહારો વીર્યનો ક્ષય કરે છે અને વીર્યના રક્ષણ માટે આપણે શું શું સમજવું અને કરવું જોઇએ તે આપણે જાણવું જોઇએ.

આ જગતમાં સર્વ મનુષ્યો સુખની અભિલાષા રાખે છે પણ ખરૂં સુખ ક્યારે પ્રાપ્ત થાય છે તે તેઓને વિદિત હોતું નથી. હાલમાં હિંદુસ્તાનમાં શરીરે અસ્વસ્થ એવા કેટલા યુવાનો નજરે પડે છે? શું આવા મેંઢે પાંચ મળી શકશે! આનું કારણ શું? કે તેઓના બંધારણજ નાનપણથી કાચાં હોય છે અને ફરીથી કાચી વયમાં કાચાં બંધારણ બાંધે છે, પણ યાદ રાખો કે જેઓ આવા યુવાનો જોવાને તલસી રહ્યા છે તેઓએ "Do unto others as you would be done by." આ અંગ્રેજી ઉત્તમ વાક્યને અમલમાં લાવવું જોઇએ, આ વાક્યનો અર્થ એવો થાય છે કે બીજાઓ તરફથી તમારા પ્રત્યે જેવા વર્તનની તમે ઇચ્છા રાખો, તેવીજ વર્તણુક તમે તેમના પ્રત્યે રાખો, અથવા જેવા યુવાનો તમે શોધો છો તેવાજ યુવાનો બનવાને તમે પોતેજ પ્રયત્ન કરો. આપણા પ્રાચિન વિદ્વાનો પણ આવો ઉપદેશ કરતા આવ્યા છે, આવા પુરૂષો મેળવવા બ્રહ્મચર્યનો મહામંત્ર અવશ્ય જાણવો જોઇએ. કારણ કે બ્રહ્મચર્યનો ભંગ કરવાથી શારિરીક સ્થીતિને મોટો ધોકો પહોંચે છે; અને માનસિક સ્થીતિનો આધાર શારિરીક સ્થીતિ ઉપર છે, અને જેની માનસિક શક્તિ નષ્ટ થઇ છે તે માણસ આ દુનીયામાં કાંઇ પણ કરી શકતોજ નથી. અહા! બ્રહ્મચર્યનો આવો પ્રભાવ છે તો તેના મહામંત્રનો અર્થ કેમ ન જાણવો જોઇએ.

આપણા ભારત વર્ષમાં જીંદગીના ચાર ભાગ કરવામાં આવ્યા છે. અને તેમાં પહેલો ભાગ વિદ્યાભ્યાસ માટે રાખવામાં આવ્યો છે અને તે પચીસ વર્ષમાં વિદ્યાર્થીઓને બ્રહ્મચર્ય વ્રત પાળવાનું હોય છે. કારણ કે બ્રહ્મચારીની માનસિક શક્તિઓ પ્રબળ હોય છે અને તે શક્તિઓનો આધાર શારીરિક સ્થીતિ ઉપર છે અને શારીરિક સ્થીતિનો આધાર બ્રહ્મચર્ય ઉપર છે, અને તેથીજ તેને પ્રધાન પદ આપેલું છે.

પ્રાચિન કાળમાં આઠ વર્ષની વયે વિદ્યાનો આરંભ કરવામાં આવતો હતો. આઠમે વર્ષે બાળકોને ઉપવીતનો સંસ્કાર કરાવી તેમને ગુરૂને ઘેર મોકલવામાં આવતા હતા. અને પચીસમે વર્ષે પોતાનો વિદ્યાભ્યાસ પુરો થયે ઘેર આવતા. અને ત્યાર પછીથી સંસારનો ઝુંડો ફેરવતા હતા. જ્યારે હાલમાં સંસાર તરફ દ્રષ્ટી નાખીશું તો આઠ દશ વર્ષની વયનાંજ બાળક બાળીકાઓને ઢીંગલા ઢીંગલીની માફક સંસારમાં ઘુસડી દેવામાં આવે છે.

પણ આવા કુચાલ હવે ધીમે ધીમે દૂર થતા આવ્યા છે. પચીસ વર્ષના પુરૂષે સોળ વર્ષની સ્ત્રીથી પ્રજા ઉત્પન્ન કરવાનો યત્ન કરવો જોઇએ. આવોજ નિયમ પ્રાચિન આર્ય લોકોનો હતો. તેઓ વધારેમાં વધારે ૪૮ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાળતા અને સ્ત્રીઓ ૧૬થી ૨૪ વર્ષ સુધી પાળતી. જ્યારે હાલમાં ૨૪ વર્ષમાંજ આયુષ્ય પૂરૂં

થાય છે. હવે ગૃહસ્થ બ્રહ્મચર્યવ્રત એટલે શું? આવી રીતે યોગ્ય ઉમરના પુરૂષે યોગ્ય ઉમરની પોતાની વિવાહીત સ્ત્રી ઋતુમતી થયા પછી ઋતુસ્રાવ બંધ પડ્યા પછીના દિવસોમાં તેને ઋતુદાન દેવું, તે સામાન્ય બ્રહ્મચર્ય વ્રત કહેવાય. ગર્ભાધાન કરવાના હેતુથી પોતાની પરણેલી સ્ત્રીનો મહીનામાં એકજ વાર અને તે પણ ઋતુમતી થયા પછીના એક અનુકુળ દિવસે સમાગમ કરનારા પુરૂષો સામાન્ય બ્રહ્મચારી ગણાય છે.

ત્યારે વ્યભિચારી કોણ? જેઓ પરસ્ત્રી સેવન કરે તેઓજ ફક્ત વ્યભિચારી કહેવાવાને લાયક છે? શું જેઓ પોતાની સ્ત્રી સાથે અતિ વિહાર કરે તે વ્યભિચારી નહિ? કેમ નહિ જેઓ બ્રહ્મચર્યના નિયમથી ઉલટી રીતે અતિ ભોગમાં વર્તે તે પણ વ્યભિચારી કહી શકાય.

ભારત વર્ષની પાયમાલીનું કારણ અથવા જૈન જાતિની એક દશકામાં એક લાખ કરતાં પણ વધારે વસ્તી ઘટી ગઇ છે તેનું કારણ આ એક પ્રકારનું વ્યભિચારપણુંજ છે, અને હજી પણ બાળલગ્ન રૂપી યજ્ઞમાંથી બચવાનો પ્રયત્ન નહીં કરે તો બીજા દશકામાં જૈનોની વસ્તી કેટલી રહેશે તે કહી શકાય નહિ.

જે આર્યો સરાસરી સો વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવતા હતા, તેમની ભાગ્યહીન પ્રજાના આયુષ્યની સરાસરીનો આંકડો ત્રીસની ત્રાસદાયક સંખ્યાની ઉપર આવીને ઉભો છે! જ્યાં પ્રાચીન આર્યોમાં પળાતા આ બ્રહ્મચર્યના નિયમો પુનઃપિ સ્થાપન થાય અને એ નિયમાનુસાર ક્રિયા પ્રાપ્ત થાય તો પુનરપિ આપણે અને આપણી ભાવી પ્રજા ક્રમે ક્રમે શારીરિક અને આત્મિક ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરવાને શક્તિવાન થઇ શકે; અને તેને માટે આપણે પ્રયત્ન કરવો જોઇએ.

હવે બ્રહ્મચર્ય એટલે શું? બ્રહ્મચર્ય એ વીર્ય રક્ષણને માટે પાળવાનો પવિત્ર કાયદો છે, જે કાયદો કુદરત પાળે છે અને ઉલ્લંઘન કરનારાઓને શિક્ષા કરે છે. બ્રહ્મચર્યમાં માત્ર ધાર્મિક કે સામાજિક નીતિનેજ નહિ પણ શારીરિક નીતિશાસ્ત્રના અગત્યના અંગનો સમાવેશ થાય છે; બ્રહ્મચર્ય એ શારીરિક અને માનસિક ઉન્નતિનું પહેલું પગથીયું છે; ઇન્દ્રિયોને નિયમમાં રાખવી એટલેજ બ્રહ્મચર્યનો તત્વાર્થ છે. જો તેને ધર્મ કર્તવ્ય કહો તો તે ભરતખંડના આર્યોનું નહિ પણ પૃથ્વીપર વસનારા પ્રત્યેક માણસનું, પુરૂષ તેમજ સ્ત્રીનું, એક પવિત્ર કર્તવ્ય છે. પ્રત્યેક મનુષ્યે બ્રહ્મચર્ય પાળી બ્રહ્મચર્યનું વ્રત ધારણ કરવાની જરૂર છે.

શરીરમાં ધાતુઓની વૃદ્ધિ ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય સુધીમાં થાય છે. ૨૫ વર્ષે યૌવન પ્રાપ્ત થાય છે અને ૨૫ થી ૪૦ વર્ષની વય સુધીમાં યૌવનનું પોષણ થઇ સર્વ ધાતુઓ પુષ્ટ થાય છે. ચાલીશ વર્ષે સર્વ ધાતુઓ સંપૂર્ણતાને પામ્યા પછી તે ધાતુઓ સ્વપ્ન, પ્રસ્વેદ, આદિ દ્વારોથી નીકળવા માંડે છે અને એજ સમય વિવાહને માટે ઉત્તમ છે અને તેથીજ ઘણાં આચાર્યોએ ૪૦ વર્ષે લગ્ન કરવાની ભલામણ કરી છે. પણ આપણા દેશમાં તો ચાલીશ વર્ષે વૃદ્ધાવસ્થાની કરચલીઓ પડવા માંડે છે, અને વગર સન્યાસે સ્ત્રી સેવનના ત્યાગની અવસ્થામાં આવી પડાય છે. આ વિષયમાં આપણા દેશીઓની સ્થીતિ ઘણીજ શોકજનક થઇ પડી છે અને તેનાં અનેક કારણોમાં બ્રહ્મચર્યનો અભાવ અને બાળ લગ્ન રૂપી વિનાશકારક રૂઢી એ બે મુખ્ય કારણોને હું મોખરે મુકું છું. સ્ત્રી પુરૂષના લગ્ન ધર્મના નિયમોથી કેવળ અજ્ઞાન એવો ૧૬ વર્ષની કાચી વયનો છોકરો "પિતા" અને "બાપા" ની પદવીને પ્રાપ્ત થાય છે! તથા માતા તરીકે પવિત્રમાં પવિત્ર અને અત્યંત મહત્વની તથા જોખમદારી ભરેલી ફરજ બજાવવાનું કામ ૧૨-૧૩ વર્ષની બાળકી (એક કાચી કળી જેવી કુમારિકા) ના હાથમાં આવી પડે છે! અફસોસ! હજારો વખત અફસોસ! માણસ જાતની અધમ અવસ્થાનું આથી વિશેષ અધમ, વિશેષ નિર્લજ્જ અને વિશેષ નામોશી ભરેલું બીજું ચિત્ર હું તમોને આપી શકતો નથી.

આવી નાનાં બાળકો સંસાર માંડે, એ શું

માણસ જાતની અધમ અવસ્થાની નિશાની નથી ? શું તેઓને આવી નાની વયમાં યૌવનાવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે ? હું કહું છું કે તેમાંનું કશું નથી.

આધુનિક વિવાહોના ઉપાસકો પણ હજુ આ બલામાંથી મુક્ત થઇ શક્યા નથી. પ્રાચીન કાળના આર્યોએ લગ્નના હેતુમાં "સારી પ્રજા ઉત્પન્ન કરવી" એજ મુખ્ય માનેલું હતું પણ હાલની સ્થિતિ તો પાયા વિનાના ઘર જેવી થઇ રહી છે.

બ્રહ્મચર્યનો સાચો અર્થ "વીર્ય રક્ષણ" એવો થાય છે, વીર્ય એજ શરીરનો રાજા-આત્મા છે. શરીરના આ પ્રાણ તથા આત્માનું રક્ષણ કરવું એ કેવા મોટા મહત્વની વાત છે, એ કહેવાની કાંઇ જરૂર નથી. નાની વયમાં જુવાનીના વિકારો અને વિષયની ઇચ્છા વડેજ આકાશે ધામ થાય છે. અને એવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલા પુરૂષોના પુત્ર કેવા થાય તે સહેજ જણાય તેમ છે.

ત્યારે બ્રહ્મચર્ય ક્યાં સુધી પાળવું ? આને માટે પુરૂષને માટે ઓછામાં ઓછી પચીસ વર્ષની વય અને વધારેમાં વધારે ૪૮ વર્ષની વય નિર્માણ કરવામાં આવી હતી તેજ પ્રમાણે સ્ત્રીઓને માટે ૧૬ થી ૨૫ વર્ષની વય નિર્માણ થઇ હતી. પણ હાલમાં જ્યાં આઠ આઠ વર્ષની વયનાં ઢીંગલા ઢીંગલી જેવડાં અજ્ઞાન બાળકોની પાસે "અગ્નિ દેવની સાક્ષીએ પતિ પત્નીના પવિત્ર ધર્મની પ્રતિજ્ઞાઓનું ફારસ ભજવવામાં આવે ત્યાં બ્રહ્મચર્યનો પ્રશ્નજ ક્યાં રહ્યો ?

તેમ છતાં ગામડાંના લોકો શહેરી લોકો કરતાં વધારે આરોગ્ય અને વધારે મજબુત હોવાથી નિરંતર ઉદ્યોગમાંજ લાગેલા હોવાથી, અને તેમની આસપાસ વિકારોને ઉત્પન્ન કરે એવી સાધનો થોડી હોવાથી તેઓમાં જુવાની મોટી વયે આવે છે, તેઓ વધારે આરોગ્ય અને તંદુરસ્ત રહી શકે છે અને દીર્ઘ આયુષ્ય ભોગવી શકે છે.

ખરૂં જોતાં, વીર્ય રક્ષણનો મ્હોટો આધાર માબાપોની સમજણ ઉપર આવીને રહેલો છે. પણ અફસોસની વાત એ છે કે, માબાપો ખોટા ધર્મ અને ખોટી રૂઢીઓને આધીન થયાં છે. વધારે દુઃખદાયક સ્થિતિ તો થઇ પડી છે, કે, એક તરફથી આપણે આપણાં ધર્મશાસ્ત્રમાં શ્રદ્ધા રાખનારા આસ્તિકપણાનો ડોળ અને દાવો કરીએ છીએ, ત્યારે બીજી તરફથી એજ આપણાં સત્ય ધર્મશાસ્ત્રની આજ્ઞાઓથી આપણે અજ્ઞાન હોઇએ અથવા ખરૂં ખોટું જાણવાને બેદરકાર થયેલા છીએ. શું પવિત્ર શાસ્ત્રો આઠ આઠ વર્ષના બાળકોના વિવાહ કરવાનું ફરમાવે છે ? શું બાળ લગ્નના પક્ષમાં કહે છે ? નહીં પણ તેઓ તો યોગ્ય ઉંમરે સંસારમાં પડવાની ઇચ્છા બતાવે છે.

ખરી રીતે કન્યાએ ઋતુમતી થયા પછી ત્રણ વર્ષ સુધી પોતાથી અધીક ગુણવાળા વરની વાટ જોવી, તેટલામાં તેવો વર ન મળે તો પછી પોતાના જેવા ગુણવાળા વરને પરણવું. ભીષ્મપિતામહે મહારાજા યુધિષ્ઠિરને પણ એવોજ અભિપ્રાય આપેલો છે

પછી જે બ્રહ્મચર્યના કાયદાનું ઉલ્લંઘન કરે અથવા "સોળ વર્ષ પુરાં ન થયાં હોય એવી (ન્હાની વયની) સ્ત્રીમાં પચીસ વર્ષ પુરાં થયાં વિનાનો પુરૂષ જો ગર્ભાધાન કરે તો તે ગર્ભ માતાની કુખમાંજ નાશ પામે; અને કદી જન્મે તો જીવે નહિ, ને કદી જીવે તો દુર્બળ રહે; વાસ્તે અતિ બાળ વયની સ્ત્રીમાં ગર્ભાધાન કરવું નહિ."

આ બધી ખરાબીઓનો અટકાવ થવા માટે બ્રહ્મચર્ય પાળવાની એટલે વીર્ય રક્ષણ કરવાના જરૂર છે અને તેજ ભારતવર્ષમાં વીર રત્નો પેદા થશે.

પણ એક એમ માને છે કે ઇંદ્રિયોને એકવાર તૃપ્ત કર્યા પછી તે વસ્તુની કે વિચારની અભિલાષા રહેતી નથી પણ આ અભિપ્રાય ભૂલ ભરેલો છે, ઇન્દ્રિયોના વિષયની તૃપ્તી નથીજ થતી. વિષયની જેમ જેમ વધારે પ્રવૃત્તિ તેમ તેમ વધારે ને વધારે ઇચ્છા થાય છે. વિષય ભોગવવાથી વિષયની કદી શાંતિ થતી નથી, પણ અગ્નિમાં ઘી નાંખ

વાથી જેમ અગ્નિની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ કામની પણ વૃદ્ધિ થાય છે.

આવી રીતે વિષયની ઇચ્છા સહેજ થઇ આવે છે પણ તેને કબજામાં રાખવી બહુ મુશ્કેલીની વાત છે. અહીં એક આને માટે સરસ દૃષ્ટાંત આપું છું.

એટીન નામના એક અંગ્રેજ ડાકટર પાસે એક દરદીએ પોતાના વિષે બોલતાં એવું જણાવ્યું કે, "એટીન સાહેબ હું તમારી પાસે જે વાત કરવાનો છું ને સાંભળી તમને આશ્ચર્ય થશે કે પરણ્યા પહેલાં મેં સખત બ્રહ્મચર્યવ્રત પાળ્યું હતું, કોલેજમાં હું વિદ્યાર્થી હતો ત્યારે મને વખતો વખત કામ વિકાર ઉત્પન્ન થતો હતો, ને વખતે તે એટલો બધો થતો હતો કે, તેને શાંત ન પાડી શકાય; પણ આશત્રુને હું વશ રાખી શક્યો એ વાતનું મને સ્મરણ થાય છે ત્યારે મને પરમ આનંદ થાય છે. તેને વશ કરવામાં મને બહુ મહેનત પડી હતી. હું સંપૂર્ણ જુવાનીની અવસ્થામાં હતો અને જ્યારે "કામ" મને વ્યકુળ કરતો ત્યારે હું તરત બહાર નીકળી પડતો. આમ કરવાથી હું કામને વશ કરી શકતો. મેં કદીપણ વ્યભિચાર કર્યો નહિ. તમે જુઓ છો કે હું કેવો મજબુત છું. કસરતથીજ હું બચી શક્યો છું." ડોકટર આ દરદીની હકીકત આપતાં જણાવે છે કે તે માણસ એવી રીતે બ્રહ્મચર્ય વ્રત પાળીને તથા વિદ્યાભ્યાસને અંતે ઉત્તમ પદવી પ્રાપ્ત કરી પોતાના ધંધાની સહુથી મહત્વની પદવીએ પહોંચ્યો છે.

ચાર અથવા વિષયાંધપણું એવાં નામો આપી શકાય.

હવે આપણે પરણ્યા પછી આ સંબંધમાં શું શું બાબતો ધ્યાનમાં રાખવી તથા કયા કયા નિયમો પાળવા તેનો થોડો વિચાર કરીએ. આને માટે આપણે નીચે પ્રમાણે બે વિભાગ પાડીએ. (૧) આહાર સંબંધી નિયમો. (૨) વિહાર સંબંધી નિયમો.

આહાર સંબંધી નિયમો—સાદું ગુણકારી નિર્વિકારી ભોજન વિષય વિકારને શાંત રાખે છે. અને ભભકાદાર ભોજન અને ખાનપાન એ વિકારને ઉત્તેજન આપે છે. માટે ખાવામાં પીવામાં, પહેરવામાં અને રહેવામાં દરેક વર્તનમાં સાદાઈ રાખવાથી બ્રહ્મચર્યનો હેતુ પાર પડે છે.

વિહાર સંબંધી નિયમો—વિહારમાં અત્રે સ્ત્રી પુરુષના ખાનગી વ્યાપારો મુખ્ય કરીને સમાવેશ થાય છે. વિહારની બીજી પણ ઘણી બાબતો છે. પણ અમે એજ વિષયનો સંબંધ છે, માટે એ વિષે કંઇ વીસ્તારથી વીવેચન કરીને. આ વિહારમાં નીચે લખી બાબતોનો વિચાર કરવાની જરૂર છે:—

(૧) વયનો વિચાર. (૨) ઋતુનો વિચાર (૩) કાળ વિચાર (૪) શારીરિક સ્થિતિ (૫) માનસિક સ્થિતિ, (૬) પવિત્રતા (૭) એક પત્ની વ્રત,

વયનો વિચાર--

લગભગ પુત્રીની ઉમર પતિ કરતાં કમમાં કમ પાંચ વર્ષ નાની અને વધુમાં વધુ દશ વર્ષ નાની હોવી જોઇએ. વિચારવંત માબાપે સોળથી સોળ વર્ષથી નાની પુત્રીને સાસરે મોકલવી જોઇએ નહિ.

બાળ લગ્ન અતિ હાનીકારક છે. સરકારે પુત્રી માટે બાર વર્ષ અને પુત્ર માટે ૧૬ વર્ષ રાખ્યાં છે તે વધારીને અનુક્રમે સોળને પચીસ વર્ષ સુધી લઇ જવા જોઇએ.

ઋતુ શુદ્ધ વિચાર—૧૬, ૨૫ દશા ગ્રહની મોકળી મન સમાનતાને વિચાર કર્યા વિના આ

આપો એટલાં લાકડે માકડાં વળગાડે છે, તેમાંથી કોઇને કોઇ પ્રકારે શારીરિક પર્ગાની હાનિ થાય છે. અને બ્રહ્મચર્યનો ભંગ એટલે વ્યભિચાર એ તેનું પરિણામ છે.

કાળ વિચાર—ऋतौभार्यामुपेयात् "ઋતુ કાળમાં ભાર્યા પાસે જવું." અર્થાત્ રજસ્વલા સ્ત્રીને ઋતુસ્રાવ બંધ થયા પછી અગીયાર રાત્રી સુધીના સમયેજ સંયોગ કરવાનો કાળ અનુકૂળ ગણ્યો છે. વારંવાર નહિ. પહેલા પાંચ દિવસ અને પછીના અગીયાર દિવસ એટલે સોળ દિવસ પછીથી જેમ કમળ સંકોચાઇ બંધ પડે છે તેમ સ્ત્રીનું ગર્ભાધાનના હેતુથી સંયોગ કરવો એ નિ-રર્થક છે, કેમકે વીર્ય નિષ્ફળ જાય છે.

જેઓ મનને કાબુમાં ન રાખે અને રજસ્વલા સ્ત્રી પાસે જાય તેને દ્રષ્ટિ, આયુષ, તથા તેજની હાનિ થાય છે, અને અધર્મની પ્રાપ્તિ થાય છે. વળી પહેલા એ દિવસમાં જો ગર્ભ રહે તે અલ્પા-યુષ્યવાળો વધારે વિકૃત અંગવાળો દુરાચારી થાય છે.

ગર્ભવંતી સ્ત્રીનો પુરૂષે કદિ પણ સંબંધ કરવો નહિ; કેમકે ગર્ભાવસ્થામાં જેવી ચેષ્ટા કે વિષય વ્યાપાર કરવામાં આવે છે તેવીજ ચેષ્ટા કે ગુણવાળો બાળક અવતરે છે ને મોટપણે તે બાળક વિષયી અને વ્યભિચારી થાય છે.

શારીરિક સ્થિતિ—શરીરે કાંઇ પણ વ્યાધિ, કસર, કે બેચેની હોય, તેવા સમયમાં વિહારનો ત્યાગ કરવો. સ્ત્રીના મંદવાડમાં પુરૂષે અને પુરૂષના મંદવાડમાં સ્ત્રીએ મનને વશ રાખી બ્રહ્મચર્ય પાળવું. કારણ કે જો આવા સમયમાં ગર્ભ રહી જાય તો બન્નેનો જીવ જોખમમાં આવી પડે. ઘણાએક રોગમાં વિષયની મુર્છા ઉલટી વધે છે દ્રષ્ટાંત તરીકે ક્ષય રોગીને વારંવાર વિકારની ઇચ્છા થાય છે. આ ઇચ્છા સ્વાભાવિક નથી પણ રોગ એ ઇચ્છાને જન્મ આપે છે માટે ક્ષયરોગીએ સાવચેતી રાખવી.

માનસિક સ્થિતિ—ઇચ્છા વિના બળાત્કારથી થયેલું કાર્ય સંતોષ આપતું નથી અને અસંતોષ એ પણ શારીરિક તેમજ માનસિક વિકારનું કારણ થાય છે. ઇચ્છા વગરનો વિહાર નિષ્ફળ જાય છે અને શરીર ઉલટું બગડે છે. આ વાત બન્ને પક્ષે સમજવા જેવી છે. સ્ત્રીની ઇચ્છા વિના સ્ત્રી ગમન કરવું તેમાં અને હાથની લતી વીર્યપાત કરવો તેમાં બીલકુલ વધાવત નથી, અને આથી કાયું ગર્ભ બંધાય છે.

પવિત્રતા—વિહારના વિષયમાં ચોથરા શારીરિક શુદ્ધિ એ ઘણી મોટી અને અગત્યની વાત છે. સ્ત્રી પુરૂષોના ગુપ્ત અંગોના સ્થાનિક વ્યાધિ મોટે ભાગે અપવિત્રતા અને મલિનતામાંથી જન્મ પામે છે, પવિત્રતા એ શારીરિક ઉન્નતિનો એક માર્ગ છે.

એક પત્નીવ્રત-પતિવ્રત—ઘણાએ જેમ પોતાની પત્નીને પતિવ્રતપણાનો ઉપદેશ આપી નીયમ લેવરાવે છે તેમ પોતે એક પત્નીવ્રતનો નિયમ ભાગ્યેજ લેતા હશે. આ જગમાં સ્વાર્થ છે કે કેમ તે સમજાશે. અને જ્યારે પોતે એક પત્નીવ્રત નથી લેતા ત્યારે તેમનો વિશુદ્ધ પ્રેમ કોના તરફ કેટલા પ્રમાણમાં હોઇ શકે તે વાંચક વિચાર કરી લેશે.

તરત પરણેલાં જોડા ક્ષણીક સુખ વિલાસનો વિશેષ લાભ લેવાને લલચાય છે; પણ તેઓ જાણતા નથી કે તેઓ એ કુટેવથી પોતાના ભવિષ્યના સુખને જોખમમાં નાંખે છે.

વિલાસ વિચાર—ઋતુસ્રાવ બંધ થાય તે દિવસથીજ સ્ત્રીને પુરૂષની ઇચ્છા પ્રાપ્ત થાય છે અને એ વખતે બચ્ચું- ઉત્પન્ન કરનારૂં તત્વ પરિપૂર્ણ થયેલું હોય છે. જો આ સમયમાં સ્ત્રી પુરૂષ બાળક ઉત્પન્ન કરવાના પવિત્ર હેતુથી ભેગાં થાય તો ગર્ભ રહી જાય છે. ગર્ભ રહ્યા પછી તે ફરી સ્ત્રીને ઋતુપ્રાપ્તિ થાય ત્યા સુધી બ્રહ્મચર્ય પાળવું જોઇએ. બાળક અવતર્યા પછી જ્યારે તે બાળક ધાવણને છોડે છે ને ખોરાક ખાવાની શરૂઆત કરે છે, ત્યારે પાછો ઋતુસ્રાવ શરૂ થાય છે. ગર્ભ રહે તે દિવસથી લગભગ અઢાર માસે કે તેથી પણ વધારે મુદતે ફરી ઋતુસ્રાવ થાય છે, માટે એટલી લાંબી મુદત સુધી સ્ત્રીથી અલગ

રહેવું જોઇએ અને એનુંજ નામ ખરું "બ્રહ્મચર્ય" છે.

કેટલાક વિદ્વાન ડૉક્ટરોનો અભિપ્રાય આથી પણ વધારે લાંબી મુદતનો છે. સ્ત્રીએ બાળકને ધવરાવવાથી નબળી થયેલી હોવાથી સશક્ત અને તંદુરસ્ત થતા સુધી બ્રહ્મચર્ય પાળવું જોઇએ એટલે લગભગ પોણા ત્રણ વર્ષ સુધી પાળવું જોઇએ.

"માટે બ્રહ્મચર્ય વ્રતધારી તેજ કહેવાય કે જેનામાં બાળક ઉત્પન્ન કરવાની શક્તિ હોય તથા જે પવિત્ર જીંદગી ગુજારવા માટે અને દઢ મન સંકલ્પની ખાતર યોગ્ય કામે અને બાળક ઉત્પન્ન કરવાના પવિત્ર હેતુથીજ સંગ કરે."

ઘણાઓને ઉપરનો અભિપ્રાય પ્રસંદ નહિ પડે પણ તે અક્ષરેશ સત્યજ છે.

જેઓએ સદા આખી જીંદગી બ્રહ્મચર્ય પાળ્યું છે તેવા સમર્થ રણવીર ભીષ્મ પિતામહનું દ્રષ્ટાંત વિચારી જુવો.

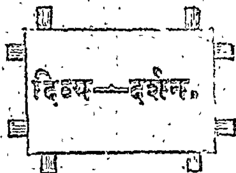
મિથ્યા વિહાર—લોકો વ્યભીચારનો અર્થ માત્ર પરસ્ત્રી ગમનજ કરે છે પણ તેની અંદર અતિયોગ અને મિથ્યાયોગ તથા હસ્ત દોષનો પણ સમાવેશ થાય છે.

અતિયોગ—અફસોસ! વિષયના અતિયોગથી કેટલાં બધા પરણેલા જોડાની જીંદગી જોખમમાં આવી પડે છે. તેઓ આ શું કરે છે તેનો સહેજ પણ વિચાર કર્યા સિવાય કામરૂપી ઘોડાની લગામ તદન છુટી મુકી દે છે. પણ શાણા પુરૂષોએ તથા શાણી સ્ત્રીઓએ સાવધ રહેવું જોઇએ. અતિ વિહારથી શરીરના સાંધા નરમ પડી જાય છે લોહી રહી જાય છે શક્તિ ઓછી થાય છે. મુતી મંદતથા લથડતી થતી ચાલે છે, મગજ ખરાબ થાય છે સ્મરણ શક્તિ ઓછી થાય છે આંખની દ્રષ્ટી મંદ પડે છે અને એવી અનેક વ્યાધિઓને આવવું સહેલું થઇ પડે છે.

ગુપ્ત અનાચાર—આ દુરાચારથી જે ખરાબી થાય છે તેનું વર્ણન કરવાને મારી પાસે પુરતા શબ્દો નથી. બિચારો ગરીબ અજ્ઞાન તરૂણ! જેના પર આ પાપી વિનાશકારક કુટેવ પડે છે તે પાયમાલ થાય છે. આવા અનાચારથી નાદાન છોકરાંઓને બચાવવા એ માબાપોની મુખ્ય ફરજ છે તરૂણ બાળકોનું એ એક ગુપ્ત દુરાચરણ છે. માબાપો આવી બાબતો ભાગ્યેજ જાણે છે. અંતે છોકરાંઓ અશક્તિપણાની ફરીયાદ ડાક્ટરો પાસે કરે છે.

આવી રીતે બ્રહ્મચર્યનો ભંગ કરવાથી પેશાબનું દ્વાર રક્ત વર્ણનું થાય છે. સહજ ઉશ્કેરણી થવાથી વીર્યનો પાત થઇ જાય છે અથવા પાણી સરખુ વીર્ય ઝરવા માંડે છે; વીર્યપાતની સાથે સણકા ઉત્પન્ન થાય છે. ધાતુસ્રાવનો ભયંકર વ્યાધી ઉત્પન્ન થાય છે. આવી કુટેવથી તરૂણ સ્ત્રી પુરૂષો પોતાના શરીરની પાયમાલી કરે છે. એવાં યુગલોને જો સંતાનો થાય છે તો વીર્યહીન, બુદ્ધિહીન, અને વિલક્ષણ સ્વભાવના ગાંડા જેવા નીવડે છે. માબાપોએ પણ પોતાના નાની વયના છોકરાંઓ ઉપર બારીક દેખરેખ રાખવી જોઇએ, કે જેથી તેઓ નાદાનીને લીધે બ્રહ્મચર્યનો આવી દુઃખદાયક રીતે ભંગ કરવાની લતમાં ન પડે.

"બ્રહ્મચર્યનો આ મહામંત્ર દરેકે ધ્યાનમાં રાખવા જેવો છે. તેના અભાવથી હિંદુસ્તાનની કેવી દુર્દશા આવી ગઇ છે તેનો તાજુબ દાખલો આપ વાચકો સમક્ષજ આવી ઉભો છે, માટે હજી પણ ચેતો, ઉંઘમાંથી આળસ મરડી ઉભા થાવ અને આ મહામંત્રના જાપ જપો અને તોજ હિંદુસ્તાન દેશ ચિર સ્નેહોથી શોભાયમાન થશે. કામ વિકાર મનમાંથી ઉત્પન્ન થાય છે માટે મનને કબજામાં રાખો. મન કબજામાં રાખવા માટે તેનો વિચાર સરખો પણ અયોગ્ય કાળે નહિ કરો; તોજ વશ કરી શકશો. દરેકી કામદેવના ઉપાસકો ચેતીને ચાલો અને આ મહામંત્ર આખા જગતમાં પ્રસારો.



(લખનારઃ—સ્નેહયોગી ધુલીઆ ખાનદેશ.)

સંધ્યા સમયે આ રજો ગુણ પ્રધાન વ્યાપાર-કળા-કુશળતામય-વાણિજ્ય-ગ્રસ્ત કૃત વાજ્જન્ય-સ્વાર્થ-પરાયણતામાંજ લુબ્ધ નાગરિકોથી ઉભરાતા નગરથી હતાશ બની, કુદરતી રીતે સ્વાભાવિક પ્રસરેલી અરણ્યની સુખમય શાન્તિનો આસ્વાદ લેવાર્થે મનનો પ્રેરાયો, શરીરથી ખસડાયો. પથે ચાલતાં અનેકાનેક ચિત્ર વિચિત્ર સેનાના દર્શન થવા લાગ્યાં, કોઇ હર્ષાનંદમાં, તો કોઇક જીવાત્માઓ શોકાગ્નિના મહાસાગરમાં ઉંચે-નીચે ડુંબકીઓ ખાઇ રહ્યા હતા. ક્યાંક પ્રેમ સ્ફુરણાથી ઉદ્‌ભવતાં સુખપ્રદ પ્રસંગો આનંદ અર્પતા હતા, તો ક્યાંક દર્પાદેવીનાં રૂપમય ઝરણો વહેવડાવ્યાથી વિવિધ દુઃખોત્પાદક સ્થિતિનાં દર્શન થતાં હતાં. સંસાર ગરનાનાં આવા અનેકાનેક વિચિત્ર ચિત્રો વિલોકતો વિલોકતો અને તે અદૃશ્ય થતાં તેઓનાથી ઉદ્‌ભવતા વિચારોથી હૃદયમાં આવેશ, દયા, મમતા, ક્રોધ, શાન્ત્વનાદિ સદાનુભાવો અનુભવતો અનુભવતો હું ગંગાનદિના કિનારે કિનારે ઘણે દૂર આવી પહોંચ્યો.

આ વેળાએ સૂર્ય ભગવાન ક્રોધથી રક્તવર્ણ ધારણ કરી રહેલા હતા. ચાલવાના શ્રમે કરીને, તેમજ શરીરના વજને કરીને આ પાય અગાઉથી પણ ઉપડતાં ના પાડવાં લાગ્યા તેથી એક કુદરતી લીલા ધામના બિછાવેલી લીલા રંગની જાજમ ઉપર આ જડ રૂપી શરીર અનંદેચ્છાએ પડ્યું. સમય પરત્વે અને સરિતાનો કિનારો હોવાથી પવનની ઠંડી લહેરો તેમજ નિર્જન્ય જગા કુદરતી રીતેજ આહ્લાદક લાગતું હતું. સરિતાનો પ્રવાહ અસ્ખલિત રીતે ખળખળ શબ્દ કરતો વહેતો હતો.

નગરથી દૂર હોવાને લીધે જન-સમાજનો અવાજ તદ્દન કમી હોવાથી, સરિતાનું જળ નિર્મળ, સ્વચ્છ, શિતળ અને પવિત્ર હતું. અને તેમાંથી પારદર્શક વસ્તુની માફક સરિતાના તળીયાપરના ઝીણા મ્હોટા અનેક વિવિધ રંગ યુક્ત રેતીના કણો સ્પષ્ટ દેખાઇ આવતા હતા. સરિતાનો પ્રવાહ પોતાના ઉદરમાં અનેક તરેહની ચીજોને તાણી જતો હતો. જુદી જુદી રંગ બે રંગી પુષ્પમાળાઓ પણ તે સરિતાના જળ પ્રવાહ ઉપર તણાતી તણાતી આવતી હતી, અને તે પુષ્પમાળાઓ સરિતા દેવીના શ્રદ્ધાળુપણે ભક્તોએ કરેલી સેવા-પૂજનની શાક્ષઃ પુરી આપતી હતી. વળી સરિતાના નિર્મળ નીરમાં વિવિધ રંગના મચ્છ તથા બીજા અસંખ્ય જળ પ્રાણીઓ સ્વેચ્છાથી વિહાર કરી રહ્યાં હતાં; જળચર પ્રાણીયોનો આવા પ્રકારનો સ્વેચ્છાએ થતો સ્વતંત્ર વિહાર જોવાથી મ્હને મ્હારી સ્થિતિનું કંઇક ભાન થઇ આવતાં અંતઃકરણમાં ગ્લાની પેદા થતી હતી. આ આહ્લાદજનક દેખાવ પરથી નયનને ખસેડવાની યત્કિંચિત મારી મરજી થતી નહોતી, પરંતુ પક્ષિઓના કલરવોમાં પ્રભુ ગુણોના સુધા મંત્રોએ અંતઃકરણને આકર્ષ્યું અને મનના રાજાએ નયનને ઉંચે નિહાળવાની આજ્ઞા કરી. ગહન, ઘટ વિશાળ ડાળીયો તથા પત્રોથી આચ્છાદિત વટવૃક્ષ ઉપર સંધ્યાબંધ પક્ષિઓ, નિશ્ચયથી શાન્તિ મેળવવા પોત પોતાનાં સ્થાન શોધી સહોદર સાથે એકત્ર થવાની પ્રવૃતમાં ધોધાર મચાવતા હતાં અને વૃક્ષમાં જ્યાં જોયુએ ત્યાં દિવસના શ્રમથી વિશ્રાન્તિ મેળવવા અનેક જીવો ઉત્સુક થઇ રહ્યા હતા. અલ્પ સમયમાં સૂર્ય ભગવાન ક્ષિતિજમાં અસ્ત થયા; અને સૂર્ય દેવતા અસ્ત થવાની સાથેજ પક્ષિઓ જાણે ધાડે સમ્બધ ધરાવતાં હોય તેવી રીતે તેઓ પણ એકાકી શાન્ત થઇ ગયા અને વિશ્રાન્તિ મેળવવામાં ઉદ્‌ભવેલો ધોધાટ એક પ્રકારની અકળ શાન્તિમાં લીન થયો.

થોડીવારમાં સરિતાના વહનથી થતા અવાજ સિવાય કોઇપણ અન્ય અવાજ અવણે આવતો

નહતો. ફક્ત વચ્ચે વચ્ચે જુજ અંતરે શીયાળી-યાંનો બાળકોને ભય ઉત્પન્ન કરનારો કર્કશ અવાજ સંભળાતો હતો, સાયંકાળને બદલે રજનિનો સંચાર થયો, અને નિર્મળ આકાશમાં ચકચકિત તારાઓ એક પછી એક ડોકયાં કરી દેખાવા લાગ્યા, અને તેમની મધ્યમાં અનેક નાયોકાનો એક સૂત્રધાર ચંદ્ર પોતાનું શીતળ, ધવળ પ્રકાશ પ્રસરાવવા લાગ્યો. સરિતાના જળપટ પર રૂપેરી રંગનું વસ્ત્ર પ્રસરી રહ્યું અને તેનું પ્રતિબિમ્બ જળમાં એક પ્રકારનું ઉજ્વળ શ્વેત સૂત્ર ઝગઝગાવી રહ્યું. અનેક વ્યક્તિનો ચંદ્ર મુખ હોય, કુસ-કમળા દ્વિગુણ કારનારો અત્યારે મારા પક્ષને પણ શાન્તિકારક થયો. કુદરતનું સૌન્દર્ય નિહાળવામાં હું વિશ્વનું અન્યભાન ભૂલી ગયો, અને જે રાજસી પ્રવૃત્તિથી કંટાળી શાન્તિ શોધવા એકાન્ત અરણ્યમાં આવી ચઢયો હતો. તે સ્વાત્વિક શાન્તિનો આસ્વાદ હું અનુભવવા લાગ્યો. અને તેથી, અને જેના પ્રતાપે શરીર ઢોળાયું, લંબાયું દૃષ્ટિ ચંદ્રમાં સ્થિર થઇ અને આંખો મીંચાઇ શરીરની અવસ્થા પલટાઇ ધ્યાનમાંથી નિદ્રામાં ? અને નિદ્રામાંથી સુક્ષ્મ શરીર પ્રબલ થઇ સ્વપ્ન અવસ્થાને

(તે વેળાએ) "ઉઠે છે" એમ [લૌકિકો] કહે છે.

પ્રશ્નોપનિષત્.

અહીંઆ દેવ સ્વપ્નમાં મહિમાને અનુભવે છે. જે જોયુ હોય તે જુવે છે સાંભળ્યું હોય તે સાંભળે છે, અને દેશાન્તરને દિગંતર વડે વારંવાર અનુભવેલાને પુનઃપુનઃ અનુભવે છે, દૃષ્ટ તથા અદૃષ્ટ, સાંભળેલને ને નહિ સાંભળેલને અનુભવ કરેલને ને અનુભવ ન કરેલને. તથા સતને ને અસતને સર્વને દેખે છે, સર્વ દેખે છે.

વળી પર્વત શ્રૃંગોમાંથી અસંખ્ય પવિત્ર, નિર્મળ, સ્વચ્છ ઝરણા નીકળતાં હતાં જે મહાન સુશોભિત સરોવરો તથા નહાની ગહન વેગવાન સરિતાઓમાં વહેતાં હતાં. આ સરિતાઓ અને આ સરોવરોનો દેખાવ શૃંગો ઉપરથી અતિ આકર્ષક લાગતો હતો. આ સરોવરમાં અનેક રંગી કમળો આવી રહેલાં હતાં. કેટલાક સાત પાંખડીવાળાં હતાં. કેટલાક શત પાંખડીવાળાં હતાં. અને કેટલાંક સહસ્ર પાંખડીવાળાં શોભતાં હતાં; અને તેમના ઉપર ગંધ લોભી ભ્રમરો મધુર ગુંજારવ કરી રહ્યા હતા. અને જળ ઉપર જળનાં પક્ષિઓ શ્વેત તથા રંગીત પાંખોથી શોભી રહ્યાં હતાં. આજુબાજુ કિનારા ઉપર વૃક્ષની ઘટાઓ આવી રહેલી હતી; અને વૃક્ષો ઉપર મયૂર કોકીલ, પોપટ, મેના, બુલબુલ, હંસ, ચાતક, ચકવા, ચકવી અને અન્ય અસંખ્ય વિવિધ રંગ યુક્ત પક્ષિઓ કલ્લોલ કરી રહ્યાં હતાં. વળી આ વનમાં વનરાજ, સર્ફ, વ્યાઘ્ર, રિંછ આદિ શ્વાપદ અને મ્હોટા ગજરાજ, હય, ગવાદિ બીજા પશુઓ પણ સ્વચ્છંદે વિહાર કરતાં હતાં. વળી અસંખ્ય સર્પ, પતંગ, આદિ પણ જણાતાં હતાં, અને નિર્વેર સ્થાનમાં સર્વ પ્રાણીમાં પ્રેમ પ્રભરેલો જણાતો હતો જેથી તેઓ જાતિ વેર વિસરી અન્યોન્ય સ્વચ્છંદે વિહરતા હતા.

ઉપરોક્ત અલૌકિક દિશાને જોઇ હું ચકિત થઇ ગયો. મ્હેં જાણ્યું કે શું હું આ તે સ્વર્ગમાં આવ્યો છું કે કોઇ આપણા પૌરાણિક, ગંધર્વ, કિન્નર, યક્ષ કે અપ્સરાઓના પ્રદેશમાં આવ્યો છું? વળી વિચાર આવ્યો કે ગમે તે લોકોનો આ પ્રદેશ હોય પરંતુ જ્યારે પ્રારબ્ધ યોગે હું અહિં આવ્યો છું ત્યારે તેનો પૂર્ણ લાભ કેમ ન લઉં? આવા વિચારથી આ દેશમાં હું વિસ્મયતાથી સ્વચ્છંદે ફરવા લાગ્યો, પરંતુ થોડે આગાડી ગયો ત્યાં વળી એક અતિ ચમત્કારક દેખાવ નજરે પડયો. આકાશ માર્ગેથી એક વિમાન આ પ્રદેશની એક દિશા તરફ જતું હતું અને આ વિમાનમાં એક દેવી* બેઠેલી હતી. હું પણ આ વિમાન જઇ રહ્યું હતું તે દિશા તરફ વળ્યો અને ત્યાં પહોંચતાં એક દિવ્ય ઉપવન દ્રષ્ટિગોચર થયું. મ્હારા ત્યાં પહોંચતામાંતો આ ઉપવનમાં અનેક અપ્સરાઓ કોઇ વિમાનદ્વારા આકાશમાર્ગે, કોઇ નૌકાદ્વારા સમુદ્રમાર્ગે અને કોઇ વળી અશ્વિરથદ્વારા જમીન માર્ગે અને એવાં વિવિધ સાધનોથી વિવિધમાર્ગે આવી પહોંચી હતી. અને પોત પોતાના નિયત (કાયમ) કરેલા સ્થાનકે બેસી વાર્તાલાપ કરવા લાગી હતી, આ સર્વ અપ્સરાઓના સ્થાનની મધ્યમાં એક ઉચ્ચ ઝગઝગીતું સ્થાન હતું ત્યાં એક અતિ સુંદર દિવ્ય આસન મુકવામાં આવ્યું હતું.

આ ઉપવન શણગારવામાં કુદરતે પોતાની પૂર્ણ શક્તિ ખર્ચી હોય એમ જણાતું હતું, અને તેમાં સર્વ પ્રકારનું સૌન્દર્ય પુરવામાં આવ્યું હતું. સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિથી હાલના સમય સુધીમાં મનુષ્યે ભગીરથ પ્રયત્નથી કુદરતની જે મહાન અગ્નિ, વિદ્યુત, ચુંબક વાયુ જલાદિ શક્તિઓના નિયમો જાણી તેમને પોતાના સુખ માટે અનેક નાના પ્રકારના ઉપયોગમાં લઇ પોતાનું સુખ વધાર્યું છે. તે સર્વ મનુષ્ય પ્રયત્નો અલ્પ લાગે, અને મનુષ્યની શક્તિજ ન્યુન જણાય એવી સામગ્રીથી આ ઉપવન અલંકૃત કરવામાં આવ્યું હતું.

આ અપ્સરાઓમાં કેટલીક મુગ્ધવયની હતી; ત્યારે કેટલીક હજુ યુવાનીના મલકાટમાં હતી, કેટલીક મદમાં મસ્ત થયેલી તથા અભિમાનના પાસમાં પડેલી હતી અને કેટલીક દુઃખના ભારે ઘા અનેક સમયથી અનુભવેલા હોવાથી સહનશીલ શાન્ત અને પ્રૌઢ જણાતી હતી, કેટલીક સ્નેહમદભાગિ કટાક્ષથી જોતી હતી; ત્યારે કેટલીક અન્યની પ્રત્યે આશા ભરી દ્રષ્ટિથી નિહાળી રહી હતી.

થોડાક સમયમાં ત્યાં એક દિવ્ય અવર્ણનીય પુરૂષનું આગમન થયું, અને તેમણે નિર્ણયિત થયેલું આસન લીધું. એક અલૌકિક શાન્તિ પ્રસરી રહી અને વરૂણ ઇન્દ્ર, અગ્નિ, સૂર્ય-ચંદ્ર આદિ દેવો આપના પધારવાથી પોત પોતાના કર્તવ્યમાં આરૂઢ થયા. આ પુરૂષનું પ્રભામય સ્વરૂપ જોઇ સ્તબ્ધ થઇ ગયો અને ત્યાંથી જાણે ખસુંજ

*અપ્સરા.

નહિ એવી ઇચ્છા થઇ. એક ક્ષણમાં કર્ણમાં મધુર અનાજે અમૃત પેઠે રેડાવા લાગ્યો. અને દેવીયો (અપ્સરાઓ) પેલા દિવ્ય પુરૂષની સ્તુતિનું ગાન કરવા લાગી. તરતજ એક દિવ્ય શાન્તિ પ્રસરી અને થોડી ક્ષણ પછી તે મ્હાન પુરૂષ સુધારસ વચનોથી નીચે પ્રમાણે એક અપ્સરા પ્રત્યે કહેવા લાગ્યા:—

"હે બાલે! તું કુશલતો છે? ત્હારાં બાળકો આનંદમાં તો છે? તેમની પ્રવૃત્તિ જાણવાની મ્હારી ઇચ્છા છે."

પિતાનાં આવાં સ્નેહયુકત વચનો સાંભળી તે અપ્સરાએ પ્રત્યુત્તર આપ્યો.

"હે મહાન પિતા! હું આપની કૃપાને પાત્ર છું એ જાણી મને અતિ આનંદ થાય છે. મારા સંતાનો આપના આશિર્વાદથી નિરંતર નિશ્ચિંત રહે છે અને પોતાની પ્રજાના પૂર્વપરના થયેલા મહાન પુરૂષોનાં સ્મરણ પૂજન અને ગુણાનુવાદના કીર્તનદ્વારાએ પોતામાં મહત્તાની ભાવના પેરે છે, અને વર્ધિત કરે છે. અને નવી પ્રજા પણ આ ભાવનાથી પોષાય છે. પરંતુ હે પિતા! આપના તરફથી આપની કૃપાથી સીંચાયલી એક પુરાણ મહાન પ્રજાને ઉચ્ચ સ્થિતિએ લાવવાનું મહાન કાર્ય તેઓને સોંપવામાં આવ્યું છે. તેમાં તેઓ કેવી રીતે શક્તિમાન થાય છે, તે જોવાનું છે. મને ભય રહે છે કે, રખે! તેઓ તે કાર્ય માટે યોગ્ય ન જણાય."

ઉપરોકત શબ્દો પુરા થયા એટલે તે પિતાએ પોતાનું વદન અન્ય બાજુ તરફ ફેરવ્યું. એટલે બીજી પુત્રીએ ઉભા થઇ વિનય પુર્વક બોલવા માંડ્યું:—

"હે પિતા! કલ્યાણ હો! મ્હારાં આર્ય સંતાનોએ, અનાર્ય સંતાનોનો વિનાશ કરી દીધો છે, અને તેઓ હવે તેમને નિર્મૂળ કરી સ્વચ્છંદે આનન્દ ભોગવે છે. તેઓનામાં રાજસિક વૃત્તિ પ્રધાનપણે છે, અને તેને લીધે તેઓ ઉદ્યોગ આ કુદરતની શક્તિઓને પોતાની સંમાહિત વિભૂતિ મેળવવાના સાધન તરીકે ઉત્તમ રીતે વાપરે છે. પરંતુ આની પાછળ તેઓ એટલાં બધાં મંડ્યાં રહે છે કે બીજું બધું તેઓ વિસરી જાય છે. અને મને ભય લાગે છે, કે તેમની આ પ્રવૃત્તિ તેમનો વિનાશ આણવાનું સાધન થઇ પડે."

આ પછી તે પિતાએ ત્રીજી દેવી પ્રત્યે જોયું, એટલે તેણે પણ તેજ પ્રમાણે કહેવા માંડ્યું:—"હે પિતા! ત્હારા અનુગ્રહથી મ્હારા કેટલાક પુત્રોએ થોડા સમય પહેલાં એક જુદાજ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ પ્રવર્તાવી; અને આથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્તાની ભાવના જન્મ પામી, અને તેથી એક એવો મહાન પુત્ર ઉત્પન્ન થયો કે જેણે પોતાના પરાક્રમથી પોતાનું તથા મ્હારૂં નામ સૃષ્ટિમાં અમર કરી દીધું; પરંતુ આ ક્ષેમ વૃત્તિના પરિણામથી એટલો બધો ભોગ આપવો પડ્યો કે હાલ મ્હારા સંતાનો પોતાની પ્રતિસ્પર્દ્ધિ પ્રજાઓ સાથે પોતાની મહત્તા ખોઇ બેઠાં છે. હે મહાન પિતા! પાછી જ્યારે ત્હારી કૃપા થશે—અનુકંપા ફુરશે ત્યારે મ્હારાં સંતાનો તેમની પૂર્વની મહત્તા પ્રાપ્ત કરી શકશે."

આ પછી એક બીજી દેવી ઉભી થઇ કહેવા લાગી—"હે મહાન પિતા! મ્હારાં સંતાનોએ હમણાંજ થોડા સમયથી મહત્તા પ્રાપ્ત કરી છે; અને તે મહત્તા જાળવવા તથા તેને વધારવાના પ્રયત્નમાં તેઓ મંડ્યા રહે છે; તેથી આપ તેમને વાસ્તે નિશ્ચિન્ત રહો."

આ શબ્દો પૂર્ણ થતાં તે મહાન પુરૂષે પોતાની નવીન યુવાનીમાં આવતી પુત્રી તરફ દૃષ્ટિ ફેરવી અને પૂછ્યું:—"હે બાલિકે! ત્હારી સ્થિતિ કેવી છે? ત્હારાં બાળકો શી ભાવનાઓમાં મસ્તાન રહે છે?"

આનન્દથી ઉભરાતી તથા હિમગિરિના શિખરે વિરાજવાને ઇચ્છતી આ નવયૌવના, હિમના સુવર્ણ સિંદુર મુગટમાં ધારણ કરેલું છે એવી આનન્દથી પ્રણામ કરી કહેવા લાગી:—"હે પિતા! મ્હારા ઉપર તમારો અનુગ્રહ સદા હો! તમારી કૃપાથી મ્હારા પુત્રો હમણાંજ મહાન વિજય પામ્યાં છે; અને તેથી મ્હારા સંતાનોમાં મહત્વાકાંક્ષા જન્મ પામી છે. તેમની પ્રવૃત્તિ આ મહાનપદ સ્થિર કરી તેને વૃદ્ધિમત કરવા તરફ વળી છે; અને મને

જણાય છે કે હમારી દૃષ્ટિ તેમના ઉપર પડવાથી તેઓ પ્રાપ્ત કરેલી મહત્તા વધારી શકશે. પરંતુ આ પ્રવૃત્તિ લોભ વૃત્તિનું રૂપ ધારણ કરતી જોઇ કેટલીક વખતે મ્હને રહેગના ભવિષ્ય સંબંધે ભય ઉપજે છે."

આ શબ્દો પુરા થયા એટલે તે તેજોમય પુરૂષે પોતાનું વદન પોતાની શ્રેષ્ઠ જ્યેષ્ઠ પુત્રી તરફ ફેરવ્યું, અને કહેવા માંડ્યું:—

"હે પુત્રી! ત્હારી મુખ મુદ્રા કેમ નિસ્તેજ જણાય છે! નિરાશ અને અશ્રદ્ધાથી ત્હારૂં વદન છવાઇ રહેલું છે, ત્હારૂં શરીર શોકાગ્નિથી કૃશ થઇ ગયું છે. અને ત્હારૂં મન પણ નિરુત્સાહ તથા ઉદ્વેગથી પૂર્ણ જણાય છે."

પિતાના એવાં પ્રેમ યુક્ત વચનો સાંભળી આ સંન્યાસિનીના જેવી વૈધવ્યયુક્ત દેવી ઉભી થઇ, અને તેણે તે મહાન પિતાને સાષ્ટાંગ દંડવત પ્રણામ કર્યા, અને ગદ્‌ગદિત કંઠે કહેવા લાગી:—

"હે મહાન કલ્યાણકારી પિતા! હે જગતના નિયામક! હે જગતની ઉત્પતિ, સ્થિતિ અને લયના કારણ ભૂત! હે સમસ્ત દેવતાઓથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય! હે સમસ્ત પ્રજાઓના નેતા! ત્હને હજારવાર પ્રણામ હો! ત્હને હજારવાર પ્રણામ હો! હે પિતા! ત્હારાથી કશું અજાણ્યું નથી ત્હારી ઇચ્છા વગર એક તરણું પણ હાલી શકતું નથી તું ત્રણે કાળનો અને ત્રણે અવસ્થાનો જ્ઞાતા છે? તું ત્રણે સ્થિતિમાં સ્વયં પ્રકાશ છે? ત્હારાથી શું અજ્ઞાત છે, કે હશે કે હું ત્હને કહું? તું જાણે છેજ કે સૃષ્ટિના ઉદય અને અસ્ત એવા બે કાળ છે, અને કોઇપણ પ્રજાનો કે, કોઇપણ વ્યક્તિનો ત્હારા પ્રસાદ વિના કોઇપણ પ્રકારે ઉત્કર્ષ થતો નથી. 'હે પિતા! જ્યારે ત્હારો અનુગ્રહ હતો ત્યારે મ્હારાં સંતાનો આખા વિશ્વમાં શ્રેષ્ટ હતાં. તેઓ કર્મચારી હતાં, ત્યારે સમગ્ર વિશ્વની પ્રજાઓ તેમના ચરણમાં નમતી હતી. કાળબળે તેઓ પોતાના મહાન ઋષિ મુનિ, આચાર્યોના પથથી ચળ્યા. હે પિતા! ત્હારા પોતાના ઉપદેશથી પણ તેઓ ચળ્યા. તેઓ પોતાના પથ પર ચાલ્યા નહીં; વિચાર અને આચાર એક સરખી રીતે રાખી શક્યા નહિ અને તેથી પડ્યા અને પડતાં પડતાં પોતાની અધમમાં અધમ દાસત્વની અવનતિએ પહોંચ્યા. સર્વ વસ્તુઓમાં તેઓએ દાસત્વ સ્વીકાર્યું, આત્મ શ્રદ્ધા અને સ્વાશ્રયનો તેમણે ત્યાગ કર્યો, પોતાના પૂર્વજોની મહાન ભાવના તેમણે છોડી દીધી અને પરાઇ મહત્તામાં તેમને ઉત્તમતા જણાઇ અને તે પ્રત્યે ઝંઝવાના નીર પેઠે વળ્યાં. પોતાના પૂર્વજોની મહત્તાની ભાવનાથીજ પ્રજાઓ મહત્તા મેળવે છે, અને જાળવી શકે છે. તે ભાવના તેમણે ખોઇ અને તેથી હે પિતા! હેમની આ અવસ્થાથી તેમના પૂર્વજો જેવી તેમનામાં માતૃ વત્સલતા ન રહેવાથી તેમનાં કર્મોથી હું દુઃખિત થઇ, અને અત્યારે તેમની હરેક પ્રકારની સ્થિતિ એવી પરિચ્છિન્ન થઇ ગઇ છે કે કોઇ કોઇ પુત્રો તેમનામાં મહત્તાની ભાવનાઓ સજીવન કરવા મથે છે, પણ તેમાં તેઓ ફાવતા નથી. મ્હારાં સંતાનો પાસે તેમના પૂર્વના મહાન ઋષિ મુનિયોના જ્ઞાનના અપૂર્વ ભંડાર પડ્યા છે, પણ અત્યારે આ ભંડારમાંથી ઉપયોગી તત્વો તારવી કાઢી તે પ્રમાણે પોતાનો ભવિષ્યનો માર્ગ બાંધી તે પ્રમાણે કર્તવ્ય પરાયણ થવાની શક્તિ હેમનામાં ક્યાં રહી છે? જ્ઞાન, ભક્તિ કર્મ સર્વમાર્ગના દ્રષ્ટા તેમનામાં થયા છે, પણ હાલ તેમને શોધવા કોણ પ્રયાસ કરે છે? તેમનું સર્વ પ્રકારનું જીવન વિચ્છિન્ન થઇ ગયું છે, અને તેથી મ્હારા ભવિષ્ય માટે મ્હને તેમનામાં શ્રદ્ધા રહી નથી. આથી હું નિરાશાના ઉદધિમાં ડુબી ગઇ છું. પણ આ સ્થિતિ આણવામાં કારણ ભૂત હે પિતા! કૌરવ પાંડવનું યુદ્ધ તેવા યોદ્ધાની સ્થળી કરાવનાર તુંજ છે, તેથી આમાં સંકેત હશે એવું લગે છે!"

આટલું બોલી તે ગદ્‌ગદિત થઇ જવાથી

વધારે બોલી શકી નહિ, અને તે કૃપાળુ પિતા* પ્રફુલ્લ વદનથી કહેવા લાગ્યાઃ—

હે કલ્યાણિ શાન્ત થા, કાર્પણ્ય દૂર કર, ભીરૂતા મૂકી દે; અને સાવધ થા. ત્હારા ઉપર મ્હારો પ્રેમ અસ્ખલિત છે, અને ત્હારાં સંતાન એ મ્હારાં પરમ ભક્ત છે. જો મ્હારી કૃપા ત્હારા ઉપર ન હોત તો બીજી અન્ય પ્રાચીન પ્રજાઓ પેઠે ત્હારાં સંતાનો પણ આ સૃષ્ટિમાંથી ક્યારનાંએ નિર્મૂલ થઈ ગયાં હોત; પરંતુ હે ભારતિ! હું ત્હારે ત્યાં સ્વયં આવી ત્હારી પ્રજાને ઉન્નત દશામાં મુકું છું માટે તું નિશ્ચિન્તક તથા નિશ્ચિંત થા. ત્હારાં સંતાનો પણ તું ધારે છે એવા કપૂત નથી. ત્હેમનામાં મ્હારા વાસ્તે તેમજ ત્હારા માટે અપ્રતિમ લાગણી-સ્નેહથી, અને ફરીથી તે પૂર્ણ જોસથી પ્રકટી છે. ફક્ત મ્હારાથી નિર્ણીત મૂળમાં તેમની શ્રદ્ધા હતી, તે શ્રદ્ધામાં તેઓ ભૂલ્યા અને મૂળથીજ સાત્વિક આનંદ ઇચ્છતા હોવાથી રાજસ મૂકી તેઓ તામસમાં શ્રદ્ધાથી પડ્યા. આ શ્રદ્ધાને પ્રતિધ્વનિ ન મળવાથી તે હવે ઓછી થતી જાય છે; અને આ સર્વ દેવીઓના સંતાનોનાં કલ્યાણ માટે આવશ્યક છે; તેથી મ્હારા અનુગ્રહથી ત્હારાં સંતાનો થોડા સમયમા તેમની પૂર્વની મહત્તા પ્રાપ્ત કરશે. આ કર્તવ્ય મ્હેં કેટલાક મ્હારા વીર ભક્તોને ત્હારે ત્યાં મોકલ્યા છે, જેઓ ત્હારા કલ્યાણ માટે ત્હારાં સંતાનોને ઉત્તમ માર્ગે દોરી ત્હારાં આંસુ લુછવાને સ્વાર્પણ કરી અનેક દુઃસહ દુઃખો ભોગવવા તૈયાર થયાં છે; અને આ પ્રયાસમાં તેઓ નિષ્ફળ જણાશે તો હું સ્વયં આવી ત્હારી પૂર્વની સ્થિતિએ ત્હારા સંતાનોને લાવી મૂકીશ માટે હે કલ્યાણિ! શાંતિથી તું મ્હારા ધ્યાનમાં રહી શ્રદ્ધાથી ત્હારાં સંતાનોનું ઉત્તમ રીતે પાલન કર!!!

ઉપરોક્ત શબ્દો પૂરા થતાં મ્હારી આંખો ઉઘડી ગઈ, અને જોઉં છું તો પક્ષિઓ કલ્લોલ કરી રહ્યાં છે, અને પ્રભાતના મધુર પ્રભૂ મંત્રોના સ્તોત્રનું ગાન મ્હારા કર્ણમાં રેલી રહેલાં હતાં. આખી રાત્રી આવાં દિવ્ય દર્શનમાં વ્યતીત થયેલી જોઈ, આનંદ પામતો તેમાંથી મહાન ઉપદેશો ગ્રહણ કરતો, ભવિષ્યની મહત્તામાં શ્રદ્ધા ધરતો અને પોતાના કર્તવ્યના વિચાર કરતો હું પાછો વિશ્વનો રાગી બન્યો—સાધુ બન્યો—અગર આત્માનો સંશોધક અનુયાયી બન્યો. જે કહો તે બન્યો.

ૐ શાન્તિ ! શાન્તિ !! શાન્તિ !!!*

સ્નેહયોગી સદન }
ધુલીઆ-ખાનદેશ. } સ્નેહયોગી.

ઉત્તમ બોધ

(ગઝલ)

જગતના જુલમી લોકો, શું સંતોને સતાવો છો.
અધર્મીને નચાવીને, શું ધર્મીને ફસાવો છો.
કરો છો કર્મ છળબળના, ભલા જનને ભમાવો છો.
નીતિનું ભાન ભૂલાવી, ઉલટ પંથે ચલાવો છો.
વધારી દ્વેષ ઇર્ષાને, વધારી સ્વાર્થ ઘાતકતા.
ભૂલાવી સત્યને નીતિ, કરો છો ક્રૂર પાતકતા.
પાડાતા સેંકડો દરદો, દુઃખી જનને વિસારો છો,
ઉદયને અસ્તનો નિયમ, ફરે એવું શું ધારો છો.
પરાયાં કાળજાં બાળી, સફળ ફેરો અફળ કરતા.
હૃદયને વિષમય કરતા, પ્રભુનો ડર નથી ધરતા.
પુરવનાં સદ્ કર્મોથી, મનુષ્યનો યોગ પામ્યા છો.
પ્રભુ આજ્ઞા વિસારીને, શું દેખીને વિરામ્યા છો.

* * *

ભલા જનને ન સંતાપો, અનીતિને તજી દોને.
સુનીતિ પંથ પકડીને, પ્રભુમાં ચિત્ત ધરી દોને.
પ્રભુના સત્ માર્ગોને, હૃદયમાં ધારી રાખોને.
પરાયાને સુખ આપીને, સદા ફળ સારાં ચાખોને.
તમારૂં શુભ ઇચ્છો તો, પરાયું શુભ વાંછોને.
કર્યું તેવું ભોગવવું એ, પ્રભુનો મંત્ર સ્વીકારોને.
ખીલેલાં પુષ્પની માફક, જે આવ્યું તે જવાનું છે.
કર્યું હાશે તે સાથે, બીજું સૌ અહિં રહેવાનું છે.
સાધુજનની વિનય વાણી, સદા ઉરમાંહી ધારોને.
પ્રભુ સ્મરણ મહા કરીને, તમારો ભવ સુધારોને.

---

* "प्रकृतिस्थ भारत"—भ. गी. ४ अ.
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे भ. गी.

* અંગ્રેજીના આધારે

JAINISM AND IDOLATRY.

It would undoubtedly be a great surprise to many of our non-Jaina friends to be told that Jainism is not an idolatrous creed and is betterly opposed to idol-worship as the most iconoclastic religion in the world, yet the fact is as stated. The attitude of Jainism towards idolatry is evident from the following quotation from the *Ratna Karanda Sravakachara*, a work of paramount authority, composed by Sri Samantabhadracharya, who flourished about the commencement of the second century A. D.

"Bathing in [the so called sacred] rivers and oceans, setting up heaps of sand and stones [as objects of worship], immolating one-self by falling from a precipice or by being burnt up in fire [as in sati] are some of the common *murhatas* (follies). The worshipping, with desire, to obtain favour of deities whose minds are full of per-sonal likes and dislikes is called the folly of devotion to false divinity. Know that to be *guru murhata* which consists in the wor-shipping of false ascetics revolving in the wheel of *samsara* (births and deaths, i. e., transmigration), who have neither renounced worldly goods, nor occupations nor *himsa* (causing injury to others)."

This is sufficient authority for the view that Jainism strongly condemns fetish worship—rivers, stones and the like as well as devotion to human or super-human beings who have not eradicated their lower nature, that is to say who are liable to be swayed by passion, or by personal likes and dislikes. What, then, is the significance of the image-worship which takes place daily in our temples, and which is, undoubtedly, the cause of the false impression that has been formed by the non-Jainas concerning our faith ?

To explain the nature of the worship that is performed in our temples, it is necessary first of all to summarise the Jaina creed, which fully accounts for it. The Jainas believe that every soul is godly by nature and endowed with all those attributes of perfection which are associated with our truest and best conceptions of divinity. These divine attributes, omniscience, bliss and the like—are, however, not actually manifest in the case of the soul that is involved in transmigration, but will become so when it attains to *nirvana*.

Nirvana implies complete freedom from all those impurities of sin which limit and curtail the natural attributes and properties of the soul. Accordingly, the Jainas aspire to become Gods by crossing the sea of *samsara* (births and deaths), and the creed they follow to obtain that devoutly-wished-for consummation is the method which was followed by those who have already reached the goal in view–nirvana. It is this method which is known as Jainism, and the images that are installed in our temples are the statues or 'photos' of the greatest amongst those who have al-

ready reached nirvana and taught others the way to get there. They are called *Tirthankaras*, literally, the makers or founders of a *tirtha*, a formidable channel or passage (across the ocean of births and deaths).

How did they cross the sea of *samsara* themselves? By curbing their fleshly lusts and by purifying and perfecting their souls. We, too, have got to tread the path they trod, if we would attain to the heights they have attained. In a word, the *Tirthankaras* are as models of perfection for our souls to copy and to walk in the footsteps of. Their images are kept in the temples to constantly remind us of our high ideal, and to inspire us with faith and confidence in our own souls. As for their worship, they have no desire to be worshipped by us; their perfection is immeasurably greater than we can praise; they are full and perfect in their *wholeness*. We offer them the devotion of our hearts, because in the initial stages of the 'journey' it is the most potent if not the only means of making steady progress.

It is not mere hero-worship, though worship of a hero is transcendent admiration. As Carlyle put it, it is something more; we admire what we ourselves aspire this of admirtion for one higher than himself dwells in the breast of man. It is to this hour, and at all hour, and at all hours, *the vivifying influence in man's life*. ... Hero-worship endures for ever while man endures. Boswell venerates his Johnson, right truly even in the Eighteenth century The unbelieving French believe in their Voltaire; and burst out round him into very curious Hero-worship, in that last act of his life when they stifle him under roses ......At Paris his carriage is the nucleus of a comet, whose train fills whole streets. The ladies pluck a hair, or two from his fur, to keep it as a sacred relic. There was nothing highest, beautifullest, noblest in all France, that did not feel this man to be higher, beautifuller, nobler. ... It will ever be so. We all love great men; love, venerate and bow down submissive before great men: nay can we honestly bow down to anything else? Ah, does not every true man *feel that he is himself made higher by doing reverence to what is really above him*? No nobler or more blessed feeling dwells in man's heart. And to me it is very cheering to consider that no sceptical logic, or general triviality, insincerity and aridity of any. Time and its influences can not destroy this noble inborn loyalty and worship that is in men ...... It is an eternal corner-stone, from which they can begin to build themselves up. ...... That man in some sense of other, worships heroes; that we all of us reverence and must ever reverence Great Men; this is, to me, the living rock amid all rushings-down whatsoever."

they illuminate the whole neighbourhood; they place garlands of flowers on the object of their adoration. Is it idolatry they practise? Are they idolators? No, no, such a thing is simply impossible; no one can accuse the English of idolatry! It is not worshipping the block of stone; they ask nothing from it; they offer it no food, nor do they pray to it. If you look more closely into their 'statue-worship', you will find it to be the adoration of a something which the figure is a symbol of. It is not statue of Nelson they assemble to worship, but the spirit of the brave man, the fearless sailor, who made England what she is today —the acknowledged Queen of the Seas. The English are a nation of sailors; take away their sea-power, and they are gone. But for the glorious achievements of the British navy, England would have been overrun by Germany today. The English know it, and pour forth, spontaneously, almost unconsciously, the warmest devotion of their free hearts on the one being who saved them from utter ruin in the past. But if Nelson himself was able to save England from destruction only once, his inspiration has been her salvation not once, nor twice, but repeatedly. The great sailor is now dead; he may no longer command the fleet of England in the hour of danger; he may win no more laurels for himself or victories for his country; but his spirit and influence survive. For there is not a sailor lad in the whole of the United Kingdom who does not brighten up at the mention of Nelson's name, who does not reverently recognise him as a model of greatness for himself, who does not draw powerful inspiration from his life. The nation that placed the statue of this great man in a conspicuous part of the capital of their country knew that they were not merely erecting a statue to the memory of a dead man, but *laying the foundation stone of their own greatness* for generations to come.

Such is the true significance of 'Nelson-worship' which takes place on the Trafalgar Day annually. It is not idolatry that we can charge against the English, but *idealatry*, which, if a fault, is one that has been the source of unparalleled greatness to the culprit!

The Jaina form of worship is, similarly, an instance of *idealatry*, for devotion to God in Jainism only means devotion to the attributes of divinity which the devotee

wishes to develope in his own soul, and consists in the blending of the fullest measure of love and respect for those Great Ones who have evolved out those very attributes to perfection in their own case. The Jainas ask for nothing from their Tirthankaras; no prayers are ever offered to them, nor are they supposed to be granting boons to their devotees. They are not worshipped because worship is pleasing to them, but because it is the source of the greatest good—the attainmint of godly perfection—to our own souls. As said in the "Key of Knowledge", the causal connection between the ideal of the soul and the worshipping of those who have already realized it is to be found in the fact that 'the realization of an ideal demands one's whole-hearted attention, and is only possible by following in the footsteps of those who have actually reached the goal. How well does the poet chant :-

" Lives of great men all remind us,
We can make our lives sublime,
And, departing, leave behind us
Footprints on the sands of time:
Footprints that perhaps another,
Sailing o'er life's solemn main—
A forlorn and shipwrecked brother,
Seeing, shall take heart again."

Sri Jain Dharma Ki Jai.

C. Rai Jain.

सदाचरण।

१. अपना आयुष्य सदाचरणमें व्यतीत करना यह मनुष्यका मुख्य धर्म है।

२. जो मनुष्य प्रामाणिक है, वह सर्व लोकमें मान प्राप्त करता है।

३. तुम अपने साथ अन्य मनुष्यका जिस प्रकार व्यवहार चाहते हो, उसी प्रकार तुम उसके साथ करो।

४. दुराचरणी मनुष्यका कभी भी भला होनेवाला नहीं।

५. दुष्ट कर्म करनेवाले मनुष्योंका बड़प्पन बहुत दिन तक नहीं रहता।

६. दुराचरणसे पृथक् रहना, यह बुद्धिमान मनुष्यका धर्म है।

७. बुरे कामोंसे अनेक प्रकारका नुकसान होता है।

८. पूर्व-पहिलेकी चाल—व्यवहार छोड़ना नहीं, लेकिन पीछेकी खराब चाल—व्यवहार अवश्य छोड़ना।

९. जलसे शरीर स्वच्छ होता है, परन्तु सद्बुद्धिके विना आत्मा पवित्र नहीं होती।

१०. जिसको खराब कर्म एकान्तमें नहीं लजाते वह मनुष्य मंडली—सभादिमें बहुत लज्जित होगा।

११. दूसरेकी अपेक्षा अपना थोड़ा पाप हो तो भी पाप करनेका संतोष कदापि मानना नहीं।

१२. जैसे शरीरके ऊपर फोड़ा हो तब तक निरोगिता नहीं वैसे, जब तक आत्मामें दुर्गुण हो तबतक सुखी नहीं।

सतीशचन्द्र गुप्त।



भक्ति-मार्ग।

(लेखकः-बाबू सूरजभानु वकील, देवबन्द ।)

पेट भरनेके लिये रोटी बनाना एक बहुत ही जरूरी काम है, परन्तु यदि कोई आटा दाल मोल लाकर, कुएंसे पानी भरकर, चूल्हेमें आग जलाकर और धुएंमें बैठकर खूब जी लगाकर रोटी बनावे और ३६ प्रकारके भोजन तय्यार करे परन्तु भोजन तयार करना ही काफी समझ बैठे और खावे नहीं तो वह जरूर भूखा ही रहेगा और भोजन बनानेके लिये उसका दो पहर तक मिहनत करना कुछ भी कार्यकारी न होगा। इस ही प्रकार विद्या प्राप्तिके वास्ते छः घंटे स्कूलमें जाकर बैठना जरूरी है परन्तु यदि कोई स्कूलमें जाकर बैठ जाना ही काफी समझे और एक भी अक्षर न पढ़े तो चाहे वह सारी उमर पाठशालामें जाता रहे परन्तु वह *अनपढ़ ही रहेगा और उसका नित्य स्कूल* जाना बिल्कुल ही निरर्थक बल्कि उलटा समयको बर्बाद करना ही होगा। इस ही प्रकार बनियेके बेटेको रुपया कमानेके लिये बाजरमें दूकान खोलकर बैठना जरूरी है; परन्तु यदि कोई दूकान खोलकर तो बैठ जाय और दूकानमें सौदा एक पैसेका भी न रखे वा सौदा चाहे लाखों रुपयेका दूकानमें भर ले पर बेंचे नहीं तो उसको इस दूकानेके खोलनेसे एक कौड़ीका भी नफा न होगा बल्कि कुछ नुकसान ही रहेगा।

इस ही प्रकार अपनी आत्माकी उन्नति और धर्मका लाभ प्राप्त करनेके वास्ते देव गुरू शास्त्रकी भक्ति करना बड़ा जरूरी है क्योंकि इनसे ही हमको अपने कल्याणका सच्चा मार्ग मालूम होगा और उस मार्ग पर चलकर हम अपने पापोंका नाश और पुण्यकी प्राप्ति कर सकेंगे, परन्तु यदि हम केवल भक्तिही भक्ति करते रहें और उस मार्ग-की तलाश न करें जिसपर हमको चलना चाहिये अर्थात् अपने आचरणोंको ठीक करने और अपने परिणामोंको दुरुस्त बनानेकी कुछ भी कोशिश न करें तो हमारी यह भक्ति बिल्कुल व्यर्थ और निरर्थक ही रहेगी, यदि हम अल्मारी वा संदूकोंमें बन्द जैन शास्त्रोंको दूरसेही नमस्कार कर लिया करें वा सुंदर वेष्टनमें बांधकर और सोने चांदीकी ऊंची वेदीपर रखकर नित्य अष्ट द्रव्यसे उनकी पूजा कर लिया करें परन्तु उनको खोलकर पढ़ने और समझनेका कष्ट उठाना पसन्द न करें वा यदि पढ़ें भी तो उनका अर्थ समझे विदून ही प्राकृत वा संस्कृतके *श्लोक वा सूत्र कंठ याद कर लिया करें वा* यदि स्वयम् पढ़े हुए न हों तो दूसरोंसे पढ़वाकर सुन लिया करें जैसा कि आजकल बहुत जगहोंमें स्त्रियां नित्य सुबहको श्रीमंदिरजीमें दसाध्याय सूत्र वा भक्तामर आदि स्तोत्रका पाठ सुननेको बैठ जाया करती हैं, तो इस प्रकारकी शास्त्रभक्तिसे तो हमारी आत्माका कुछभी भाल न होगा, हमारी आत्मा तो ज्योंकी त्यों वैसी ही बनी रहेगी जैसी कि पहले थी।

इस ही प्रकार यदि हम श्रीगुरु अर्थात् श्री दिगम्बर मुनि वा ऐलक क्षुल्लक ब्रह्मचारी ब्रती

सम्यक्ती वा पांडे भट्टारक आदिकी अनेक प्रकारकी सेवा टहल किया करें और रात दिन उनके पैर दबाया करें परन्तु उनके उत्तम आचरणोंको देख२कर अपने आचरणोंको ठीक करने और पाप क्रियाओं छोड़कर शुभ परिणाम बनानेकी तरफ ज़रा भी ध्यान न देवें बल्कि यह ही श्रद्धा रखें कि गुरु महाराजकी सेवा करनेसे ही हम अनेक पाप करते हुए भी पार उतर जावेंगे तो हमारी यह श्रद्धा भ्रम मात्र ही होगी और उनकी सेवासे हमारा कुछभी कार्य सिद्ध न होगा। इस ही प्रकार यदि हम नित्य श्रीतीर्थंकर भगवानकी पूजा उत्तम २ पदार्थोंसे किया करें उनके लिये नित्य ताजे२ घेवर और लाडू बनाया करें, मीठे२ सेव नारंगी केला अमरूद तोड़२कर लाया करें, तुरतके खिले [illegible] चमेलीके सुगंधित फूल चढ़ाया करें और [illegible] अपने चढ़ावेकी सौ २ गुनी तारीफ गाया करें परन्तु यदि हम इस पूजासे श्री भगवानके कुछ भी गुण अपनेमें पैदा करनेकी कोशिश नहीं करते हैं बल्कि केवल उनकी पूजासेही पार हो जाना चाहते हैं तो हमारी बिल्कुल ही भूल और गलती है, ऐसी श्रद्धासे सिवाय नुकसानके और कुछ भी नहीं होता है क्योंकि ऐसी दशामें हम पूजन करके ही संतुष्ट हो जाते हैं और अपने आचरणोंको सुधारनेके लिये बिल्कुल बेफिकर हो जाते हैं।

जैन धर्ममें नमस्कार मंत्रका बड़ा माहात्म्य माना गया है और माना ही जाना चाहिये क्योंकि इस मंत्रमें अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इन पांच परमेष्टीको नमस्कार किया गया है जो आत्माकी उस उन्नत अवस्थाके सच्चे उदाहरण हैं जिसको कि धर्मात्मा पुरुष प्राप्त करना चाहते हैं अर्थात जीवके कल्याणके वास्ते यही ही पांचो परमेष्ठी सर्वोत्कृष्ट आदर्श हैं और यह ही पांचो आत्मीक अति उत्तम गुणोंके भण्डार हैं; इस कारण अपनी आत्माके असली गुण प्राप्त करनेकी इच्छा रखनेवालोंको परमावश्यक है कि वह इन पांचो प्रकारके महान आत्माओंका चिन्तवन और प्रतिष्ठा सदा अपने हृदयमें बनाये रक्खें और उनके गुणोंको याद कर करके स्वयम् भी वैसे ही गुण प्राप्त करनेकी प्रेरणा अपने आपको करते रहें जैसा कि तत्वार्थ सूत्रकी आदिमें ग्रन्थकर्ताने श्री भगवानको नमस्कार करते हुए कहा है

मोक्षमार्गस्य नेतारम् भेत्तारम् कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारम् विश्वतत्वानाम् वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

अर्थात् मोक्षमार्गके बतानेवाले, कर्मोके भारी पहाड़को तोड़नेवाले और संसार भरके पदार्थोंको जाननेवाले श्री भगवानकी वन्दना में उन गुणोंकी प्राप्तिके वास्ते करता हूं। यदि हम पंच नमस्कार मंत्रका जाप करते समय इस बातका कुछ भी खयाल न रक्खें कि इन पांचों महान आत्माओंके क्या गुण हैं और न उन गुणोंको स्वयम् प्राप्त करनेकी कुछ कोशिश करें, केवल उनको नमस्कार ही कर लिया करें अर्थात् नमस्कार मंत्रकी माला ही जप लिया करें तो हमको कुछ भी फायदा न होगा, जैसा कि यदि एक विद्यार्थी प्रतिदिन अपने अध्यापकके घर जा जाकर सुबह शाम उनको सलाम कर आया करे और

अपने घर बैठा २ भी उनका नाम रटता रहा करे और उनके नामकी पूजा भी किया करे और दुनिया भरमें उनकी बड़ाई भी गाता फिरा करे परन्तु स्वयम् एक अक्षर भी पढ़नेकी कोशिश न करे बल्कि अपने अध्यापकोंको प्रणाम करने, उनका नाम जपने, उनकी पूजा प्रतिष्ठा करने और उनकी बड़ाई गाते फिरनेको ही विद्या प्राप्तिका कारण जानकर यह समझता रहे कि मैं तो विद्या प्राप्तिमें बहुत कुछ कोशिश कर रहा हूं और बहुत कुछ कर चुका हूं तो उसका ऐसा समझना उसको कुछ भी फायदा नहीं पहुंचावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई विद्यार्थी सारे दिन बड़ी २ पुस्तकें बगलमें दबाये फिरा करे परन्तु उनको खोल कर कभी एक अक्षर भी न पढ़े तो उसको कुछ भी पढ़ना न आवेगा, वह तो व्यर्थ ही पुस्तकोंका बोझा उठाये फिरता है।

भक्तिके इस प्रश्नको यदि हम अन्य मतियोंके सिद्धांतके अनुसार भी जांचे जो ईश्वरको जगतका पैदा करनेवाला, प्रबन्ध कर्ता और शासक मानते हैं तो भी यह ही परिणाम निकलता है क्योंकि यदि कोई बदमाश आदमी जो चोरी डाका व्यभिचार आदि सब ही अपराध करता हो और नित्य प्रजाको दुख ही देता हो और इस प्रकार मनुष्य जातिकी शांति भंग करता हो वह यदि अपने सूबेके हाकिमके पास जाने लगे और नाना प्रकारकी बहु मूल्य डाली और तुहफे देकर और सर्व प्रकारकी खुशामद और स्तुति द्वारा उस हाकिमको प्रसन्न करनेकी कोशिश करने लगे और सुबह शाम उस हाकिमकी हाजरी देकर और सर्व प्रकारकी उसकी टहल सेवा करके यह आशा रखने लगे कि मेरे इन कर्त्योंसे हाकिमकी आंखोंपर चर्बी फिर जावेगी और वह मेरी तरफसे बिल्कुल ही अंधा होकर मेरे दोषों और मेरे किये हुए महान उपद्रवोंकी तरफ कुछ भी ध्यान न देगा बल्कि अति प्रसन्न होकर मुझसे बहुत ही ज्यादा प्यार करने लगेगा और अपने मातहत छोटे हाकिमों अर्थात तहसीलदारों और थानेदारोंको भी यह आज्ञा लिख भेजेगा कि यह पुरुष हमारा परमभक्त प्यारा है इस कारण यह चाहे कैसा भी महान अपराध करे चाहे जैसा भी उपद्रव मचावे और अशान्ति फैलावे तो भी इसको बिल्कुल नहीं टोकना चाहिये और सब कुछ अपराध करने देना चाहिये बल्कि यदि वह इन खोटे कामोंमें तुमसे सहायता चाहे तो यथासम्भव उसको सहायता भी देते रहना चाहिये इत्यादिक अन्य भी अनेक प्रकारकी आशा यदि वह दोषी पुरुष अपने सूबेके हाकिमकी तरफसे अपने मनमें बांध ले तो क्या उसकी यह सब आशायें झूठी नहीं हैं? क्या वह इस प्रकारकी अपनी व्यर्थकी आशाओंके धोखेमें आकर और निश्चिन्तताके साथ दोषोंमें लगकर शीघ्र ही नहीं पकड़ा जावेगा और बहुत कड़ा दंड नहीं उठावेगा? अवश्य उठावेगा और यदि हाकिमको यह भी मालूम हो जावेगा कि हमसे अपनी सेवा भक्तिका नाता जोड़कर और हम पर निश्चिन्त होकर ही इसने यह सब अपराध निर्भय होकर किये हैं तब तो उसको सर्व साधारणसे भी अधिक दंड दिया जावेगा और वह जेलखानेमें ही पड़ा २ सड़कर मर जावेगा।

इस उपरोक्त दृष्टान्तमें यदि कोई हाकिम ऐसा हो जो अपनी सेवा भक्ती करनेवाले चोर बदमाशका पक्ष करने लगे अर्थात् उसको दंड न दिया करे तो क्या वह हाकिम महाअन्यायी और महान उपद्रव और अशान्ति फैलानेवाला और प्रजाको महान् दुखोंमें डालनेवाला नहीं है? अवश्य वह ऐसा ही है और अति आवश्यक और जरूरी है कि प्रजा उसके विरुद्ध उठे और उसके उच्चाधिकारी बड़े अफसरसे उसकी शिकायत करके उसको हाकमीसे अलग करादे और यदि वह हाकिम कोई स्वतन्त्र राजा हो तो उसको अपना राजा न मान कर किसी दूसरेको ही अपना राजा बनानेकी कोशिश करे, ऐसे हाकिम व ऐसे अन्यायी राजाके वास्ते प्रजाने सदा ऐसा ही किया है और प्रजाको लाचार होकर ऐसा ही करना पड़ता है।

अब असली बातका विचार कीजिये कि यदि हम इस ही प्रकार अपने आचरणोंके सुधारनेकी कोशिश न करें बल्कि परम पिता परमेश्वरको सर्व शक्तिमान मानकर उसकी ही खुशामद और गुणगानमें लगे रहें और बड़ी भक्तिके साथ उसको फूल पत्ते वा जल चढ़ते रहें वा उसके नाम पर किसी प्रकारकी बलि देते रहें वा उसको खूब बढ़िया २ नैवेद्यका भोग कराते रहें अर्थात् ताज़ा २ मिष्टान्न चढ़ाते रहें और सोते जागते उठते बैठते आठ पहर चौसठ घड़ी उस ही का नाम रटते रहें तो क्या वह परमेश्वर हममें हजार अवगुण होते हुए भी केवल हमारी भक्ति ही से हम पर प्रसन्न हो जावेगा और हमको अपना प्यारा मानकर हमारे सब अपराध क्षमा कर देगा और अग्नि वायु जल पृथिवी और सूरज चांद आदि सब ही देवताओंके नाम आज्ञा कर देगा कि यह पुरुष हमारा परमभक्त है इस कारण यह चाहे कुछ भी दोष करे, हमारी आज्ञाओंको भंग करके संसारमें चाहे कितना भी उपद्रव मचावे जैसी चाहे अशान्ति फैलावे और संसारके जीवोंको चाहे जितना भी कष्ट पहुंचावे परन्तु इस हमारे प्यारेको कोई भी कष्ट न होना चाहिये अर्थात् इसके सब अवगुणोंको गुण ही समझना चाहिये और इसके सब कार्य सफल ही होते रहने चाहिये।

हमारी समझमें तो दुनिया भरमें कोई भी ऐसा मत वा धर्म वा सम्प्रदाय वा आम्नाय नहीं है जो अपने परमेश्वरका ऐसा स्वरूप मानती हो अर्थात् जो ऐसे परमेश्वरको मानते हों जो सेवा भक्ति पूजा पाठ और खुशामद आदिसे खुश होकर अपराधीको दंड न देता हो और उसको स्वतन्त्रताके साथ अपराध करने देता हो और अपराध करते हुए भी केवल उसकी सेवा भक्तिके कारण ही उसकी सहायता करता हो। हाकिमके दृष्टान्तमें तो यह सम्भव भी है कि कोई अयोग्य पुरुष हाकिम बन जावे और वह अपनी सेवा भक्ति वा खुशामदके कारण किसी बदमाशकी रिआयत करने लगे परन्तु परमेश्वरके विषयमें तो यह

कमी करें उसके शुभ कर्मों और अच्छे चारित्रोंको भी तुच्छ गशकर उससे अप्रसन्न ही रहे, ऐसा मानना तो परमेश्वरमें दोष लगाना है और महान अपराध करना ही है, उस परमेश्वरको तो सब ही लोग पूरा पूरा न्यायकारी और और सदाचारी मानते हैं, उसमें तो कोई भी किसी प्रकारका दोष नहीं लगाता है।

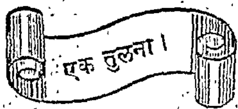
इससे स्पष्ट सिद्ध है कि परमेश्वरको संसारका प्रबन्धकर्ता माननेकी दशामें भी लोगोंको अपने आचरणोंका ठीक रखना ही जरूरी है अर्थात् सदाचारी बनकर ही परमेश्वरकी प्रसन्नता प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिये और बहकाये फुसलाये या खुशामदमें आकर सेवा भक्ति करनेवालोंकी तरफदारी करने जैसे महान दोषोंको उस परम पवित्र परमात्माके मत्थे न थोपकर बल्कि उसको सर्वोत्तम गुणोंका धारी ही मानकर और उसके ऐसे ही गुणोंका गीत गाकर स्वयम् भी वह ही गुण प्राप्त करनेकी अर्थात् शुद्धाचरणी और गुणवान बनने और अवगुणोंको छोड़नेकी ही कोशिश करते रहना चाहिये।

परन्तु इस समय देखनेमें यह आ रहा है कि रागद्वेषसे रहित परम वीतरागी परमात्माको माननेवाले जैनी और दुनियाको बनाने और उसके प्रबन्धमें लगा रहनेवाले कर्ता परमेश्वरको माननेवाले अन्यमती भी अर्थात् सारी दुनिया ही और विशेष कर हिन्दुस्तानके लोग तो अवश्यही अपने आचरणोंको सुधारने और योग्य बनानेकी तरफ कुछ भी ध्यान नहीं देते हैं बल्कि अपने इष्ट देवकी भक्ति करने अर्थात् चढ़ावे और खुशामदसे ही उसको राजी करके अपने कार्योंकी सिद्धिकी कोशिश करते रहते हैं और "प्रभु मेरे औगुण मत न चितारो मुझे अपना जानकर तारो" इत्यादिक भावना भाते रहते हैं। फल इस प्रकारकी भावनाओंका यह हो रहा है कि चारों तरफ पाप ही पाप फैल रहा है, और दो सगे भाइयोंमें भी आपसमें एक दूसरेका विश्वास नहीं किया जाता है और सबको हरवक्त सबही मनुष्योंसे अपनी सबही चीजोंकी रखवाली करनी पड़ रही है और सबहीसे पापकी शंका बनी रहती है।

भावार्थ—संसारमें घोर अंधकार फैला हुआ है और अनेक धर्म प्रचलित होते हुवे भी और सबही मनुष्योंका अपने२ धर्मको अधिक कल्याणकारी बताते हुए भी और अपने २ धर्मपर पूरी२ श्रद्धा रखते हुए भी और कुछ धर्म सेवा और पूजा भक्ति होते हुए भी, सबही धर्मोंके लोग आचरणके विषयमें एक ही प्रकारके दिखाई देते हैं और सबही अविश्वासके योग्य बने हुए हैं। किसीभी कल्याणकारी धर्मके लोग ऐसे नहीं हैं जो अपने आचरणोंमें अन्य धर्मवालोंकी अपेक्षा अच्छे माने जाते हों और संसारमें विश्वासके पात्र बन गये हों, बल्कि छल कपट धोका फरेब आदि सबही प्रकारके पाप कार्य सर्वही मतोंके लोगोंमें देखनेमें आ रहे हैं और सबहीमें पाप कार्योंका प्रचार हो रहा है। कारण इसका सिवाय इसके और कुछ भी नहीं है कि सबही मतोंके लोगोंने अपने २ परमेश्वर वा परमात्माका भेट वा खुशामद आदिसे उस ही प्रकार प्रसन्न हो जाना मान लिया है जिस प्रकार कि आज

कलके मामूली आदमी प्रसन्न हो जाता है और उस परमेश्वरके द्वारा ही सर्व कार्योंकी सिद्धि समझकर एक मात्र भेंट देने चढ़ावा चढ़ाने और स्तुति गाने अर्थात खुशामद करने पर ही भरोसा कर बैठे हैं और अपने आचरणोंका ठीक करना बिल्कुलही छोड़ दिया है। अन्य मतोंकी बाबत तो हम विशेष नहीं कह सक्के परन्तु जैनधर्म तो स्पष्ट शब्दोंमें साफ २ यह ही कहता है और यह ही इस धर्मका मूल और महत्व है कि परम परमात्मा अर्थात् श्री अरिहंत सिद्ध तो रागद्वेषसे रहित परम वैरागी, हैं उनको तो न किसीकी बुराईसे मतलब है न भलाईसे, वह तो कृतकृत्य हो गये हैं अर्थात् उनको तो अब कुछ भी करना बाकी नहीं है, वह तो अब न किसीका बिगाड़ करते हैं और न सुधार, इस कारण उनकी सेवा भक्ति और पूजा पाठ तो उनको प्रसन्न करने और उनसे किसी कार्यके सिद्ध करानेके वास्ते नहीं है बल्कि अपने परिणामोंको सुधारने और अपने आचरणोंको ठीक करनेके वास्ते ही है अर्थात् मुख्य कर्तव्य तो हमारा अपने आपको ठीक करना है और परमात्माकी भक्तिभी अपने आपेको ठीक करनेका एक कारण है। इस वास्ते हमको भक्ति ऐसी ही विधिसे करनी चाहिये जिससे हमारा आपा सुधरे अर्थात् हम सदाचारणी बनें। इस ही कारण जप तप पूजा पाठ और सेवा भक्ति करनेसे जितना२ हमारा आपा सुधरता जाता हो अर्थात् हम सदाचरणी बनते जाते हों उतना ही अपने जप तप पूजा पाठ और सेवा भक्तिको ठीक रीतिसे होना समझते रहना चाहिये और जिस रीतिसे जप तप पूजा पाठ आदि करनेमें अपने आचरण कुछ भी ठीक न होते हों बल्कि ज्योंके त्यों बने रहते हों भक्तिकी उस रीतिको व्यर्थ बल्कि धर्मके विरुद्ध निरा ढोंग ही समझना चाहिये।

सच तो यह है कि जब तक हमारा भक्तिमार्ग ठीक नहीं होगा अर्थात् जब तक सब लोग भक्तिके असली अभिप्राय और भक्तिके द्वारा उस अभिप्रायके प्राप्त करनेकी विधिको नहीं समझेंगे और उस हीके अनुसार चलनेकी कोशिश नही करने लगेंगे तब तक तो मानो सच्चा धर्म ही संसारमें फैला हुआ नहीं है बल्कि धर्मका आभास है जिसके धोखेमें आकर लोग हानि उठा रहे हैं और लोगोंका आचरण पतित हो रहा है, इस कारण विद्वानों परोपकारियों और सच्चे धर्मात्माओंको उचित है कि वह भक्तिमार्गके अभिप्राय और उसकी विधिको सर्व साधारण पर प्रकट कर देने और उनको अच्छी तरह समझाकर उस सच्चे और असली मार्ग पर लक्ष देनेकी पूरी २ कोशिश करें जिससे संसारमें सदाचार और सद्गुण फैलकर इस जगतमें भी सुख शांतिकी वृद्धि हो और आगेको भी लोगोंका कल्याण हो।



महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक

(लेखक-सुन्दरलाल जैन, सुरत)

अकबर और औरंगजेब दोनोंकी परस्पर तुलनाके निबंध लिखवाना प्रारम्भिक शालाओंमें साधारण बात है। मरणके पश्चात् शताब्दियां बीत जाने पर भय, स्वार्थ, पक्षपात, राग और द्वेष दूर हो जाते हैं। भूतकालके महान पुरुषोंकी सत्य तुलना करना निष्पक्ष, निःस्वार्थ और निर्भयता कालान्तरमें प्राप्त होनेसे सरल हो जाता है; परन्तु इसके विपरीत समकालीन महापुरुषोंकी सत्य तुलना करना कठिन है। उनकी अतिशय समीपता होनेसे उनके कार्यका समदर्शन तथा पूर्ण दर्शन जैसा होना चाहिये नहीं होता। अतरङ्ग परीक्षा (एनेटोमी) तो यथायोग्य भूतपूर्वोंकी ही हो सकती है। तुलना भी अंतरगात्र परीक्षाके सदृश ही होती है। इस कारण लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधीकी तुलना करना एक प्रकारसे दुःसाहस ही है। चाहे जो हो ऐसा करनेका कारण यही है कि उन्होंने अब तक जो पराक्रम प्रगट किया है वह वर्त्तमानकालसे सम्बन्ध रखते हुए भी उस पर भूतकालका भी स्वामित्व है और उससे ही उनका सुंदर जीवन चरित्र और उनसे पुष्काल एवं प्रगट कार्य हो सके हैं। वे भरतखंडकी रंगभूमिमें इतने विस्तृत कालसे परिचित हैं कि अब उनके गुण एवं दोषोंपर किसी प्रकारका आवरण नहीं है। जीवनके कर्त्तव्य तो वे कभीसे कर रहे हैं। वानप्रस्थके योग्य, वानप्रस्थ होनेके लिये एवं उसके पूर्व जो कार्य करना चाहियेथे उससे भी अधिक वह कभीके कर चुके हैं। उनके ऊपर अब देशका कोई ऋण नहीं है। गांधीजी कालकी अपेक्षा अभी युवा हैं परन्तु अन्तिम २० वर्षोंसे उन्होंने शतायुवालेके सदृश कार्य किया है, उनके वर्तमान जीवनने एक नवीन रंग एवं नवीन रूपही प्राप्त कर लिया है। दोनों जो कार्य कर रहे हैं वह मात्र मुनाफेका है, देशको पुरस्कार रूप है और भूतकालका अनुसन्धान है। तात्पर्य यह है कि उनके जीवनमें कार्य करनेकी इतनी भरमार रही है जिससे उनके तुलनात्मक गुण दोषोंका विचार करनेके लिये पूर्ण सामिग्री मिल चुकी है इस विषयमें तो कोई सन्देह ही नहीं।

दोनों भरतखंडके अनमोल हीरे हैं, एक गुर्जरराष्ट्रकी खानिसे दूसरा महाराष्ट्रकी खानिसे निकला है। यह कोई अत्युक्ति नहीं है कि भारतवर्षके नेताओंमें उनके आगे सिर झुकाने और चरणस्पर्श करनेवाले विद्वान एवं अविद्वानोंकी जितनी संख्या है उतनी किसी अन्य नेताके अनुयायियोंकी नहीं है। यही क्यों यदि आवश्यकता पड़े तो उनके पीछे प्राणतक देनेवाले तैयार हैं। तथा आत्मभोग देनेवाले उत्साहको शरीरमें फूंकनेवाली शक्तिपर भी इन्हींका आधिपत्य है। इन दोनों महापुरुषोंसे अधिक प्रखर विद्वान, प्रभावशाली वक्ता, बडे २ फंड एकत्र करनेवाले, दान लेनेवाले,

दान देनेवाले, सुंदर लेख एवं पुस्तक लिखने वाले एकसे एक होंगे; परन्तु वास्तविक नेता होनेकी कसौटी यही है कि प्रजा उनके विचारोंको माने या न माने परन्तु उनकी सूचना-आज्ञारूप मानकर जहां–पहाड़ या घाटी जैसे दुर्गम स्थानको वे जानेको कहें, जिस दिशामें वे अंगुली मात्र उठा दें उस दिशामें उत्साह पूर्वक जानेको तैयार हो जाय। यह शक्ति दोनोंमेंही है। उतनी या उससे आधी भी भारतके किसी दूसरे नेतामें कहना अशक्य है। यह शक्ति उनमें जन्मके साथ ही आई है। वह आजकी नहीं है। उन दोनोंमें परस्पर विलक्षणता होते हुए भी उनका प्रजापर किस कारणसे अद्भुत प्रभाव पड़ता है इसीकी खोज करना है–उनमें कौनसी विलक्षणता है यही देखना है।

प्रथम इन दोनों महापुरुषोंमें कितने गुण समान हैं और पुनः कितने भिन्न एवं विरोधी हैं उसीका हम अन्वेषण करेंगे।

देशके प्रति दोनोंमें समान भाव है। देशके लिये तो महात्मा गांधीने सर्वस्व ही अर्पण कर कर दिया है। परन्तु लो० तिलकनेभी कुछ कम नहीं किया। उनकी आयका साधन 'केसरी' पत्र है जिससे अच्छी आय होती है, परन्तु वह सर्व साधारणकी अपेक्षा ही अधिक है। उससे लोकमान्य तिलकका आर्थिक व्यवहार सरल रीतिसे चलता है परन्तु श्रीमंत बनना उनको स्वप्नमें भी अच्छा नहीं मालूम होता।

दोनों ही विजयमालाको धारण करनेके समय तक उसको अस्वीकार करनेवाले हैं–विजयमाला प्रारम्भ कर मानव शक्तिके अंत तक विजय प्राप्त करते हैं, अपने उद्देश्यको पूर्ण करने पर ही विश्राम और निद्रा लेते हैं। यह दोनोंमें समान लक्षण है।

दोनोंमें ही एक दूसरा लक्षण सादेपनसे रहनेका है। वास्तवमें म० गांधी व्यवहारिक रीतिमें सन्यासी होनेसे चढ़ जाते हैं। उसमें भी शारीरिक कष्ट सहनेकी शक्ति मान्यवर तिलककी अपेक्षा अधिक है। विशेष कर म० गांधीके शरीरमें मांसकी अधिकता न होनेसे, हलका और लम्बा शरीर एवं आयु उनकी युवा प्रगट करनेमें सहायता देती है। तृतीय अवस्थाका हाड़ मास–तिलक महाराजका स्थूल और मूत्र रोगसे पीड़ित शरीर शारीरिक कष्ट शायद ही सहन कर सके। यात्रा करनेमें वे प्रथमावस्थाके समान ही हैं। भोजन वस्त्रकी आवश्यकता दोनोंको ही कम है। यदि म० गांधीको तौला जाय तो लो० तिलक ही दश मन ही उनसे वजनमें अधिक निकलेंगे। सादेपन और आवश्यकताओंकी कमीने म० गांधीको एक प्रधान सदन, एक कन्या, एक वस्त्र विग्रहका एक शास्त्र ही बना दिया है। लो० तिलकने मात्र सुभीता एवं फदान राजनीतिके एक अंगके समान समझ कर उसको ग्रहण किया है। दोनों ही अपने २ प्रान्तके स्वदेशी वस्त्र पहनते हैं और विदेशी वस्त्रकी तो बात ही क्या विदेशी कांट छांटका स्पर्श भी उसमें नहीं होने देते हैं।

निःसंदेह रिवा सम्बन्धी प्रकरणमें लो० तिलक सहजहीमें महात्मा गांधीसे बढ़ जाते हैं। म० गांधी तो बिना नियम और औरसिके सन्यासी हैं और सर्व धर्मोंके सिद्धान्त

समान पर विचारपूर्वक निरीक्षण किये हैं। परन्तु लो० तिलकको संस्कृत साहित्यका विशेष कर आर्यधर्मका ज्ञान अधिक है। इसका 'गीता भाष्य' स्मारक है, 'ओरायन' आदि अंग्रेजी पुस्तकें इसकी उदाहरण स्वरूप हैं। गांधीजी विद्वान नहीं हैं यह बात नहीं, उनकी गुजराती भाषाकी परिमार्जिता अच्छे २ विद्वानोंके हृदयको शीतल कर देती है। म० गांधीमें अभ्यासके शुष्क पांडित्यकी अपेक्षा विचार और मनन विशेष है। यही गुण उन को अन्य विद्वानोंसे पृथक् करता है।

दोनों ही देशोन्नतिके समान और पूर्ण भक्त हैं–परन्तु देशोन्नतिकी पद्धतिमें दोनोंके बीच बहुत अन्तर है। शायद उस विरोधका नामनिक्षेप किया जा सके। इन दोनों सूर्य और चन्द्रकी विलक्षणताका यहीं पृथ्वीपर अवतरण होता है। म० गांधी जगतकी उन्नतिके एक भागकी तरह भारतकी उन्नतिके इच्छुक हैं उन्नतिमें दूसरेका भाग आना उन्हें त्याज्य है। यही उनके सिद्धान्तका मूल है। केवल राज्योन्नति पर लो० तिलककी अपेक्षा उनकी षष्टांश भी श्रद्धा नहीं है–राज्योन्नतिको वे आत्मोन्नतिसे गौण मानते हैं और आत्माके विकासमें वे राजनैतिक स्वतंत्रताको एक साधन समझते हैं। लक्ष्य, साध्य और प्राप्तिके पात्र वे मन और आत्माकी उन्नति एवं आत्म-पवित्रताको ही मानते हैं। राजनैतिक उन्नतिको वे सम्पूर्ण सुखके अनेक भागस्वरूप समझते हैं। अन्य प्रकारकी उन्नतिमें उनकी केवल अश्रद्धा ही है ऐसा नहीं, किंतु वे उनको गौण मानते हैं। और उस प्रकारकी उन्नतियोंके लिये शीघ्रता करनेकी आवश्यकता नहीं है–उनकी तात्कालिक आवश्यकता नहीं है और जो अन्य प्रकारकी उन्नति कम मालूम होती हैं वे राजनैतिक उन्नति प्राप्त किये विना कदापि नहीं मिल सकतीं और राजनैतिक उन्नति ही उसकी प्राप्तिमें सरल साधन और कारण हो पड़ेगी ऐसा उनका मानना है। इन बातोंसे प्रकट होता है कि महात्मा गांधीके विचार व्यापक और सार्वदेशिक हैं। इसके विपरीत लो० तिलकके विचार एक प्रकारके और एक दिशागामी हैं। इसीसे उनकी कार्यपद्धतिमें भेद प्रकट होता है। म० गांधी जिस समय कोई राजनैतिक प्रश्न उठाते हैं तो उसे धर्मका जामा पहिना देते हैं. लो० तिलक जब किसी धार्मिक विषय पर विवेचन करते हैं तब उसको यत्किंचित् राजनैतिक रंगमें रंग देते हैं। म० गांधी राज्यको नीतिका एक अंग गिनते हैं, लो० तिलक धर्मको राज्यके किसी अंशमें समाविष्ट करते हैं। इसीसे लो० तिलककी जो राजनीति है वही म० गांधीकी शुद्ध धर्मनीति है। लो० तिलक केवल साध्य पर एकचित्तसे लक्ष्य रखते हैं और आवश्यकतानुसार छोटे-बड़े सभी साधनोंका उपयोग करते हैं। म० गांधी साधन भी देवपूजाकी सामग्रीके समान साध्य जैसा ही शुद्ध होना चाहिए और अमुक गुणवाला एवं दोषरहित होना चाहिये यह खोज कर ही उसमें हाथ लगाते हैं। साध्य उत्तम हो तो उसको प्राप्त करानेवाले शस्त्रों–साधनोंकी शुद्धिके विषयमें बहुत खींचातानी करना लो० तिलक आवश्यक नहीं समझते हैं।

इस दृष्टिसे लोकमान्य तिलक जो करते हैं वह उचित ठहराया जा सकता है परन्तु जिस प्रकार होम करनेवालेको यज्ञमें हलकी गीली, सड़ी लकड़ी होम करनेसे जो खराब धुआं एवं दुर्गन्ध दूसरोंपर पड़ती है उसकी खबर न हो उसी प्रकार लोकमान्य तिलकको उसके प्रकाश करनेमें उसका क्या प्रभाव होगा इसका ख्याल नहीं और न वे इसे महत्व ही देते हैं। इनकी पद्धतिका जो कोई विरोधी हो केवल उसकी ही नहीं विरोधीके पक्षपातीकी भी खैर नहीं। रानाडे और गोखले जैसे महापुरुषोंने लो० तिलककी कार्य पद्धतिको नहीं स्वीकार किया। म० गांधीको उत्तम पुरुषोंको तो क्या दुर्जन मनुष्यको भी बुरा कहना आता नहीं। अहंमन्यतासे म० गांधी मुक्त हैं। इसके विपरीत यह लोकमान्य तिलककी रग रगमें मौजूद है। इसीसे म० गांधीका कोई विरोधी नहीं है जबकि लोकमान्य तिलकके विरोधियोंकी संख्या अधिक है।

कीर्ति, पूज्यभाव, तथा आदरके विना प्रजापर प्रभाव नहीं पड़ेगा और प्रभाव नहीं पड़े तो हम राजनैतिकोंमें अग्रेसर न गिने जांयगे और राजनैतिक उन्नति नहीं कर सकेंगे ऐसी कुछ लो० तिलककी तर्क शृंखला है। इसी कारणसे वे प्रजाजनकी ओरसे मान असाधारण मानको सदा स्वीकार कर लेते हैं। न्याय करनेकी दृष्टिसे हमको कहना पड़ेगा कि अहंभावसे नहीं किन्तु सर्व साधारण जन और सरकार पर छाप डालनेके लिये परम संतोषसे वे उस मानको स्वीकार करते हैं। उनकी गाड़ीके घोड़ोंको अलग करके लोग अपने हाथोंसे उसे खींचे इसमें लोकमान्य तिलकको कोई आग्रह नहीं-इसके विरुद्ध; कोई ऐसा करेगा तो हम गाड़ीसे कूद पड़ेंगे ऐसी म० गांधी धमकी देते हैं। तात्पर्य यह है कि लो० तिलकने जब अहंभावको एक राज्यनैतिक आवश्यकता मानकर उसे स्वीकार किया है। तब म० गांधीने राजसी वस्तु क्षणभरके लिये भी सात्विक नहीं मानी जा सकती इस न्यायसे उसको अस्वीकार किया है। लो० तिलक कृष्ण, चाणक्य और डिजरायलीके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं और म० गांधी विदुर, युधिष्टिर, और मेडनी या ग्लेडस्टनके शिष्यकी अपेक्षा अधिक हैं। इनमें चढ़ता कौन और उतरता कौन इसका निर्णय करना इस लेखका विषय नहीं-शायद उसको देखते तो हैं। हमको मात्र तुलना करके भेद ही दर्शानेका संकुचित कार्य करना है जिसे हमने यथाशक्ति किया है।

(गुजराती निबन्ध समतसे अनूदित)



बड़ोंका मान।

१. अपने माता पिताका मान रखते रहना ही मानो ईश्वरका आशीर्वाद है।

२. माता पिता, गुरू और मालिक जो काम कहें वह शीघ्र करना. वायदा करना नहीं।

३. माता पिता जो कहें कि तोफानी बालकोंकी सोबतमें फिरना नहीं यह माननेमें अपना कल्याण है।

४. विद्या पढ़ानेवाला, अन्न देनेवाला और भयसे बचानेवाला ये तीनों मातापिताके समान गिने जाते हैं क्योंकि ये अपना भला करनेवाले हैं।

५. यदि हम बड़ोंकी मर्यादा रक्खेंगे तो आगे बालक अपनी मर्यादा रक्खेगा।

"नूतन वर्षनी भेट"

व्हाली व्हेनो ! अने सुज्ञ बंधुओ ? गत वर्षनी आखरमां इन्फ्लुएन्जा नामना नवीन तावे लोकोने हेरान हेरान करी नांख्या छे. ए रोग यमदूत रुपे आवीने केटलानां प्राण हरण कर्या छे, केटलाकने बाळविन बनावी दीधा छे अने केटलाकने गांडा बनावी दीधा छे. ए सिवाय केटलेक ठेकाणे कोलेरा विगेरेथी पण लोकोनो संहार थयो छे. केटलाक पोत पोताना देशना बचाव खातर प्रचंड युद्धमां झंपलावीने सदाने माटे आ असार संसार छोडीने चाल्या गया छे. अने केटलाक मोंघवारीने लीधे अन्न न मळवाथी पोताना अमूल्य प्राणनो त्याग कर्यो छे. अने केटलाक क्षुधाथी तरफडे छे.

उपर जणाव्या प्रमाणे अनेक विघ्नोने ओळंगीने आपणे आबाद रह्या छिए ए पण एक आपणुं अहोभाग्य समजवुं जोइए. अने ए पुण्य चीरकाळ टकी रहे तेने माटे आ नूतन वर्षमां एवां परोपकारनां कामो करवां जोइए के जेथी बिचारां रांकडां निर्धन, रोगी अने निराश्रितोने आपणा तनथी, मनथी, वचनथी, अने धनथी सहायता मळे.

व्हाली व्हेनो ! अने सुज्ञ बंधुओ ! जो तमे सत्याग्रही कर्मवीर गांधीजीना वचनने मान आपता हो अने देशने उन्नत करवाने च्हाता होय, देशनी दीनता दूर करवा मांगता होय, देशना पैसा देशमांज रहे एवी शुभ इच्छा तमारा हृदयमां होय, उपर उपरथीज फक्त व्याख्यान करीने तमो वाह ! वाह ! कहेवडावा नहि मागता होय, परंतु खरी अंतरनी दाझथी देशनुं भलु करवाने चहातां होय तो तमे वर्तमानमां दिनपर दिन वृद्धि पामती फेशननी फीसीयारीने ओछी करो. एक रुपियाना कपडा पर पांच रुपीयानी सीलाइ अरे ! एथी पण वधारे लोको दरजीने सीलाइ आपे छे तेनो अटकाव करावो. फुंके फाटी जाय, तथा शीलने दूषण लगाडे एवां बारीक कपडां नहि पहेरवानो नियम करो, देशी मळ्या पोतना अने टकाउ कपडां पहेरवानो दृढ नियम लो, आम करवाथी, जरूर देशनी आबादी थशे.

सीवण भरतना क्लासो ज्यां त्यां चाले छे परंतु एनो क्रम उलटो जोवामां आवे छे. सीवण भरतना क्लास एम बोलाय छे भरत सीवण कोई बोलतुं नथी. सीवण शब्द पहेलो लेवामां एक महत्व रहेलुं छे एटले के पहेला सीवण शीखववुं ते एटले सुधी के ते पोते पोताना, बाळ बच्चांना तथा पतिना कपडां जेवां के पोलका, चोळीओ, झभलां फराक, टोपीओ, लेंघीओ, कोट, बदन बंदी फराक जाकीट विगेरे सफाईथी सीवी शके अने सीवतां आवडे. त्यार बाद पोते वेतरी पण शके. आटलुं थया बाद रेशमनुं भरत, कसबनुं भरत, उननुं भरत तथा तथा दोराना रुमाल गुंथवा, मोतीना तोरण बनाववां विगेरे शीखववुं जोईए. पण आज तो जेने एक लुगडुं फाटेलुं होय तेनो झडको भरतां न आवडतुं होय तेओ पण हाथमां सोयो लइने गुंथवानुं काम करीने पोताने होशीयार माने छे. आथी कांई घरना पैसा बचता नथी पण उलटो खर्च वधे छे माटे मारी समज प्रमाणे सीवण भरतनो खरो अर्थ

समजी जेम शब्दनो क्रम छे तेमज शीक्षणनो होवो जोइए अने जो दरेक ठेकाणे आवो सुलटो क्रम चालु थाय अने पैसानी करकसर थाय तो पछी झट देश उन्नत अवस्थाने प्राप्त करे एमां जरा पण वांधो लागतो नथी. वळी अलंकारोनी बाबतमां पण वारंवार एक चीज करावबी अने ते कांई पण तूटी न होय तो पण बीजांनी कांई नवी चीज जोई के तरतज पोते करावेली चीजने भंगावी तोडावीने बीनी नवी चीजो करावबामां आवे छे. आथी वारंवार सोनुं सोनीना हाथमां जवाथी रेचण विगेरेनुं मिश्रण थवाथी रासी थई जाय छे. अने सोना साठ उपजे एटली किंमत रहे छे ए. सिवाय मजुरीना पैसा वारंवार खरचवाथी एक दागीनो बीजो थाय एटलुं अने कोई कोई वखते एथी पण वधारे नुकसान थाय छे. माटे मारी व्हेनोने तथा बंधुओने मारी भलामण छे के तमे जे कांई अलंकार करावो ते मजबूत करावो अने कोईनी नवी चीज जोईने झट तेम करावतां अटको।

व्हेनो! अने बंधुओ! विचार करो के पहेलानां लोको पासे पैसा घणा हता अने ज्ञान आज करतां ओछुं हतुं, कमाणी पण लगभग वर्तमान समय करतां तेओ ओछी करता छतां पण तेओ सुखी हता तेनुं कारण शुं?

मारा मानवा प्रमाणे तेनुं कारण एज के तेओ दरेक बाबतमां सादा हता. तेओ कपडां सादां अने टकाउ पहेरतां हतां, अलंकार पण तदन केदी नहीं पहेरता, परन्तु मजबूत अने मानसाउ धारता हता, वळी बीजी ए बाबतमां आगमी माफक दरेक बाबतमां पराधीनताने तेओ पसंद नहीं करता हता पण जात महेनते जेटलुं बने तेटलुं करी लेतां हतां, बनता सुधी पोताना कपडां पोताना हाथेज वणता, घर काम पण वासण मांजवां, पाणी भरवुं दळवुं विगेरे हाथेज करता हता. पोताने त्यां काम बहोळुं होय तो नोकर पण राखता परन्तु साथे पोते आळसु नहीं बनतां. आथी तेओनां शरीरने कसरत मळती हती अने तेओ शरीरे रुष्ट पुष्ट रहेता हता अने तेथी प्रजा पण तेवी रुष्ट पुष्ट उत्पन्न थती हती. तेओनो अहार पण सादो हलको अने पुष्टि कारक हतो आजनी माफक दिवसमां पांच पांच सात सात वखत चा पीने जठराग्निने मंद करी नांखवानो कढंगो रिवाज त्यारे नहोतो. आथी तेओ दरेक बाबतमां सुखी हता. सोडावोटर, लीमलेट, चाकलेट, अने बीस्कुटने तो कोई ओळखता पण नहोता, पण एने बदले घरनी बनावेली चीजो जेवी के पुरी भजीआं मगज विगेरे पवित्र वस्तुओनो व्यवहार चालतो हतो, आज तो मडमने जोइने तेनी नकल करी बुट मोजां पहेरी हाथमां छत्री लइ रोफ मारवो, अने एमांज जाणे बधो सुधारो आवी गयो होय तेम मनाय छे पण आ सुधारो नथी पण कुधारो छे. आथी देशनी उन्नति थती नथी पण अवनति थाय छे. हा केटलीक सुधारानी बाबतमां पण फेरफार करवा जेवो छे ने करवो जोइए जेमके कपडां स्वच्छ राखवां, मकानो हवा नहीं आवे एवां होय तो तेनो फेरफार करावी हवादार बनाववां.

फेशनने ओछी करीने सादाई अंगीकार करवाथी दरेक जण अनेक तरेहना देशहितना कामो करी शके, धनवान सादाईथी चाली कुमार्गे जता पैसाने अटकावी शके, देश बंधुओना अज्ञानने दूर करवाने बोर्डिंगो, हाईस्कूलो पाठशाळाओ, वांचनालय खोलावी शके, अज्ञान अंधकारमां पडेली व्हेनोने प्रकाशमां लाववाने आश्रमो, कन्या महाविद्यालय विगेरे ज्ञानना खाताओ खोली शके, देशने पैसे टके सुखी करवा माटे विविध प्रकारनी हुन्नरशाळाओ, खोलवीने गरीबोना आशिर्वाद लई शके, रोगीओनां दुःख दूर करवाने दवाखाना खोलावी शके, क्षुधातुरनी क्षुधाने दुर करवाने सदाव्रत आपी शके, तथा भयान्वित निराधारोने भयथी मुक्त करावी निर्भय अवस्थाने प्राप्त करावी शके, अने पूर्वनुं कमावेलु पुण्य अत्रे खलास नहिं करतां परभवमां पण पुण्यना पोटलां बांधी जवाय. तेमज लक्ष्मी नाशवंत छे तेथी कदाच अवस्थामां फेरफार थाय तो तेवे समये पण आबरु सचवाइ रहे विगेरे अनेक फायदा धनवाननी सादाइमां समायेलां छे.

तेमज मध्यम स्थितिना मनुष्य सादाइथी चालीने गृहस्थाश्रम सुखे निर्वाह करी शके, अने पोताना सारां माठां खर्च पण सुखेथी करीने आबरुभेर दिवसो निर्गमन करी शके, ज्यारे फेशनना प्रवाहमां तणाता लोको देवादार बनी पोतानी आबरूने साचवी शकता नथी अने ज्यां त्यां तिरस्कारने पात्र बनेला अने तेओना हाल बेहाल थइ [illegible] है, [illegible]कर आलो-

[illegible]

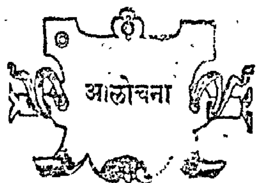
तेओनुं दुःख ते पोते जाणे के सर्वज्ञ जाणे, मारामां वर्णन करवानी शक्ती नथी.

वळी सादाइथी रहेवामां गरीबोने आपणे कांइ नहीं आपीए छतां दीर्घदृष्टिथी जोतां गुप्तरीते लाभ थाय छे; फेशन जेम जेम ओछी थाय तेम ते देशना पैसा देशमां रहे अने मोंघवारी ओछी थाय तेथी बिचारां गरीब रांकडाने अनाज पाणी ओछे भावे मळे अने तेनां गुप्त आशिर्वादथी *आपणुं कल्याण थाय. अने पैसे टके दुनियां* सुखी होय तो तेओना परिणाम सारां रहे अने शुभगतिने प्राप्त करे, प्रभुभजन, प्रभुपूजन शास्त्र स्वाध्याय आदिमां मन लागे विगेरे अनेक फायदाओ सादाइमां रहेला छे के जे हुं मारा नानकडा लेखमां वर्णवी शक्ति नथी.

अंतमां मारु एज कहेवुं छे के आपणे अनेक विघ्नोथी बचीने जीवित रह्यां छिए ते एक पूर्वक्त पुण्यनो उदयज समजवो जोइए. ए पुण्य बीज रुप रहे तेने माटे देशनुं हित करनार सादाइ छे तेनुं अवलंबन करवुं, फेशनने देशवटो देवो, देशीमाल वापरवो, व्याख्यान दाताओए फक्त व्याख्यान रुपे बोलीने बेसी रहेवुं नहीं पण जे बोले ते वर्तनमां क्रियामां मुकवुं. आम थशे तो हुं धारुंछुं के देशनो जलदी उद्धार थशे. अने पूर्व स्थितिने प्राप्त करशे.

ललितान्हन मुलचंद

श्राविकाश्रम मुंबाई.



(लेखक-श्रीयुत जैन कवि ला० ज्योतिप्रसादजी सम्पादक जैन प्रदीप, प्रेमभवन देवबन्द)

नित्य प्रति किये हुये कार्योंपर विचार करके उनके बुरा होनेकी हालतमें उनकी निन्दा करना और पश्चाताप करना और अच्छा होनेकी हालतमें अनुमोदना करना और हर्ष मनाना इसका नाम "आलोचना" है। खोटे कामोंसे बचने और अच्छे कामोंमें लगनेका मार्ग यदि कोई है तो वह आलोचना ही है। इस ही कारणको लेकर जैनाचार्योंने आलोचना करनेकी सम्मति संसारके प्रत्येक प्राणीको दी है। यदि साधुओंसे भी किसी समय दैवयोगसे किसी कषायके वश कोई ऐसी क्रिया बन जाय कि जिससे किसी आत्माको दुख पहुंच जाय तो वे भी उसकी आलोचना करते हैं और निन्दा करते हुये स्वयं पश्चाताप करते हैं जिससे आगामीको ऐसे पापोंके करनेमें छुटकारा मिल जाता है। जैसे एक मनुष्यने लोभके वशीभूत होकर किसी भोले आदमीकी गांठ कतर ली जिससे उसको बड़ा दुःख हुआ। उसके दयासे दिया। मैं आगामी ऐसा नहीं करूंगा। इस ही भांति एक पुरुषने क्रोधके वश होकर किसी अन्य पुरुषके सरमें लट्ठ मार दिया जिसकी चोटसे मार खानेवाला अचेत होकर गिर गया। अब मारनेवाला दुःख मान रहा है और कह रहा है कि बुरा हो इस क्रोधका कि जिसने मुझे ऐसा अन्धा बना दिया कि मैंने उस दीनके सर में लट्ठ मार दिया, फिर कभी भूल कर भी ऐसा न करूंगा। अतएव इस ही प्रकारसे प्रत्येक बुरे कर्मकी आलोचना की जाती है जिससे परिणाम कोमल होते हैं और आगामीको बुरे कामोंसे छुट्टी मिल जाती है ऐसे ही आलोचना अच्छे कामोंकी भी होती है उससे आत्माको शांति और आनन्द मिलता है और आगामी अच्छे२ कामोंके करनेकी प्रेरणा होती है। अतः आलोचना सांसारिक जीवोंको अच्छे मार्गपर लगानेका एक बहुत ही उत्तम साधन है।

संसारी जीव क्रोध, मान माया और लोभ इन चारों कषाय और पांचों इन्द्रियोंके विषयोंमें ऐसे लिप्त हैं कि प्रतिदिन नये२ पापोंकी सृष्टि रची है और विविध प्रकारके बुरे२ कर्म किये जाते हैं जिनसे अपनी आत्माका घात होकर दूसरोंकी आत्माओंको क्लेश पहुंचता है और अशुभ कर्मोंका बंधन होता है। अशुभ कर्मके बंधनको ढीला करने और आगामीको उसमें और गांठ न लगानेके लिये ही आलोचना की जाती

यह प्रण स्वयं ही करना पड़ता है कि जो हुआ सो हुआ परन्तु फिर ऐसा कार्य कदापि न करूंगा। यदि कोई चोरी करनेवाला मनुष्य कारागारके अन्दर बैठकर कुछ देर यह विचार करे कि तुझे जो यहां आकर एक नियत समय तक रहना पड़ रहा है और भांति २ की मुसीबतें भोगनी पड़ रही हैं यह सब चोरी करनेका ही फल है यदि तू चोरी न करता तो यह दिन काहेको देखने पड़ते खैर, जो हुआ सो हुआ अब इन दुखोंके दिनोंको काटकर और यहांसे बाहर निकलकर फिर कभी भी चोरी न करूंगा बल्कि परिश्रम करके द्रव्य कमाऊंगा और खाऊंगा तो कहना पड़ेगा कि यह आदमी आलोचना जैसे उच्च साधनसे लाभ उठाता है और आगामीके लिये अपने जीवनको ठीक करता है। अतएव सच बात तो यह है कि आलोचना परणामोंको कोमल करने शांति और आनन्द उपजाने, अशुभ कर्मोंके बंधनको ढीला करने और आगामीको बुरे कामोंसे बचनेके लिये रामबाण औषधीके समान है—इस ही वास्ते जैन धर्ममें आत्मीक कल्याणके लिये इसका आसन बहुत ही ऊंचा रक्खा गया है और यह गृहस्थी या साधु सबके ही लिये है और इस ही अभिप्रायको लेकर जैनियोंमें इसका प्रचार भी पाया जाता है यह दूसरी बात है कि जैनियोंमें आलोचना—आलोचनाकी भांति न की जाय परन्तु फिर भी आलोचना "आलोचना पाठ" के द्वारा कर ही ली जाती है। आलोचना पाठ एक हिन्दी कविताकी छोटीसी पुस्तक है, आलोचना करनेवाले उस ही को पढ़कर आलोचना कर लेते हैं और अपने कर्तव्यको पूरा कर देते हैं। परन्तु यह ठीक नहीं है; क्योंकि संसारी जीवोंके कर्म सदैव एकसे नहीं होते। प्रतिदिन कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही रहता है। यदि आज रामलालने क्रोधके वश होकर रामकुमारके साथ मारपीट की है तो कल मान कषायके वशीभूत होकर श्यामचन्द्रको नीचा दिखलानेकी चेष्टामें लगा हुआ है और यदि आज चन्द्रभानने मायाचारी करके मुनि देवको धोखा दिया है तो कल लोभ कषायके कारण कर्मचन्द्रकी गांठ काटी है। इस प्रकार नित्य प्रति नये नये कर्म किये जाते हैं अतएव इन कर्मोंकी नयी२ आलोचना भी होनी चाहिये। जो कर्म किया जाय उसकी ही आलोचना की जाय। आज मैंने झूठ बोलकर कालीचरणको कष्ट क्यों पहुंचाया या मैंने ऐसी हंसीसे काम क्यों लिया कि जिससे धनकुमारके चित्तको चोट पहुंची, मेरी जरासी बेईमानीसे शिवदयाल किसानका सर्व नाश हो गया। मेरे अत्याचारके कारण दौलत धीवर गांव छोड़कर चला गया।

अतः इन बातोंको सन्मुख रखकर इन सब पर जुदा २ आलोचना की जाय तब लाभदायक और हितकारी हो सक्ती है और आवश्यकता भी यही है कि जो काम किया जाय उस पर ही पश्चाताप किया जाय। यदि चोरी करते हुए चक्कीके चलानेकी या छल छिद्र करते हुए चूल्हेके जलानेकी आलोचना की जाय तो इससे लाभ? यह तो केवल एक रूढ़िकी पूर्ति हो गई। भला आलोचना जैसे महान कार्यमें इसका क्या काम? आलोचना करना कोई लोग दिखलावेका

नुमाइशी ठाठ थोड़ा ही है। इसका करना तो अपनी आत्मासे सम्बन्ध रखता है इससे तो नीच आत्मा ऊंच बनती है और बुरे कर्मोंसे दूर होकर अच्छे और भले कार्मोंमें लगती है। जो कोई मनुष्य आलोचना जैसे महान धार्मिक कार्यको भी लोग दिखावेके लिये करता है तो कहना पड़ेगा कि उसको तो इस आलोचनाकी भी आलोचना करनी चाहिये अन्यथा उसका कदापि भी कल्याण नहीं होगा। जरा सोचनेकी बात है कि एक दूकानदार अपनी दूकानपर बैठा हुआ ठगी करता है तो उससे कुछ अधिक हानि पहुंचनेकी सम्भावना नहीं हो सकती क्योंकि ग्राहक भी जानता है कि दूकानदार बहुधा करके ऐसा किया ही करते हैं परन्तु एक दूसरा मनुष्य देवमंदिरमें या किसी दूसरे धर्मस्थानमें बैठा हुआ पूजा पाठ कर रहा है और बड़ी ऊंची आवाजसे "सुनिये जिन अर्ज हमारी, हम दोष किये अति भारी, तिनकी अब निर्वृत्ति काजे तुम शरण लई महाराजे" आदिके स्तोत्र पढ़ते हुये चक्की, चूल्हा, ओखल, मूसल, आग पानी, हवा, मिट्टी आदिके नाम ले ले कर दुहाई मचा रहा है और दूसरे मनुष्यों पर प्रकट कर रहा है कि कहो क्या मुझ जैसा धर्मात्मा भी कोई और होगा परन्तु ऐसा करते हुये सांसारिक कार्योंमें उस ही संकल्पी हिंसासे काम लेता है कि जिसको उसके सब भाई मन्तु करते हैं परन्तु इसका न कहीं नाम है और न पश्चाताप। अतएव कहना पड़ेगा कि उसका पूजा पाठ करना और आलोचनापाठ पढ़ना सब मायाचारीको लिये हुये है अतः उसको तो इस पूजा पाठ और आलोचनापाठकी भी आलोचना करनी चाहिये अथवा उसकी आत्मामें यह मायाचारी अपना ऐसा घर बनायेगी कि जो न मालूम कब पुराना होगा और कब गिरेगा।

भाई आलोचना करनेवालो, आलोचनाके वास्ते किसी पाठके पढ़ने या नियत लेखको दुहरानेकी आवश्यक्ता नहीं है और न इसके लिये शोर मचानेकी और दूसरोंको सुनानेकी आवश्यक्ता है यह तो उन कार्मोंके लिये करनी चाहिये कि जो प्रतिदिन किये जाते हैं जो बुरा या भला काम जिस दिन किया जाय उसकी उस ही दिन आलोचना की जाय और आलोचना एकान्तमें बैठ कर अपने विचारोंद्वारा की जाय उसके लिये खुले मैदान मंदिरमें बैठ कर शोर मचाने या किसी राग गानेकी आवश्यक्ता नहीं है और न उससे कोई लाभ ही होता है जो कोई ऐसा करता है वह केवल रिवाजको पूरा करता है और वह भी लोग दिखावेके वास्ते।

जैन धर्म जो कि जीवको स्वालम्बनका पाठ पढ़ाता है और प्रत्येकको अपने पैरोंके बल खड़ा होनेका उपदेश देता है और स्पष्टतया कहता है कि जैसा बुरा या भला काम तुम करोगे उसका वैसा ही फल भी भोगोगे। कोई ईश्वर परमात्मा-खुदा-या गॉड तुम्हारे किये हुये कर्मोंमें कमती बढ़ती नहीं कर सकेगा और न उन कर्मोंके परिणाममें कुछ उलट फेर कर सकेगा इसलिये अपने परिणामोंको कोमल बनाकर बुरे कामोंसे किनारा करो और अच्छे कामोंको करते हुये पुण्यका बंध बांधो जिससे तुम्हारा भला हो और सांसारिक

दुःखोंको भोगोगे। और यदि तुम दुःखसे बुरे कर्म करो [illegible] और ईश्वर-परमात्मा-खुदा-से [illegible] ऐसी प्रार्थना करो कि हे ईश्वर, मेरी बुराइयों पर दृष्टि मत डालना-मैं चाहे लाख बुरा हूं परन्तु फिर भी तेरा हूं-मुझे तू अपना समझ कर सुख ही सुख देना। क्योंकि मुझमें दुःखोंको सहारनेकी शक्ति नहीं है यद्यपि मैं हजारों बुराइयां प्रतिदिन करता हूं पर क्या करूं, करना ही पड़ती हैं। परन्तु मैं उनको तेरे ही भरोसे पर करता हूं। तू मेरा है, मैं तेरा हूं, अपनोंकी रक्षा सब किया ही करते हैं। जब मैंने तेरी भक्ति धारण कर ली है तो फिर कहना सुनना ही क्या है। बस मैं करनेवाला और तू हरनेवाला इत्यादि" तो ऐसी प्रार्थना करनेसे कोई लाभ नहीं है। यहां लोक व्यवहारमें देखा जाता है कि कुआचरणी बेटेको बाप भी घरसे निकाल देता है। कुकर्मी आदमीको अपने शहरका न्यायाधीश भी कड़ीसे कड़ी सजा (दण्ड) दे डालता है। जब बाप और न्यायाधीश भी बुरे आदमीको क्षमा नहीं करते तो ईश्वरको क्यों इतना सहृदय करना है? क्या ईश्वर कोई खुशामदी टट्टू है जो इन चिकनी चुपड़ी बातोंमें आकर तुम्हारे कुकर्मोंको क्षमा कर देगा? यदि वह ऐसा ही खुशामद पसन्द है तो उसको ईश्वर कहना भी एक प्रकारका पाप है। ऐसे कर्म तो न्यायसे प्रेम रखनेवाला मनुष्य भी नहीं कर सक्ता और यदि कोई करता है तो वह भी उसका फल भोगता है। अभी गत वर्ष पंजाब देशमें कितने ही घूस खानेवाले मनुष्योंको दण्ड मिल चुका है। फिर ईश्वरके विषयमें ऐसा ख्याल करना कि वह हमारे बुरे कर्मोंपर दृष्टि नहीं डालेगा और वह भी कुछ खुशामदी बातोंको सुनकर; तो यह कितना बड़ा दोष है कि जो ईश्वरके मत्थे मढ़ा जाता है। क्या इस दोषके लिये भी कोई आलोचना है। हम देखते हैं आलोचना पाठोंमें भी ईश्वरसे ही प्रार्थना की गई है कि हे भगवान, हमारी अर्ज सुनो, हमने बड़े भारी दोष किये हैं, अब उनको दूर करनेके वास्ते तुम्हारी शरणमें आये हैं इत्यादि।

हम नहीं समझते कि हमारे जैनी भाईयोंमें जो यह खुशामदीपनेका विचार कहांसे आगया जब कि जैन धर्म हमको यह सिखला रहा है कि किसी दूसरी शक्तिका सहारा मत लो तुम्हारे बुरे भले कर्मोंमें दूसरी कोई भी शक्ति कुछ भी नहीं कर सकती। जो कुछ भी सुख दुःख या हानिलाभ होता है वह तुम्हारे ही किये हुये कर्मोंका फल है। तुम्हारे किये हुये कर्मोंमें किसी दूसरी शक्तिका दखल नहीं है। अपने किये हुये कर्मोंको भोगनेके तुम स्वयं ही भागी हो। फिर नहीं मालूम कि क्यों इस प्रकार प्रार्थनायें करके गिड़गिड़ाया जाता है।

भाई जैनी लोगो या संसारके अन्य धर्मात्मा लोगो, यदि तुम अपनी आत्माका कल्याण चाहते हो तो किसी दूसरी शक्तिका सहारा छोड़कर अपने पैरोंके बल खड़े हो जाओ, अपनी अपार शक्तिसे कामलो, अपने कर्मोंकी गतिपर विचार करो, बुरे कर्मोंपर पश्चाताप और भले कर्मोंपर उत्साह मनाओ,

बुरे कर्मोंकी निन्दा और भले कर्मोंकी प्रशंसा करो बुरे कर्मोंको छोड़ो और अच्छे कर्मोंको ग्रहण करो अर्थात् ऐसा करने परही तुम्हारी आलोचना एक सच्ची आलोचना कही जायगी और इससे बहुत ही लाभ होगा तुम्हारी वर्तमान आलोचनाका ढंग ठीक है या नहीं इस पर स्वयं ही विचार करलो अर्थात् इसकी भी आलोचना करलो हमतो इतना ही कहेंगे कि आलोचनाको आलोचनाके ढंगपर करो आलोचना करनेमें लोग दिखावा या रिवाजकी पूर्ति करना ठीक नहीं है।



मनकी तरंग।

(१)

जो ग्रीष्मसे ऋतुराजकी प्रभुता प्रगट दुर्दान्तिको।
लखकर महाक्षोभित हुये अन्याय पूर्ण अशांतिको ॥
होकर द्रवित करुणा तथा औदार्यपूर्वक प्रेमसे।
देते रहे हैं स्नेह जल जो हेतु जीवन क्षेमसे ॥१॥

(२)

जिनके मधुर अतिघोष युत गम्भीर भाषणका सदा।
पड़ता असर भूतल गगन पातालमें भी सर्वदा ॥
जो वक्षमें बिजली मनोहिन दमकत उल्लास हो।
हे सन्त वर्षा मेघ आओ तव दयाका काम हो ॥२॥

(३)

वे पूज्य "अर्जुन" जैन कारागारमें पकड़े गये।
हा! हा!! बिना कारण कहो तो जेलमें जकड़े गये ॥
सोचो विचारो तो तनिक क्या जैनियोंकी यह दशा।
जिसने हमारी टेव फिर यह हमरी भी कर्षना ॥३॥

दयाराम जैन,
विद्यार्थी जैन महाविद्यालय-इन्दौर।

—※—

समय समयका राग वा आवश्यकतानुसार कार्य।

(लेखक-बाबू सूरजभानु वकील, देवबंद)

गति स्थिति अर्थात् हिलना चलना और ठहरना आदि कार्य जिस प्रकार चेतना शक्तिधारी मनुष्यों और पशु पक्षियोंमें हैं उस ही प्रकार चेतना शक्ति रहित पुद्गलमें भी हैं, इस ही कारण जिस प्रकार कि मनुष्य और पशु पक्षी संसारके अनेक कार्य बनाते और बिगाड़ते हैं इस ही प्रकार पुद्गल पदार्थ भी बहुत कुछ कर दिखाते हैं-बल्कि सच पूछो तो जो महान् कार्य इस संसारमें निर्जीव पुद्गलपदार्थों द्वारा हो रहे हैं उनका पासंग भी मनुष्यों और पशु पक्षियों द्वारा नहीं होता है, जैसा कि समुद्र और पृथ्वी पर सूरजकी धूपके पड़नेसे पानीका भाप बनता और उस भापका वायुसे हलका होनेके कारण अपने ऊर्ध्व गमन स्वभावके द्वारा ऊपरको जाना और जाते जाते हवा लगकर कुछ गर्मी कम हो जानेसे उस भापका बादल रूप बन जाना और फिर उस बादलका हवाके वेगसे आकाशमें इधर उधर घूमते फिरना और घूमते २ और भी ज्यादा हवा लगने और गरमी कम हो जानेसे उस बादलका पानी रूप होकर बरसना और पृथिवी पर पड़कर अनन्तानन्त कार्य बनाना बिगाड़ना और जीवाजीव सब ही वस्तुओंमें अनेकानेक परिवर्तन कर देना और पहाड़ोंकी कन्दराओंमें घुमकर फिर साफ नर-

तक आहिस्ता २ उनमेंसे निकलते रहना और छोटी बड़ी नदियोंके रूपमें बहकर संसारके अनेकानेक कार्य साधना, यह सब कार्य निर्जीव और अज्ञानी पुद्गलके ही हैं जिनको वह अपने स्वभावानुसार बराबर करता ही रहता है ज्ञानवान मनुष्यों और पशु पक्षियोंसे तो ऐसे महान कार्य न कभी हुवे और न हो सकते हैं।

परन्तु ज्ञान न होनेके कारण पुद्गलके जो भी कार्य हैं वह सब कार्य हानि लाभ–नफा नुकसान और जरूरत बेजरूरतका विचार किये विदून बिल्कुल अटकल पच्चू और अधाधुंध ही होते हैं यह ही कारण है कि धूपकी गरमी समुद्रके पानीसे भी भाप बनाती है और उन खेतों और वृक्षोंको सुखाकर भी भाप बनाती है जिन्हें स्वयम् ही पानीकी बहुत जरूरत है, इस ही प्रकार जब पानी बरसता है तब वह समुद्र पर भी उस ही प्रकार बरसता है जिस प्रकार कि खेतों और वृक्षोंपर और जब यह पानी पर्वतोंसे निकलकर नदीके रूपमें बहता है तब भी इस बातका विचार नहीं करता है कि जहां २ पानीकी जरूरत है वहां वहां पहुंचूं और जहां पानीसे हानि हो रही है वहां न जाऊं, बल्कि उसको तो जिधर ढाल मिलता है उधरको ही वह निकलता है और जिधर २ को ढाल मिलता चला जाता है उधर उधरको ही बहता चला जाता है।

परन्तु चेतनाशक्तिधारी मनुष्य और पशु पक्षियोंके कार्य ऐसे अधाधुंध नहीं हैं, उनमें जितना २ अधिक ज्ञान होता है उतना २ ही उनका कार्य विचार पूर्वक और आवश्यकतानुसार ही होता है। दृष्टान्त रूप यदि एक मनुष्य दौड़ा जा रहा है और सामनेसे कोई गाड़ी वा हाथी घोड़ा आदि पशु वा मनुष्योंका समूह आ रहा हो तो वह मनुष्य तुरन्त अपना दौड़ना बन्द करके वहां ही ठहर जावेगा और उनसे बचकर निकल जाने पर ही फिर दौड़ना शुरू करेगा, परन्तु यदि एक रेलगाड़ी अपने वेगमें भागी जा रही हो और सामनेसे दूसरी रेलगाड़ी भी आ रही हो और ऐंजिनडराइवर (रेल चलानेवाले) इन दोनों गाड़ीयोंके सोये पड़े हों तो यह रेलगाड़ियां स्वयम् इस बातका विचार न करेंगी कि यहीं ठहर जाना चाहिये वा पीछे हट जाना चाहिये नहीं तो आपसमें लड़ कर हमारा भोर हो जावेगा बल्कि वह रेल गाड़ियां तो विना किसी भी प्रकारका विचार किये दौड़ी ही चली जावेंगी और आपसमें लड़कर अपना और अपने मुसाफिरोंका चकनाचूर करके ही रहेंगी।

इस ही प्रकार गाना जाननेवाला मनुष्य हर्षके समय हर्षके और सोगके समय सोगके ही गीत गावेगा, हर्षके समय सोगके और सोगके समय हर्षके गीत वह कभी नहीं गावेगा, यहांतक कि यदि उसको सोगका एक भी गीत याद न हो और हर्षके ऐसे बढ़िया २ गीत याद हों जिनसे सुनकर मनुष्य लट्टू हो जाते हों और जिनके ऊपर उसको सब जगह बहुत २ इनाम मिलता रहा हो तो भी वह सोगके समय हर्षके गीत नहीं गावेगा बल्कि चुप रहना ही ठीक समझेगा, परन्तु फोनोग्राफका प्लेट वा रिकार्ड इस बातका कुछ भी विचार न करेगा कि मेरा राग समयके अनुकूल है या नहीं बल्कि चाहे जन-

जान बालक भी उसको फोनोग्राफ पर चढ़ा दे तो वह रिकार्ड अपना वह ही राग गाना शुरू कर देगा जो उसमें भरा हुआ है, चाहे वह राग हर्षका हो और सुननेवालोंको महासोग हो रहा हो और चाहे वह राग सोगका हो और सुननेवालोंको उस समय महाहर्ष हो रहा हो फोनोग्राफका वह रिकार्ड तो इन बातोंका कुछ भी ख्याल न करेगा और सब जगह अपनी एक ही टेर लगाता चला जावेगा।

गरज़ जीव हो वा निर्जीव क्रिया तो इन दोनोंमें ही है परन्तु जीवकी क्रिया समय और आवश्यक्ताओंको विचारकर होती है और निर्जीवकी विना विचारे जीवोंमें भी मनुष्य ही सबसे अधिक विचारवान है इस वास्ते इसकी क्रिया तो अवश्य ही विचारपूर्वक और समयानुकूल होना चाहिये, मनुष्यका मनुष्यपन बड़े २ कार्योंके करनेसे नहीं है बल्कि विचार पूर्वक और समयानुकूल कार्य करनेसे ही है। जो मनुष्य विना विचारे कार्य करता है वह चाहे कितना ही बड़ा कार्य कर डाले तो भी वह मनुष्य नहीं है बल्कि निर्जीव पुद्गल है और पुद्गलोंमें भी बहुत घटिया पुद्गल क्योंकि पुद्गलोंके कार्य तो ऐसे २ महान होते हैं जो मनुष्यसे किसी प्रकार हो ही नहीं सक्ते हैं।

जो मनुष्य समयकी आवश्यक्ताओंका विचार किये विदून ही कार्य करते हैं उनसे बहुधा हानिकी ही सम्भावना होती है और यदि ऐसे विचारशून्य पुरुष कोई बड़ा काम कर बैठते हैं तब तो उनका वह कार्य ऐसा ही भयानक हो जाता है जैसा कि वर्षाऋतुमें नदीका महा प्रवाह वा गरमीकी मौसममें आंधीका महावेग वा जंगलकी दावानल अग्नि। इस कारण समयके अनुकूल न प्रवर्तनेवाले विचारहीन पुरुषों और उनके कार्योंसे इसही प्रकार बचने और दूर रहनेकी जरूरत है जिस प्रकार कि हवा पानी वा अग्नि आदि पुद्गल पदार्थोंके वेगसे बचनेकी जरूरत है ऐसे पुरुषोंकी दया, कृपा और परउपकार भी अन्धे मनुष्यके प्यारके घूंसेके ही समान है जो आंख नाक पर पड़कर वा कोख आदि मर्मस्थानमें लगकर महान कष्टका ही देनेवाला हो जाता है।

समयके अनुकूल न चलनेवाला विचारहीन मनुष्य केवल दूसरोंके वास्तेही भयंकर नहीं होता है बल्कि वह अपना भी सत्यानाश कर डालता है क्योंकि संसार परिवर्तनशील है सदा एक अवस्थामें रह नहीं। कला इस कारण यहां कभी ज्वार है और कभी भाटा अर्थात् कभी उतराव है और कभी चढ़ाव, कभी जाड़ा है और कभी गरमी, कभी बचपन है और कभी बुढ़ापा, कभी जन्म है और कभी मरण, परन्तु यदि कोई मनुष्य गरमीकी मौसममें भी यह -

गुलाब केवड़ेका शरबत घोल घोल कर पीता रहे तो वह अवश्य ही ठिठर कर मर जावेगा, इस ही प्रकार यदि कोई व्यापारी इस रेल और तारवर्कीके जमानेमें भी अपना माल बैलगाड़ी ऊंट, गधे और खच्चरोंपर लाद कर ही एक देशसे दूसरे देशको ले जावे तो वह अवश्य ही नुकसान उठावेगा महामूर्ख समझा जावेगा और अपनी सारी जमा पूंजी खोकर दिवाला ही निकालेगा। गरज जो समयानुकूल नहीं चलेगा और विचारसे काम नहीं लेगा वह अवश्य ही हानि उठावेगा और नाशको ही प्राप्त हो जावेगा।

मनुष्योंके समूह ही का नाम जाति वा समाज है, इस कारण वह जाति वा समाज भी अवश्य नीचे ही को गिरेगी और विनाशको ही प्राप्त होगी जिसके मनुष्य विचारशून्य और समयकी हवाको न परखनेवाले और न उसके अनुसार चलनेवाले होंगे और हानि हो वा लाभ, आगे गढ़ा हो वा खाई आंख मीचकर अधाधुंध उस ही मार्गपर चलते रहेंगे जिस पर कि चलते आ रहे हैं। जातिकी उन्नति और अवनति विशेषकर उसके विद्वानों, लीडरों, मुखियाओं और धनाढ्यों पर ही अवलम्बित होती है, यदि यह लोग विचारवान और समयके अनुकूल चलनेवाले हुवे तो जाति जीवित रहती है और उन्नति कर जाती है और यदि यह लोग जड़बुद्धि अर्थात् पुद्गल पदार्थोंकी तरह समय और अवसरका कुछ भी खयाल न करके सदा एक ही प्रकारका कार्य करनेवाले हों तो यह लोग स्वयम् भी डूबेंगे और जातिको भी अपने साथ डुबा ले जावेंगे, इस कारण इन लोगोंका विचारशील होना और समयकी आवश्यकताओंको जानना बहुत ही ज्यादा जरूरी और आवश्यक है और यह तब ही हो सक्ता है जब कि जातिके साधारण लोग भी अपनी आंख खुली रखें और उस ही को अपना लीडर और पथ प्रदर्शक समझें जिसमें समयानुकूल कार्य करनेका साहस और जातिके हानि लाभको समझनेकी बुद्धि हो।

जैन जातिके स्त्री पुरुषो, तुम्हारी और तुम्हारे मुखियाओंकी विचारशून्यताके कारण तुम्हारा बहुत ही ज्यादा पतन हो चुका है और बड़ी शीघ्रताके साथ पतन होता चला जा रहा है, इस वास्ते जल्दी करो और अपने आपको संभालो नहीं तो कुछ दिनोंमें इस जातिका पता भी न पाओगे। प्यारे भाइयो, तुम और कुछ नहीं तो इतनी मोटीसी बात तो जांच लो कि पृथ्वीके अन्य मनुष्योंके मुकाबिलेमें तुम्हारी क्या गिनती है और वह तुम्हारी गिनती बढ़ती जा रही है वा घट रही है और यदि घट रही है तो क्यों? इस एक ही बात पर विचार करनेसे तुमको मालूम हो जावेगा कि जिस पृथिवी पर इस समय ५१ करोड़ बौद्ध, ३२ करोड़ ईसाई, २५ करोड़ हिन्दू और १६ करोड़ मुसलमान हैं वहां जैनी केवल १२ लाख ही रह गये हैं और वह १२ लाख भी तब ही हैं जब कि सब श्वेताम्बर, दिगम्बर और स्थानकवासियोंको एक समझकर इकट्ठा गिन लिया जावे, परन्तु वर्तमान अवस्थाके अनुसार इन तीनोंको एक जगह गिनकर अपनेको १२

लाख बताना तो वास्तवमें झूठमूठकी बात बनाना ही है क्योंकि जैसी पृथक्ता और अलहदगीका व्यवहार इस समय इन तीनों सम्प्रदायोंके बीचमें हो रहा है और जो लड़ाई झगड़े इनमें चल रहे हैं उनके कारण तो यह तीनों किसी प्रकार भी एक नहीं माने जा सक्ते हैं, परन्तु यदि इन तीनोंको एक भी मान लें तो अन्य लोगोंकी क्रोड़ोंकी गिनतीके सामने क्या तुम्हारी १२ लाखकी गिनती कुछ गिनतीमें आनेके योग्य हो सकती है।

प्यारे भाइयो, इस विषयमें सबसे ज्यादा रोना तो यह हो रहा है कि यह १२ लाखकी गिनती भी तो कायम रहने वाली नहीं है बल्कि दिन दिन घटती ही चली जा रही है, क्योंकि अभी थोड़े ही दिन हुवे कि तुम्हारी गिनती १६ लाख थी, फिर १३ लाख और अन्तको अब १२ लाख ही रह गई है जिससे स्पष्ट सिद्ध है कि तुम बड़े वेगके साथ कम होते चले जा रहे हो परन्तु इसके विपरीत हिन्दुस्तानकी अन्य जातियां बहुत ज्यादा बढ़ती चली जा रही हैं; क्योंकि जब तुम १५ लाख थे तो उस समय हिन्दुस्तानके सब लोग केवल २८ क्रोड़ ही थे परन्तु तुम घटते गये और वह बढ़ते रहे अर्थात वह २८ क्रोड़से ३० क्रोड़ हुए फिर ३२ क्रोड़ हुए और अब ३५ क्रोड़ हैं। इस कारण जो घुन केवल तुम्हारी ही जातिको लगा हुआ है और चुपके ही चुपके तुमको कमती कर रहा है क्या उसको ढूंढ निकालना और उसको दूरकर देनेकी कोशिश करना तुम्हारे वास्ते जरूरी नहीं है यदि नहीं है तो मानो तुम जैनजातिका अस्तित भी जरूरी नहीं समझते हो, परन्तु बुद्धिमानोंक यह भी सिद्धान्त है कि धर्मवालोंके विना ध भी नहीं रह सक्ता है अर्थात जैनियोंके विद्य जैनधर्म भी नहीं रह सकता है। भावार्थ- जै जातिके समाप्त होजानेसे जैनधर्म भी जरू समाप्त हो जाता है इस कारण क्या तुम जै धर्मका भी इस पृथिवीपर कायम रहना जरूर नहीं समझते हो, यदि समझते हो अर्थात् यदि जै धर्मका तुमको कुछ भी प्यार है तो उठो और आंख खोलकर अपने पतनका कारण ढूंढो और अपन चालको बदल कर अपनी जातिके जीवि रहनेका उपाय करो, ऐसे महान संकटकी अव स्थामें भी यदि तुम अपनी चाल नहीं बदल सक्ते हो और अपनी रीति नीति आवश्यकताके अनुसार नहीं बना सकते हो तो फिर तुम आपको चेतनाशक्तिधारी जीव भी मत समझो और सुख दुःख भी मत मानो बल्कि निर्जीव पुद्गलके समान ही चुप चाप गल सड़कर पर्यायान्तरको प्राप्त होजाओ।

प्यारे पाठको, अब सोने और गफलतमें पड़े रहनेका समय नहीं है बल्कि उठने और कमर कसकर हिम्मत बांधकर कुछ पुरुषार्थ दिखाने और अपनी जातिकी किस्तीको डूबनेसे बचा लेनेका समय है। देखो तुम्हारे समाचार पत्रोंमें आजकल ऐसे समाचार आ रहे हैं और इन ही बातोंकी हाय २ मचाई जा रही है कि आज

जैन मंदिरमें घुस गये, परसों कलकत्तेका जैन मंदिर लुट गया, अतरसों अमुक राज्यमें जैनियोंका रथ नहीं निकलने दिया, वहां यह अत्याचार हुआ और यहां यह दुर्घटना होगई; परन्तु मेरे प्यारे भाइयो, जबतक तुम धर्मके नाम पर आपसमें लड़ झगड़ कर और तीर्थोंकी रक्षाके नाम पर मुकदमे बाजीमें लाखों रुपया लुटाकर अपनी संघ शक्तिको तोड़ फोड़ कर उसको टुकडे २ कर डालनेमें ही अपनी पूरी बहादुरी और तीर्थकी महमा दिखाते रहोगे तब तक तो अवश्यमेव तुम्हारी ऐसी ही बेइज्जती होती रहेगी और तुम किसी भी गिनतीमें नहीं गिने जाओगे।

तुम्हें शर्म आनी चाहिये इस बात पर कि मुट्ठी भर तो तुम आदमी अर्थात् हिन्दुस्तानकी ३१ करोड़की आबादीमें केवल १२ लाख तो तुम्हारी गिनती इस पर भी तुम आपसमें लड़ो और द्वेषकी अग्निको ही हर वक्त प्रज्वलित रक्खो और फिर भी इस बातकी आशा करो कि लोग तुम्हें कुछ समझें और तुम्हारी परवाह करें। भाइयो, निर्जीवमत बनो, आंखें खोलो और अपनी चालको बदलो अर्थात् सब लड़ाई झगड़े दूरकरके और अपनी २ मूछें नीचे उतारकर आपसमें गले मिलो, अपने भाइयोंसे क्षमा मांगो और १२ लाखकी एक जाति बनाकर आगेको बढ़ो अर्थात् जैन धर्मकी सच्ची प्रभावना दिखाकर दूसरोंको जैनी बनाओ और अपनी गिनती बढ़ाओ तब ही तुम्हारा अस्तित्व रह सकता है और तुम्हारी कदर हो सकती है नहीं तो कीड़े मकोड़े और घास पात तो पैरोंके तले कुचले ही जाया करते हैं।

अब जैन धर्मकी प्रभावना सोने चान्दीका बहुमूल्य रथ निकालने और मंदिरकी दीवारोंको सोने चांदीसे लीपने और एक एक गलीमें चार चार मंदिर बनाने और बार बार प्रतिष्ठा कराकर एक एक मंदिरमें पचासों प्रतिमाओंका समूह इकट्ठा कर देने और पूजा प्रतिष्ठाओंमें लाखों रुपया लगानेसे नहीं होगी। अब जमाना बहुत कुछ बदल गया है, लोगोंकी दृष्टिमें अब इन बातोंकी कुछ भी कदर नहीं रही है। अब तुम्हारे इन आडम्बरोंको देखकर लोगोंपर जैनियोंका और जैन धर्मका महत्त्व नहीं पड़ता है बल्कि उलटी अप्रभावना होती है, इन बातोंमें रुपया लुटाते देखकर अब लोग तुमको जड़बुद्धि समझते हैं और अफसोस करते हैं कि अब तो गरीबसे गरीब छोटी छोटी जातियोंने भी अपने अपने कालिज बना लिये हैं परन्तु धर्मके नामपर इतना धन लुटानेवाले जैनियोंका तो एक भी कालिज दिखाई नहीं देता है जिससे वह लोग यह ही समझते हैं कि जैनधर्ममें ज्ञानशून्य रह कर मिथ्या ढकोसलोंको मानते रहना ही जरूरी समझा जाता होगा, इस प्रकार समयकी गति बदलनेसे आजकल जैनियोंके प्रभावनाके कार्योंसे उलटी अप्रभावना होने लगी है। इस कारण प्यारे भाइयो, अब आप भी समयानुकूल अपनी गतिको बदल कर और सबके कालिजोंसे बढ़िया कॉलिज बनाकर, जिले २ में हाईस्कूल खोल कर और ग्राम२ में बालक बालिकाओंकी पाठशाला जारी करके अपना पठनक्रम बनाकर और उसके अनुसार पुस्तकें तय्यार कराकर दुनियाके लोगोंको दिखा दो कि जैनी ही सबसे ज्यादा विद्याकी कदर

करनेवाले और ज्ञान परही भरोसा रखने वाले हैं। अब तो प्यारे भाइयो, ऐसाही कर दिखानेमें तुम्हारी प्रभावना हो सकी है और तुम किसी गिनतीमें आने लायक हो सके हो। याद रक्खो कि जिस प्रकार पिछले समयमें तुमने लाखों और करोड़ों रुपयेकी लागतके बड़े२ विशाल मंदिर बना कर और बड़े२ भारी धर्म उत्सव करा कर जगतके लोगोंको जीत लिया था और चकाचौंध करके उनके दिलोंपर अपना भारी सिक्का जमा दिया था, इस ही प्रकार आजकल जबतक तुम लाखों और करोड़ोंकी लागतके विशाल कालिज बनाकर और घर२ विद्याका प्रचार करके न दिखा दोगे तब तक तुम्हारी प्रभावना कदाचित भी न हो सकेगी और न तुम किसी गिनतीमें आ सकोगे।

इसही प्रकार अब जैनधर्मका प्रचार भी अनेक प्रकारकी भाषा और अनेक प्रकारकी विद्याओंके जानकार और समयकी आवश्यकताओंको जानने वाले पण्डित तय्यार करके उनके द्वारा बहुत ही सरल भाषामें सर्व साधारणको जैन सिद्धान्तोंको बताने और जैन तत्वोंका महत्व समझाने और और आजकलकी लेखन प्रणालीके अनुसार अनेक प्रभावशाली पुस्तकोंके तय्यार किये जाने और उनको सर्व साधारण तक पहुंचाने और योग्य विद्वानोंद्वारा दैनिक और साप्ताहिक पत्रोंके निकलनेसे ही होगा।

निकालकर बीच बाजार गंदी गालियां बकते हुवे फिरानेको बहुत ही बड़ा नीच काम समझते हैं, इस ही प्रकार आज कलके लोग दस दस बारह बारह वरसके बालक बालिकाओंका विवाह करदेना भी महा मूर्खता ही बताते हैं और जिंदे माता पिताकी कुछ भी सेवा न करके मरने पर उनके नुकतेमें हजारों रुपया लगाकर सारे नगरको तर माल खिलानेको भी आजकलके लोग ज्ञानशून्यता और बुद्धिहीनताका ही कार्य मानते हैं और मुकता करनेवालोंको घटिया मनुष्योंमें ही गिनते हैं, इस ही प्रकार आजकलके लोग बेटा बेटीके विवाहमें बड़ी भारी धूम मचाने और हजारों रुपया खर्च कर डालनेको भी अच्छा नहीं जानते हैं बल्कि यह सब रुपया बेटा बेटीके नामसे व्यापारमें लगाकर उनकी जीवन यात्रा आसान बना देनेको ही ज्यादा जरूरी गरदानते हैं और घरकी स्त्रियोंको सोने चांदीके जेवरसे लादकर उनका अहंकार बढानेकी जगह अब इस रुपयेके द्वारा सूद कमाकर उस सूदके द्वारा उनके स्वास्थ्य और ज्ञानकी वृद्धि करते रहनेको ही उनकी सच्ची सजावट मानते हैं जिससे असल रुपया भी बना रहे और वह स्त्रियां भी ज्ञानवान और बलवान संतान उत्पन्न करनेके योग्य हो जावें।

और लाभदायक रहे हों परन्तु यदि वह आज कलके समयमें हानिकारक हैं तो उनको छोड़ देनेमें और जो चाल और जो व्यवहार आज कलके समयके अनुकूल हों उनको ग्रहण करनेमें तुमको जरा भी विलम्ब नहीं करना चाहिये क्योंकि श्री जिनवाणी भी तुमको देशकालके ही अनुसार प्रवर्तनकी आज्ञा देती है और तुम्हारा मनुष्यपना और जीवधारी होना भी तुमको यह ही बताता है, और यदि तुम अपनी चाल नहीं बदलते हो तो यह भी समझ लो कि तुम श्री तीर्थंकर भगवानकी आज्ञाको लोप करते हो श्री जिनेंद्रदेवके बताये हुवे उपदेशसे पराङ्मुख होते हो और ज्ञानधारी जीवकी श्रेणीसे नीचे गिरकर ज्ञानशून्य निर्जीव पुद्गलकी श्रेणीमें आते हो, क्योंकि अनेक प्रकारकी अद्भुत २ क्रिया जीव भी करता है और पुद्गल भी; परन्तु जीवकी क्रिया समयानुकूल और विचारपूर्वक होती है और निर्जीव पुद्गलकी अज्ञानरूप और सब ही कालमें एक समान।

विशेष क्या लिखा जावे, आप ही अपने हानि लाभ और भले, बुरेका विचार कर लें और जो लाभदायक हो उस ही चालको ग्रहण कर लें।

जैन धर्मके विषयमें अजैन विद्वानोंकी सम्मतियां १

(संग्रहकर्त्ता-पं० बिहारीलालजी बी० ए० जे०, सी० टी०, अमरोहा।)

(१)

श्रीयुत वरदाकान्त मुख्योपाध्याय एम० ए० के बंगला लेख*के श्रीयुत नाथूरामजी प्रेमी द्वारा अनुवादित हिन्दी लेखसे उद्धृत कुछ वाक्य।—

(१) हमारे देशमें जैन धर्मकी आदि, उत्पत्ति, शिक्षा, नेता और उद्देश्य सम्बन्धी कितने ही भ्रान्तमत प्रचलित हैं इसलिए हम लोग जैनियोंसे घृणा करते रहते हैं....। इसलिए मैं इस लेखमें भ्रमसमूह दूर करनेकी चेष्टा करूँगा।

(२) जैन निरामिषभोजी (मांसत्यागी) क्षत्रियोंका धर्म है। " अहिंसा परमो धर्मः " इसकी सार शिक्षा और जड़ है। इस मतमें " जीव हिंसा नहीं करना, किसी जीवको कष्ट नहीं देना " यही श्रेष्ठ धर्म है।

(३) शंकराचार्य महाराज स्वयं स्वीकार करते हैं कि जैनधर्म अति प्राचीन कालसे है। वे वाद-

१ नोट—इस विषयका पूर्व भाग इसी मासिक पत्र, ' दिगम्बर जैन, " वर्ष ९, वीर सं० २४४२ के खास अंकमें प्रकाशित हो चुका है।

* यह लेख गुजराती भाषाके प्रथम वर्षके "जैन" नामक समाचार पत्रके अंक ३९, ४०में सन् १९१० गुजराती भाषामें प्रकाशित हो चुका है।

रायण व्यासके वेदान्त सूत्रके भाष्यमें कहते हैं कि दूसरे अध्यायके द्वितीय पादके सूत्र ३३-३६ जैनधर्म ही के सम्बन्धमें हैं। शारीरिक मीमांसाके भाष्यकार रामानुजजीका भी यही मत है।

(४) योगवाशिष्ठ रामायण वैराग्य प्रकरण, अध्याय १५ श्लोक ८में श्री रामचन्द्रजी जिनेंद्रके सदृश शान्त प्रकृति होनेकी इच्छा प्रकाश करते हैं, यथाः—

नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषु च न मे मनः।
शान्तिमासितुमिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा॥

(५) रामायण, बालकांड, सर्ग १४, श्लोक २२में राजा दशरथने श्रमणगणों (अर्थात दिगम्बर जैनमुनियों)का अतिथिसत्कार किया, लिखा है:—

तापसा भुंजते चापि श्रमणा भुंजते तथा।

भूषण टीकामें श्रमण शब्दका अर्थ दिगम्बर (अर्थात सर्व वस्त्रादि रहित जैनमुनि) किया है यथाः—

श्रमणा दिगम्बराः श्रमणा वातवसना इति निघण्टुः।

(६) शाकटायनके उणादि सूत्रमें जिन शब्द व्यवहृत हुआ है:—

इण्सिञ्जिदीङुष्यविभ्यो नक्, सूत्र २५९, पाद ३

सिद्धान्त कौमुदीके कर्त्ताने इस सूत्रकी व्याख्यामें "जिनोऽर्हन्" कहा है।

मेदनीकोषमें भी 'जिन' शब्दका अर्थ 'अर्हत्' जैन धर्मके आदि प्रचारक है।

वृत्तिकारगण भी 'जिन'के अर्थमें अर्हत् करते हैं, यथा उणादि सूत्र, सिद्धान्त कौमुदी।

शाकटायनने किस समय उणादि सूत्रकी रचना की थी! यास्ककी निरुक्तमें शाकटायनके मतका उल्लेख है। और पाणिनिके बहुत समय पहिले निरुक्त बना है इसे सभी स्वीकार करते हैं। और महाभाष्य प्रणेता पतञ्जलिके कई सौ वर्ष पहिले पाणिनिने जन्म ग्रहण किया था। अतएव अब निश्चय है कि शाकटायनका उणादि सूत्र अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ है।

(७) बौद्ध शास्त्रमें जैनधर्मको निर्ग्रन्थोंका धर्म बतलाया है। और यही निर्ग्रन्थ धर्म बौद्धधर्मके बहुत पहिले प्रचलित था।

(८) डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र योग सूत्रकी प्रस्तावनामें कहते हैं कि सामवेदमें एक बलिदानविरोधी यति (जैनमुनि)का उल्लेख है। उसका समस्त ऐश्वर्य भृगुको दान कर दिया गया था, क्योंकि ऐतेरय ब्राह्मणके मतमें बलिदानविरोधी यतिको श्रगालके सन्मुख प्रक्षिप्त करना चाहिये। मगध वाकीकटमें यज्ञदानादिका विरोधी एक सम्प्रदाय था, (देखो ऋग्वेद अष्टक ३, अध्याय ३, वर्ग २१ ऋचा १४। तथा ऋग्वेद म० ८, अ० १०, सुक्त ८९, ऋचा ३, ४। तथा ऋग्वेद, म० २, अ० २, सू० १२, ऋचा ९। ऋग्वेद अष्टक १, अध्याय ४, वर्ग ३२, ऋचा १०, इत्यादि)।

(९) सांख्य दर्शन सूत्र १ "अविशेषश्चोभयोः" अर्थात् दुःख और यंत्रणा दूर करनेवाले दृश्यमान और वैदिक उपायोंमें कोई भेद नहीं है। क्योंकि वैदिक बलिदान एक निष्ठुर प्रथा मात्र है। यज्ञमें पशु हनन करनेसे पाप बन्ध होता है, पुरुषको सम्यक् लाभ कुछ नहीं होता॥

"मा हिंस्यात्सर्वभूतानि।,
"अग्निषोमीयं पशुमालभेत्।,,
"दृष्टिवदानुश्रविकामह्यविशुद्ध क्षयातिशययुक्तः,
सांख्यकारिका॥

गौड़पाद सांख्यकारिकाके भाष्यमें निम्न लिखित श्लोक उद्धृत करके कपिल ऋषिके मतका समर्थन करते हैं:—

तात उद्धद्बुशोभ्यस्तं जन्मजन्मान्तरेष्वपि।
त्रयी धर्ममधर्माढ्यं न सम्यक्प्रतिभाति मे॥

अर्थात्—हे पिता! वर्त्तमान और गत जन्ममें मैंने वैदिक धर्मका अभ्यास किया है; परन्तु मैं इस धर्मका पक्षपाती नहीं हूं क्योंकि यह अधर्म-पूर्ण है।

(१०) कपिल सूत्रका भाष्यकार विज्ञान भिक्षु "मार्कण्डेय पुराणसे" निम्नलिखित श्लोक उद्धृत करके कपिलमतका समर्थन करता है—

तस्माद्यास्याम्यहं तात दृष्ट्वेमं दुःखसन्निधिम्।
त्रयी धर्ममधर्माढ्यं किंपाकफलसन्निभम्॥

अर्थात्—"हे तात! वैदिक धर्मको सब प्रकार अधर्म और निष्ठुरता पूर्ण देखकर मैं किस प्रकार इसका अनुकरण करूं? वैदिक धर्म किंपाक फलके समान बाह्यमें सौन्दर्य किन्तु भीतर हलाहल (विष) पूर्ण है"।

(११) "महाभारत" का मत इस विषयमें जाननेके लिये अश्वमेध पर्व, अनुगीत ४६, अध्याय २, श्लोक १२ की नीलकंठ कृत टीका पढ़िये।

(१२) प्राचीन कालमें दिगम्बर ऋषि ऋषभदेव "अहिंसा परमो धर्मः" यह शिक्षा देते थे। उनकी शिक्षाने देव मनुष्य और इतर प्राणियोंके अनेक उपकार साधन किये हैं। उस समयमें ३६३ पुरुष पाखंड धर्मप्रचारक भी थे। चार्वाकके नेता "बृहस्पति" उन्हींमेंसे एक थे। मैक्समूलर आदि युरोपीय पण्डितोंकी भी यही धारणा है जो उनके सन १८९९ के लेखसे प्रकट है जिसे ७६ वर्षकी उमरमें उन्होंने लिखा है।

(१३) अतएव प्राचीन भारतमें नाना धर्म और नाना दर्शन प्रचलित थे इसमें कोई संदेह नहीं है।

(१४) जैनधर्म हिन्दूधर्मसे सर्वथा स्वतंत्र है। उसकी शाखा या रूपान्तर नहीं है। विशेषतः प्राचीन भारतमें किसी धर्मान्तरसे कुछ ग्रहण करके एक नूतन धर्म प्रचार करनेकी प्रथा ही नहीं थी। मैक्समूलर का भी यही मत है।

(१५) लोगोंका यह भ्रमपूर्ण विश्वास है कि पार्श्वनाथ[1] जैनधर्मके स्थापक थे। किन्तु इसका प्रथम प्रचार ऋषभदेवने[2] किया था, इसकी पुष्टिके प्रमाणोंका अभाव नहीं है।

(१) बौद्ध लोग महावीरको निर्ग्रन्थों अर्थात जैनियोंका नायक मात्र कहते हैं स्थापक नहीं कहते।

(२) जर्मन डाक्टर जैकोबी भी इसी मतके समर्थक हैं।

---

१ इनके निर्वाणको आजसे २६९१ वर्ष हो चुके। यह जैनियोंके तेईसवें तीर्थंकर थे जो चौबीसवें अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे २५० वर्ष पूर्व हुए।

२ यह प्रथम तीर्थंकर अर्थात संसार समुद्रसे तिरनेका मार्ग बतानेवाले थे जो अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीसे ४२ सहस्र वर्ष कम दश नील सागर वर्ष पूर्व हुए। इनका समय इनके सम्वत् से प्रगट है।

३ हिन्दूशास्त्रों और जैनशास्त्रोंका भी इस विषयमें एक मत है। भागवतके पांचवें स्कन्धके अध्याय २-६ में ऋषभदेवका कथन है। जिसका भावार्थ यह है:-

चौदह मनुओंमेंसे पहले मनु स्वयंभूके प्रपौत्र नाभिका पुत्र ऋषभदेव हुआ जो दिगम्बर जैन सम्प्रदायका आदि प्रचारक था। इनके जन्मकालमें जगतकी बाल्यअवस्था थी इत्यादि।

भागवतके अध्याय ६ श्लोक ९-११में लिखा है कि "कोंक, वेंक और कुटकराना अर्हत, ऋषभके चरित्र श्रवण करके कल्युगमें ब्राह्मण-विरोधी एक नवीन धर्मके प्रचारका मानस करेगा" किंतु हमने अन्य किसी भी ग्रन्थमें ऐसे किसी राजाका नाम नहीं पाया। अर्हतको अन्य कोई भी ग्रन्थकार कोंक वेंक और कुटकराना नहीं कहता।

अर्हतका अर्थ (अर्ह धातुसे) प्रशंसार्ह तथा पूज्य है। शिवपुराणमें अर्हत् शब्दका व्यवहार हुआ है किंतु अर्हत् नामसे कोई राजाका नाम नहीं है। ऋषभ ही को अर्हत् कहते हैं। अर्हत् राना कलियुगमें जैन-धर्मका प्रचारक होता तो वाचस्पत्य (कोषकार)ने ऋषभको जिनदेव या शब्दार्थ चिंतामणिने उन्हें आदि जिनदेव कभी नहीं कहा होता। किसी किसी उपनिषदमें भी ऋषभको अर्हत् कहा है।

भागवतके रचियताने क्यों यह बात कही सो कहा नहीं जा सकता।

४. महाभारतके सुविख्यात टीकाकार शांतिपर्व, मोक्षधर्म, अध्याय २६३ श्लोक २० की टीकामें कहते हैं:—

अर्हत् अर्थात जैन ऋषभके चरित्रमें मुग्ध हो गये थे-यथा:—

"ऋषभादीनां महायोगिनामाचारे दृष्टाव अर्हतादयो मोहिताः"

इस प्रकार जाना जाता है कि हिन्दू शास्त्रोंके मतसे भी ऋषभ ही जैन धर्मके प्रथम प्रचारक थे।

५ डा० फुहरर (Dr. Fuhrer) ने जो मथुराके शिलालेखोंसे समस्त इति वृत्तका खोज किया है उसके पढ़नेसे जाना जाता है कि पूर्वकालमें जैनी ऋषभदेवकी मूर्तियां बनाते थे। इस विषयका एपिग्रेफिया इंडिका (Epigraphia Indica Vols. I & II) नामक ग्रन्थ अनुवाद सहित मुद्रित हुआ है। यह शिलालेख दो हजार वर्ष पूर्व कनिष्क, हुवष्क, वासुदेवादि राजाओंके राजत्वकालमें खोदे गये हैं।

(देखो उपरोक्त ग्रन्थका भाग १, पृष्ठ ३८९, नं ८व१४ और भाग दो पृष्ठ २०६, २०७, नं० १८ इत्यादि)। अतएव देखा जाता है कि दो हजार वर्ष पूर्व ऋषभदेव प्रथम जैन तीर्थंकर कहकर स्वीकार किये गए हैं। महावीरका मोक्षकाल ईसवी सन्‌से ५२६ वर्ष पहिले और पार्श्वनाथका ७७६ वर्ष पहिले निश्चित है। यदि ये जैनधर्मके प्रथम प्रचारक होते तो दो हजार वर्ष पहलेके लोग ऋषभ देवकी मूर्तिकी पूजा नहीं करते।

(१६) जैनधर्मकी सार शिक्षा यह है:—

१. इस जगतका सुख, शांति, और ऐश्वर्य मनुष्यके चरम उद्देश्य नहीं हैं। संसारसे विरागी मन सबसे निर्लिप्त रहना चाहिये।

२. आत्माकी मंगल कामना करो ।

३. तुम जब कभी किसी सत्कार्यके करनेमें तत्पर होओ तब तुम कौन हो और क्या हो यह बात स्मरण रखो ।

४. यह धर्म परलोक मोक्ष विश्वास करी योगियोंका है ।

५. सांसारिक भोगविलासकी इच्छायें जैनधर्मकी विरोधनी हैं ।

६. अभिमानत्याग, स्वार्थत्याग और विषयसुखत्याग इस धर्मकी भित्तियां हैं ।

(१७) जैनधर्म मलिन आचरणकी समष्टि है, यह बात सत्य नहीं है । दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों श्रेणियोंके जैन शुद्धाचरणी हैं ।

(१८) जैनधर्म ज्ञान और भावको लिये हुए है और मोक्ष भी इसी पर निर्भर है ।

(१९) जैन मुनियोंकी नग्नावस्था और नग्नमूर्ति पूजा उनका प्राचीनत्व सप्रमाण सिद्ध करती है, क्योंकि मनुष्य आदि अवस्थामें नग्न थे ।

(२०) ईसाइयोंके आदि पिता "आदम" और आदि माता 'इव' (होआ) निष्पाप अवस्थामें नग्न ही थे ।

(२१) हिन्दू शास्त्रोंमें भी शिव दिगम्बर (वस्त्रादि त्यागी,) दत्तात्रय दिगम्बर और अवधूत दिगम्बर सम्प्रदाय वर्णित हैं इत्यादि । *

नोट— यह पूर्ण लेख बहुत बड़ा है । जिन महाशयोंकी इच्छा इस पूर्ण लेखको देखनेकी हो वह जैनमित्र कार्यालय, बम्बई द्वारा प्रकाशित "जैनधर्म महत्व" नामक पुस्तक मंगाकर पढ़ें जिसका मूल्य ।॥) है और जिसमें इस लेख सहित आठ लेख प्रकाशित हुये हैं ।

(२)

रा० रा० वासुदेव गोविन्द आपटे बी० ए० इन्दौर निवासीके व्याख्यानका सारांश *

जिसमें ये सबसे पहले एक सुप्रसिद्ध जैनाचार्य श्री भट्टाकलंक देवके निम्नलिखित श्लोकको पढ़कर और उसका अर्थ समझाकर उसके महत्व और निष्पक्षतापूर्ण भावको दर्शाते हैं:—

(१) यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा ।
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् ॥
तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तम् ।
बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥

अर्थात् जानने योग्य ऐसे सम्पूर्ण विश्वको जिसने जाना, संसाररूपी महासागरकी तरंगे दूसरी तरफ तक जिसने देखीं, जिसके वचन परस्पर अविरुद्ध, अनुपम और निर्दोष हैं, जो सम्पूर्ण गुणोंका निधि, साधुओं करके भी वन्दनीय है जिसने राग द्वेषादि अठारहे शत्रुओंको नष्ट कर दिये हैं और जिसकी शरणमें सैकड़ों लोग आते हैं, ऐसा जो कोई पुरुष विशेष है उसको मेरा नमस्कार हो; फिर चाहे वह शिव हो, ब्रह्मा हो, विष्णु हो, बुद्ध हो अथवा वर्द्धमान (महावीर) हो । पूर्वोक्त श्लोकमें श्रीमद्भट्टाकलंक देवने ऐसी स्तुति की है ।

* यह व्याख्यान उपरोक्त महाशयने बम्बईके हिन्दू यूनियन-क्लबमें दिसम्बर १९०३ ई० में दिया था ।

१ १८ दोष:—

क्षुत्पिपासाजरातंकजन्मान्तकभयस्मयः ।
न रागद्वेषमोहश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥

अर्थ—भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म,

(२) हिमालयसे लेकर कन्याकुमारीतक किंबहुना उससे भी आगे सीलोन द्वीप तक व करांचीसे लेकर कलकत्ता तक अथवा उससे भी आगे स्याम ब्रह्मदेश, जावा आदि देशमें जैनधर्मी लोग फैले हुए मिलते हैं।

(३) हिन्दुस्तानके सम्पूर्ण व्यापारका एक तिहाई भाग जैनियोंके हाथमें है।

(४) बड़े २ जैन कार्यालय, भव्य जैनमंदिर, अनेक लोकोपयोगी संस्थाएं हिन्दुस्तानके बहुतसे बड़े २ नगरोंमें हैं।

(५) प्राचीनकालसे जैनियोंका नाम इतिहास प्रसिद्ध है और जैनधर्मके अनेक राजा हो गए हैं।

(६) स्वतः अशोक ही बौद्धधर्म स्वीकार करनेसे पहले जैनधर्मानुयायी था।

(७) कर्नल टाड साहबके राजस्थानीय इतिहासमें उदयपुरके घरानेके विषयमें ऐसा लिखा है कि "कोई भी जैनयति उक्त स्थानमें जब शुभागमन करता है तो रानी साहिब उसे आदर पूर्वक लाकर योग्य सत्कारका प्रबन्ध करती हैं। इस विनय प्रबन्धकी प्रथा वहां अब तक जारी है।

(८) प्राचीन कालमें जैनियोंने उत्कट पराक्रम हा राज्यकार्यभारका* परिचालन किया है आज कलके समयमें इनकी राजकीय अवनति मात्र दृष्टिगोचर होती है।

(९) प्राचीन जैन वाङ्मय संस्कृत वाङ्मयके प्रायः बराबर था। धर्माभ्युदय महाकाव्य, हम्मीर काव्य, पार्श्वाभ्युदय काव्य, यशस्तिलक चम्पू आदि काव्य ग्रन्थ, जैनेन्द्र व्याकरण, ÷ काशिका वृत्ति व पंजिका, रम्भामंजरी नाटिका प्रमेयकमलमार्तंड सरीखे न्याय शास्त्र विषयक ग्रन्थ, हेमचन्द्र सरीखे कोष, व इनके सिवाय जैन पुराण, धर्मग्रन्थ, इतिहास ग्रन्थ आदि असंख्य शास्त्र थे। इनमेंसे बहुत थोड़े प्रकाशित हुए हैं और सैकड़ों ग्रन्थ अभी अज्ञात हो रहे हैं॥

(१०) इन संस्कृत ग्रन्थोंके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे भी जैनियोंने वाङ्मयकी बड़ी भारी सेवा की है।

(११) दक्षिणमें तामिल व कनड़ी (कर्ना

चंद्रवंशी आदि क्षत्री कुलोत्पन्न बड़े२ राज्याधिकारी हुए जिसकी साक्षी अनेक जैन इतिहास ग्रन्थों तथा किसी २ अजैन शास्त्रों व इतिहास ग्रन्थोंमें भी मिलती है।

÷ शाकटायन व्याकरण जिसका मत कई स्थानोंमें पाणिनीय व्याकरणने भी ग्रहण किया है जैनाचार्य कृत ही है। तथा और भी अनेक जैन व्याकरण हैं।

टकी) इन दोनों भाषाओंके जो व्याकरण प्रथम प्रस्तुत हुए हैं वे जैनियोंने ही किये थे १।

(१२) प्राचीन कालके भारतवर्षीय इतिहासमें जैनियोंने अपना नाम अजर अमर रखा है २।

(१३) वर्तमान शांतिके समय व्यापार वृद्धिके कार्योंमें अग्रेसर होकर इन्होंने (जैनियोंने) अपना प्रताप पूर्ण रीतिसे स्थापित किया है।

(१४) हमारे जैन बांधवोंके पूर्वज प्राचीन-कालमें ऐसे २ स्मरणीय कृत्य कर चुके हैं तो भी जैनी कौन हैं, उनके धर्मके मुख्यतत्व कौन २ से हैं इसका परिचय बहुत ही कम लोगोंको होना बड़े आश्चर्यकी बात है।

(१५) "न गच्छेज्जैनमंदिरम्" अर्थात् जैन-मंदिरमें प्रवेश करने मात्रमें भी महापाप है; ऐसा निषेध उस समय कठोरताके साथ पाले जानेसे जैन मंदिरकी भीतकी आड़में क्या है इसकी खोज करे कौन? ऐसी स्थिति होनेसे ही जैन धर्मके विषयमें झूठे गपोड़े उड़ने लगे। कोई कहता है जैन धर्म नास्तिक है, कोई कहता है बौद्ध धर्मका अनुकरण है, कोई कहता है जब शंकराचार्यने बौद्धोंका पराभाव किया तब बहुतसे बौद्ध पुनः ब्राह्मण धर्ममें आ गये परन्तु उस समय जो थोड़े बहुत बौद्धधर्मको ही पकड़े रहे उन्हींके वंशज यह जैन हैं, कोई कहता है कि जैन धर्म बौद्ध धर्मका शेष भाग तो नहीं किन्तु हिन्दू धर्मका ही एक पंथ है। और कोई कहते हैं कि नग्न देवको पूजनेवाले जैनी लोग ये मूलमें आर्य ही नहीं हैं किन्तु अना-र्योंमेंसे कोई हैं। अपने हिन्दुस्तानमें ही आज चौबीस सौ वर्ष पूर्वसे पड़ोसमें रहनेवाले धर्मके विषयमें जब इतनी अज्ञानता है तब हजारों कोससे परिचय पानेवाले व उससे मनोऽनुकुल अनुमान गढ़नेवाले पाश्चिमात्योंकी अज्ञानता पर तो हंसना ही क्या है।

(१६) ऋषभदेव जैन धर्मके संस्थापक थे यह सिद्धांत अपनी भागवतसे भी सिद्ध होता है। पार्श्वनाथ जैन धर्मके संस्थापक थे ऐसी कथा जो प्रसिद्ध है वह सर्वथा भूल है। ऐसे ही वर्द्ध-मान अर्थात् महावीर भी जैनधर्मके संस्थापक नहीं हैं। वे २४ तीर्थंकरोंमेंसे एक प्रचारक थे।

(१७) जैनधर्ममें अहिंसा तत्व अत्यन्त श्रेष्ठ माना गया है। बौद्ध धर्म व अपने ब्राह्मण धर्ममें भी यह तत्व है तथापि जैनियोंने इसे जिस सीमा तक पहुंचा दिया है वहां तक अद्यापि कोई नहीं गया है।

(१८) अपने धर्ममें जिस प्रकार १६ संस्कारोंका वर्णन है उसी प्रकार जैनियोंमें ५३ क्रिया हैं, उनमें बालकके केशवाय अर्थात् शिखा रखना, पांचवें वर्षमें उपाध्यायके पास विद्यारंभ

(१) कर्णाटक भाषाका बहुत बड़ा व्याकरण श्रीमद्भट्टाकलंकदेव रचित रैस साहबने छपा भी दिया है। परन्तु वह सब विलायतके विद्याविलासि-योंने मंगा लिया है। इस देशमें मिलना अब दुर्लभ है।

(२) इसी ट्रेक्टके नं० १ में महामहोपाध्याय डा० सतीशचन्द्र एम० ए० पी० एच० डी० एफ० आर० आई० एस० विद्याभूषणकी सम्मति देखो।

(३) न पठेद्यावनीं भाषां प्राणैः कण्ठगतैरपि। हस्तिनापीड्य मानोपि न गच्छेज्जिनमंदिरम् ॥

करना, आठवें वर्ष गलेमें यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहिरना, ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याभ्यास करते रहना इत्यादि विषय जैसे अपने धर्मशास्त्रमें हैं वैसे ही जैन शास्त्रोंमें भी हैं१। परन्तु हम लोगोंमें जैसे सम्पूर्ण संस्कार नहीं किये जाते हैं वैसे ही जैनियोंकी भी दशा है, सैकड़ों जैनी तो यज्ञोपवीत संस्कार तक नहीं करते।

(१८) जैन शास्त्रोंमें जो यति धर्म कहा गया है वह अत्यन्त उत्कृष्ट है इसमें कुछ भी शंका नहीं।

(२०) जैनियोंमें स्त्रियोंको भी यति दीक्षा लेकर परोपकारी कृत्योंमें जन्म व्यतीत करनेकी आज्ञा है। यह सर्वोत्कृष्ट है। हिंदू समाजको इस विषयमें जैनियोंका अनुकरण अवश्य करना चाहिये।

वह ईश्वरका अस्तित्व नहीं मानते ऐसा नहीं है। किन्तु ईश्वरकी कृति सम्बन्धि विषयमें उनकी और हमारी समझमें कुछ भेद है। इस कारण जैनी नास्तिक हैं ऐसा निरिल व्यर्थ अपवाद उन विचारों पर लगाया गया है।

अतः यदि उन्हें नास्तिक कहोगे तो;

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥
नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥ *

ऐसा कहनेवाले श्री कृष्णजी को भी नास्तिकोंमें गणना करना पड़ेगी।

(२२) सृष्टिका कर्ता कोई ईश्वर है कि नहीं, यह विषय प्रथमसे ही वादग्रस्त है। शास्त्रज्ञोंका इस विषयमें आज तक एक मत नहीं हुआ।

(२३) मूर्तिका पूजन श्रावक अर्थात् गृहस्थाश्रमी करते हैं मुनि नहीं करते। श्रावकोंकी पूजनविधि प्राय: हम ही लोगों सरीखी है।

(२४) हमारे हाथसे जीव हिंसा न होने पावे इसके लिये जैनी जितने डरते हैं इतने बौद्ध नहीं डरते। बौद्धधर्मी देशोंमें मांसाहार अधिकताके साथ जारी है। आप स्वत: हिंसा न करके दूसरेके द्वारा मारे हुए बकरे आदिका मांस खानेमें कुछ हर्ज नहीं ऐसे सुभीतेका अहिंसा तत्व जो बौद्धोंने निकाला था वह जैनियोंको सर्वथा स्वीकार नहीं।

(२५) बौद्धधर्मके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। इस धर्मका परिचय सबको हो गया है। परन्तु जैन धर्मके विषयमें वैसा अभी तक कुछ भी नहीं हुआ है। बौद्धधर्म चीन, तिब्बत, जापानादि देशोंमें प्रचलित होनेसे और विशेष कर उन देशोंमें उसे राज्याश्रय मिलनेसे उस धर्मके शास्त्रोंका प्रचार अति शीघ्र हुआ, परन्तु जैन धर्म जिन लोगोंमें है वे प्राय: व्यापार व्यवहारमें लगे रहनेसे धर्म ग्रंथ प्रकाशन सरीखे कृत्यकी तरफ लक्ष देनेके लिये अवकाश नहीं पाते इस कारण अगणित जैन ग्रन्थ अप्रकाशित पड़े हुए हैं॥

(२६) यूरोपियन ग्रन्थकारोंका लक्ष भी अद्यापि इस धर्मकी ओर इतना खिंचा हुआ नहीं दिखाई देता पर भी इस धर्मके विषयमें हम लोगोंका अज्ञान एक कारण है।

(२७) जैन धर्मके काल निर्णय सम्बन्धमें दूसरी ओरके प्रमाण भी आने लगे हैं, कोलब्रुक साहिब सरीखे पंडितोंने भी जैन धर्मका प्राचीनत्व स्वीकार किया है। इतना ही नहीं किन्तु बौद्धधर्म जैनधर्मसे निकला हुआ होना चाहिये ऐसा विधान किया है। मिस्टर एडवर्ड थॉमसका भी ऐसा ही मत है। उपरोक्त पंडितने Jainism or early faith of Asoke (जैनधर्म या "अशोक" की पूर्व श्रद्धा) नामक ग्रंथमें इस विषयके जितने प्रमाण दिये हैं वे सब यदि यहांपर दिये जांय तो बहुत विस्तार हो जायगा।

(२८) चंद्रगुप्त (अशोक जिसका पोता था) स्वत: जैन था इस बातको वंशावलीका दृढ़ आधार है। राजा चंद्रगुप्त श्रमण अर्थात् जैन गुरूसे उपदेश लेता था ऐसी मेगस्थिनीज Magasthenies ग्रीक इतिहासकारकी भी साक्षी है।

अबुलफजल नामक फारसी ग्रन्थकारने "अशोकने काश्मीरमें जैनधर्मका प्रचार किया" ऐसा कहा है।

राजतरंगिणी नामक काश्मीरके संस्कृत इतिहासका भी इस विधानको आधार है।

(२९) उपरोक्त विवेचनसे ऐसा मालूम पड़ता है कि इस धर्ममें पुज्ञोंको आदरणीय जानने योग्य अनेक बाते हैं। सामान्य लोगोंको भी जैनियोंसे अधिक शिक्षा लेना योग्य है। जैनी लोगोंका भाविकपन, श्रद्धा, व औदार्य प्रशंसनीय है।

१ देखो इसी ट्रेक्टके नं० १ में पुरुषशिरोमणि पं० बालगंगाधर तिलक आदि महाशयोंकी सम्मति।

(३०) जैनियोंकी एक समय हिन्दुस्थानमें बहुत उन्नतावस्था थी। धर्मनीति, राजकार्य धुरन्धरता वाङ्मय (शास्त्रज्ञान व शास्त्रभंडार) समाजोन्नति आदि बातोंमें उनका समाज इतर जनोंसे बहुत आगे था।

संसारमें अब क्या हो रहा है इस ओर हमारे जैनबन्धु लक्ष देकर चलेंगे तो वह महत्पद पुनः प्राप्त कर लेनेमें उन्हें अधिक श्रम नहीं पड़ेगा।

(३१) जैन व अमेरिकन लोगोंमें संघटन कर आनेके लिये बम्बईके प्रसिद्ध जैन गृहस्थ परलोकवासी मि० वीरचन्द गांधी अमेरिकाको गये थे। वहां उन्होंने जैन धर्म विषयक परिचय करानेका क्रम भी स्थित किया था।

आजकल जो 'गांधी फिलॉसोफिकल सोसायटी (Gandhi Philosophical Society.) अर्थात् जैन तत्त्वज्ञानका अध्ययन व प्रसार करनेके लिये जो समाज स्थापित हुई वह उन्हींके परिश्रमका फल है। दुर्दैवसे मि० वीरचन्द गांधीकी अकाल मृत्यु होनेसे उक्त आरंभ किया हुआ कार्य अपूर्ण रह गया है इत्यादि।

—:०:—

मंगल कामना।

मैं दीन अति मतिहीन पूजूं हरन अघ संतापके।
दीजे मनोरथ पूर्ण स्वामी यांचता तुमसे यही,
बलबुद्धि विद्या विभव संयुत हो सदा भारत मही॥२॥
स्थिर रहे सुखशांतिमय नृप जार्जका शासन यहां,
कपटी कुचाली क्रूर नृपका थिर न हो आसन यहां।
खरचें सदा सत्कार्यमें धनवान धन हिय खोलके,
हों कार्य करता कार्यतत्परसम्मिलित जिय खोलके॥३॥
संस्था अनेकों हैं खुलीं आगे खुलेंगीं जो तथा,
उज्ज्वल करें मुख देशका मंजुल फलोंसे सर्वथा।
विद्वानगण तज स्वार्थ निज डंका बजावें धर्मका,
झरना बहावें अति विमल विज्ञान तात्विक मर्मका॥४॥
बन नवयुवकगण स्वयंसेवक फूटका सिर फोड़ दें,
बंध एकताके सूत्रसे संबन्ध सुखका जोड़ दें।
व्यसनी बनें विद्याव्यसनके और कुव्यसन छोड़ दें,
आलस्य अविद्या ईर्षा मदमोहसे मुख मोड़ दें॥५॥
सोत्साह कार्यारंभ कर सोत्साह पूरा कर सकें,
अटकेश सम धन विभवयुत निज देश फिरभी कर सकें।
जल वायु विद्युच्छक्तिपर अधिकार अपना कर सकें,
बन भोज विक्रम भीमसे निज देशका दुख हर सकें॥६॥



(लेखक पं० उमरावसिंहजी न्यायतीर्थ
दिगम्बर जैन महाविद्यालय मथुरा।)

प्रिय अनुभवी बन्धुओ ! जब आप इतिहासादि द्वारा अनेक देशोंके अनेक कालीन परस्पर विरुद्ध सामाजिक व धार्मिक परिवर्तनोंके कारणों पर गहरी दृष्टिसे विचार करोगे, अर्थात् जब आप यह जाननेकी कोशिश करोगे कि किसी विवक्षित देशमें किसी ज़मानेमें कोई धर्म व कुछ रीति-रिवाज और दूसरे जमानेमें कोई अन्य धर्म व दूसरे ही रीति-रिवाज क्यों हो गये? जिन धर्मसे और जिन रीति रिवाजोंसे किसी देशवाले किसी समय अत्यन्त घृणा करते थे उसी देशवाले दूसरे ज़मानेमें उसी धर्मकी उपासना क्यों करने लगे तथा उन्हीं रिवाजोंको पसन्द क्यों करने लगे ? क्या उनकी पहली धार्मिक व सामाजिक स्थिति उनकी आत्मिक मानसिक व शारीरिक उन्नतिके लिये वास्तवमें बाधक थी ? जिससे कि उनको अपने धर्म व सामाजिक संगठनमें परिवर्तन करना पड़ा, अथवा पहले समयमें दोनों बातें उपयोगी मालूम देती थीं पश्चात् अनुपयोगी मालूम देने लगीं जिससे कि उन्हें उन बातोंको बदलना पड़ा, अथवा दोनों बातोंके उपयोगी रहते भी किसी दूसरे देशवालोंने उनको ऐसा करनेके लिये बाध्य किया जिससे कि उन्होंने ऐसा किया ? तो आपको मालूम हो जायगा कि किसी देशमें किसी समय परिवर्तनके ये तीनों ही कारण आ उपस्थित होते हैं, कभी इसमेंसे कोई दो कारण और कभी केवल एक कारणसे परिवर्तन हो जाया करता है। जब कभी किसी देश पर किसी दूसरे देशका केवल धार्मिक आक्रमण होता है तब आक्रान्त देशमें पहले वा दूसरे कारणसे परिवर्तन होता है, जैसे कि भारतीय बौद्धोंके धार्मिक आक्रमणके कारण चीन व जापान देशका धर्म बदल गया। इन दोनों देशों पर बौद्धोंको सैनिक आक्रमण नहीं करना पड़ा था किंतु बौद्ध धर्मके बहुसंख्यक उद्भट विद्वानोंने इन देशोंमें जाकर धार्मिक हलचल मचाई थी और उक्त देशवासियोंके हृदय पर अपना धार्मिक सिक्का जमाया था, जिसके कारण उक्त देशवासी बिना किसी प्रकारकी ज्यादतीके स्वयं ही अपनी धार्मिक स्थितिको हेय और बौद्ध धार्मिक स्थितिको उपादेय मानने लगे थे और सैकड़ों वर्षसे अभी तक बराबर मानते चले आ रहे हैं। यदि बौद्ध लोग इस उपायको काममें न लेकर औरंगजेब आदि मुसलमान बादशाहोंकी तरह उग्र उपायोंसे काम लेते तो कदापि इस प्रकारकी व्यापक व स्थायी सफलता प्राप्त न कर सकते। किसी विजित देशसे अधिकसे अधिक जितना लाभ उठाया जा सकता है उतना लाभ प्राप्त करनेके चीन व जापान देश अच्छे उदाहरण हैं। इस प्रकारकी सर्वोत्तम सफलता प्राप्त करानेकी यदि किसीमें ताकत है तो वह केवल शांति व दृढ़ता पूर्वक किये हुए धार्मिक आक्रमणमें ही है।

सैनिक आक्रमणसे प्रथम तो सफलताके मंदिरमें निवास करनेकी इच्छा करनेवाली व्यक्तियां ही प्रायः नष्ट हो जाती हैं, यदि कुछ बची भी रहती हैं तो वे विजित देशके समस्त मनुष्यों पर अपना सिक्का नहीं जमा सकतीं, और जो कुछ सिक्का जमता भी है वह स्थायी नहीं रहता, समय पाते ही विजित लोग विजेताओंको मार भगाते हैं और उनके आदर्शकी अपने ऊपर चढ़ी हुई चादरको शीघ्रही उतार कर फेंक देते हैं तथा विजेताओंसे जातीय विरोध मानने लगते हैं। यही कारण है कि बहुत कुछ मेल जोल व सहवास होने पर भी औरंगजेबी अत्याचारको भारतीय हिन्दू अभी तक नहीं भूले। सामाजिक त्योहारों व मेले ठेलोंके अवसर पर पूर्व वासनाओंका उदय अभीतक होता रहता है। इसी प्रकार जब कभी किसी देशपर किसी अविचारी व क्रूरकर्मा नरेशका केवल सैनिक आक्रमण होता है तब प्रायः तीसरे कारणसे परिवर्तन होता है जैसे कि कुछ मुसलमान बादशाहोंके जमानेमें बहुतसे भारतीय हिन्दुओंको जबरन अपना धर्म बदलना पड़ा था। धार्मिक व सैनिक आक्रमणकी तरह एक व्यापारी आक्रमण भी होता है जिसके कि कारण आक्रान्त देशकी व्यवहारिक वस्तुओंमें परिवर्तन हो जाया करता है, इस आक्रमणमें राजसत्ता भी गुप्त रीतिसे प्रायः सहायक रहती है, सैनिक आक्रमणसे भी यद्यपि आक्रान्त देशकी सम्पत्ति आक्रामक देशमें जाती है तथापि व्यापारी आक्रमणसे आक्रान्त देशकी सम्पत्तिका जितना ह्रास होता है उतना और किसी प्रकारसे नहीं होता इत्यादि अनेक प्रकारसे बलवानों द्वारा निर्बलोंपर आक्रमणके करनेकी चिरंतन पद्धतिको ध्यानमें रखते हुए जब हम भारतवर्षकी वर्तमान दशा पर ध्यान देते हैं तो हमको मालूम होता है कि यह हमारा भारतवर्ष वर्तमानमें सभी प्रकारके आक्रमणोंसे सर्वांशमें आक्रान्त है।

अब हम पाठकोंको यह बतलाना चाहते हैं कि इन अनेक आक्रमणोंके होनेसे भारतमें जो परिवर्तन हुआ है अर्थात् भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिका त्याग करके जो नूतन विदेशी पोशाक पहनी है इससे भारतका कुछ हित हुआ है या अहित। तथा भारतकी प्राचीन परिस्थिति वास्तवमें भारतके लिये अहितकर थी जिससे कि भारतने उसका परित्याग किया अथवा प्राचीन परिस्थिति समय बदलनेसे अहितकर हो गई थी अथवा अहितकर न होते भी प्राचीनताको त्यागनेके लिये किसीने भारतको बाध्य किया है? इन तीनों बातोंपर विवेचन करनेसे मालूम होता है कि भारतकी प्राचीन परिस्थिति न पहले ही अहितकर थी और न समय बदलनेसे ही अहितकर हो गई थी किन्तु विदेशी सभ्यतासे आक्रांत होकर भारतने अपनी प्राचीन परिस्थितिको अपने अहितकर मान लिया था जिसके कारण भारतने अपने धर्म, अपनी भाषा, अपनी औषधियों, अपने वस्त्रों, अपने रीतिरिवाजों, अपने व्यापारादिके आदर्शोंको गिराकर भी सुख नहीं पाया। धार्मिक आदर्शोंको गिराकर भारत बहुत अंशोंमें जिस प्रकार जड़वादी बन गया, उसी तरह निज भाषाके गौरवको गिराकर अपने इकबालपर

.र्शक साहित्यसे हाथ धो बैठा और अपने रत्नोंसे चमकर हो दूसरोंके काच खण्डमें सुख देखनेका शौकीन बन गया। तत्काल असरकारक अल्प मूल्यवाली पवित्र औषधियोंका परित्याग कर जैसे भारतको बहुमूल्यवाली अपवित्र विदेशी औषधियां अच्छी मालूम देने लगीं, उसी तरह मजबूत देशी कपड़ोंके स्थानमें विदेशी बहुमूल्य चटकीले वस्त्र उत्तम जचने लगे। सीधे सादे कुश्ती कवड्डी आदिक देशी खेलोंके स्थानमें भी द्रव्य लुटवाऊ किरकेट, फुटबाल आदिक विदेशी खेल ही मन माने लगे। नेत्रोंको बाधक न होने वाली देशी तेलकी रोशनीके मुकाबिलेमें बालकपनमेंही चश्मा चढ़वाऊ तीखी व खर्चीली गैस वगैरहकी रोशनी अच्छी लगने लगी। इत्यादि बातोंके ऊपर विचार करनेसे जान पड़ता है कि जिस भारतीय सभ्यताका निर्माण आत्मिक मानसिक व शारीरिक उन्नतिको पूर्णतया ध्यान में रखकर किया गया था उसका जितने अंशोंमें भारतने परित्याग किया है उतने अंशोंमें भारतको केवल संताप ही भोगना पड़ा है। वर्तमान महासमरने इस बातका अच्छी प्रकार परिज्ञान करा दिया है कि जिस पाश्चात्य सभ्यताके लिये नई रोशनीके भारतवासी तूफान मचा रहे थे उसमें कुछ भी सार नहीं है। वह केवल बाराङ्गनाकी तरह टकेकी इच्छुक है। अपने उद्देशकी सिद्धिके लिये रूसके जार जैसे सम्राटका वंशच्छेद कर देना भी उसके लिये बायें हाथका खेल है। दुनियापर अहर्निश आधिपत्य प्राप्त करना ही एक मात्र उसका लक्ष्य है। आत्मोन्नतिके स्थानमें तो आत्म-तत्त्वके विश्वासका ही इसके द्वारा सफाया होता जा रहा है। डारविन जैसे महापुरुषोंके कुपरामर्शके कारण भारत जैसे धर्म प्रधान देशके निवासी भी सर्वोन्नतिके आधारभूत आत्मतत्त्वके विश्वाससे पराङ्मुख होते जारहे हैं। मानसिक और शारीरिक वृत्तियोंके ह्रास और प्रेम व सहानुभूति तरक्की इतिश्रीका सच्चा चित्र खींचनेके लिये एक स्वतन्त्र लेखकी आवश्यक्ता है। इस गिरी अवस्थासे मुक्त होनेका भारतके पास कोई उपाय है या नहीं? इस बातपर विवेचन करनेसे हमारी समझमें यही आता है कि जितने अंशमें भारत फिर अपने प्राचीन आदर्शोंको महत्त्व देता जायगा। उतना२ ही इसका पुनरुत्थान होता जायगा, अपनी भाषा, अपने धर्म, अपनी औषधियों, अपने व्यायाम व अपनी वस्तुओंके व्यवहार किये बिना भारतके पास उत्थानके लिये और कोई उपाय नहीं है। विदेशी भाषाओंका परिज्ञान भी भारतके लिये इतने अंशमें बहुत अधिक हितकर है कि दूसरे देशोंमें जाकर उसके द्वारा भारतके अमृतोपम धर्म रसका आस्वादन करा सके, और उनके हृदयसे जड़वादको निकाल कर भगवान कुंदकुंद सरीखे भारतीय महर्षियोंके अद्वितीय आत्मतत्त्व विषयक विवेचनका अंकुर जमा सके, जिससे उनकी महासमरादि कारणोंसे संतप्त आत्माओंको अनुपम शान्ति मिले, संसारका हित हो और भारतका यश फैले। ऐसा करनेको हम धार्मिक आक्रमण कह सकते हैं और इसके द्वारा, बौद्धों द्वारा चीन व जापानमें प्राप्त की हुई सफलता सरीखी, आशा कर सकते हैं।



पट्टनकी लड़ाईकी हत्भाग्यताके परिणामसे दु:खित हो महाराज विजयसिंहने अजमेराध्यक्ष धनराजको अजमेर शत्रुओंके हस्तगत कर देनेका परवाना निकाला था। उसी आज्ञा पत्रको लिए महाराज विजयसिंहका दूत उनके समक्ष उपस्थित है। राजाकी इस कायरताकी विकट आज्ञा इस वीर हृदयसे कब मानी जाती। परन्तु: इधर वे चुपचाप कायर बन अजमेरको शत्रुके आधीन नहीं करना चाहते थे और उधर महाराजकी आज्ञाको भंग कर दोषी भी नहीं बनना चाहते थे। ऐसे ही विचारोंकी तरंगोंसे उनका हृदय-सागर तरंगित हो उठा। वे असमंजसमें पड़ गए। वीर हृदय इस घृणित संधिपर राजी न होता था। पश्चात दिल ऊब गया—दोनों कार्योंसे मुक्त होनेके लिए वीरात्माने अपनी आत्म बलि करनेकी ठानी। हाथकी अंगुली पर दृष्टि पड़ते ही हीराजड़ित मुद्रिका उतार ली और उस प्राणघातक निर्दय हीरेको चूर्ण कर गलेमें रख उतार लिया। वही हीरा जो किसी संकटके समय आपदासे बचाता और मनुष्य हमाम जिसके प्राप्तिके लिए दौड़ा करती है उस हीरेने इस वीरात्माकी हृदयकी गतिको रोक उनकी ओजस्वी जीवनलीला समाप्त कर दी। वीरात्मा इस संसारसे विदा होता हुआ कड़क कर दूतसे बोला:—

"ऐ दूत! जा, और राजा से कह कि मैं राजाज्ञा इस तरह अपने प्राणोंकी आहुति देकर कर सक्ता हूं और अब मेरे इस मृत देहपर हीसे कोई मरहठा अजमेरमें प्रवेश कर सक्ता है"।

धन्य है वीर सेनापति! तेरी वीरता और प्रभु आज्ञा–कारिताको! तेरा नाम सदैव राजस्थानके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखा रहेगा।

"Lives of great men all remind us
We can make our lives sublime,
And departing leave behind us
Foot prints on the sands of time."
—Long fellow

पाठको! आप स्तुति प्राप्त वीरात्माके विषयमें विशेष, ज्ञात होनेको उत्कण्ठित होंगे। लीजिए ज्ञान प्राप्त करिए और अपनी आत्माको भी इस वीरात्माके चरित्रसे भरपूर कर वीर और साहसी कीजिये। कारण कि उदार प्रतिष्ठित आत्माओंके ही मार्गका अवलम्बन सर्व साधारण करते हैं। मरहठा वीर सिन्धियाको टोंग (जयपुर निकटस्थ) में पराजय कर मारवाड़ सेनापति भीमराज सिंघवी अजमेरकी ओर रवाना हुए। और सन् १७८७ में अजमेरको उन्होंने मरहठाओंके सूबेदार अनवर बेगसे छीन लिया। यह नया प्रांत धनराज सिंघवीकी अध्यक्षतामें सुपुर्द किया गया। मरहठोंने अपनी क्षतिको पूर्ण कर लिया था और तत्पर हो चार वर्ष पश्चात् फिर उन्होंने मारवाड़ पर आक्रमण कर दिया। मेरता और पट्टन इन दो स्थानोंमें युद्ध हुआ परन्तु अब मारवाड़ियोंसे विजय लक्ष्मी रुष्ट हो गई थी। थोड़े ही कालमें

मराठा सेनापति डी बोइनी (De Boigne) ने अजमेर पर आक्रमण किया और घेरा डाल वहीं पड़ रहा। धनराज-अजमेराध्यक्षने वीरतासे शत्रुका सामना किया और धीरता, साहससे शत्रुको बाहर ही रोके रक्खा। इस ही समय पर महराज विजयसिंहकी उक्त घोषणा धनराजको प्राप्त हुई थी। और फिर जो कुछ हुआ वह पाठक पढ़ चुके हैं। इसमें कोई शंका नहीं है कि धनराज ओसवाल जैन वंशज थे। क्योंकि सिंघवी जो पहिले नन्दवन वोहरा ब्राह्मण थे पश्चात वि० सं० १४९१ सिरोहीमें मुनि सुन्दरसूरि द्वारा जैनधर्मानुयायी हुए थे। जोधपुरमें उनके स्थित होनेका समय वि० स० १५३३ अथवा सन् १४७६ ई० से है। राजपूतानेके ओसवाल, भण्डारी, बच्छावत आदि वंशोंमें राजनीतिज्ञ और योद्धा अवतरे हैं। इन्हीं भामाशाह रत्नसिंह आदिने और दक्षिणके चामुण्डराय आदि वीरात्माओंने जैनियोंका गौरव बनाए रक्खा है। परन्तु खेद तो यह है कि हमने इन वीरात्माओंके उपकार अथवा उनके जीवन चरित्रोंको विसार दिया है। उसीका परिणाम है कि हममें कोई देशभक्त राजनीतिज्ञ अथवा लाट साहबकी कौंसिल आदिका मेम्बर नहीं है और लोग हमको 'सड़ी चिड़िया' कहनेसे भी नहीं हिचकते। जो वास्तविक ही है कारण कि अब निर्बलोंका रहना इस युगमें दुःसाध्य ही नहीं दुर्लभ है। आशा है पाठकगण अपने पूर्वजोंके कृत्योंका स्मरण कर फिरसे अपने क्षत्रियत्वको प्राप्त कर भारतमाताके भक्त हो उसके सुपुत्रो बनेंगे। एवम् भवतु।

समाज हितैषी—के० पी० जैन
अलीगंज (एटा)

नोट—इस लेखकी सामग्री Mr. Tank's S. D. Jains से ली गई है एतदर्थ हम उनके आभारी हैं। लेखक—

ल।

जुबां खुर्दो कलासे अब सदा ऐही बहम निकले।
फतै सरकारकी होवै दुआ ये दम बदम निकले ॥
मिटै झगड़ा लड़ाई सब, आराम हरसू हो।
उदूका खार दिलमेंसे, इलाही एकदम निकले ॥२॥
रहै नामोनिशां कुछ भी नहीं, आलममें जर्मनका।
तभी इंगलैंडो हिन्दुस्तानका रंजो अलम निकले ॥३॥
बढ़े इकबाल शाहंशाह पंजुम जार्जका ऐसा।
कि जिसका ता क़यामत भी नहीं सानी निकले ॥४॥
इलाही जोर दे सरकारकी लश्करमें इतना—
जिधर बढ़ जाय लाखोंका कलम सरपै कदम निकले ॥५॥
खतम कर अब इसे 'पन्ना' बढ़ानेमें नतीजा क्या।
मैं गा गजल तेरी जो उसी दम यो सेहत निकले ॥६॥

पन्नालाल जैन,—
फुलेरा—(राजपूताना)

शुभ कामना।

द्वेषानल पर स्नेह-सलिल-कण-वर्षण होवे।
पतनदशा गत हो विस्मृति-पट-तलमें सोवे ॥
बीज फूटका कहीं न कोई भी जन बोवे।
डाह, मनोमालिन्य, कपट सब भारत खोवे ॥
मधुर प्रेम वीणामयी मृदुरवकी झङ्कार हो।
विश्वव्याप्त भारत मधुर वाद्य-तन्तु टङ्कार हो ॥

कन्हैयालाल जैन
(कलतारा—)

—निद्रात्याग—

जातिवीरो! नींद छोड़ो शीघ्र ही उठ जाइए,
देखो सवेरा हो गया है नेत्रमल धो डालिए।
बालरविकी है अरुणमय चित्तमोहक यह छटा,
औज्ज्वल्यको विस्तारती है तिमिरमलको जो हटा ॥ १ ॥
प्राची दिशाकी कांति देखो-विद्रुमको लज्जित करे।
आरोग्यरूपी अमृतकी आकाश सद्वर्षा करे।
मंद शीतल सुरभिवाली पवन कैसी चल रही,
प्राप्त करनेसे जिसे आनन्द लहरी आ रही ॥ २ ॥
रात्रिके मुकुलित सभी ही कमल अब हैं खिल रहे,
भ्रमर उन पर उड़ रहे हैं सुरभि उनकी ले रहे।
पक्षिगण सब नींद तजकर मधुर रव हैं बोलते,
उद्योतस्वागत हेतु मानों श्रेष्ठ शब्द टटोलते ॥ ३ ॥
चकवी विरहिणी मिल रही है प्रेमकर निज नाथसे,
मंदिरोंमें बजा रहे घंटा पुजारी हाथसे।
सज्जनगण करने लगे हैं नित्य कर्मोंको सभी,
ऐसे मनोहर समयको पा हो रहे प्रमुदित सभी ॥ ४ ॥
कर जोड़ करके स्वेष्ट प्रभुसे विनय सारे कर रहे,
भक्तिभाव लगा लगा कर हर्ष उरमें भर रहे।
मांग मॉंसे कुछ कलेवा कई बालक खा रहे,
देखो कई ले पुस्तकोंको [illegible] जा रहे, ॥ ५ ॥
लेकर बुहारी हाथमें सब नारि गेहोंको [illegible]।
कूड़े कचोड़ेको घरोंमें सभी जन बाहर करे,
स्नान ताजे नीरसे करने लगे हैं जन सभी,
निद्रा तुम्हारी आंखसे लेकिन [illegible] नहिं अभी ॥ ६ ॥
पात्र हाथोंमें पकड़ कर दुग्ध गौसे दुह रहे,
गोपाल गौ महिषादि ले उनके चराने जा रहे।
रोगिगण भी इस समय कुछ सुखित होते हैं सभी
कार्य अपना कर रहे हैं प्रकृतिमें प्राणी सभी ॥ ७ ॥
जागो उठो अब तो सचेतो कार्य अपना [illegible] करो,
लेकर वृथा ही करवटें आलस्यमें न पड़ा करो।
इतनी अवधिमें मात्र [illegible],
आलस्यका पर [illegible] भी तुम्हारे नहिं गया ॥ ८ ॥

कुन्दलाल शास्त्री

॥ श्रीवीतरागाय नमः॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधैश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततां, दैगम्बरं जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १२ वाँ. || वीर संवत् २४४५. माघ. विक्रम सं० १९७५. || अंक ४.



महासभाको सफलता कैसे मिलेगी ?

हम कई वर्षोंसे देख रहे हैं कि भारतवर्षीय दि० जैन महासभा अपने स्थानसे पीछे ही हटती चली जा रही है, जबकि देशकी अन्य सामाजिक सभाएं वर्षोंमें नहीं किंतु दिनपर दिन उन्नतिके मार्गपर पद बढ़ा रही है। भारतवर्षीय महासभाकी अवस्था ही जैन समाजकी अवस्था कही जाय तो कुछ असंगत न होगा, क्योंकि सभाओं और उसके सदस्योंका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है; जैसे विना सभाओंके इस समय कोई समाज उन्नति नहीं कर सक्ती वैसी ही विना उत्साही सदस्योंके सभाकी भी उन्नति नहीं हो सक्ती है। परन्तु सभाओंका कार्य उनके बड़े पदाधिकारियोंपर विशेष निर्भर रहता है। जिस सभाके सभापति, उपसभापति, मंत्री उपमंत्री उत्साही और उद्योगी होते हैं वे अन्य सदस्योंमें उत्साह फूंककर सभामें आनेके लिये बाध्य करते हैं। इसका नया उदाहरण दिल्लीकी कांग्रेस है। कांग्रेस होनेके कुछ दिन पहिले अनेक पत्रोंमें चर्चा होती थी कि दिल्ली कांग्रेसमें सफलता न प्राप्त होगी। प्रतिनिधि एवं दर्शक बहुत थोड़े आएंगे क्योंकि थोड़े ही दिन पहिले बम्बईमें विशेष कांग्रेस हो चुकी है। परन्तु जैसी सफलता इस वार कांग्रेसमें मिली वैसी किसी वर्ष सफलता नहीं मिली थी। इस सफलतामें कांग्रेसके सभापति माननीय मालवीयजीके उत्साह और उद्योगका बहुत भाग है। वे ही एक हजार किसानोंको कांग्रेसमें लाये थे जिससे कांग्रेस यथार्थमें राष्ट्रीय सभा इस वर्ष कहलाई। इसी प्रकार कांग्रेसके अन्य कार्यकर्त्ताओंका भी उत्साह कम न था। यहां पर प्रश्न हो सकता है कि जब उसमें सभासद ही नहीं या समाज भाग ही नहीं लेती-सहायता नहीं देती तो कार्यकर्ता क्या करें? परन्तु जरा विचारने पर इस प्रश्नका उत्तर उन्हें स्वयं आ जायगा। बहुतसी सभाएं ऐसी भी हैं जिनके प्रारंभ कालमें केवल उनमें दो चार ही आदमी थे परन्तु उन्होंने ही ऐसी उन्नति की है आज उनमें हजारों आदमी दिखाई पड़ते हैं। इसका कारण कार्यकर्त्ताओंका उत्साह, उद्योग और कार्य करके दिखाना ही है।

यद्यपि इस समय महासभामें समस्त दि० जैनसमाज शामिल नहीं है और न सहानुभूति ही

भी विचारपूर्वक नहीं की गई है। व्याख्यान न देना अर्थात् बोलनेका सर्वथा निषेध कर देना कभी भी योग्य नहीं कहा जा सकता। यदि सरकारको सेठीजीसे भय था तो इतनी ही शर्त करवाती कि तुम राज्यनैतिक व्याख्यान न देना। ऐसी आज्ञासे धार्मिक व्याख्यान देनेमें भी बाधा उत्पन्न कर दी गई है जो एक प्रकारसे **धर्ममें हस्ताक्षेप** करना ही है जिसे कोई भी मनुष्य न स्वीकार करेगा। हम नहीं समझते कि सरकारने ऐसी शर्त कराकर क्या अपना लाभ सोचा है? सेठीजीने जो कुछ धार्मिक ज्ञान संपादन किया है उसको दूसरोंपर न प्रगट कर सकनेसे उनको कितना दुःख होगा और जैनसमाज भी जब किसी सभाके अवसर पर उनका सरकार द्वारा इस प्रकार मुंह बन्द देखेगी तब उसके हृदयमें सरकारके प्रति जो भाव उत्पन्न होंगे उनको हम नहीं कहना चाहते। धार्मिक व्याख्यान भी न देने देना सरकार अपनी कानूनका उल्लंघन करती है और एक मनुष्यके जन्मसिद्ध हकों पर पानी फेरती है। तीसरी शर्त भी सेठीजी जैसे विद्वान, अध्ययन-अध्यापन करनेवाले पुरुषके साथ करना बिल्कुल अविचार शीलताकी परिचायक है। जो मनुष्य प्रारम्भ ही से लड़कोंके पढ़ानेका कार्य कर रहा है और उसी पर जिसकी जीविका निर्भर है उसको यह कहना कि तुम लड़कोंको न पढ़ा सकोगे कभी भी ठीक नहीं हो सकता। सरकार सेठीजीको यह आज्ञा देनेके साथ कोई काम करनेका भी निर्देश कर देती तो बहुत अच्छा होता। फिर हम ही अनुमान लगाते हैं। सेठीजी कोई धनवान नहीं हैं, उनके घरमें दस बीस हजार रुपया भी न होगा जिससे घर पर बैठे २ खांय। अपने और कुटुम्बके भरणपोषणके लिये उनको कोई उद्यम अवश्य करना पड़ेगा। मनुष्य जो कार्य प्रारम्भसे करता आता है, उसीको वह भली प्रकार कर सकता है। सेठीजीका कार्य अध्ययन और अध्यापनका था उसे सरकार बन्द कर देगी। अब प्रश्न है सेठीजी क्या करेंगे? यदि उनके पास अधिक धन होता तो कोठी खोल कर कोई अच्छा व्यापार कर सकते थे परन्तु उनके पास इतना धन नहीं है। वर्तमानमें यदि वे व्यापार करना चाहें तो सिवाय हरदी मिरच या आटा दालकी जैसी दूकानके वे अन्य व्यापार नहीं कर सकते जिसे सेठीजी कभी स्वीकार न करेंगे। यदि यह कहा जाय कि वे किसी रईसके यहां रह कर कार्य करें, यह भी न हो सकेगा क्योंकि सेठीजी सरकारके कोपभाजन बन गये हैं, वे राजनैतिक कैदी हैं इस कारण सरकारके भयसे कोई भी रईस उनको अपने यहां न रखेगा। इसके सिवाय यदि वे कोई गवर्मेन्ट सर्विस करना चाहें वह भी न होगा क्योंकि सरकार भी ऐसे मनुष्योंको अपने आफिसोंमें स्थान न देगी। तब आप ही विचारिये सरकारने उनके पीछे ऐसी शर्तें लगा कर उनको किस कार्यके योग्य रखा! हमने सुना है कि सेठीजी इन शर्तोंको स्वीकार नहीं करना चाहते। स्वीकार भी कैसे करें! किसी विद्वान मनुष्यको इस प्रकारकी शर्तोंमें छोड़ना न छोड़ना बराबर है। उनके सामने जैसा जेलखाना कारागृह वैसा अपने रहनेका

गृह। यह तो है नहीं कि विद्वान केवल इस बात पर मरता हो कि जेलमें पड़े रहनेसे शहरके आलीशान मकान, मोटरगाड़ी, बागबगीचे नहीं देखनेको मिलते हैं इससे इनको जेलसे छूट जांयगे यही नियामत है उनको तो अपनी शिक्षाका उपयोग करना है, दूसरोंका परोपकार करना है अपनी आत्माका कल्याण करना है, तब उसके पीछे ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना कभी भी वह पसंद न करेगा।

अब हमारा सरकारसे यही निवेदन है कि उनको यदि छोड़ना ही है तो जो तीन शर्तें ऊपर बताई गई हैं उनको न लगावे। ऐसी शर्तें लगाकर छोड़ना न छोड़ना बराबर ही है। बिना कोई अपराध लगाये पांच वर्ष तक जेलमें रखना यही बहुत हो गया।

* * *

सर सेठ हुकमचन्दजीका अनुचित विवाह और उचित दान।

हमें यह लिखते हुए खेद होता है सर सेठ हुकमचन्दजीने अपनी ४९ वर्षकी अवस्थामें एक स्त्री और कई पुत्र पुत्रियोंके होते हुए चौथा विवाह एक १२ वर्षकी बालिकाके साथ मिती माघ वदी ८ को कर लिया। सुना गया है कि पेटीवालेको ४००००) दिये गये हैं। यदि कोई साधारण मनुष्यने ऐसा किया होता तो उसके लिये हमें कुछ विशेष कहनेकी आवश्यक्ता नहीं थी परन्तु एक ऐसे पुरुष जो जैन समाजके स्थंभ समझे जाते हैं और भारतवर्षीय दि० जैन महासभा एवं अन्य धार्मिक संस्थाओंके सभापति एवं और संस्थापक हैं उनके द्वारा ऐसी अवस्थामें विवाह कर लेना कभी प्रशंनीय नहीं कहा जा सकता। सेठजीकी अवस्था कन्यासे चौगुनी है इसके सिवाय सेठजीकी एक सुशीला धर्मपत्नी मौजूद है इनकी–स्त्रीका स्वास्थ्य भी अब अच्छा है फिर न मालूम सेठजीने ऐसा विवाह करके क्या लाभ सोचा है? सेठजीने स्वयं ऐसे विवाहोंकी निंदा की है फिर स्वयं सेठजीने सभ्य समाजमें घृणात्मक समझे जानेवाले विवाहके करनेका साहस किस प्रकार किया? हम यह अवश्य कहेंगे कि सेठजीने ऐसा विवाह करके समाजके साथ अन्याय किया है और अपनेको नैतिक बलमें निर्बल सिद्ध किया है। आज सेठजीने ऐसा विवाह किया है कल कोई और लखपती मनुष्य ऐसा ही विवाह कर लेगा ऐसा होनेसे समाजमें एक और कुरीतिका प्रवेश होगा जिससे समाज और जर्जरित होगी।

हमें मालूम होता है कि सेठजीने ऐसा विवाह करके जहां एक अनुचित कार्य किया है वहीं विवाहके अवसर पर **ढाई लाखका दान** करके समाजसे वाहवाही लूटनेका कार्य भी कर दिखाया है। अर्थात सेठजीने **बड़नगरके शुद्ध औषधालयको एक मुश्त १५००००) डेढ लाख रुपये प्रदान** किये हैं और इसके सिवाय हमने यहभी सुना है कि सेठजीने जैन विधवाओं, बेकार आदमियों, और अनाथोंके लिये एक लाख रुपये और निकाले हैं। हम यह स्वीकार करेंगे कि सेठजीने यह उपयोगी और उचित दान किया है परन्तु

यह भी विना कहे न रहेंगे कि सेठजीने अपना जो अनुचित विवाह किया है उसीको ढाकनेके लिये ही यह उचित दान किया है ।

* * *

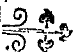
शास्त्रीय परिषद्। इस परिषद्का प्रथम वार्षिक अधिवेशन परतवाड़ा (इलिचपुर)में गत ता० ११-१२ जनवरीको हो गया। सभापतिका आसन श्रीयुत पंडित वंशीधरजी न्यायतीर्थने ग्रहण किया था। अधिवेशनमें पं० पन्नालालजी काशलीवाल, पं० खूबचंदजी पं० माणिकचंदजी न्यायाचार्य, पं० मक्खनलालजी न्यायालंकार, पं० देवकीनंदनजी पं० गौरीलालजी, पं० उदयलालजी पं० रामप्रसादजी, पं० वासुदेवशास्त्री आदि उपस्थित थे। सभापतिने अपना व्याख्यान जबानी ही दिया था। अन्य विद्वानोंके भी व्याख्यानोंकी खूब धूम रही। उसमें कुछ प्रस्ताव जैसे हिन्दीकी पाठ्य पुस्तकें व धर्मकी पुस्तकें बनाना, जैन आर्ष ग्रन्थोंपर होनेवाले आक्षेपोंका उत्तर देना, अंग्रेजी इतिहासकी भूलें निकलवाना, पटेलबिलका विरोध, पुस्तकें जो प्रकाशित हों उनकी जांच करना इत्यादि उपयोगी पास हुए हैं। पं० उदयलालजीने परिषद्को १०० प्रदान किये थे। परिषद्के लिये करीब ७२०) का चंदा हो गया।

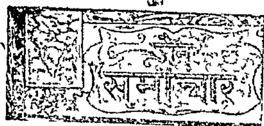
परिषद्के कार्यवाहीसे विदित होता है इसके द्वारा अब कोई उत्तम कार्य होंगे।

* * *

खंडेलवाल दि० जैन प्रां० सभा। इस सभाका भी अधिवेशन परतवाड़ामें सफलताके साथ हो गया। सभापतिका आसन अनुभवी विद्वान श्रीयुत पं० दलालालजी काशलीवालने ग्रहण किया था। आपने अपना मुद्रित व्याख्यान पढ़ा जो कि कुछ विशेष महत्वशाली नहीं था। इस सभाने अपनी जातिमें बहुतसी कुरीतियां बन्द कर दी हैं। इस वर्ष भी कुछ रीति रिवाज ठीक की गई। आगामी वर्ष इसका अधिवेशन सिवनीमें होगा।

यहां दो आम सभाएं भी हुईं। सभापति अजैन विद्वान वकील बनाए गये थे। शास्त्रीय परिषद्के विद्वानोंके व्याख्यानोंसे अजैनों पर जैनधर्मकी अच्छी छाप पड़ी।



हिंसा बंद—सत्यमार्ग जीवदया प्रचारिणी सभा गुनाके उपदेशक पं० गौरीलालजी परवार १९ दिन मैहर स्टेटमें ठहरे। वहां शारदादेवीके आगे घोर हिंसा होती है उसके रोकनेका प्रयत्न किया। वाममार्गियोंसे वादविवाद हुआ उसमें सत्यकी जय हुई और राजगुरु महाराजने लिख दिया कि देवी देवताओंके आगे जो पशुबलि करते हैं वे भूल करते हैं। इसलिये मैं अपने शास्त्रानुसार आज्ञा देता हूं प्रत्येक सनातनधर्मी चाहे जो वर्ण हो देवी देवताओंके नामसे व्यर्थ हिंसा न करे और अब मेवा मिष्ठान चढ़ाना व ब्राह्मणको भोजन देना स्वीकार करे।

वृद्धविवाह—सुना है कि देहलीके सेठ सोहनलालजी (हीरालाल शिवनारायण फर्मके मालिक) संस्थापक हीरालाल जैन विद्यालय अपना विवाह कराना चाहते हैं। आपकी अवस्था ६० वर्षसे अधिक है। इतनी अवस्थामें विवाह करना सर्वथा अनुचित है।

दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाका वार्षिक अधिवेशन स्तवनिधिक्षेत्र पर ता० २०, २१ जनवरी और १ फरवरी तक हुआ। सभापतिका आसन **श्रीमंत पंतणाराव बल्लालराव देसाई** अमीनभावीने ग्रहण किया। विशेष हाल फिर प्रगट करेंगे।

स्वर्गवास—देहलीके लाला मेहरचन्दजीका ७० वर्षकी अवस्थामें मिती पूष सु० १९ को स्वर्गवास हो गया। आपने १॥ लाख रुपया खर्च करके एक मंदिर देहलीमें बनवाया था जिसकी प्रतिष्ठा सं० १८३९में हुई थी मंदिरका नाम मेरुमंदिर है जिसे देखनेके लिये लोग बहुत दूरसे आते हैं।

विना शर्त छोड़ो—देहलीमें तारीख २७ जनवरीको होमरूल लीग और मुसलिम लीगका जलसा हुआ उसमें यह प्रस्ताव पास हुआ कि सेठी अर्जुनलालजी विना शर्त छोड़े जांय।

आगरेमें सभा—गत ४ जनवरीको यहां एक सभा लाला जगीमलजी रईस दिहलीके सभापतित्वमें हुई। पंटेट बिलका विरोध किया गया और वाइसरायको तार भेजा गया। यहांकी जैन बोर्डिंगकी इमारत ठीक करनेके लिये ८९०) का चन्दा हुआ।

आदर्श स्वार्थ त्याग—लखनऊनिवासी श्रीयुत बाबू अजितप्रसादजी एम. ए. एल. एल. बी० वकीलने अपने वकालत, छोड़कर समाज सेवा करनेका व्रत लिया है। गत ९ जनवरीको लखनऊकी जैन समाजने आपका हार गोटेसे सन्मान किया था। हम भी बाबूजीको इस स्वार्थ त्यागके लिये धन्यवाद देते हैं और भावना करते हैं आप अपने उद्देश्यमें सफल हों।

विद्वानका वियोग—करहल निवासी पं० गुलजारीलालजी जो कलकत्तेमें रहते थे, उनका ६६ वर्षकी अवस्थामें पोष कृष्णा १२ को करहलमें स्वर्गवास हो गया। आपनेही कलकत्तेके मंदिरकी प्रतिमा खंडित हो जानेके बाद

शान्त्यर्थ सवा लाख जाप और हवन किया था।

रायसाहब हुए–गोरखपुरनिवासी बाबू अभिनन्दनप्रसादजी मुख्तार नये वर्षकी खुशीमें राय साहबके पदसे सन्मानित किये गये हैं।

सेवाका फल–गत ९ जनवरीको कलकत्तेके विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालयमें स्व० बाबू धन्नूलालजी अग्रवाल जैन अटार्नीका तैलचित्र हाईकोर्टके माननीय जस्टिस सर आशुतोष चौधरीके द्वारा खोला गया।

गंगाजलीका मुकदमा–ब्यावरके जैनियों पर वैष्णवोंके द्वारा यह मुकदमा चलाया गया था कि जैनी रथयात्रा निकालते समय विमानमें गंगाजली नहीं रखते जैसा कि हमारा इनका पहिले फैसला हो गया था इससे हम लोगोंका दिल दुःखता है। परन्तु अदालतने इस मुकदमेको वैष्णवोंकी ओरसे उक्त शर्तकी दस्तावेज न पेश कर सकनेके कारण खारिज कर दिया।

बुंदेलखंडमें दौरा–सेठ माणिकचन्द हीराचन्द जे० पी० ट्रस्ट फंडके उपदेशक पं० पीताम्बरदासजी इस बार बुंदेलखंडका दौरा करनेवाले हैं।

वार्षिकोत्सव–दि० जैन सिद्धान्त विद्यालय मुरैनाका ऊनर्वा वार्षिक अधिवेशन ता० ५, ६ जनवरीको देहलीके रईस लाला जग्गीमलजीके सभापतित्वमें हो गया। कई उपयोगी प्रस्ताव पास हुए।

पं० देवकीनन्दनजी आदि १२-१३ और सज्जन थे।

डेपुटेशनको निम्नलिखित स्थानोंसे इस प्रकार सहायता प्राप्त हुई:–

१५०४) परतवाड़ा, ४१०१) सुल्तानपुर
११०१) इलिचपुर १३९३) अंजनगांव सुर्जी
३८८९) कारंजा ११११) अमरावती
१७७८) नागपुर। कुल जोड़ ११८३७)

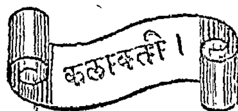
धर्मात्माओंकी भावनापूर्त्ति।

जिस प्रकार आरोग्यताके लिये शुद्ध अन्न और पवित्र जलकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्तिष्कके आनन्दोल्लासके लिये सात्विक आहार और पवित्र प्रभावपूर्ण स्थानकी आवश्यकता है तथा उसी प्रकार धार्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भावनापूर्त्तिके लिये **जिनालय–देवमन्दिर है।** ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही भावुकोंकी भावना तृप्त होती है इसीसे कहते हैं कि:—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी पवित्रता होती है।

पवित्र वस्तुएं यही हमारा मुद्रालेख है।

दशांग धूप रुपया ३) २), अगरबत्ती २) १), (बिना सींकवी, बारबंध २) रतल। कस्तूरी ११), ११॥) शुद्ध काश्मीरी नम्बर केशर १॥) १।=), विलायती अगर रुपया तोला २) रतल २) १) ॥) शुद्ध दिल सौत ॥) तोले, पांच तोलाका २) मोतीका सुरमा तोला ॥) ।



(लेखक-श्री हरकिशोर जैन, विजयगढ़)

१

जैन महिलारत्न सती कलावती देवशाल नामक नगरके सुप्रसिद्ध राजा विजयसेनकी पुत्री थी। वय क्रम १६ वर्ष अनुमान होगा। वह असामान्या सुन्दरी युवती थी। जो कोई उसे देखता मोहित हो जाता था; सच तो यह है कि जिन लोगोंके तृषित नेत्र युवती रमणीका रूप लावण्य देखनेको लालायित रहते हैं कलावती उन लोगोंकी आराध्य देवी थी। उसके सुकुमार शरीरकी अतुलनीय माधुरी देख धीर पुरुषोंका मन भी चलायमान होजाता था, उभरते हुए नवीन यौवनकी छटा उसके अङ्गरसे फटी पड़ती थी। निदान जैसी वह सुन्दरी थी वैसे ही कला कौशल्यने उसकी अनुपम रूप कलाको देख निरन्तर उसीमें वास किया था।

जिस प्रकार किसी सुचतुर चित्रकारकी लिखी तस्वीरके समान कलावतीका रूप लावण्य था उसी प्रकार वह चित्रकलामें अति निपुण थी। देवशालमें जितने मन्दिर थे सबमें ही उसके अंकित चित्र तथा मूर्त्तियां थीं।

माता पिता चाहते थे जैसी सुशिक्षिता कलावती रूप लावण्य तथा गुणमें अद्वितीय है वैसा ही वर लाभ हो; परन्तु बहुत ढूंढ खोज करनेपर भी किसी राजकुमारको न पा सके।

एक दिन मांने दुखितचित्त कलावतीसे कहा—"जैसी तू परम सुन्दरी है वैसा वर प्रकृतिने कदाचित् नहीं उत्पन्न किया!"

कलावती मुस्कराई—"माताजी, सौन्दर्यके दो प्रकरण हैं, एक आन्तरिक दूसरा बाह्यिक अर्थात् किसीका वक्षस्थल सुन्दर कान्तिमय है तो किसीका हृदय पवित्र, और किसीकी बुद्धि प्रखर है तो किसीकी सुठाम देह यष्टि। अस्तु। पहिले आप यह बतावें किसकी खोजमें हैं।"

दीर्घ निश्वास त्याग माताने कहा—"जामाता सर्वांग सुन्दर, मर्मवेत्ता जैननिष्ट हो एक मात्र यही आकांक्षा है।"

कलावती कहने लगी—" अङ्ग सौन्दर्य तो क्षणभंगुर है, हृदयकी पवित्रता वास्तवमें सुस्थिर है—एक बुद्धिमान होना ही श्रेयस्कर है; क्योंकि जिनमें बुद्धि है वे अपने शरीरको भी सुन्दर बना सकते हैं। श्री उनके चरणोंमें है, वीरशक्तिशाली हैं। और बुद्धवान नहीं है तो सर्वांग सुन्दर होनेपर भी उसका प्रभाव अवश्यमेव शरीरपर पड़ेगा, अशक्त दरिद्रताका प्रादुर्भाव होगा वरन् सांसारिक दुःखागारमें निर्बुद्धि-मूर्खता ही प्रधान है। 'रूपयोवनसंपन्ना विशालकुलसंभवाः। विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः॥' अस्तु मेरी सम्मतिसे बाह्य सौन्दर्य पर मुग्ध होना नितान्त भूल है।

यद्यपि माता शिक्षिता थी परन्तु कलावतीका उत्तर सुनकर उसे अनुताप हुआ। उसने सोचा कलावतीने युवावस्थामें पदार्पण किया है अतएव चाहती है जैसे हो शीघ्र विवाह होजावे।

बात क्या थी क्या समझी गई। वास्तवमें संसारमें ऐसे विरले ही हैं जो दूसरेके मनोभावको पूर्णतया समझनेमें समर्थ हैं वरन् प्रायः ऋषि मुनियोंके मौनावलम्बनका यही कारण विदित होता है।

मांको विपन्न देख कलावती कहने लगी–"माताजी, आप किस विचारमें निमग्न हैं? जिसने मुझे सृजा उसने मेरे योग्य वर भी अवश्य उत्पन्न किया होगा। प्रकृति पुरुषकी सम्पत्ति है और सम्पत्ति विना स्वामी रह नहीं सकती। प्राथमिक ही फलकी वांछा करना भारी भूल है; सब भवितव्यताके आधीन है "यदभावि न तद्भावि भाविचेन्न तदन्यथा। इति चिन्ताविषघ्नोऽयमगदः किं न पीयते॥" (कुछ सोचकर) माताजी, यह ध्यान रखना–मेरे चार प्रश्न हैं जो कोई उनका उचित उत्तर दे सके उसीके साथ मेरा विवाह हो अन्यथा....।

२

कलावतीका एक सहोदर भाई जयसेन था जिसकी असाधारण तेजस्विता बुद्धिमत्ता और दयालुतामें पराकाष्ठा देख प्रशंसा किये विना नहीं रहा जा सकता. बहिनके साथ उसका असीम स्नेह था।

एक दिन वह बड़े मन्दिरमें दर्शन कर रहा था कि सहसा एक भावुक पथिकने मन्दिरमें प्रवेश किया।

पथिक मन्दिरकी मनोज्ञ मूर्ति जो कलावतीके सुकोमल हाथोंकी गढ़ी हुई थी, बड़े ध्यानसे देखने लगा।

शिल्पकारी तथा कलाकौशलमें जैनी अधिक प्रवीण हैं। उनके स्वरचित मन्दिर देखने मात्रसे यह भलीभांति सिद्ध होजाता है कि उनके आविष्कारोंमें क्या विशेषत्व है। यद्यपि बौद्धोंके स्तूप भी शिक्षा-ग्रहण करने योग्य हैं परन्तु उनमें प्राचीन शिल्पनैपुण्य गुरुतर न मिलेगा। वरन् आधुनिक जैन मन्दिरोंमें जितना व्यय होता है अन्य जातियां कहीं बहुत पीछे हैं। काल दोष तथा अन्य कई कारणों वश जो भग्नावशेष मन्दिर देखनेमें आते हैं वे सब प्रायः जैनियोंके शिल्पचातुर्य–कलाकौशल्यके एक मात्र आधार हैं। आबू पर्वतका मन्दिर भारतवर्षमें ही नहीं वरन् संसार भरमें अपनी शैलीका आदर्श है। बहुतोंका मत है है भारतमें जो कुछ भी प्राचीन मन्दिर और उद्यान हैं वे सब जैनी और बौद्धोंके ही स्मारक हैं।

जयसेनने उस पथिकको मूर्ति देखनेमें अतिव्यस्त देखकर पूछा–"तुम इतने ध्यानके साथ क्या देख रहे हो?"

नवागत पथिकने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा–"इन मूर्तियोंके देखनेसे बोध होता है कि किसी बुद्धिमान् शिल्पकार द्वारा निर्माण हुई हैं जो मानसिक और काल्पनिक शक्तिमें अद्वितीय है, वास्तवमें उसकी विवेचना मनोज्ञ है।"

अभी पथिक अपना मनोभाव प्रकट नहीं कर सका था कि अनायास मन्दिरमेंसे निकलकर किसी विषधर-सर्पने जयसेनके पांवमें डस लिया।

विष अति तीव्र था। काटते ही जयसेन डगमगाकर धराशायी हो गया। शरीर शिथल हो गया, श्वासगति मन्द पड गई और देखते ही देखते प्राणवायु अस्थि पिंजरको परित्याग कर गई। मन्दिरके पुजारी अति व्याकुल हुए। अन्तःपुरमें राजा रानीने सुना तो अति विलाप करने लगे। थोडी देरमें राजकर्मचारियोंसे मन्दिर भर गया। असमयकी मृत्यु सुनके आर्तनाद एवम् मन्दिरकी प्रतिध्वनिसे ईंट ईंट रुदन करती प्रतिभासित होने लगी।

यह दृश्य देख पथिकने कहा—"घबराओ न, मैं अभी युवराजको सचेत किये देता हू।"

युवराजका शव बाहर लाया गया। दिन दोपहरका समय अश्रुपूर्ण नेत्रोंको फाड फाड देखनेसे निस्तब्ध अर्द्ध रात्रिसे अधिक भयावना प्रतीत होता था। पथिकके अतिरिक्त सब ही दुःखमें किं कर्तव्यविमूढ पाषाणवत खडे थे।

पथिकने अपनी झोली खोली। औषधि निकाल मर्मस्थान पर लगा दी, नीमके पत्तोंसे बयार झप करने लगा। १९–२० मिनटमें ही जयसेनने नेत्र खोल दिये, मानो घोर निद्रासे जागृत हुआ हो। चतुर्दिक् अनेक मनुष्योंको विस्मयसे देख कारण पूछने लगा।

जयसेनको प्राणदाता पथिकका समाचार मिला तो वह अति प्रसन्न हुआ। उसने पथिकको हृदयसे लगा लिया। वरन बड़े समारम्भसे राजप्रसादमें प्रविष्ट कर अति आदर सन्मानसे कई दिनों तक आतिथ्य सत्कार किया।

जयसेनने पथिककी कलावतीसे भेट कराई। कलावतीने देखा पथिक चित्र और मूर्ति निर्माणमें अति चतुर है वह अति प्रसन्न हुई उसने अनेक रहस्य चित्र विद्यामें शिक्षण किये।

पथिकका नाम दत्त था। वह शंखपुराधीश महाराज शंखका कोई प्रधान कर्मचारी था। वह चिरकालसे सुन्दरी युवतीका कोई चित्र बनानेकी अभिलाषासे भ्रमण कर रहा था। कलावतीको देखकर उसकी चिर वांछा सफलीभूत हो गई। शने २ उसने कलावतीका चित्र भली भांति अंकित कर लिया और तब राजा विजय-सेनसे पारतोषिक लाभकर स्वदेशको पयान किया।

२.

दत्त शंखपुर पहुंच गया। शंखने पूछा—"पृथिवीकी परिक्रमाकर तुमने क्या विचित्रता देखी?"

दत्तने दीर्घनिश्वास त्यागकर कहा—"मैं देवशाल गया था। पृथ्वीनाथ, क्या प्रशंसा करूं! राजा विजयसेनकी पुत्री स्वनामधन्या कलावती, मानो अप्सरा होकर पृथ्वी पर आई है। उसके पुनीत सौन्दर्यकी तुलना नहीं हो सकती। कतिपय राजा उसके लिये लालायित हो रहे हैं किन्तु सच तो यह है ऐसा रमणीरत्न चरा-चरमें बडे सौभाग्यसे मिलता है (दीर्घ निश्वास त्याग कर) और जैसी वह लावण्यवती है वैसे ही कलाकौशलमें भी अद्वितीय है।"

शंखने अवहेलना कर कहा—"दत्त! तुम कवि हो, कवियोंका सम्भाषण अलङ्काररहित नहीं होता। अस्तु, इसमें क्या प्रमाण है कि कलावती असामान्य सुन्दरी युवती है?"

दत्तने कलावतीका चित्र दिखा दिया। शंख देखतेही मुग्ध हो गया। कलावतीके रूप

सौन्दर्यका अधिकार शंखके हृदयपट पर अंकित हो गया, प्रेमान्धकारमें उसे कुछ सुझाई न देता था, विक्षिप्तकी नाँई कुछ काल तक चित्र देखनेमें स्थिर रहा, पुनः उत्तेजित हो कहने लगा–"यह किस बड़भागीकी पाणि-ग्रहीता है ?"

दत्तने कहा–"अभी कुमारी है। माता पिताने योग्य वर खोजनेकी अनेक चेष्टाएँ कीं परन्तु सब विफल मनोरथ। अन्तमें यह निश्चय किया है कि जो कोई कलावतीके चार प्रश्नोंका उत्तर देगा वही उसके अमूल्य करका भागी होगा।"

शंखने अति चिन्ता निमग्न हताश हो पूछा "क्या किसी प्रकार दर्शन हो सकते हैं ?"

दत्त बोला–"राजन्, देखियेगा क्या! प्रश्नोंका उत्तर देकर पाणिग्रहण कीजिये।"

शंखने दीर्घ निश्वास त्याग कर कहा–'यदि उत्तर न दे सका तो जीवनसे हाथ धोने पड़ेंगे।"

दत्तने कहा–"उपायेन हि यच्छक्यं–उपायसे सब कुछ हो सकता है।"

शंखने पूछा–"किस उपायका अवलम्बन करें ?"

दत्तने कहा–"तप कीजिये; क्योंकि विना तप मान मिलता है न प्रतिष्ठा, विद्या न ज्ञान; फिर ऐसी श्री–सर्व गुणसम्पन्न विना तप हस्तगत् नहीं हो सकती।"

शंखने आशान्वित दृष्टिसे दत्तकी ओर देखकर पूछा–"कौनसा तप करूं ?"

दत्तने कहा–"श्रीजिन–आदेशित ब्रह्मचर्य-व्रत पालन कीजिये। सरस्वतीकी आराधनासे आपका हृदय पवित्र होगा, बुद्धि निर्मल और अन्तःकरण शुद्ध हो जायगा। अतएव जब कलावती प्रश्न करेगी तो उसका प्रतिबिम्ब वाक्-देवीकी अनुग्रहसे आपके हृत्पिण्ड पर प्रदर्शित होगा और आप सुगमतासे उत्तर दे सकेंगे। तप परम पुरुषार्थ है अल्पज्ञ इसकी महिमा नहीं जानते।"

शंखने अनुमोदन कर कहा–"मैं अभी किसी जैन महात्मासे दीक्षा लेकर ब्रह्मचर्य व्रत धारण करूंगा।"

४

कलावतीका अभी विवाह नहीं। हुआ कोई उसके प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सका, निदान विजयसेनने स्वयम्वर द्वारा विवाह निश्चय किया है।

शंखको पूर्ण विश्वास था। दत्तके आश्वासन दिलानेपर देवशालकी ओर पयान किया। सम्भव है दत्तको प्रश्नोंका मर्म ज्ञात हो। अस्तु। उसने एक पिटारा बनाया जिसमें चार मूर्त्ति क्रमशः इस प्रकार स्थित कीं कि एकके उत्तर देनेके पश्चात् स्वयम् पिटारेसे दूसरी निकल आवे और उत्तर देकर अन्तर्ध्यान हो जावे।

देवशालमें रंगशाला सुसज्जित थी। कुर्सियों पर राजा महाराजा विराज रहे थे। श्रेणीबद्ध अनेक राजाओंके अंतिम पार्श्वमें एक ओर शंख भी जा बैठे। थोड़ी देरमें राजकुमारी कलावती जयमाल लिये रंगभूमिमें आई। उसने किसी ओर दृष्टि न की, केवल शंख और दत्तको देख कर मुस्करा गई।

प्रतिहारीने सबको सम्बोधन कर उच्च स्वरसे चारों प्रश्न कह सुनाए "१-देव क्या है? २-गुरु कौन है? ३-तत्व क्या हैं? ४-परमतत्व कौन है?"

अनेक राजाओंने अपने अनुभव और बुद्धि अनुसार उत्तर दिया परन्तु कोई उत्तर युक्तिसंगत न था। अतएव यही प्रश्न आगे २ प्रतिहारी कहता जाता था और पीछे २ जयमाल लिये रतिकी अनुहार कलावती नीची दृष्टि किये मन्द गतिसे शनैः २ चली जाती थी। जिस राजाके पाससे कलावती निकल जाती थी वह दीर्घ निश्वास त्याग कर रह जाता था।

अब सबको मौनावलम्बित देख प्रतिहारीने कहा-"जातीयताका कुछ विचार नहीं है, जैन मात्र राव हो अथवा रङ्क, उत्तर देकर सहज ही इस अमूल्य श्रीकरका भागी बन सकता है।"

क्रमशः इसी प्रकार कहते और कुछका कुछ उत्तर सुनते कलावती शंखके सन्मुख विद्यमान हुई। शंख पिटारा रंगभूमिके बीचोबीच रख कहने लगा-"कलावती स्वयम् अपने मुखसे प्रश्न कहे यह कलाका पिटारा स्वयमेव उत्तर देगा।"

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा परन्तु राजमहिषी श्रीमती और राना विजयसेनके आग्रहसे कलावतीने सभामें इस प्रकार प्रश्न कहना प्रारम्भ किया १-देव कौन है?"

पिटारेमेंसे निकलकर एक प्रतिमूर्त्तिने उत्तर दिया-"**अर्हन्त भगवान्**-" **सर्वज्ञो जितरागादिदोपस्त्रैलोक्य पूजितः। यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन परमेश्वरः॥**" अर्थात्-क्लेश उत्पन्न करनेवाला किसी प्रकारका कारण, और अशुभ प्रवृति बढ़ानेवाला मोह न हो, जिनकी महिमा तीनों लोकमें प्रख्यात हो, जो सर्वज्ञ और शाश्वत सुखका स्वामी हो, अष्ट प्रकारके क्लिष्ट कर्मोंसे रहित निर्मल (जीवन्मुक्त) और जो सब नीतियोंका रचयिता हो।"

पहिले प्रश्नके उत्तरसे सन्तुष्ट हो कलावतीने दूसरा प्रश्न किया:—

२-"**गुरु**-कौन है?"

पिटारेसे दूसरी पूतरी (प्रतिमूर्त्ति) ने निकल कर कहा-"**सिद्ध**-"

"महाव्रतधरा धीरा भैक्षमात्रोपजीविनः।
सामायिकस्था धर्मोपदेशका गुरवोमताः॥"

अर्थात् जो भिक्षा मात्रसे वृति करनेवाले, सामायिक व्रतमें सदैव रहकर अपने और दूसरोंके हितार्थ धर्मका उपदेश करते हुए निरन्तर पृथ्वीपर अन्य जीवोंके क्लेशको बचा करके विचरते हैं और धीर होकर महाव्रतोंको धारण करते हैं तथा-अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य, त्याग (निर्ममत्व)रूप पांचों महाव्रतोंका मन, वचन कायासे स्वयम् पालन करनेवाला, दूसरोंको कराने वाला और अन्य करनेवालेकी स्तुति करनेवाला ही गुरु है।"

उत्तर ठीक है प्रसन्न हो कलावतीने तीसरा प्रश्न कहा—

३-"**तत्व**-कौन हैं?"

पिटारेसे तीसरी प्रतिमूर्तिने निकलकर उत्तर दिया-

तत्व नौ हैं--१ जीवतत्व--इसका मुख्य लक्षण

चैतन्य है। संसारमें जीवस्थिति ६ प्रकारसे है।

२ अजीवतत्व—चैतन्यरहित वस्तु अजीव है। इसके ५ भेद हैं।

३ पुण्यतत्व—जिसके उदयसे जीवको सुख हो वह पुण्य है जो ९ प्रकारसे उत्पन्न होता है।

४ पापतत्व—जिसके उदयसे जीवको निरंतर दुःख हो। पाप मनुष्यको १८ प्रकारके बन्धनमें डालता है।

५ आश्रव तत्व—जिन कारणोंसे जीवके साथ पुण्य पापका सम्बन्ध होता है उन्हें आश्रव कहते हैं। इसके ९ रूप हैं।

६ संवरतत्व—जीवके साथ कर्मका सम्बन्ध न होने देनेवाले हेतुओंका नाम संवर है। इसके सब रूप ९७ हैं।

७ निर्जरा तत्व—जो कर्म जीवके साथ बंध गए हैं, जिनके कारण जीवको अनेक अवस्थाएं भोगनी पड़ती हैं उनका एक देश झड़ना सो निर्जरा है। यह १२ प्रकारके तप द्वारा साध्य है।

८ बन्धतत्व—मिथ्यात्व, अविरति और प्रमाद आदि आश्रवके रूपोंद्वारा ग्रहण किये गए कर्म पुदगलोंका आत्माके साथ (दूध जलके अभेद मेल समान) मेलका नाम बन्ध है। यह ४ प्रकारका है।

९ मोक्षतत्व—ज्ञानावरणीय आदि सभी कर्मोंका नाश होनेपर आत्मा जब निर्मल और शुद्ध हो जाता है अर्थात् जीव जब अपने मूल स्वरूपको प्राप्त हो जाता है तब उसे मुक्त कहते हैं।

यथोचित उत्तर पाकर कलावतीने चौथा अन्तिम प्रश्न कहा—

४ स्वतत्व—क्या है।

पिटारेसे चौथी मूर्तिने निकल कर उत्तर दिया।

"इन्द्रिय दमन—अहिंसा परमो धर्मः जिनका मूलाधार है।"

उत्तर पाकर राजकुमारी कलावती अति प्रसन्न हुई उसने नमित मुख लजाते हुए महाराज शंखके पास आ कंठमें जयमाल डाल दी।

अपूर्ण

क्या इशारा कर चले ?

किस लिए दुनियामें आए, क्या सहारा कर चले ।
धर्मको हलका किया, अधरमको भारा कर चले ॥
व्यर्थ जीवन खो दिया, लेकिन न देश और जातिका-
कुछ नहीं उद्धार कीया, पर बिगारा कर चले ॥
बो दिया है बीज ऐसा फूटका, पर घरमें सुख-
मेलसे रहने न पावें, सबको न्यारा कर चले ॥
तन मनमें भिन्नताई-ऐसी लाखोंकी करी ।
शील संयम नेम जप तप, सब किनारा कर चले ॥
मानो जीनेका जो यो पर, लग रहा है सिलसिला ।
सो नहीं टूटेगा हरगिज, ये नजारा कर चले ॥
धन्य जीवन है उसीका, और वो ही है गुणी ।
देशका और जातिका जो सुधारा कर चले ॥
जगतके माया जालमें फँस कर न लीनी कुछ खबर ।
रात दिनके सोनेमें हमें गुजारा कर चले ॥
किस लिए 'पन्ना' तुम्हारी याद फिर करने लगे ।
दरशकोंके लिए क्या तुम इशारा कर चले ?

भवदीय-
पन्नालाल जैन

जैनियोंमें उथल विवाह और समाजकी अधोगति।

वस्तुका स्वभाव परिवर्तनशील है जो बात आज सच्ची है उसको कल भी सच्ची ही होगी यह नही कह सकते। द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव इनकी अपेक्षा वस्तुका स्वभाव हर समय पलटता रहता है। हमारे पूर्वज किसी जमानेमें दैनिक एक मन अन्न खाते थे, मगर आज यदि कोई पुरुष इतना अन्न खानेकी चेष्टा करे तो उसको समाज मूर्ख ही बतलायगी। आज एक कुटुंबका पुरुष जिसके कि भाइयोंको खानेको भी नही मिलता है अपने बल द्वारा दूसरे भाईकी रोटी भी खा जानेका प्रयत्न करे या बलपूर्वक छीनले तो चाहे उससे डरनेवाले या उसकी श्लाघा करके कुछ पड़ा हुआ टुकड़ा खानेवाले भले ही प्रशसा करें लेकिन समाजकी दृष्टिसे, धर्मकी निगाहमे और मनुष्य जातिके कर्तव्यकी दृष्टिसे तो वह पुरुष निन्दनीय ही कहलायगा इसी 'दृष्टातको कुछ आगे बढाइये और देखिये कि यदि इस तरहसे करनेवाला उस कुटुंबका एक मुख्य पुरुष है एव सबका अनुकरणीय है तो उसका दृष्टात उसके छोटे भाईको और उससे तीसरेको लेते कुछ समय नही लगेगा और कमजोर और छोटे भाइयोंको इसके लिये नुकसान उठाना पडेगा। मतलब यह है कि उस कुटुम्बमें एक सभ्य और कायदेसर सचालन होनेके विरद्ध एक हुल्लडसा खडा हो जायगा और हरपुरुष अपनी मनमानीसी करनेको उद्यत होगा। कहा भी है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरे जना ।
स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

हमारे समाजमे कुछ समयसे कुछ नेतागण अपने २ पुनर्विवाह पर उतारू हुए हैं। हेतु इसका यह बतलाया जाता है कि किसीकी स्त्री बीमार है तो किसीकी स्त्रीसे बनता नहीं है और किसीकी स्त्री वृद्ध हो जानेसे उनके पतिके काबिल नही रही है। वाह रे हेतु! एक स्त्री तो बीमार है दूसरीको तो मुनीश्वरोंका वरदान है कि कभी बीमार होगी ही नहीं। एक स्त्रीसे बनती नहीं, दूसरीके हृदयका तो बीमा बिक चुका है कि कभी नाराज नहीं करेगी। एक स्त्री तो वृद्ध हो गई है परतु खुदका ठेका लिया जा चुका है कि कभी सफेद बाल आयगें ही नही। क्या यही कारण हमारी समाजकी उन्नतिके होंगे?

पाठको, मेरा इन समाजके नेताओंके प्रति किसी तरहका द्वेष नहीं है और न मैं इनको किसी तरहकी हीनदृष्टिसे देखता हू बल्कि बहुतसी बातोंके लिए ये बहुत ही आदरणीय और समाजके शुभचिंतक है परतु फिर भी यदि ये पुरुष कोई सामाजिक दृष्टिसे अयोग्य वर्ताव करें तो उनको सुझाना तथा ऐसे हठसे हटाना अपना परम कर्तव्य है। हमें यहा यह देखना चाहिए और बहुत ही शाति और गंभीर परिणामोंसे देखना चाहिये कि आया हमारे नेताओंका यह कर्तव्य इष्ट है या अनिष्ट। हम इस कर्तव्यको दो दृष्टियोंसे

देखते हैं, एक धार्मिक दृष्टिसे और दूसरी सामाजिक दृष्टिसे।

धार्मिक दृष्टिसे बहुतसे भाइयोंका मत है कि यह बात लाभकारी है क्योंकि यदि ये इस तरहसे अपना पुनर्विवाह नहीं करेंगे तो एक तरहसे व्यभिचारमें प्रवृत्त हो जावेंगे जो कि विशेष हानिकर होगा। क्या ही अच्छा हेतु है। परन्तु हमारे यहां यह कहां लिखा हुआ है कि केवल विषयोंकी तृप्ति ही विवाहका उद्देश्य है। विषयोंकी तृप्ति ही यदि इष्ट है तो इसके लिये एक दूसरे पुरुषको जिसके साथ विवाह होनेसे उसका धर्म और काम दोनोंका निर्वाह होता उसे स्त्रीसे वंचित रखना कहां तक ठीक समझा जा सक्ता है। विषयोंकी तृप्तिके लिए एक स्त्रीका सहधर्मिणिपना नष्ट करना कहां तक धार्मिक कर्तव्य कहा जा सक्ता है। और इसका भी तो क्या प्रमाण है कि दूसरी शादियां हो जानेसे ये लोग बिल्कुल पक्के ब्रह्मचारी ही बने रहेंगे।

दूसरे यदि सामाजिक दृष्टिसे देखें (यद्यपि इन दोनोंमें परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है) तो यह बात बहुत ही समाजको उथल पुथल करदेनेवाली मालूम होती है। हमारे समाजमें विधवा विवाहका जोर फैलनेसे ही बहुत ज्यादा भय हुआ है इसमें यह डबल शादियां करना एक तरह घीकी आहुति देना है। जिस समाजमें पहले ही इतने अविवाहित पुरुष विद्यमान हैं, जिस समाजमें पहले हीसे लड़कियोंके लिये हजारोंकी भेंट देनी पड़ती है उस समाजमें धनाढ्यों और जातिके अगुओंका डबल विवाह करना उन अविवाहित पुरुषोंको विधवा विवाहके लिये उत्तेजन देना नहीं तो और क्या है। क्या वे पुरुष नहीं हैं? क्या उनको धनाढ्यों की जैसी विषय वासना नहीं है? क्या वे संतानोत्पत्तिके लिये असमर्थ हैं? यदि नहीं तो फिर उनको अविवाहित अवस्थामें रखकर समाजकी एक कन्याको विषय तृप्तिके लिये उनसे छीन लेनेका धनवानोंको क्या अधिकार है? समाज उनके बलसे डरती है या उनके धनके लालचमें आगई है। इस वक्त तो समाज चुप बैठी है लेकिन जब किसी युवा पुरुषने और किसी तरहका प्रस्ताव निकाला तो समाज एकदम अन्याय अन्याय चिल्लाने लगेगी। कारण बगैर कार्य नहीं होता यह प्रसिद्ध है। क्या अन्यायके कारणोंको मिलाना अन्याय नहीं है? यदि नहीं है तो वह कार्य भी अन्याय नहीं है और लोग बहुत ही तंग हालतमें आनेसे उसका अवलंबन करेंगे।

समाज—जैनसमाजके वीरो, उठो और इन कारणोंको मिटानेका प्रयत्न करो, इन महानुभावोंको समझाओ, नहीं तो याद रखो तुम्हारे समाजमें भी शूद्र जातिके समान नाते और तलाकोंकी रस्में जारी हो जायगी। इन नेतावर्गोंके शब्दोंके साथ और इन महानुभावोंसे डबल शादियोंके विरुद्ध एक नम्र विनतीके साथ मैं यह लेख समाप्त करता हूं कि ईश्वर इनको सुबुद्धि दे।

वीर्य अथवा धातुक्षीण क्या है ?

***

पुरुषोंकी निर्बलताके अभियोगोंमें वीर्यका अभियोग प्रधान होता है। कुछ लोग वीर्यको धात अथवा धातु कहते हैं। आज कल भारतमें इस व्याधि (रोग)की प्रबलता विशेष देखी जाती है। सबसे ज्यादा धातुक्षीण और प्रमेहके रोगियोंकी संख्या हमारे औषधालयमें दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। इसका क्या कारण? धातु अथवा वीर्य क्या है? तरुण पुरुष कदाचित् समझते हैं कि शरीरमें किसी जगह वीर्यका तालाब भरा है। इस तालाबसे जितना चाहे वीर्यका उपयोग कर लिया जावे। वे ऐसा भी मानते दिखाई देते हैं कि यह तालाब खाली होगा तो शक्तिकी २–४ गोलियां खाकर फिर भर लिया जायगा और इच्छानुसार उसका उपयोग किया जायगा। यह उनके मनका भ्रम है। इस भ्रमको दूर करनेके लिये वीर्य क्या वस्तु है उसका यहां विचार किया जावेगा। वीर्यसम्बन्धी उपयोगी वर्णन वैद्य कल्पतरु तथा बृहन्निघण्टु रत्नाकर नामक वैद्य ग्रन्थोंमें अच्छी तरह किया गया है उसी परसे आज हम अपने प्रिय पाठकगणके सामने संक्षेपसे वर्णन करते हैं।

आप जो भोजन करते हैं पाचनद्वारा उस भोजनकी एकके बाद दूसरी ऐसे सात धातुएँ बनती हैं। यह बात समझने योग्य है। भोजन पकानेके लिये हमारे शरीर रूपी सांचेमें सात भिन्न भिन्न कोठे हैं। जो भोजन पेटमें जाता है वह एकके बाद दूसरे ऐसे सातों कोठोंमें होकर जाता है। अब इस बातको अधिक स्पष्ट शब्दोंमें समझावेंगे।

जो भोजन अपने मुंहमें चबाया जाता है वह आमाशयमें चुरता है और आंतोंमें पकनेको ठेला जाता है। उस भोजनका पहले श्वेत रस बनकर नाड़ियोंमें चढ़ता है। भोजनकी यह पहली क्रिया है। यह रस दूसरे कोठेमें अधिक पककर लाल रक्त बनता है। यह दूसरी क्रिया है। इस रक्त पर फिर तीसरे कोठेमें विशेष क्रिया होती है और रक्तसे मांस बनता है। यह तीसरी क्रिया है। मांससे मेद अर्थात् चर्बी बनती है। यह चौथी क्रिया है। चर्बीसे अस्थि अर्थात् हड्डी बनती है। यह पांचवीं क्रिया है। हड्डीसे मज्जा—हड्डीके भीतरका मावा बनता है। यह छठी क्रिया है। और इतनी सब क्रियाओं और समयके पश्चात मज्जासे वीर्य बनता है—यह बात तुम जानते हो। इस वीर्यका शरीरमें कोई कुवां तथा तालाब और कोई टांकी नहीं है कि जिससे जल्दीसे भर लें। सारे शरीरमें व्याप्त है। जैसे रक्त, मांस और हड्डी वीर्य अपनी बारीक बारीक नाड़ियोंसे निचुड़कर आता है। यदि बचतमें रहे तो थोड़े श्रमसे जितना चाहिये उतना वीर्य उपयोगमें लिया जा सके, किन्तु बचतमें न हो तो वीर्यकी नाड़ियोंको निचोड़नेमें भारी श्रम होता है। वीर्यको बचतमें रखनेका नाम ब्रह्मचर्य है।

किन्तु वीर्यके सम्बन्धमें एक बात और भी समझने योग्य है। वह यह कि जैसे रसोईकी क्रियामें पाक बिगड़ जाता तथा सड़ जाता और खराब हो जाता है वैसे ही शरीरकी इस प्रयोगशालामें भोजनका जिस तरहका मसाला काममें लाया जाता है उसी तरहका पाक तयार होता है और अंतमें वीर्य भी वैसे ही गुणवाला होता है। सुन्दर और सात्विक उत्तम उत्तम भोजनका वीर्य उत्तम और शुद्ध बनता है। और बिगड़े हुए अथवा तामसी भोजन अथवा व्यसनकी खराब चीजोंका वीर्य खराब बनता है। जैसा भोजन वैसा वीर्य। यह बात अवश्य ध्यानमें रखने योग्य है। जैसे रक्त शुद्ध होनेकी जरूरत है वैसे ही वीर्य भी शुद्ध होना चाहिये। जब रक्त बिगड़ता है तब वीर्य भी बिगड़ता है, वीर्य कम होता है और निर्बल बनता है अर्थात् पतला होता है। इतना ही नहीं किन्तु वह बिगड़ता है यह बात बहुत लोग नहीं समझते। जैसी रक्तकी परीक्षा है वैसी ही वीर्यकी भी परीक्षा है। जैसा रक्त काला पड़ता और उससे दुर्गंध आती है वैसे ही वीर्यमें भी होता है। वीर्यके लिये शिकायत करनेवाले और दवाओंके लिये हाय हाय करनेवाले क्या इन सब बातोंका विचार अथवा परिशोध करते हैं? कभी नहीं।

क्या? इत्यादि विषयोंमें अनजान लोग भारी भ्रान्ति तथा भूलमें रहते हैं; इसलिये उसका भी थोड़ा विचार कीजिये।

जैसे दस्तका जुलाब लेनेसे दस्त होता है और पेशाबका जुलाब लेनेसे पेशाब अधिक होता है इसी तरह वीर्यको भी एक प्रकारका जुलाब लगता है। उससे वीर्य शरीरसे खिंच आता है। यदि एकाधिक जुलाब लीजिये अथवा हल्का जुलाब लीजिये तो सिर्फ आंतोंका मल निकल जाता है। किन्तु यदि जमालगोटा जैसा कड़ा जुलाब हो तो आंतोंके सिवाय शरीरकी नाड़ियोंमेंसे रसको भी खींच निकालता है और उससे शरीर निर्बल पड़ जाता है। इसी तरह वीर्यके जुलाबको समझो। अच्छा, तो वीर्यका जुलाब क्या और वीर्यको जुलाब किस तरह लगता है? पुरुषको स्त्री वीर्यके जुलाबकी वस्तु है अर्थात् पुरुषके मनमें स्त्री सम्बन्धी संकल्प, स्त्रीका स्मरण, स्त्रीका स्पर्श और स्त्रीका आलिंगन इत्यादि शरीर और मनकी चेष्टाएं पुरुषके वीर्यको उत्तेजित करती हैं अर्थात् वीर्य बाहर आनेका प्रयास करता है। उसीका नाम वीर्यका जुलाब है। वास्तविक रीतिसे देखिये तो मनही वीर्यको उत्तेजित करनेवाली वस्तु है और उसीसे स्त्री सम्बन्धी इच्छा अर्थात् 'काम' को 'मनोज' नाम दिया गया है।

जुलाब लेनेसे शरीर बहुत ही निर्बल हो जाता है। इसी तरह निर्बल शरीरसे वीर्यका जुलाब हुआ करे अर्थात वीर्यका उपयोग बारबार हो अथवा दूसरी रीतिसे वीर्य बाहर जाय तो उससे भी शरीर बहुत कमजोर हो जाता है बल्कि जुलाब कड़ा लगनेसे उसके परिणाममें मरोड़ हो जाती है, रक्त पित आदि गिरते और पीड़ाके साथ गिरते हैं। ऐसा अनुभव कड़ा जुलाब लेनेवालेको हुआ हीहोगा। वीर्यको जब ज्यादा जुलाब लगता है तब भी इसी तरह होता है। अधिक रेचकसे मल निकल जानेपर पीव और रक्त गिरने लगता है अर्थात आंतोंसे खून निकलना शुरू होता है और पेटमें मरोड़ होती है इसी प्रकार वीर्यको अधिक जुलाब लगनेसे वीर्य खतम हो जानेपर यदि वीर्यका जुलाब लगता रहे अर्थात् मन वशमें न रहकर वीर्यके उपयोग करनेकी मूर्खता चलती रहे तो वीर्य समाप्त हो जाते ही उसके पीछे वीर्यके बदले रक्त भी गिरता है और जैसे मरोड़में पीड़ा होती है वैसे ही इसमें पीटके ऊपरी भाग और रीढ़की नसें खिचतीं और सारे शरीरकी नसोंका एकदम पीड़ाके साथ खिचाव होकर पीछे शरीर बिलकुल शिथिल पड़ जाता है। वीर्य सम्बन्धी बहुत जुलाब लेनेवालोंको अर्थात अतिविषयी निर्बल पुरुषोंको इस बातका अनुभव अवश्य होना ही चाहिये।

इस तरह पुरुषका वीर्य स्त्री सम्बन्धी विचारोंसे उत्तेजित होता और बाहर जाता है। अतः स्त्रियोंको वीर्यका जुलाब कहें तो कहा जा सकता है। किंतु उनका सब आधार पुरुषके मनोबल पर है। दृढ़ मनवाले पुरुष अथवा मजबूत वीर्यवाले पुरुष कदापि एकदम उत्तेजित नहीं होते हैं और उनके वीर्यको जल्दी जुलाब नहीं लगता। इससे विपरीत निर्बल मनवाला पुरुष अथवा निर्बल व कम वीर्यवाला पुरुष जल्दी उत्तेजित हो जाता है, जल्दी कामी बनता है और जल्दी वीर्यका जुलाब लगता है। स्त्री सम्बन्धी विचार करते अथवा स्त्रीके साथ बातें करते करते शरीरसे वीर्य निचुड़ कर बाहर निकल जाता है उसीका नाम वीर्यका जुलाब है और जो जुलाब अधिक लगा अथवा बारबार लगता रहा वह पानी जैसा होता है। इस तरह बहुत कामी पुरुषको बारबार वीर्यका जुलाब लगता है वह जुलाब बहुत पतला होता है। और उसीसे अधिक निर्बल और बहुविषयी लोग शिकायत करते हैं कि हमारा वीर्य पानी जैसा पतला पड़ गया है। किन्तु वीर्यसम्बंधी इस जुलाबमें दूसरी एक विशेष बात भी ध्यानमें रखनी है। वह यह कि बहुवीर्यवाले शरीरसे थोड़े ही श्रमसे बहुत वीर्य खिंच आता है। और थोड़े वीर्यवाले शरीरसे अधिक श्रमसे भी थोड़ा वीर्य आता है।

युवा पुरुषोंमें वीर्यके सम्बन्धमें जो जो शिकायतें देखनेमें आती हैं उनमेंसे एक शिकायत उनकी भारी चिन्ताका कारण बनी हुई देखनेमें आती है। वह शिकायत यह है कि उनके वीर्यको जल्दी जुलाब लग जाता है। वे ऐसा मानते हुए जान पड़ते हैं कि जुलाब लेनेपर यदि वीर्यको जुलाब लगते विलम्ब लगे तो बहुत ठीक और यही पुरुषत्व है। जुलाब

जल्दी लगे उसे वे वास्तविक पुरुषत्व नहीं मानते । वैद्यशास्त्र तो कहता है कि बलका क्षय हुए विना जल्दी जुलाब लग जाय उसीका नाम वास्तविक पुरुषत्व । और जुलाब लगते विलम्ब लगनेके साथ अधिक परिश्रम पड़े और अन्तमें बलका भी क्षय हो उसका नाम न्यून पुरुषत्व अथवा निर्बलता है। निरोगी शरीरवालेको अरंडी (कैस्टल ऑइल) आदिका सादा जुलाब भी जल्दी लगता है और रोगी शरीरवालेको कड़ा जुलाब भी बराबर नहीं लगता । इस स्वाभाविक प्रमाणसे तो वीर्यको जुलाब जल्दी लगना ही सच्चा पुरुषत्व है परन्तु जुलाब लिये विना बराबर पाखाने जाना जैसे रोग है वैसे ही वीर्यके किसी विकारोंसे बराबर जुलाब लगा करे तो यह वीर्य सम्बन्धी रोग है। इस प्रकार वीर्यको जुलाब लगा करे तो यह कोई पुरुषत्व नहीं है।

वीर्य सम्बन्धी इतनी बातें जाननेके बाद अब हमारे भोजनसे वीर्य कितना बनता है और उस वीर्यसे खर्च कितना करना चाहिये इस विषयका हिसाब करना चाहिये ।

विद्वानोंने अनुभव और अनुमानसे ऐसा खोज किया है कि ८० रतल भोजनसे २ रतल रक्त बनता है और २ रतल रक्तसे २॥ तोला वीर्य बनता है। इस हिसाबसे ८० रतल भोजन जितने समयमें खाया जाय उतने समयमें सिर्फ २॥ तोला नया वीर्य शरीरमें बनता है एक दूसरा औसत ऐसा जाननेमें आया है कि जो तन्दुरस्त और [illegible] पुरुष [illegible] नियम [illegible] [illegible] वीर्यका उपयोग करता है उसके शरीरसे वीर्यका जुलाब एक ही समय २ से २॥ तोला निकलता है। इन दोनों हिसाबोंका सार यह है कि २ मन भोजनका सत्व (वीर्य) एक समयके जुलाबके साथ निकल जाता है। स्वस्थ तरुण पुरुष प्रतिदिन औसत १॥ से २ रतल भोजन खावे तो ४० दिनमें २ मन भोजन खाय अर्थात् उपरोक्त हिसाबके साथ मिलान करनेसे ४० दिनोंमें उसके शरीरमें २॥ तोला वीर्य जमा होता है। इस सब हिसाबका सार यह निकला कि स्वस्थ पुरुष भी ४० दिनोंके बाद वीर्यका उपयोग करे तो शरीरमें वीर्य सम्बन्धी आय व्ययका खाता बराबर हो। यदि इससे कम समयमें वीर्यका खर्च हुआ करे तो बुरा हो और अन्तमें दिवाला निकले। बहुतसे लोग जो वीर्य सम्बन्धी इस आय व्ययका विचार नहीं करते वे बहुत कालके नादिहंद अर्थात् दिवालियेकी स्थितिमें होते हैं। परितापका विषय तो यह है कि लोग अपनी कमाई और पैसेके खर्चका नित्य हिसाब करते हैं और कतरब्योंत कर पैसेका बचाव भी करते हैं परन्तु जिस वीर्य पर शरीरके जीवन और सब तरहके सुखोंका दारमदार है अफसोस है उस वीर्यके आय व्ययका कुछ भी विचार नहीं करते।

पुरुषमें वीर्य परिपक्व कब होता है अर्थात् कितने वर्षमें वीर्य परिपूर्ण बनता है यह बात भी यहां कहे विना न बनेगी; क्योंकि वीर्य सम्बन्धी निर्बलताकी भारी शिकायतें अपक्व वीर्यका असमय उपयोग करनेसे जगह [illegible] बनी हुई देखनेमें आती हैं। वैद्यक शास्त्र पुकार पुकारकर कहता है कि पुरुषका शरीर २५ वर्षकी वयमें संपूर्ण

खिल जाता है यदि किसीको संदेह हो कि उस उमरके पूर्व तरुण लड़के संसारमें पड़ते हैं और उनके वीर्यसे लड़का भी पैदा होता है इसका क्या कारण ? इस प्रश्नका खुलासा यह है कि पुरुषमें वीर्यका बीज तो बाल्यावस्थासे ही होता है और १६ से २० वर्ष तक यह वीर्य परिपक्व होने लगता है। ऐसे अपक्व वीर्यसे जो सन्तान पैदा होती है वह निर्बल होती है और वर्तमानमें छोटे बच्चोंके निर्बल होनेसे उनकी मृत्यु संख्या भी बहुत बड़ी होती है उसका यही कारण है, इतनाही नहीं परन्तु ऐसे अपक्व वीर्यसे उत्पन्न हुआ बालक यदि मोटा ताजा भी हो और अधिक जीता हो तो भी उस प्रमाणमें अधिक निर्बल होता है और साधारण कारणोंसे बीमार पड जाता है। परिपक्व वीर्यसे जनित बालककी स्थिति प्रमाणमें अत्युन्नत होती है।

युवा पुरुषमें १६ वर्षकी उमरसे वीर्य प्रगट होने लगता है किन्तु वह गुलाबकी कच्ची कलीके समान है उसमें सुगन्ध तो होती ही है किन्तु यह सुगन्ध बहुत प्रकट नहीं होती। जब कली पककर खिलती है तभी उसकी सुगन्ध प्रकट होती है। इस कलीको पकनेके पूर्व तोड़कर उसकी बिना इच्छा ही पकाओ तो उसकी पखुड़ियां कुछ खिलकर उसका छोटा आकार बनेगा परन्तु गुलाबके पेड़ पर रह कर जैसी खिलती फूलती वैसी वह कभी भी नहीं खिलती। इसलिये तरुण बालकोंकी १६ वर्षकी आयुमें अपरिपक्व वीर्यभंग हो तो इससे भारी हानिके सिवाय और कोई लाभ नहीं। तरुण लड़कोंके शरीरकी बनावट और उनकी सब धातुएं १६ से २५ वर्षके आयु तक संपूर्ण हो जाती हैं। उनमें जितनी शीघ्रता होती है उतनी कचाई रह जाती है। स्त्रियां १६ से २० वर्षकी उमर तक पूर्ण रूपसे तरुणाई अर्थात् स्त्रीत्वमें आती हैं। इस प्रमाणमें स्त्री पुरुष संपूर्ण शरीर विकसित होनेके और पूर्ण वयमें आनेके पश्चात् ही संसारमें पड़ें ऐसा वैद्यक शास्त्रका भी मत है। वैद्यक शास्त्रोंकी इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे ही अपने भारत वर्षमें निर्बलता धातुक्षीण प्रमेह आदि २ रोगोंकी प्रबलता अधिक बढ़ गई है। और असली कारणोंको न जान कर और अपनी भूलको न सोच कर शक्तिकी गोलियां तथा दवाइयोंकी खोज करते फिरते हैं।

पंडितराव वैद्य जैनी।
दा० बी० रा० ब० सर हुकमचंदजी
पारमार्थिक औषधालय–इन्दौर

***

पुरुषार्थ।

बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ।
जपे निशदिन जो इसको होंय सिद्ध सकल पदार्थ॥
रहते हैं जो भाग्य–अधीन।
शीघ्र हो जाते तेरह तीन॥
मर जाते वे यों ही करते हाय २ स्वार्थ॥
पूर्ण न होती कोई आशा।
करें न जो पुरुषार्थ भरोसा॥
समझो पुरुषार्थ ही को सदा स्वर्गीय पदार्थ॥
बनाकर अपनी उच्च आशा।
फेंको पुरुषार्थका पाशा॥
होगी विजय तुम्हारी, जीवन होगा पर–स्वार्थ॥
हुए पूज्य अरु प्रातःस्मरणीय।
जपकर मंत्र यही रमणीय॥
करना है यदि कुछ कार्य लोकार्थ तथा परमार्थ॥
बनाओ मूलमंत्र पुरुषार्थ।

'निर्भय'

महाविद्यालय मथुराकी कुछ बातें।

***

पाठको, आपको यह बात भली प्रकार विदित होगी कि किसी कार्यकी उन्नति अवनति, उसके कर्त्ताओंकी योग्यता एवं अयोग्यता पर निर्भर रहती है; जो कार्य किसी अयोग्य पुरुषके हाथमें होता है वह हज़ार प्रयत्न करनेपर भी उन्नति नहीं कर सकता और जो कार्य किसी योग्य पुरुषके तत्वावधानमें होता है वह बहुत शीघ्र उन्नति कर जाता है। कुछ दिन पहिले जिस जैनगज़टके केवल ३००-४०० ग्राहक थे उसीके आज १००० ग्राहक हैं, जिस जैनगज़टके किसी समय साप्ताहिक होने पर भी महीनों दर्शन नहीं होते थे आज उसीका नियमित रूपसे प्रत्येक सोमवारको प्रकाशित हो जाना अवश्यमेव कार्यकर्ताओंकी कर्तव्यपरायणता और योग्यताका परिचायक है। जिस समय अजमेर निवासी सुयोग्य पंडित श्रीलालजी इसके सम्पादक थे उस समय भी जैनगज़ट साप्ताहिक होते हुए मासिक था। और ग्राहक भी ३००-४०० से अधिक न थे। हम यह नहीं कहते कि उनमें पत्र सम्पादनकी योग्यता नहीं, पर इस कार्यको शायद विशेष महत्वका न समझनेके कारण ही ऐसा करते होंगे या और कोई कारण हो उसे ईश्वर ही जाने। अतः पाठकोंको यह विदित हो गया कि पंडितजी जैनगज़टको उन्नतिके द्वार पर नहीं पहुंचा सके थे।

अब पंडितजीके हाथमें महाविद्यालय मथुराका कार्य है—यानी वे उसके प्रिंसिपल—अधिष्ठाता हैं; किन्तु हमको उनके अधिष्ठातृत्वमें भी विद्यालयमें कुछ परिवर्तन नहीं मालूम होता है और यही कहना पड़ता है कि 'वही चाल बेढंगी जो पहिले थी सो अब भी है,। हमको यह मालूम है कि पंडितजी विद्यालयमें हर समय नहीं रहते परन्तु उनका यह तो कर्तव्य है कि वहांके कार्यकर्त्ता योग्य रखें। सबसे पहिले किसी संस्थामें उसका सुपरिन्टेन्डेन्ट योग्य होना आवश्यक है; परन्तु हमको मालूम है कि महाविद्यालयके वर्त्तमान सुपरिन्टेन्डेन्ट बाबू रामकृष्ण योग्य नहीं हैं, न वे समाजको जानते हैं, न समाज उनको जानती है। हिसाब किताब भी ठीक रखना नहीं जानते, यात्रियोंसे मिलते नहीं, छात्रोंकी भी देखरेख नहीं, रखते, इन्हीं त्रुटियोंके कारण वे हस्तिनापुर आश्रममें न रहसके। जैनगज़ट घरका पत्र होनेपर भी विद्यालयका मासिक हिसाब नहीं छपता विद्यालयमें अध्यापकगणभी नियमित तौरसे नहीं रखे जाते। किसी २ विषयके तो अध्यापक एक २ दो २ वर्षतक नियमित नहीं किये जाते। यह बड़े दुःखकी बात है कि भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महाविद्यालयमें जितने अध्यापक हैं उतने विद्यार्थी भी नहीं हैं। यानी नाम महाविद्यालय और छात्र केवल १५-२० हैं। ऐसी अवस्थामें महाविद्यालयको काशीके स्या. म. विद्यालयमें मिला देनेसे कोई

हानि नहीं। ऐसा न करनेसे वही मसल होगी 'नकटा जिये बुरे हवाल'। पं. श्रीलालजी एवं मुंशी मूलचन्दजी ऐसा करनेसे अपने स्वतंत्र अधिष्ठातृत्व एवं मंत्रित्वकी रक्षा और मथुराकी शोभा भले ही बढ़ाते रहें परन्तु उनके इस कार्यसे समाजकी रक्षा एवं शोभा होती दृष्टिगोचर नहीं होती। हम तो यही जोरकी आवाजसे कहेंगे कि या तो मथुरा विद्यालयकी दशा सुधारी जाय या उसको बहुत शीघ्र काशीके स्या. म. विद्यालय में मिला दिया जाय। हम इस ओर इन्दौरके दानवीर सर सेठ हुकमचन्दजीका ध्यान विशेष आकर्षित करते हैं क्योंकि आप स्या. महाविद्यालय काशी एवं महासभा दोनोंके सभापति हैं इस कारण आपका इस विषयमें हस्तक्षेप करना बहुत ही आवश्यक है अन्यथा आप जैसे महापुरुषोंके सभापतित्वमें इस विद्यालयकी ऐसी दुर्दशा कभी शोभा नहीं दे सकती। आपका कर्त्तव्य है कि विद्यालयकी दशा सुधारें या उसको काशीके विद्यालयमें मिला दें क्योंकि दोनों विद्यालयोंके एक ही उद्देश्य हैं। तब आपके सभापतित्वमें दोनोंकी उद्देश्योंकी रक्षा होना कोई कठिन बात नहीं, आशा है सेठ साहब इस ओर ध्यान देंगे।

हम एक बात पर और कुछ कह देना आवश्यक समझते हैं। वह यह है कि कुछ दिन पहिले काशीके स्या० म० विद्यालयके मंत्री बाबू सुमतिलालजीने एक चिट्ठी मुंशी मूलचन्दजी मंत्री महाविद्यालय मथुराके नाम जैनमित्रमें इस आशयकी छपाई थी कि दोनों विद्यालयोंको एक कर देनेमें आपकी क्या सम्मति है। उसका जो उत्तर जैनगजटमें छपा है। उसे देखकर मुझे एकदम अवाक् रह जाना पड़ा। मुंशीजी कहते हैं कि महाविद्यालय मथुराका रुपया धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः स्या० म० वि० में नहीं मिलाया जा सकता। उनके इस कथनका यही अभिप्राय निकलता है कि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती। देखा पाठको, समाजकी आखोंमें कैसी धूल डाली जाती है। क्या मुंशीजीको, नहीं मालूम है कि स्या० म० वि०से ही शिक्षाप्राप्त पं० माणिकचंदजी न्यायाचार्य, पं० मंगलजी धर्माध्यापक आपके विद्यालयमें रह चुके हैं और वर्त्तमानमें भी पं० उमरावसिंहजी न्यायतीर्थ उसी विद्यालयसे शिक्षाप्राप्त धर्माध्यापक हैं। यदि मुंशीजीका केवल यह कारण अर्थात् काशीके विद्यालयमें धर्मशिक्षा नहीं दी जाती है इसलिये मथुरा विद्यालय उसमें नहीं मिलाया जा सकता-बिल्कुल पोच है। और मुंशीजीका यह भय कि हमारा विद्यालय स्या० म० विद्यालयमें मिला देनेसे उसका रुपया अधार्मिक शिक्षामें खर्च होगा बिल्कुल व्यर्थ है। जहां तक मेरा ख्याल है दोनों विद्यालय मिलकर समाजकी उन्नति बहुत शीघ्र कर सकते हैं। मुंशीजी या अन्य कार्यकर्त्ता यदि ऐसा नहीं करते हैं और विद्यालयकी यों ही छीछालेदर करना चाहते हैं तो वह सिवाय दुराग्रहके और कुछ नहीं है।

बनारसके हिन्दूकालेजका एक विभाग रणवीर संस्कृत पाठशाला है। उसमेंसे अच्छे २ संस्कृतके विद्वान निकलते हैं और उसके उद्देश्यमें

कोई बाधा नहीं आती। उसी प्रकार उक्त दोनों विद्यालय मिल कर केवल दि० जैन कालिजके संस्कृत विभाग कहलायें तो उसमें कोई श्रुत न लग जायगी और जिस प्रकार इस समय उनमें धार्मिक शिक्षाके साथ २ संस्कृतकी शिक्षा होती है वैसी शिक्षा कालिजके एक विभाग हो जाने पर भी हो सकती है, इसमें कोई बाधा नहीं आती।

तात्पर्य यह है कि महाविद्यालय मथुराका कार्य वर्त्तमानमें जैसा चल रहा है उसको देखते हुए विद्यालयको स्या० म० वि० काशीमें मिला देना ही उपयुक्त है। मथुरा महाविद्यालयके कार्यकर्त्ताओं-का यह कहना कि इस विद्यालयका द्रव्य धार्मिक शिक्षाके लिये है अतः काशीके विद्यालयमें नहीं मिलाया जा सकता बिलकुल युक्तिशून्य है क्योंकि काशीके विद्यालयमें धार्मिक शिक्षा दी जाती है यह समाज अच्छी तरह जानती है। इसके अतिरिक्त समाजमें एक कालिजकी आव-श्यकता देखते हुए यदि महाविद्यालयका कार्य अच्छी तरह चलता हो तब भी काशी और मथुराके विद्यालयोंको एक करके उसको स्याद्वाद दि० जैन कालिजका संस्कृत विभाग बना देना भी योग्य है। १२॥ लाख जैनियोंके होते हुए एवं करोड़ाधिपतियोंके होते हुए एक जैन कालिजका न होना जैन समाजके लिये लज्जाकी बात है। इस समय कालिजकी आवश्यकताको कोई दूर-दर्शी अस्वीकार नहीं कर सकता। कालिजका संस्कृत विभाग बन जानेसे अंग्रेजीका विभाग खोलनेमें कार्यकर्त्ताओंको बहुत सुगमता हो जायगी।

अन्तमें हमारा मुन्शी मूलचन्दजी, पं० श्रीलाल-जीसे नम्र निवेदन है कि समाजके हितकी दृष्टिसे विद्यालयका कार्य योग्य रीतिसे चलावें अन्यथा उसे स्या० म० वि० में मिला देनेमें विलम्ब न करें। हम दानवीर सर सेठ हुकमचं-दजीसे भी फिर बिना कहे न रहेंगे कि आपका नाम भारतवर्षमें ही नहीं संसारमें प्रख्यात हो रहा है, जैन समाजकी उन्नति देखनेके इच्छुक हैं एवं भारतवर्षीय दि० जैन महासभा और स्याद्वाद दिगम्बर जैन महाविद्यालय काशीके सभापति हैं—आपके नेतृत्वमें मथुरा विद्यालयकी दुर्दशा एवं दिगम्बर जैन कालिजके संस्कृत विभाग बननेमें बाधा पड़ना कभी भी उत्तम नहीं कहा जा सकता है अतएव इसकी शीघ्र व्यवस्था कीजिये। महास-भाका अधिवेशन कोटामें शीघ्र होनेवाला है। आपको चाहिये उसमें स्वयं पधारकर इस माम-लेको साफ करें और उन्नतिके मार्ग पर जैन समाजको एक कदम आगे बढ़ानेमें सहायता दें।

हम यह भी कह देना उचित समझते हैं कि यह लेख किसी द्वेष बुद्धिके कारण नहीं लिखा गया है बल्कि समाजकी हितकी दृष्टिसे ही लिखा गया है।

सत्यवक्ता।

किल्कीकंभळ-चिंतामणी.

सदुपदेशरूप संवाद.

લેખકઃ-પાગલ. ધુલીઆ.

ચિંતામણીઃ—મંગળ!! તજદે! તજદે!! આ બાહ્યિક સૌંદર્ય પર વધતા જતા મોહને; અરે! લાલસારૂપ પ્રેમને!! આ હાડ માંસાદિથી મઢેલા-ચર્મરૂપ સૌંદર્યને તજદે!• મારાં આ અસત્યતાથી ભરેલાં દેહ પુત્ના વિચારોને-અરે! તારા હૃદયમાં વિષયરૂપ કુબ્જેપણાને આ ચાલતી ક્ષણથી તિલાંજલી દે! આ દુષ્ટ મોહ-જાળને આ સેકંડે કાપી નાખ! તેના સુક્ષ્મમાં સુક્ષ્મ! અણુ અણુ જેટલા તુકડા કાપી ફેંકી દે! આ મારૂં બાહ્યિક સૌંદર્ય નાશ પામનારૂં અને મૃત્યુ થકી રાખ થઇ ઉડનારૂં દેહ તારાં અરે! વારાં દુષ્ટપણામાં-દુષ્કૃત્યોમાં વધારોકરાવનારૂં નીવડી તારી અવસ્થા અધમ-અરે-નીચ ગતી કરાવશે! સૌંદર્ય સાથે દેહનો વિનાશ અને દેહનાશ સાથ સૌંદર્યનો નિશ્ચયથી વિનાશ થવાનો છે, આ આવશ્ય— નિશ્ચયરૂપ જગતની ક્રિયાથી-કોણ છુટયું છે? આ જગતની ચાલતી જન્મ-મર્ણરૂપ ક્રિયાથી છુટવા-આ કામીની-અરે-કામીની ખરી પણ તેમાં નીચ વેષ્યા પરના મોહને તજી દે! તજીને જન્મ-મર્ણ રૂપ દુઃખો દૂર કરવા પ્રભુને! આહા! પરમાત્માને ભજ! પ્રભુની ભક્તિ કર! તારૂં અંતઃકરણ શુદ્ધ કર! શુદ્ધ કર!!

બિરૂ મંગળઃ-શું શુદ્ધ કરૂં? અંતઃકરણ! અંતઃકરણ તો તારાંમાંજ છે તે! તારા શિવાયની તારા રૂપ સ્વરૂપ શિવાયની મારી દૃષ્ટીયે અન્ય ચીજ નથી ચડતી! તારાં શિત્રમાં મસ્ત બનેલો! તારાં પ્રેમના પ્યાલા પી-પીને સુગ્ધ થયેલો હું શું શુદ્ધ કરૂં? શુદ્ધ કે અશુદ્ધ શું સમજી શકું? કાંઇ પણ નહી! લેશ માત્ર નહી!! પ્રિયે! આહ! મારી નેત્ર ચિંતામણી આમ કેમ ઉદાશ થઇ-ગાંડાપણાનું બોલી મને તરછોડે છે.?

ચિંતામણીઃ—આ તરછોડવું નથી, પણ તારાં મનને નિત્ય શાંત બનાવવા માટેનો આ પ્રયત્ન છે. અને આ જગતના નીચ ફંદામાંથી ઉગારી શાંતીના નિર્મળ પવિત્ર સ્થાન પ્રત્યે દોરી જવાનો દારૂણ પ્રયત્ન છે. આ નિષ્ટામય શરીર ઉપરથી તને-અરે— તારા—આ વિષયરૂપ માર્ગો પ્રત્યે ગમન કરનારા મનને—રે! રે!! આ તારા સંસાર શક્તિના સમુદ્રના તુફાનને શાંત બનાવવા મારાના ઊદ્ગારો છે. મંગળ! મંગળ!! વિચાર કર! વિચાર કર!! તારો મારા પર જેટલો પ્રેમ-તેથી વિશેષ મારો નહતો? હતોજ? હજુયે છે! પણ તે હવે જુદીજ દૃષ્ટીનો! જુદાજ ભાવનો! વદન જુદાજ વિચારોના પ્રવાહમાં ફેરવાયલો છે! મે! મારો; અરે! આ મારો ખોટો પ્રેમ-જગતની જાળમાં ફસાવનારો પ્રેમ! આ જગતમાંજ ડુબાડનારો પ્રેમ! અરે! પ્રત્યક્ષ વિષય-રૂપ-નરકમાં તળીયે ડૂબાડનારો પ્રેમ! આ નરક-વિષ્ટરૂપ તારાં-મારા દેહાદિપરથી-દેહાદિ સૌંદર્યપરથી ખેંચી લક્ષ સાવધ થઇ! તેમ મંગળ!! મંગળ!! સાવધ થા! સાવધ થા!!

બિરૂ મંગળઃ—શું સાવધ થાઉં? તું શું બોલે છે! મને તારૂં કથન સમજાતું નથીને! પ્રિયે-મમ-હૃદયહારિણી-ચિંતામણી! ચિંતામણી!! મને રૂચતું બોલ! મારાં-તારાં બાહુ-પાશ રૂપ અરસપરસ બંધનરૂપ-અરે! આનંદરૂપ! તારાં પ્રેમાનંદનો લ્હાવો! તારા પ્રેમ-રસનો પ્યાલો પીવાદે! તારાં પ્રેમ વગર-અરે તારાં પ્રેમ નિધીમાં આ મત્સ્યને સદાકાળ ન્હાવાદે! મને તો તારાં શિવાયનું કાંઇ પણ દૃષ્ટીયે પડતું નથી! અહા! ચિંતામણી! ચિંતામણી!! ચિંતામણી!!!

હરીગીત.

છે પ્રેમ એવી વસ્તુ કે તે સ્વાર્થને નથી માનતી!
લજ્જા તથા જનમાનને પણુ તે કદા ન પીછાનતી!
દિપક પરે બળતાં પતંગો સર્વદા નિસ્વાર્થ તે!
તે પ્રાણ અરપે છે ચકોરો ચંદ્રપર નિસ્વાર્થ તે!
હે પ્રાણ વલ્લભ પ્રેમદા તુજ ભોગની તું ભોગીની!
દરકાર નથી કંઇ અન્યની તું એકલી મમ પ્રેમણી!
મમ નેત્ર આ આતુર રહે છે નવ વદનના દર્શને!
ને ઇચ્છતું આ હૃદય નિશદિન તવતનુના સ્પર્શને!

દેહ પડવાનુંજ છે! જગતમાં પહેલો સંસ્કાર જન્મ! અને છેલ્લો સંસ્કાર મર્ણ! એ બેઉ સંસ્કાર શરીરના પુતળાને! શરીરના નિયમાનુસાર જગત નિયમે બંધાયેલા છે! જન્મનાર મૃત્યુને વશ થવોજ જોઇએ! ઉત્પન્ન થયેલી જગત-ચીજોનો વિનાશ થવાનો છે! આપણી નજરે આ મૃત્યુ રૂપ નિયમ ભાળીયે છીયે! નદી તરતાં મૃત્યુ (મડદાં) પરજ આવ્યો! આ બારી ચડતાં સર્પ રૂપ મૃત્યુ હાજર હતોજ! જેવું મારાં પર ચોરોનુ મૃત્યુ ટળ્યું તેવુંજ આ મૃત્યુના-મૃત્યુ રૂપ નદી અને સર્પના હાથમાંથી તારૂં મૃત્યુ ટળ્યું! પણ તે માટે પ્રભૂનો ઉપકાર માનવાનો મૂકી વળી મૃત્યુની જાગતી જ્યોત સમ જાગૃતી ભૂલી હવે જગતના વિષય ફંદમાં ફસાય એવો તે કીયો મૂર્ખ હોય કે પોતાના શરીરની રાખ ઉડવાની છે તે ન જાણતો હોય? વિચાર! વિચાર! મંગળ! તારા મન-પ્રદેશમાં લીન થઇ વિચાર કર કે;—

શેરઃ—ચંદ દિન યહશાનો સવકતા ખુમાર!
મઓતકી તુરશી દેંગી નીશા ઉતાર!
જબ મિલકે જનાજે ઊઠાવેંગા યાર!
હાથ મળકર કહેગા ફીર બાર બાર!
કિસ લીયે આયેથે કયા કર ચલે!
જો યહાં પાયા યહાં પર ધર ચલે!

માટેજ મંગળ! તારા-મારા પરની મમતા મૂક! પ્રભૂનો પાડ માન! બચાવનારને શોધવા આતુર બન! બચાવેનારાના હાથમાંજ તારૂં સર્વસ્વ જીવન અર્પી દે! તો જેમ મને થોડા અરે-સુક્ષ્મ-સમયમાં પ્રકાશ થયો, મારી દિવ્ય ચક્ષુઓ ઉઘડી-તેમ તારી ઉઘડશે! તને પ્રભૂનો પ્રકાશ પડી-પ્રભૂના દર્શન થશે! માટે મારા પરનો પ્રેમ પ્રભૂની બાજુ પર જવા દે-પ્રભૂ પર વરસવા દે! પ્રભૂ વિનાનું બધું અસત્ય છે! ફક્ત પ્રભૂ! પ્રભૂ!! એજ સત્ય છે! જેમ ચિંતામણીને સર્વત્ર રેથળ જોતો હતો તેજ દૃષ્ટી વડે દૃષ્ટિને પવિત્ર કરી પ્રભૂની પ્રીતિ મેળવ! મારા પર જેટલો પ્રેમ છે તેથી અનંત ગણો પ્રેમ-સ્નેહ-પ્રીતી પ્રભૂ પ્રત્યે લગાડ! પ્રભૂ પર પતંગીયાની પેઠે બળ! ચકોર જેમ ચંદ્ર પર પ્રાણ અર્પે તેમ પ્રભૂને તારાં પ્રાણ સોંપી દે! અને જન્મ મર્ણ રહીતનુ નિર્ભય સ્થાન શોધવા તત્પર થા! તત્પર થા!!

મંગળઃ—ખરૂં! આ દેહની પણ રાખ ઉડશે તે ખરૂં! તારૂં કથન અક્ષરે અક્ષર સત્ય છે! પણ પ્રભૂ તે શું? તે પર પ્રેમ કેવો? તે સમજી શકાયું નથી! તારાજ માટેની ઉછળતી પ્રેમ-જવાળા હવે વધારે ઊછળે છે! આ ધુંવા વિનાની નીકળતી ભભુકતી-પ્રેમ રૂપ-અગ્નિ જવાળા! તારા તરફજ આકર્ષીય છે! તો તારા શિવાય અન્યને માટે ક્યાંથી ઉછળી શકે? તારૂં કહેવું સત્ય છે? પણ તારૂં આ મનોહર દિવ્ય વદન યાદ આવતાં બધું ભૂલી જાઊં છું તો ચિંતામણી! ચિંતામણી!! સ્પષ્ટ બોલથી પૂર્ણ સમજાવ!

ચિંતામણીઃ-એટલો તો પણ સંતોષ જણાય છે કે; ચિંતામણીનું કથન સત્ય છે, તે ઉપરથી ખાત્રી થાય છે કે; મંગળ અવસ્ય સન્માર્ગે વળશેજ! માટે સાંભળ! મંગળ!! એક ચિત્તે સાંભળ!! પ્રભૂ! મહાન ઉપકારી હોઇ! આખા વિશ્વને તારનારો અધમોનો પણ તારક દૂષ્ટોનો સંહારક અને દયાળુ મહાન દયાનો નિધી છે! તે કૃપાવંત ભગવંત તને અને મને બેઉને તારશેજ! તારાં અને મારાં તેમજ આખા વિશ્વના દુઃખો હરશેજ! જન્મમર્ણ પણ રહિત કરાવવા તેજ સમર્થવાન છે! આ ભવસાગરની જાળમાંથી પણ છોડવવા તેજ શક્તિમાન છે! એવા દયાળુ પરમાત્માનું તો વર્ણન કરીએ તેટલું થોડુંજ છે! પ્રભૂ પોતાપર પ્રેમ રાખનારને પોતા તરફ ખેંચે છે! એ પરમાત્માજ સરળ અને સીધો માર્ગ બનાવે છે! તો મંગળ! મારાં પરની ઊછળતી તારી પ્રેમ જવાળાને પ્રભૂ પર ફેંક! અરે! એકવાર દ્રષ્ટીમાત્રથી ફેંકી તો જો! ફેંકતાંજ તને શિતળતા પ્રાપ્ત થશે અને તારો તે વડે ઉદ્ધારજ થશે! આ જંજાળોનો અને દેહાદિ ઊપાધીનો સંસર્ગ તોડ! મોહજીત થા! મહાન શૂરવીરપણું તો મોહજીત બનવામાંજ છે! વિચાર કર!!

આજ સુધિની જેની સ્થિતી હતી તેવીજ હજુ રહેત તો મૃત્યુ પછી શું થાત?

મંગળઃ—અહા! મૃત્યુ પછી ખરેખર ભૂરાં કર્મોના ભૂરાં ફળો ચાખવાંજ પડત! ચિંતામણી! ચિંતામણી! સમજાવ! સમજાવ!! પ્રભુના પ્રેમનું અદ્‌ભુત રહસ્ય સમજાવ!!! તારાં તરફની ઊછળતી પ્રેમાગ્નિનો પ્રવાહ-હવે-પ્રભુ તરફ જરૂર વાળીશ! માથું ભમે છે! ખરેખર મૃત્યુએ મારાંમાં ઘર કર્યું છે! જન્મ થયો ત્યારથીજ મૃત્યુના તરફજ ખેંચાયો જાઉં છું! મૃત્યુજ ખેંચી રહ્યો છે! અવશ્ય મારાં દેહને હવે જલદી પકડશે! અહા! હવે મારૂં શું થશે! ઓ પ્રભૂ! પ્રભુ!! પ્રભુ!!! બચાવ! તારા દાસપર કૃપા કર! ચિંતામણી! ચિંતામણી!! સત્ય માર્ગ બતાવ!

ચિંતામણીઃ—અહા જ્યારે તેં તારાં મૃત્યુને નિહાળ્યો ત્યારે પ્રભૂ જરૂર તને પોતા તરફ ખેંચી મૃત્યુથી બચાવશે! નિર્ભય થા! પ્રભૂ તારી પીઠ પાછળજ હમેશાં ઉભો છે! તે તને અરે પોતાના અનુયાયીને કદી પણ મૃત્યુના હાથમાં ન સોંપે! પ્રભુ તરફ વળ! તારા હૃદયના પ્રવાહને પ્રભૂ તરફ વહેતો મૂક! અને હવે સત્યને જાણી ખરેખરો જ્યાં સુધી આ તારૂં દેહરૂપી સાધન છે ત્યાં સુધીજ પ્રભૂને નિહાળી શકીશ! આ મહાન પ્રયાસે મળેલા મનુષ્ય જન્મના બારણામાં હવે પ્રભૂનેજ મેળવ! તારી શાખને આજ મહાન માર્ગે ચડાવ! કારણ:—

હાથ હરતે પ્રભૂ હૃદયે રાખી,
જન્મ મરણ દે ટાળી—સમજ મન ૫
હાથ પહેં ફરી પ્રભુ પ્રદક્ષિણા,
અંતર પહેં જન દોડી—સમજમન ૬
દેહ વિધાનના ધાટ રચીને,
"મંગળ" પી પ્રભૂવાણી—સમજમન ૭

માટે મંગળ! મંગળ!! પ્રભૂના નામની દરેક અવયવમાં—અરે! દરેક રોમાંચમાં ધૂન લગાવી તારાં દેહરૂપ ઓસાડ નિર્જન પડેલા જંગલમાં હર મંગળ! તારો ચહેરોજ કોઇ દિવ્ય પ્રકાશથી પ્રકાશિત થયેલો દેખાય છે ને?

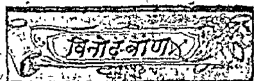
મંગળઃ—અહા સત્ય! સત્ય!! ચિંતામણી! સર્વ સત્ય!! પ્રભૂ! પ્રભૂ!! ચિંતામણી પ્રભૂ આ પાપીનો ઉદ્ધાર કરશે? આ પાપીને પાપની માફી મળશે? બોલ! બોલ મને ઉદ્ધારવા! મને સમજાવવા! મારાં કાન પવિત્ર કરવા તારી પ્રભુ પ્રેરિત અમૃતવાણી બોલ! મારી બચવાની—અરે ઉદ્ધારવાની રાહ બતાવ! મને તો લાગે છે કે; આ દેહ-ભ્રષ્ટ અને અધર્માચરણ કરવાવાળા મંગળના માટે પ્રભૂ નથી! હું કેમ ઉગરીશ! ચિંતામણી મારૂં શું થશે? બોલ! પ્રભૂ! પ્રભૂ!! ઉદ્ધાર કર! ઉદ્ધાર કર!! આ મંગળનો હસ્ત પકડી લે! પકડી લે!! બચાવ! બચાવ!!

પામી નથી ! તમારાં માર્ગમાં ચડવા આજથી–આ ઘડીથી સર્વસ્વ તમને સુપ્રત કરું છું ! મારું કંઇ નથી ! હું કેવળ માત્ર !!

ચિંતામણી:—સત્ય ! સત્ય ! તને પશ્ચાતાપના અગ્નિએ પવિત્ર કર્યો છે ! તારાં સુપ્રત કરેલાં બધાં શબ્દો પ્રભૂ ગ્રહણ કરશેજ ! અને તારાં–મારાં દેહને સુવર્ણ બનાવી અંદર પોતાની સ્થાપના કરશે માટે આજથી આ દેહને સાફ કરવા પ્રયત્ન કરીએ ! અને પરમાત્માનું ભજન કરીએ !

ભજન—(ગઝલ)

પ્રભૂના ભેદને પામી–પામર લે સ્થાનને જાણી,
પ્રભૂના રંગમાં જાગી–અંતરના ભેદ લે છાણી–૧
જગતનું જગતમાં દેજે,
તારૂં તું સુખથી લેજે.
પ્રભુની દિવ્ય જ્યોતીમાં–સકળ કર્મોજ દે બાળી–૨
જગતમાં જન્મી શું જોયું,
વ્યવહારે સર્વને ખોયું.
હવે પ્રભૂ પ્રેમમાં રાગી–ખોયેલું સત્ય લે ભાળી–૩
ગુલાબી ફુલના કાંટા,
સંબંધી મિત્રના કાંટા.
ગુલીબી પુષ્પ સુગંધે–લે પ્રભૂ સત્ય પીછાણી–૪
ધર્યું તેં નામ તું જાશે.
ખતા દિન રૈન તો ખાશે.
જગત દુઃખ સુખ સંસારી–અખંડ સુખ લે હવે માણી–૫
અખંડ જ્યોતિ મહીં વસીયું.
જનમ ધરતાં અરે ખસીયું.
નજર જ્યોતિમણી ધરતાં–દેખાયું આત્મ રૂપ નામી–૬
આત્મ રૂપ આત્મમાં રમતાં.
જ્યોતિ રૂપ નિધીમાં ભમતાં.
ઊછળતી લહેરી ઊર્મીમાં–રહૂંતી જ્યોતી લે ભાળી–૭
અખંડ રંગે રમે જ્યોતી.
જગતના ભાનને ભૂલી.
પહે અમૃત ચારી ત્યાં–ધીરે ધ્યાનમાં આણી–૮
પામર નિજ જ્યોતિ ભરતીમાં.
સદા ઘૂમે આત્મ હરતીમાં.
'વીર મહાવીર' ધ્યાનતે–પકડ મજબુત તાણીને–૯



एक आदमी—ठहरो, ठहरो, कहीं बाण न छोड़ देना। आज खुशीका दिन है। बाण छोड़कर किसीका दिल न दुखाओ। मैने कहा—क्यों भाई आज क्या है?

मैं—मालूम होता है तुम सातवें आसमानसे उतरकर आए हो। तुमको नहीं मालूम आज हमारे नगरसेठ धनपालका विवाह होनेवाला है?

ए०—अरे तू क्या बक रहा है? उनके घरमें एक सुशीला पत्नी और कई पुत्र पुत्रियां मौजूद हैं तथा उनकी अवस्था भी ४५ वर्षकी होनेको आई है वे विवाह करके अपनी फजीहत न करावेंगे। तू झूठ बोलता है।

मैं—इसमें फजीहत काहेकी। उनके घरमें करोड़ों रुपया मौजूद हैं वे एक नहीं दश विवाह कर सकते हैं। पहिले तो लोग छियानवे २ हजार विवाह करते थे। इसके सिवाय उनका शरीर भी तो ऐसा निर्बल नहीं है। वे दो हट्टे कट्टे आदमियोंका सिर पकड़कर लड़ा सकते हैं तो एक छोटीसी दुलहिनको क्या खिला भी न सकेंगे। उनके आगे चूं तक भी कोई नहीं कर सकता है।

मैं—चाहे जो हो मैं अपना बाण छोड़ता हूं। देखो, वह गया। बाणमें कुछ शब्द हो रहा है। सुनो, सेठ साहब विवाह भले ही कर लें-पर यह मुझको छोड़नेवाला विनोदी भी फिर अपने विनोद बाण ऐसे ताक २ कर मारेगा कि जैन समाजमें फिर दुबल नहीं इससे भी अधिक स्त्रियां एक धनिक रखने लगेगा। कई स्त्रियोंका होना भी तो धनवान होनेकी पहिचान है।

* * *

कौन कहता है जैनियोंमें विवाहके लिये कन्यायें नहीं मिलती हैं। उनका तो अब बाजार भी लगने लगा है जो अधिक रुपये लगावे उसीको मिल जाय।

* * *

जो यह कहते हैं कि देशमें अकाल पीड़ितों और बीमारोंकी जैनी लोग सहायता नहीं करते, वे बड़े मूर्ख हैं। क्योंकि दुःखियोंको दान देनेसे शुभ कर्मोंका बंध होगा जिससे जैनी शीघ्र मोक्ष न जा सकेंगे।

* * *

हमारी सरकार नज़रबन्दों पर बड़ी ही दयालु है है तभी तो उनसे छोड़ते समय कह देती है कि जाओ कुछ करना नहीं, बैठेर खाओ। मगर सरकारने सेठी अर्जुनलालको छोड़ देनेका वचन तो दिया है मगर उनका एक दुःख दूर नहीं किया अगर सरकार उनको कुछ लिखनेमें भी मना कर देती तो सेठीजी बड़े ही सुखी हो जाते।

* * *

बाबू अजितप्रसादजीने समाजसेवाके लिये जीवन अर्पन तो कर दिया है कहीं वे किसी जैन संस्थामें पहुंच कर भिक्षुकोंके अधिष्ठाता न बन जाय।

* * *

अब तो 'सत्योदय' अकेला रह गया है, 'जैन हितैषी' और 'जातिप्रबोधक' ने बीचहीमें उसको छोड़ दिया। अंधेरी रातमें पत्थर भी टाला मार देना चाहिये। बस विनोदी अंगोंको खुब सुखकी नींद आयेगी। इधर कुछ दिनोंसे विधवाओंके विलापने और शास्त्रोंके मनगढ़न्त स्वप्नने हमारे विनोदमें बाधा उत्पन्न कर दी थी।

* * *

पदवियां सरकारसे रजिस्टर्ड करा लें।

* * *

श्रीमती दि० जैन बम्बई प्रान्तिक सभा तो कुछ दिनोंसे खूब ही सोगई हैं। क्या बम्बईमें कोई उनको जगानेवाला नहीं है? न हो तो कहो विनोदी ही चुपकेसे आकर जगा दे।

* * *

श्रीमती भारतवर्षीय दि० जैन महासभासे न मालूम जैनियोंको कोई फल क्यों नहीं मिलता! अभी तो उसके सभापति एवं महामंत्री काम करनेमें नवयुवक ही हैं।

* * *

जैनहाईस्कूलोंमें जैन हेड मास्टर कभी न रखना चाहिए। वे सेठोंके आगे अजैन हेडमास्टरकी तरह 'हां हजूर' थोड़े ही करेंगे।

* * *

आजकल हड़ताल बड़ी हो रही है कहीं जैनी भी हड़ताल न कर दें, नहीं तो संसारमें अधर्म ही अधर्म फैल जायगा क्योंकि जैनियोंने तो धर्मका ठेका ले रखा है।

* * *

आजकल मित्र राष्ट्र जगद्व्यापी शान्ति स्थापन करनेके लिये जी तोड़ परिश्रम कर रहे हैं-पर दिगम्बर और श्वेताम्बर जैसी योद्धा जातियोंमें शान्ति कौन स्थापित करेगा? वे तो तीर्थोंके लिये अवश्य युद्ध करते रहेंगे।

* * *

महासभाको एक प्रस्ताव पास करके पंडित पन्नालालजीको "जैनधर्म रक्षक" की पदवी अवश्य देनी चाहिये। उन्हीके उद्योगसे जैनधर्म अब तक टिका है नहीं तो न मालूम कबका यह रसातल चला जाता।

हवा न लग जाय। बात-तो अच्छी है।

* * *

अहहहह! और विनोदी तुम तो बड़े खुश हो गये। कुछ मिल गया क्या! नहीं भई मिला तो कुछ नहीं, एक बात-याद आ गई। वह क्या? सुनो, आजकल जैनसमाजमें विधवाविवाहकी चर्चा हो रही है विधवाविवाहके पक्षपातियोंसे जब कहा जाता कि देखो जिस प्रकार एक सांड कई गौओंके साथ भोगकर सन्तान उत्पन्न कर सकता है परन्तु एक गाय ऐसा नहीं कर सकती। उसी तरह पुरुष भी कई विवाह करके सन्तानें उत्पन्न कर सकता है परन्तु स्त्री नहीं। इस बातपर वे लोग विश्वास नहीं करते और कहनेवालोंकी हंसी उड़ाते हैं। इसीलिये पुर्नविवाहके विरोधियोंको चाहिये कि किसी सेठके एक साथ आठ दस या इससे भी अधिक विवाह करा दें तो विधवाविवाहके पक्षपातियोंको प्रत्यक्ष उदाहरण मिल जायगा और विधवाविवाहका आन्दोलन करना छोड़ देंगे। विनोदी, है तो सोलह आनेकी बात; शायद उदाहरण ही बननेके लिये सर सेठ हुकमचंदजीने एक और विवाह किया है। फिर तो किसीको इसका विरोध न करना चाहिये। यह धर्मकी रक्षा करना है। इससे तो विधवाओंके शीलताकी भी रक्षा होगी।

* * *

"विनोदी।"



सुशील शिक्षा-इस पुस्तकके लेखक जीवनलाल चंपालाल जैन हैं। यह पहिले लक्ष्मी मासिक पत्रिकामें भी प्रकाशित हो चुकी है। में स्त्रियोंके सुधार और शिक्षाकी बातें प्रश्नोत्तर रूपसे दिखाई गई हैं बीच २ में नीतिके पद दोहे भी दिये गये हैं। इस पुस्तकका मूल्य ।~) है जो अधिक मालूम होता है। पुस्तक मिलनेका पता प्रकाशक-चुन्नीलाल धनजी, अंजड़ (बड़वानी)।

धनपाल चरित्र-छोटी साइजकी पुस्तक में १२ पत्र हैं। मूल्य -)॥-पुस्तकके लेखक हैं चांदनमल भाबू और प्रकाशक आत्मानन्द जैन ट्रेक्ट सोसाइटी अम्बाला शहर। इस पुस्तकमें राजा भोजकी सभाके पंडित धनपालका जीवन चरित्र है। यह पहिले जैन-धर्मके कट्टर विरोधी थे परन्तु एक जैन साधुके संसर्गसे जैन धर्मके पक्षपाती होगये। पुस्तक एकबार पढ़ने लायक अवश्य है।

पद्मावती पुरवाल-यह पद्मावती परिषद्का मासिक मुख पत्र है। सम्पादक हैं पं० गजाधरलालजी न्यायतीर्थ और प्रकाशक पं० श्रीलालजी काव्यतीर्थ। प्रथम वर्षका अंक १ हमारे पास समालोचनार्थ आया है। इसमें केवल ४ पृष्ठ हैं। सिवाय सम्पादकीय लेखके और कोई लेख पढ़ने योग्य नहीं है। एक मासिक पत्रको ऐसी अवस्थामें निकालना अच्छा नहीं मालूम होता है। मासिक पत्र पुस्तक साइजमें ही अच्छे मालूम होते हैं। संपादक महोदयको चाहिये कि लेख भी उपयोगी देनेका उद्योग करें। हम पद्मावती पुरवाल भाइयोंसे भी कहेंगे कि इसके ग्राहक बनकर इस पत्रके उन्नत बननेमें सहायक हों। पत्रका वार्षिक मूल्य १) पेशगी है। ग्राहक बननेवालोंको मैनेजर 'पद्मावती पुरवाल, कार्यालय ८ महेन्द्र बोसलेन पो० श्यामबाजार कलकत्ताको लिखना चाहिए।

मुनि—यह पत्र महावीर मुनिमण्डलका मुख मासिक पत्र है। हमारे पास वर्ष तीन अंक ५-६ समालोचनार्थ आया है। इसमें प्रायः सब लेख पठनीय हैं। छपाई सफाई भी उत्तम है। आशा होती है कि इस पत्रसे श्वेताम्बर स्थानकवासी जातिमें अच्छी जागृति होगी। इस पत्रमें सबके पढ़ने योग्य लेख रहते हैं। वार्षिक मूल्य २) है। मैनेजर 'मुनि' म.दवड़ (खानदेश) को पत्र लिखनेसे प्राप्य।

બ્રહ્મચર્ય દિગ્દર્શનઃ—લેખક શાસ્ત્ર વિશારદ જૈનાચાર્ય (શ્વે.) શ્રી વિજયધર્મસૂરીજી અને પ્રકાશક યશોવિજય ગ્રંથમાળા ભાવનગર. આ ૭૫ પૃષ્ઠના સુંદર પુસ્તકમાં આચાર્યશ્રીએ બ્રહ્મચર્યને પાળ્યા પછી પાળવાના નિયમો તથા ઉત્તમ સંતાન ઉત્પન્ન કરવાની સમજણ ઘણીજ સરળ રીતે દર્શાવેલી છે જે દરેક સ્ત્રી પુરૂષે વાંચવા યોગ્ય છે. વળી ઘણુંજ ખુશી થવા જેવું છે કે એની ૫૦૦૦ પ્રતો જામનગર નિવાસી વ્હોરા ધારશીભાઈ દેવરાજના મર્હુમ પત્નીના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્ર પોપટલાલ તરફથી તદ્દન મફત વેંચવામાં આવી છે, જે પ્રકાશક પાસેથી મળી શકે છે.

જૈન દર્શનઃ—લેખક ન્યાય વિશારદ મુનિ (શ્વે.) ન્યાયવિજયજી અને પ્રકાશક અમરચંદ ભગવાનદાસ ગાંધી, ભાવનગર, પૃષ્ઠ ૧૦૫ આ પુસ્તક પણ માંડલના મર્હુમ દાની શેઠ તલકચંદ ભાઈચંદના સ્મરણાર્થે ભેટ મળે છે, જેમાં નવ તત્વ, ૬ દ્રવ્યો, ત્રણ રત્ન, ગુણસ્થાન, સ્યાદ્વાદ, સપ્તભંગી, અધ્યાત્મ વગેરેનું દિગ્દર્શન સરળ રીતે કરવામાં આવેલું છે જે બન્ને ફિરકાના જૈનોને ઉપયોગી છે, માત્ર સાધુઓના આચાર વર્ણનમાં આહાર લેવાની રીતી શ્વેતાંબર મતને અનુસરીને લખાયેલી છે જે દિ૦ જૈનોને માન્ય નથી.

ચુનુક રત્નઃ—પ્રકાશક સસ્તુ સાહિત્યવર્ધક કાર્યાલય અમદાવાદ. પૃ. ૪૩૮ અને કિં. માત્ર બાર આના. કાર્યાલય તરફથી પ્રકટ થતી વિવિધ ગ્રંથમાળાનું આ ૮૫થી ૯૨મું ચુંટુકત પુસ્તક છે, જેમાં વિદ્યાર્થીઓએ શાળા છોડયા પછી ધ્યાનમાં રાખવા યોગ્ય ઉપયોગી સુચનાઓ સંબંધી ૧૦ પત્રો તથા બીજા ૭ ઉપયોગી લેખો છે જેમાં શીખ સત્તાનો ઉધ્વાસી શીર્ષક લેખ ખાસ વાંચવા યોગ્ય છે. આ ગ્રન્થમાળાનું વાર્ષિક મૂલ્ય માત્ર ૨) છે.

સેવકઃ—અમદાવાદથી પ્રકટ થતું માસિક પત્ર વર્ષ ૧ અંક ૧લો. તંત્રી-ડાહ્યાભાઈ મનોરદાસ પટેલ, વાર્ષિક મુલ્ય રૂ. ૨) ૬૪ પૃષ્ઠનાં આ નવીન માસિકમાં જુદા જુદા ૨૦ લેખો છે. જેમાં બે ઐતિહાસિક છે. એક લેખ હીંદી પણ છે. લેખન શૈલી સારી છે અને દરેકે ગ્રાહક થવા યોગ્ય છે.



THE DIGAMBAR JAIN.

नाना-कलाभिर्विविधैश्च सत्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्ततां, दैगंबरं जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १२ वाँ. || वीर संवत् २४४५. फाल्गुन. विक्रम सं० १९७५. || अंक ५.



महासभाका जीर्णोद्धार।

कालचक्रकी गति किसी समय नहीं रुकती है। वह अपना कार्य सदा किया ही करता है। उन्नति अवनति कालचक्रकी दो धाराएं हैं। जिस समय किसी जाति या देश पर कालका प्रकोप होता है उस समय वह अपनी अवनतिकी धारा उसकी गर्दन पर रख देता है जिसके कारण उस जाति या देशकी अवस्था बहुत ही सोचनीय हो जाती है, यदि उसकी गर्दन परसे उस धाराको हटानेवाला कोई कर्मवीर न उत्पन्न हुआ तो उसका अस्तित्व भी मिट जाता है। हम यह भूमिका जैन समाज और दि० जैन महासभाके लिये बांध रहे हैं। जैन समाज पर भी कालचक्र फिर रहा है परन्तु उसको यह प्रश्न बहुत कठिन मालूम हो रहा है कि मैं कौनसी धारा उसकी गर्दन पर रखूं ? पाठकगण भी अपने हृदयमें विचार रहे होंगे कि वास्तवमें जैन समाजके लिये यह निश्चित करना कि वह उन्नतिके मार्ग पर जा रही है या अवनतिके बहुत ही उलझनवाला है। परन्तु कालचक्र अभी अवनतिकी धारा जैनसमाज पर रखनेके लिये तैयार नहीं है, क्योंकि जैनसमाज कभी २ ऐसा करवट लेती है जिससे बड़े२ विद्वानोंको भी असमंजसमें पड़ना पड़ता है कि यह जागृत है या निद्रित। अभी थोड़े ही दिन पहिले हम भी लिख चुके थे कि महासभा निद्रित है इस कारण जैन समाज भी निद्रित है। परन्तु महासभाकी कोटोंमें कायापलट देखकर यह आशा ही नहीं परन्तु विश्वास हो चला है कि जैन समाज निद्रित नहीं है किन्तु करवट ले लिया किये हुए इस आशासे आंखें खोलता और मूंदता है कि मुझे जगानेवाला कर्मवीर कोई आता है या नहीं। अभी तक कोई कर्मवीर तो समाजके जगानेके लिये नहीं आया परन्तु उसके प्रतिनिधि आने लगे हैं।

इन प्रतिनिधियोंने भारतवर्षीय दि० जैन महासभाके अधिवेशनमें एकत्र होकर जैनसमाजको जगानेके लिये उसके कानोंमें भेरी बजाई है और बहुतसा सामान एकत्र किया है। प्रथम ही महासभाके सभापतिका भाषण जिसे हमने

अन्यत्र प्रकाशित किया है, समाजके जगानेके लिये एक अच्छी आवाज है। सभापतिने जैन समाजकी प्रत्येक आवश्यकताओं पर प्रकाश डाला है। आजकल जो अंग्रेजी पढ़े लिखे धार्मिक ज्ञानसे शून्य बताए जाते हैं, सभापतिका कहना है यह अंग्रेजी पढ़नेवालोंका दोष नहीं है किन्तु कारण यह है कि उनको समाज द्वारा धर्मज्ञान रोचक रूपसे प्राप्त करनेके लिये सुभीते और अवसर प्राप्त नहीं हैं। पाठकोंके हृदयमें यह प्रश्न अवश्य उठा होगा कि उनको कैसे अवसर और सुभीते चाहिये इस प्रश्नका उत्तर हम पाठकोंको पहिले दे चुके हैं, उनको आवश्यकता है जैन कालिजकी और अंग्रेजी व संस्कृत दोनोंकी विद्वत्ता रखनेवाले जैन विद्वानोंकी। सभापतिने वर्तमान युग परिवर्तनकी ओर भी संकेत करते हुए कहा है कि सारा संसार चार वर्षोंके महायुद्धकी कठिनाइयोंसे घबड़ा उठा है अब वह चाहता है कोई जैनधर्म जैसा शान्तिदायी उपदेश, जिससे फिर कभी ऐसा महायुद्ध न छिड़े। इसलिये जैनधर्मके लिये एक नया और अमूल्य अवसर धर्मार्थ व परमेवाके लिये उपस्थित है। समय यह कहता है कि हे जैनधर्मके अनुयायियो, जागो, तुम्हारा कार्य करनेका समय आगया है, मैदान खाली है, उठो कमर कसो और एक बार फिर महावीर स्वामीके उपदेशको संसारके कोने २ में पहुंचा दो। सभापतिके यह शब्द भी ध्यान देने योग्य हैं कि जैनसमाज यदि इस अवसरका उपयोग करना चाहती है तो उसके लिये अपने कार्यों व साधनोंमें नई स्फूर्ति फूंकना आवश्यक है। हम यह यह स्वीकार करेंगे कि सभापतिका भाषण, जैनसमाजकी अवनति और उसकी उन्नतिके उपायको भली प्रकार दिग्दर्शन करानेवाला है। यदि समाज उसमें बताए हुए उपायोंका अवलम्बन करे तो जैनसमाज अपनी आयु पंचमकालके अंत तक—२१००० वर्ष तक मरण शय्यापर रोगियोंकी भांति पड़े २ न बिता कर एक बार फिर नवजीवन प्राप्त कर सकता है और संसारको दिखा सकता है कि हम भी एक उन्नत समाज हैं, हमारे समाजमें भी धर्मवीर, कर्मवीर और भारतमाताके सच्चे सेवक—देशभक्त मौजूद हैं।

हम कई वार लिख चुके हैं कि सभाओंका कार्य उनके कार्यकर्त्ताओंपर बहुत कुछ निर्भर रहता है। हर्षका विषय है कि इस वर्ष उद्योगी और समाजहितैषी लाला भगवानदासजी महासभाके महामंत्री बनाये गये हैं। आपकी कर्तव्यशीलताका बड़नगर औषधालय जीता जागता उदाहरण है। हम केवल उक्त लालाजीके परिश्रम और जातिप्रेमके भरोसे पर ही महासभाका जीर्णोद्धार हो गया ऐसा कह रहे हैं। पर इसके साथ इस वर्ष और भी कार्यकर्त्ता ऐसे बनाये गये हैं कि वे यदि अपनी जुम्मेदारी व जैनसमाजकी अवनति पर ध्यान देकर अपना कार्य करें और महामंत्रीके कार्योंमें सहायता देवें तो महासभाका जीर्णोद्धार करना हमारा सरल होगा।

महासभाके कार्यकर्त्ताओंमें इस वर्ष उल्लेखनीय परिवर्तन यह और हुए हैं—महाविद्यालय मथुराके

मंत्री मुंशी मूलचंदके अतिरिक्त पं० लालारामजी इंदौर और उपमंत्री पं० गौरीलालजी शास्त्री और तीर्थक्षेत्र कमेटीके महामंत्री पं० धन्नालालजी बनाये गये। हम इन कार्यकर्त्ताओंसे तथा अन्य मंत्री जो इस वर्ष प्रांतिक सभाओंके और महासभाके विभागोंके नियुक्त हुए हैं उनसे कहेंगे आप लोग संसारके नये परिवर्तनोंकी ओर दृष्टि रख कर अपने २ कर्त्तव्योंका पालन करें। यह समय केवल नाम मात्रके कार्यकर्त्ता बननेका नहीं रहा है किंतु अपने सिपुर्द किये गये कार्योंको उचित रीतिसे करनेका समय है। यदि प्रांतिक मंत्री अपने २ प्रांतमें महासभाके उद्देश्यानुसार कार्य करना प्रारम्भ कर दें तो महासभाका नाम सार्थक हो।र सारे भारतके जैनियोंकी महासभा कहलाने लगे और महासभा द्वारा पास किये गये प्रस्ताव सारे देशके जैनियोंके लिये लागू हो जांय, महासभाकी आवाज सारे भारतके जैनियोंकी आवाज समझी जाने लगे। हम एक वार फिर कहेंगे देश और जातिकी उन्नति अवनति उसके कार्यकर्त्ताओं पर निर्भर है, यदि महासभाके सर्व कार्यकर्त्ता अपने २ कर्त्तव्योंके पालन करनेका दृढ़ विचार करलें तो जीर्ण महासभाका जीर्णोद्धार होकर नव जीवन प्राप्त करलेना असंभव नहीं है।

आप सबको यह मालूम होगा कि सभाओंके कार्योंके लिये द्रव्यकी कितनी आवश्यकता रहती है विना द्रव्य कार्यकर्त्ताओंका उत्साह कार्य करनेकी ओरसे कम हो जाता है और उत्साह कम होनेसे निर्धारित आवश्यक काम नहीं हो पाते हैं। इसलिये अगर तुम महासभाको दि० जैन समाजकी जागृत सभा देखना चाहते हो, यदि तुम आशा रखते हो कि महासभा जो अबतक केवल नाम मात्रकी सभा थी वह अब इस उन्नतिके युगमें हमको उन्नतिका मार्ग बताकर हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति करे, समाजमें फैली हुए कुरीतियां अज्ञान अन्याय दूर करना तथा अन्य कार्य जो कुछ तुम सभासे कराना चाहते हो तो इस वर्ष महासभाने अपने खर्चके लिये जो (१८८००) रुपयेका बजट पास किया है उसकी पूर्तिके लिये उदारता दिखाओ। यह रकम लाखों दिगम्बर जैनियोंके होते हुए पूरी होना कठिन नहीं है। इसलिये हम समस्त दिगम्बर जैन समाजसे अपील करते हैं कि इस द्रव्यको जितना शीघ्र हो सके उतने ही शीघ्र पूर्ति कर दें। अन्यथा कार्यकर्त्ताओंकी शक्ति सारे समय द्रव्य एकत्र करनेकी ही चिन्तामें बीत जायगी और वे महासभाके उद्धारके कार्य न कर सकेंगे, अतएव प्रत्येक दिगम्बर जैनीको चाहिये कि अपनी २ शक्तिके अनुसार इस बजट पूर्तिके लिये सहायता देवे और दूसरोंसे दिलावें।

जैन बेंककी आवश्यकता।

हम कई वर्षोंसे जैन समाजमें एक बेंककी आवश्यकता सुनते चले आ रहे हैं। समय २ पर समाचार पत्रोंमें भी इसका आन्दोलन हो चुका है तथा हम भी इसके लिये लिख चुके हैं परन्तु अभी तक इस आवश्यकताकी पूर्ति नहीं हुई। इस वर्ष फिर महासभाके अधिवेशन-

के समय स्वागतकारिणी सभाके सभापति श्रीयुत सेठ सुखलालजी ऑन. मजिस्ट्रेटने इसकी ओर संकेत किया है। बहुतसे लोगोंको बेंककी आवश्यकता नहीं प्रतीत होती होगी परन्तु हम कहेंगे कि जैन समाजके सेकड़ों निर्धन और पराधीनतासे जीवन बितानेवालोंका एक बेंकके होनेसे कल्याण हो सकेगा। जैनसमाजकी संस्थाओंमें किसी प्रकारकी स्वतंत्र आजीविका कर सकनेवाली शिक्षा नहीं दी जाती है। इस कारण उनमेंसे निकले हुए प्रायः सब छात्रोंको नौकरीकी ही शरण लेनी पड़ती है क्योंकि वे प्रायः साधारण स्थितिके होते हैं उनके घरमें इतनी पूंजी नहीं होती है कि वे विना नौकरी किये स्वतंत्र कार्य करते हुए समाजकी और देशकी निःस्वार्थ सेवाके लिये आगे आ सकें। हमने देखा है कि संस्थाओंसे निकले हुए कितने छात्र जिनके हृदयमें व्यापार करनेकी उत्कट अभिलाषा है परन्तु पास धन न होनेसे एवं कोई सहायक न मिलनेसे वे निरुपाय होकर नौकरी करने लग जाते हैं। यदि जैन समाजमें कोई ऐसा बेंक हो जो पूरी जांचके साथ ऐसे नवयुवकोंको सूदपर व्यापारके लिये धन दे तो बहुत कुछ लाभ हो सकता है। ऐसा होनेसे समाजकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी और समाजमें स्वतंत्र निःस्वार्थ सेवक उत्पन्न होंगे जिससे जैन समाज और जैनधर्मकी भी उन्नति होगी।

ऐसा बेंक खोलना जैन समाजके लिये कोई कठिन काम नहीं है। क्यों कि जैनसमाजमें रायबहादुर सर सेठ हुकमचंदजी, रायबहादुर कल्याणमलजी, रायबहादुर कस्तूरचंदजी, लाला जम्बूप्रसादजी, हरीभाई देवकरणवाले आदि सेकड़ों करोड़पति, लखपति मौजूद हैं। इस कार्यके लिये हम दानवीर सेठ हुकमचंदजीसे आग्रहपूर्वक कहेंगे कि आप आगे आवें और इस कार्यको हाथमें लेकर जैनसमाजकी एक भारी आवश्यकताकी पूर्ति करें, आपके द्वारा यह कार्य बड़ी सरलता व सफलताके साथ पूर्ण होसकता है।

द्रव्यके प्रश्नके समय सेठजीको कुछ सोचने विचारनेकी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि प्रथम तो आप स्वयं समर्थ हैं, इसके अतिरिक्त यदि आप इस कार्यमें हाथ डालेंगे तो—जैन संस्थाओं, मंदिरों, तीर्थों आदिका सब रुपया जो कि कई लाख होगा और इस समय दाताओं या अन्य महाजनोंके यहां सूदपर जमा है या जमीनके अन्दर गड़ा है और उससे दूसरे लोभ उठा रहे हैं—सब इस बेंकमें आ सकेगा, जिससे अनेक लाभ होंगे। ऐसा होनेसे संस्थाओंका रुपया सुरक्षित रहेगा, अभी जिससे अन्य लोग लाभ उठा रहे हैं बेंकमें आ जानेसे जैन जातिके निर्धन, और नवयुवकोंके व्यापार साधनमें काम आयेगा जिससे वे इधर उधर भटकने, निंद्य जीवन बिताने और पराधीनतासे बच सकेंगे। जिससे जैनसमाजकी उन्नतिमें बहुत सहायता मिलेगी। यहां पर यह भी कह देना आवश्यक मालूम होता है कि संस्थाओंका जो रुपया अभी (=), ||, ||=) या इससे भी कम या अधिक ब्याज पर दूसरोंके यहां जमा है, वह रुपया यदि समाजके लोगोंके

व्यापारके लिये दिया जायगा तो परोपकारी संस्थाओंके लिहाजसे वे इससे भी अधिक सूद देनेसे इन्कार न करेंगे।

हम आशा करते हैं कि सेठ हुकमचंदजी तथा अन्य श्रीमान् इस ओर ध्यान देकर समाजकी केवल एक आवश्यकताकी ही नहीं किन्तु समाजकी उन्नति पर लानेके एक अंगकी पूर्ति करनेका उद्योग करेंगे।

* * * *

सत्याग्रह।

समाचार पत्र पढ़नेवालोंको यह भली प्रकार विदित होगा भारत सरकार दो ऐसे बिलोंको जिनका नाम रौलेट बिल है पास करनेका पूर्ण विचार कर चुकी है। जिस समय यह वाइसरायकी कौंसिलमें पेश किये गये थे उस समय गैर-सरकारी सब भारतीय प्रतिनिधियोंने एक स्वरसे इसका विरोध किया था पर सरकारने इसका कुछ ख्याल न करके उसको सिलेक्ट कमेटीमें दे दिया। इस कमेटीने एक बिलको ३ वर्षके लिये और एकको स्थायी कुछ ही परिवर्तन करके रिपोर्ट पेश कर दी है। रिपोर्ट पर मान० मालवीयजी, खापर्डे, मि० पटेलने हस्ताक्षर नहीं किये अस्तु।

जबसे यह बिल कौंसिलमें पेश हुए तभीसे देशभरमें इसके विरुद्ध आन्दोलन मचा और एक स्वरसे आवाज उठी कि यह बिल भारतवासियोंकी स्वतंत्रता पर वज्राघात करनेवाले हैं, इससे सब सत्ता पुलिसके हाथमें आ जायगी, जिसको चाहेगी उसको पकड़ लेगी, जिसका न कोई गवाह हो सकेगा, न वकील और न अपील—इसलिये सरकार इन दोनों बिलोंको पास न करे। परन्तु सरकारने जब न लोक प्रतिनिधियोंका कुछ कहा माना और न जनताके ही विरोधका कुछ ख्याल किया तब महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गांधी सत्याग्रहकी लड़ाईके मैदानमें उतर आये क्योंकि भारतवासियोंके पास केवल यही एक उपाय है। महात्मा गांधीने इस अमोघ शस्त्रके द्वारा दक्षिण अफ्रीकामें कई बार विजय प्राप्त की है। इस सत्याग्रहकी आवाज जबसे महात्मा गांधीने उठाई तबसे सैकड़ों हस्ताक्षर सत्याग्रह पत्रपर हो चुके हैं। इसमें श्रीमान गांधी, श्रीमती गांधी, मिसेज बिसेन्ट, श्रीमती सरोजिनी नायडू, मि. हार्निमेन स्वामी श्रद्धानंद आदि अनेक बड़े २ नेता शामिल हो चुके हैं। तथा भारतके एक किनारेसे लेकर दूसरे किनारे तक महात्मा गांधीकी इस भीष्म प्रतिज्ञाका समर्थन हो रहा है।

हमारे पाठकोंको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि महात्मा गांधी अहिंसाके माननेवाले फिर ऐसी लड़ाई करनेके लिये क्यों उतारू हो गये आश्चर्यकी कोई बात नहीं है किन्तु जैनधर्मके प्रधान तत्व अहिंसाका रूपान्तर ही सत्याग्रह है। पाठको, जरा जंगलमें आइये और देखिये, वह सामने मुनि महाराज बैठे ध्यान कर रहे हैं जिनमें यह शक्ति है कि यदि दृष्टि उठाकर क्रोधसे किसीकी ओर देख दें तो वह भस्म हो जाय, यदि पैर तलेकी मिट्टी उठाकर किसीके मार दें तो उसका काम

तमाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराजको एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाते हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, दुष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहते हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परीषहसहन व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मारनेके पहिले ही कोई देवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्यको वहीं कील देता है या उसे उचित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका प्राण ही ले लेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर सुखका उपभोग करते हैं परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदंडकी आज्ञा देता है और नहीं तो मरने पर उसके लिये नरक खुला ही है, जहां नाना प्रकारके दुःख सहता है। इसलिये तात्पर्य यह है कि सत्याग्रह करनेवाले सदा मौन होते हैं और यह सत्याग्रह अन्याय और जुल्मोंके रोकनेको अहिंसात्मक शस्त्र है—शक्तिशाली हुए वैरियोंके नाशनेके लिये सुदर्शनचक्र है। पाठक ऐ, जैनी भाइयो, जो धर्मके पालनेवालो, स्वामी श्रद्धानंद (मुंशीराम एम. ए. जो १९ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने वह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी समाधि छोड़कर आना चाहिये—रुलानेवाले इन रौलटी बिलोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे पीछे न हटना।

* * *

बम्बई दि० जैन प्रान्तिक सभा। पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंसे जो बम्बई प्रान्तिक सभा कुछ निद्रित सी हो गई थी अब फिर जागृत हुई है। उसका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन आगामी मिती चैत्र सुदी १३-१४-१५ तारीख १३-१४-१५ अप्रैलको गजपंथाजी पर होगा। सभापतिका आसन **श्रीमान् सेठ सूरचंद भाई शिवरामजी** (मालिक फर्म सेठ नाथारंगजी गांधी बम्बई-दूकान) ग्रहण करेंगे इसी अवसर पर **दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन खंडेलवाल पंच महासभाका** अधिवेशन भी यहीं पर होगा। अतएव हमारा सर्व पाठकोंसे निवेदन है कि इन दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पधार कर जात्युन्नति और धर्मोन्नतिके कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रांतिक सभा केवल बम्बई प्रांतकी हो कर भी सारे भारतवर्षके जैनियोंकी उन्नतिका उपाय कर रही है। इसीके द्वारा 'जैनमित्र' पाक्षिकपत्र निकल कर अनेक प्रकार २ लेखोंके

सिवाय जैनसमाचार और देशके समाचार भारतके जैनियोंको सुनाता है इसके सिवाय इस सभाका अनुकरण प्रायः अन्य सभाएं कर रही हैं इस कारण सारे भारतके जैनियोंका कर्त्तव्य है कि इसके कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रान्तके जैनियोंको तो अवश्य ही इस अधिवेशनमें सम्मिलित होना चाहिये। सभाओंकी सफलता जितनी ही अधिक संख्यामें मनुष्य उसमें सम्मिलित होते हैं उतनी ही अधिक होती है इस कारण बम्बई प्रान्तके प्रायः से जैनी भाइयोंका एक अच्छा समूह गजपंथाजी पर इसमें शरीक होनेके लिये आना चाहिये, और जो प्रतिनिधि फार्म सभाकी ओरसे आवें उनको भी अपना प्रतिनिधि चुनकर और उसे भरकर सभाके आफिसमें बम्बई भेज दें।

सभामें अनेक धीमान, श्रीमान् पधारेंगे और जाति-उन्नति एवं धर्म-उन्नति पर विचार करेंगे तथा अनेक विद्वानोंके धार्मिक और सामाजिक व्याख्यानोंके सुननेका अवसर प्राप्त होगा इसके सिवाय गजपंथाजी तथा अंजननेरी (नवीनक्षेत्र) के दर्शन करनेका लाभ होगा। हमारा समाजके विद्वानों, व्याख्याताओं, श्रीमानों, धीमानोंसे भी निवेदन है कि इस अवसर पर पधार कर समाजके हितका विचार करें और इस नये युगके परिवर्तनमें सभा एवं समाजको किन२ उपायोंका अवलम्बन लेना चाहिये जिससे उन्नति हो सो सभाके सामने रखें।

स्याद्वाद महाविद्यालय काशीका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन राय नानकचंदजीके सभापतित्वमें ता० ८ मार्चको हो गया।



विवाह समयदान-इन्दौरके रायबहादुर सर सेठ हुकमचन्दजीने अपने विवाहमें डेढ़ लाख रुपया औषधालय और एक लाख रुपया जैन विधवाओं और जैन अनाथोंके लिये प्रदान किये हैं।

स्तुत्य दान-कारंजा (आकोला) के उदार चेता सेठ जम्बूशाह देवीदास चौरेने दश हजार रुपये श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम कारंजाके भवन बनानेके लिये प्रदान किये हैं।

मुरेना विद्यालय-इसका जो डेप्युटेशन निकला था पूर्व प्रकाशित ११८३७ के सिवाय वर्धामें ६५९), पुलगांवमें ९९६), आकोलामें ४५३), आरवीमें ७१४) और प्राप्त हुए। श्रीमती केसरबाई बड़वाहाने बिना किसी प्रेरणाके विद्यालयके ध्रौव्य फंडमें एक हजार एक रुपये दिये हैं।

आग लगी-गुजरात प्रान्त ता. जम्बुसर वड़च ग्राममें गत ता० ३० जनवरीको आग लग गई। मन्दिर जल गया पर प्रतिमाओंकी रक्षा कर ली गई।

जैनियोंका डेप्युटेशन-राजसभाओंमें जैन प्रतिनिधियोंके स्थानके आन्दोलनके लिये दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभाने अपने स्तवनिधिके अधिवेशन पर मि० लट्ठे और मि० कोठारीको इंग्लेण्ड जानेकी अनुमति दी है। मार्ग व्यय आदिके लिये कुछ चंदा भी हो गया है।

तमाम हो जाय इत्यादि, ऐसी महा शक्तियोंको धारण करनेवाले मुनि महाराजको एक दुष्ट तलवार लेकर मारनेके लिये आ रहा है, उसे देखकर मुनि अपने ध्यानमें लीन हो जाते हैं और विचारते हैं कि यह मनुष्य हिंसा करने आ रहा है, यह हमारी आत्माका कुछ न बिगाड़ कर भी इस शरीरको छिन्नकर अन्याय करेगा, परन्तु उसके बुरे कार्य, अन्याय, दुष्टताको जानते हुए भी अपने ध्यानमें लीन रहते हैं और समझते हैं कि यह तो अन्याय कर ही रहा है हम क्यों इसके साथ बुराई करें। पाठको यह मुनि महाराजका सत्याग्रह है या जैन धर्मका परीषहसहन व्रत है। इस व्रतका फल यह होता है कि मुनि महाराजके मारनेके पहिले ही कोई दैवी शक्ति आकर या संयोगसे कोई मनुष्य आकर उस हिंसक मनुष्यको वहीं कील देता है या उसे उचित दंड देकर मुनि महाराजकी रक्षा करता है। यदि अपने दुर्भाग्यसे वह मनुष्य मुनि महाराजका प्राण ही ले लेता है तो मुनि महाराज तो मोक्ष या स्वर्ग या उत्तम गतिमें जाकर सुखका उपभोग करते हैं परन्तु उस दुष्टको या तो राजा उसी भवमें प्राणदंडकी आज्ञा देता है और नहीं तो मरने पर उसके लिये नरक खुला ही है, जहां नाना प्रकारके दुःख सहता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि सत्याग्रह करनेवालेकी ही सदा जीत होती है और यह सत्याग्रह अन्याय और जुल्मोंके रोकनेका अहिंसात्मक शस्त्र है—कर्मरूपी दुष्ट वैरियोंको नाशनेके लिये सुदर्शनचक्र है। आशा है जैनी भाईयो, जो दयाधर्मके पालनेवाले, स्वामी श्रद्धानंद (मुंशीराम एम. ए. जो २५ वर्षसे राजनैतिक मामलोंसे अलग थे) के इन वाक्योंको ध्यानमें लेकर—कि इन रौलट बिलोंने यह समय उपस्थित कर दिया है कि योगियोंको भी अपनी समाधि छोड़कर आना चाहिये—रुलानेवाले इन रौलट बिलोंको दूर करनेके लिये अपना धर्म समझकर सत्याग्रहके व्रतसे पीछे न हटना।

बम्बई दि० जैन प्रान्तिक सभा।

पाठकोंको यह जान कर हर्ष होगा कि थोड़े दिनोंसे जो बम्बई प्रान्तिक सभा कुछ निद्रित सी हो गई थी अब फिर जागृत हुई है। उसका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन आगामी मिती चैत्र सुदी १३-१४-१५ तारीख १३-१४-१५ अप्रेलको गजपंथाजी पर होगा। सभापतिका आसन **श्रीमान् सेठ सूरचन्द भाई शिवरामजी** (मालिक फर्म सेठ नाथारंगजी गांधी बम्बई दूकान) ग्रहण करेंगे इसी अवसर पर **दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन खंडेलवाल पंच महासभाका** अधिवेशन भी यहीं पर होगा। अतएव हमारा सर्व पाठकोंसे निवेदन है कि इन दोनों सभाओंके अधिवेशन पर पधार कर जात्युन्नति और धर्मोन्नतिके कार्योंमें सहायता दें। बम्बई प्रांतिक सभा केवल बम्बई प्रांतकी हो कर भी सारे भारतवर्षके जैनियोंकी उन्नतिका उपाय कर रही है। इसीके द्वारा 'जैनमित्र' साप्ताहिक निकल कर प्रतिदिन उन्नत २ होता

आल इंडिया जैन पोलिटिकल कानफरेन्स।

ऊपरके शीर्षकका जो लेख श्रीयुत वाडीलाल मोतीलाल शाहने "दिगंबर जैन" अंक ३ वि० सं० १९७६में मुद्रण कराया है उस सम्बन्धमें मुझे यह साफ २ कह देना चाहिये कि मैंने जो वर्धाकी हकीकत प्रगट की थी वह श्रीमान पंडित धन्नालालजी व अन्य किसीकी प्रेरणासे नहीं की थी। पं० धन्नालालजी वर्धाके पीछे मेरे लेख लिखने तक न मुझे मिले और न कोई मेरा उनसे वर्धाके सम्बन्धका पत्र व्यवहार हुआ जब मैंने श्वेताम्बर जैन हेरल्डमें पटेल बिलकी पुष्टता सहित भाषण तथा इंग्रेजी जैनगजटमें उसके वर्णन बिना भाषण ऐसे दो भिन्न भाषण एक ही व्यक्तिके देखे तब मुझे खुलासा करनेकी जरूरत पड़ी। यदि जैसा बाबू अजितप्रसादजीने मुझसे कहा था कि भाषणमें यह बात न आयगी वैसा होता तब मैं उस बातको न लिखता। पटेल बिलकी पुष्टता पर न बोलने तथा न प्रगट होने सम्बन्धी बात जो कुछ हुई थी सो मेरी बाबू अजितप्रसादजीसे हुई थी। परन्तु इन बातोंसे मुझे यही विश्वास दिलाया गया कि सभापति साहब उस बातको सभामें न बोलेंगे। जब बोल चुके तब यह निश्चय कराया गया कि बोले तो बोले पर किसी पत्रमें प्रगट न होगा। बाबू अजितप्रसादजीने सभापतिकी राजी बिना मुझसे निश्चय रूपमें कहा था यों ही कहा इसके लिये मैं कुछ कह नहीं सकता। वाडीलाल मोतीलाल शाहने अपने इस लेखमें मेरे सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है उसपर मैं कुछ लिखना नहीं चाहता। मैं स्वयं अपनी तुच्छ बुद्धिवश जैसा कुछ समझता हूं उसके अनुसार जातिसेवा जो कुछ बने वैसा रंच मात्र करता हूं। मेरी अंतरंग भावना यही है कि जैनजाति श्री ऋषभादि तीर्थंकरोंके सच्चे आत्मानंदी धर्मको पहचाने और अहिंसाके तत्त्व पर चलकर मनुष्य समाजको ज्ञानादि बलोंसे बलिष्ट बनावें, पशुके ऊपर गुजरनेवाली वृथा निर्दयताओंको निर्मूल करे, वृक्षादि पर भी वृथा अन्याय न होने दे, आवश्यकतासे अधिक अन्नादि न खाकर बचावे जिससे अन्य प्राणियोंका लाभ हो, तथा यथाशक्ति धर्म व जाति तथा देशकी सेवामें लग जीवनको सफल करे।

शीतलप्रसाद ब्रह्मचारी।

दिव्य-गान।

आओ, स्वतंत्रते! कृपा करो!
काटो पराधीनता जाल, हमको दो आनन्द विशाल।
करनेको कृत कृत्य निहाल, भय, चिन्ता, सन्ताप हरो॥
बिना तुम्हारे देशोद्यान, (जो था अमरावती समान।)
हुआ हाय! बीभत्स्य महान, अतः देशपर हाथ धरो॥
पड़ती जहां तुम्हारी दृष्टि, होती वहां सौख्य जल वृष्टि।
जिससे प्रमुदित होती सृष्टि, अतः इधर निज दृष्टि करो॥
जिसमें होता है आवेश, नहीं क्लेश वही गिनता क्लेश।
इससे अब हममें सविशेष, स्वाभिमानका जोश भरो॥
हमपर प्रेम करो निर्व्याज, कृपया रखो मेरी लाज।
हमको दो आश्वासन आज, "घबराओ मत धैर्य धरो॥"
हमको दे करके उत्साह, शान्त करो छातीका दाह।
एवं कहो यही "सोत्साह, दुःख महोदधि स्वयं तरो॥"
हमको लखकर परम उदास, समझाओ आ कानके पास—
"बनकर अन्य जनोंके दास, हा! ..."

व्याख्यान।

(भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभाके चौवीसवें व दिगम्बरजैन मालवा प्रान्तिक सभाके पंद्रहवें अधिवेशन (कोटा–राजपूताना)के सभापति श्रीमान् राय साहब सेठ माणिकचंदजी सेठी तालिकुलमुल्कका भाषण जो गत ता॰ ७ फरवरीको पढ़ा गया।)

आदि पुरुष आदीश जिन।
आदि सुविधि करतार ॥
धर्म धुरंधर परम गुरु।
नमो आदि अवतार ॥

स्वागतकारिणी सभाके सभापति महाशय, जैनधर्मके पूज्यज्ञाता, प्रियभ्रातागण, माताओ तथा बहिनो।

जिस प्रतिष्ठित और प्राचीन जैन समुदायको महासभाके वार्षिक अधिवेशनोंमें ऐसे ज्ञानी, अनुभवी, कार्यदक्ष, व समाज सेवक सभापतियोंको समाजके सन्मुख उपस्थित होकर उसके कार्यके अवलोकन करने, त्रुटियों पर ध्यान दिलाने, व भविष्यके लिये सुगमताका मार्ग दिखानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है, आज उसी स्थान पर आप महानुभावोंने एक ऐसे युवकको खड़ा किया है जिसका अनुभव उसकी आयुके समान अल्प है, जिसके धर्म सम्बन्धी ज्ञान किसी प्रकार उन गूढ़ शब्दोंको अथवा मर्मोंको, कि जिनसे जैनधर्म पूर्ण है, आपके सन्मुख उपस्थित करनेके योग्य नहीं, और जिसको सांसारिक व्यापार व दूसरी उद्योगी कार्योंकी दक्षता उतनी ही कम है कि जितने कम अवकाश उसके प्राप्त करनेके लिये इस छोटी अवस्थामें उसको मिले हैं।

महानुभावो! इन त्रुटियोंके होते हुए भी यदि मैं इस समय आपके सन्मुख उपस्थित हो अपने टूटे फूटे विचारोंद्वारा आपकी सेवाके लिये उपस्थित हुआ हूं, तो उसका कारण यही है कि बचपनमें बड़ोंकी आज्ञा पालन करना, छोटोंके लिये एक बड़ा धर्म बतलाया गया है। मुझमें यह साहस नहीं कि जो आज्ञा आप महानुभावोंने दी है उसका उल्लंघन कर सकूं।

जिस समय मुझे सभाका आज्ञापत्र इस वर्षके अधिवेशनमें सभापतिका आसन ग्रहण करनेके लिये मिला, मेरे मनमें तरह तरहके संकोच पैदा होते थे; परन्तु थोड़े ही विचारके बाद मुझे यह ज्ञात हुआ कि समाजके नेताओंकी इस आज्ञामें भी अवश्य कोई बड़ा मर्म होगा, और यदि मैं अपनी अल्पबुद्धिके अनुसार उस प्रयोजनको आपके सन्मुख उपस्थित कर सकता हूं, तो वह यह है, कि एक युवक को इस ऊंचे स्थान पर खड़ा करके आपने जैन समाजके समस्त युवकोंको चेतावनी देकर आज्ञा दी है, कि अब समय आ गया है कि वे धर्मके विचारोंसे युक्त हों, अपने जीवनके चरित्रोंको शुद्धकर, समाज व धर्मकी सेवाके झंडेको हाथमें लें, इस महत्कार्यक्षेत्रमें तन, मन, धनसे इस प्रकार उपस्थित हों, कि एकबार फिर हमारी प्राचीन Philosophy का प्रभाव समस्त मनुष्य समाजके जीवनपर पड़कर उसका डंका दीप २ में बजने लगे।

अगर इसी कार्यकी सिद्धिके लिये हम बड़े

पदका गौरव आपने मुझे प्रदान किया है, तो मैं उसकी स्वीकृतिमें अपना अहोभाग्य समझता हूं; क्योंकि मेरा विचार है कि यदि मैं इस पदके संकेत व इस अवसरके महत्वको पूर्ण रीतिसे समझ उसका उपयोग कर सका, तो उसके द्वारा मेरे जीवनका कल्याण होगा और यदि समाजके युवक आपकी इस आज्ञा द्वारा अपने कर्तव्योंका ज्ञान प्राप्त कर वह कर्मपरायण हुए तो समाजका उद्धार होगा।

महापुरुषगण! आपकी इस असीम कृपाके लिये, जो आपने मुझ पर प्रगट की है, मैं किसी प्रकार अपनी कृतज्ञता शब्दों द्वारा नहीं प्रगट कर सकता।

छोटा जैसी छोटी सेवा कर सकता है अपनी शक्तिभर सेवा करनेका यत्न करेगा। आप कदापि आशा न करें कि मैं किसी प्रकार बड़े अथवा महत्वके विचार आपके सामने उपस्थित कर सकूंगा। युवक समाजके लिये सेवा बड़ा धर्म है, इसलियेमें अपने समाजके युवक बंधुओं व बहिनोंके लिये सेवाके भाव लिये हुए कुछ विचार उद्यत करनेका साहस करूंगा,

नया परिवर्तन।

अपने इन विचारोंको उपस्थित करनेके पहिले यह आवश्यक है कि हम उस बड़े परिवर्तनका कि जो इससमय दुनियांकी न केवलराज्य सीमाओं में, किन्तु समस्त मनुष्य समुदायके विचारों, परस्पर व्यवहारके विषयों तथा राजनैतिक नियमोंमें हो रहा है, ध्यान दें। यह कहना वास्तविक होगा कि संसारके समस्त द्वीपों व मनुष्य समाजके केन्द्रोंमें मनुष्य प्राणियोंके हृदय नई आशाओंसे, सेवा, भक्ति व प्रेमके भावोंकी हिलोरोंमें लहरा रहे हैं, और यदि इस बड़े परिवर्तनका कोई संकेत है तो वह यह है कि मनुष्य समाज **वीतराग विज्ञान** के मार्ग पर अपने विचार आरूढ़ कर रहा है। मुझे भय है कि यह बात बहुतसे सज्जन आश्चर्यकी दृष्टिसे देखेंगे, और यह ठहरावेंगे कि वीतराग विज्ञानके मार्ग पर कि, जो हमारे जैन सिद्धान्तोंके अनुसार तीनों लोकोंका सार है, समस्त मनुष्य समाजका ध्यान जा रहा है। यह कहना वास्तविक नहीं, किन्तु कल्पित है; परन्तु महानुभावो, मेरा विचार है कि यदि इस सर्वव्यापी युद्धकी उन साढ़े चार वर्षकी कठिनाइयों व दुःखोंके पश्चात् भी, कि जो मनुष्य समाजने उठाई हैं, राग व द्वेषसे रहित होकर आत्मज्ञानकी ओर उनको वैराग्य न हो तो यह बात आश्चर्यजनक होगी। संसारमें जितने दुःख, लड़ाइयां, वैर, निर्दयता व अत्याचार हम देखते हैं उनका एक कारण राग अथवा द्वेष होता है। राष्ट्रोंके स्वार्थ तथा उनके परस्पर द्वेषोंके कारण यूरुपमें इस महा युद्धकी रचना हुई, और जिस समय द्वेष व रागके अंग खिरने लगे, सत्य व धर्मकी* जय ने, जो प्रकृतिका नियम है, अपना रूप दिखा शांतिका झंडा दुनियामें फहराया। जिस राष्ट्रने अपनी अज्ञानताके कारण 'मनुष्य बाहुबल', तथा 'बुद्धिबल' को 'सत्य' अथवा 'आत्मिक बल' से ऊंचा समझा था, नीचा देखा जो राष्ट्र सत्य व न्यायके मार्ग पर थे उन्होंने

विजय प्राप्त की, और पिछले दो माहके समाचारपत्रोंको जिन सज्जनोंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है वह इसको अनुभव कर सकते हैं कि राष्ट्रीय परस्पर व्यवहार, मनुष्य समाजके जीवन तथा उनके विचारोंमें कितना बड़ा परिवर्तन हुआ है, और कितना और भी बड़ा परिवर्तन दुनियामें आनेवाला है।

जैनधर्मका गौरव।

इस प्राचीन धर्म समुदायके सभासदों तथा अनुयायियोंके लिये इससे बढ़कर गौरवकी और क्या बात हो सकती है कि इस परिवर्तनमें जो हुआ है और हो रहा है उसमें दुनियाकी मनुष्य समाज अपने दुःख व कठिनाइयोंसे प्राप्त किये अनुभव द्वारा हमारे उन प्राचीन व उच्च सिद्धान्तोंको, कि जिन पर हमारे अन्तिम तीर्थंकर श्रीमहावीर स्वामीने दुनियाके उद्धारके लिये स्वार्थरहित कार्य किया, उनको मनुष्य समाजके कल्याण व जीवनकी सफलताका साधन स्वीकृत करने लगी है।

महानुभावो! जैनधर्मके ये सिद्धान्त अब केवल हमारे सिद्धान्त नहीं हैं, इन सिद्धान्तों को मनुष्य समाज आज अपना कह रही है; हमको इसमें अपना गौरव नहीं समझना चाहिये। यह सब उन्हीं परमपूज्य श्रीमहावीर स्वामीके प्रभावका फल है।

बृटिशराज्य तथा सिंहासनके प्रति राजभक्ति।

व्यापी युद्धके समयमें भी अपना जीवन यथोचित रीतिसे शान्ति पूर्वक व्यतीत कर सके हैं तो उसके लिये आज हमारा यह स्पष्ट कर्तव्य है कि हम बृटिश राज्य तथा सिंहासनके प्रति, कि जिसको सम्राट जार्ज पंचम आभूषित करते हैं, अपनी सच्ची राजभक्ति प्रकट करें। महानुभावो, जैनधर्म व जैनसमाजको बृटिश सिंहासनकी छत्रछायामें बहुत सुगमताएं प्राप्त हुई हैं और इसलिये हमारा उस राज्यके प्रति भक्तिके भाव प्रकट करना स्वाभाविक बात है; परन्तु आज जब हम बृटिश राज्य सिंहासनको उन अटल नियमोंकी नींव पर जमा हुआ पाते हैं कि जो मनुष्य समाजके उद्धारके लिये मंगलकारी हैं, तो हमारा प्रेम व भक्ति उसके लिये स्वयं ही दुगनी हो जाती है। बृटिश साम्राज्य अब केवल ब्रिटेनके द्वीपके निवासियोंका राज्य नहीं है, वह राज्य आज उतना ही हमारा है कि जितना उनका। हम आज एक बड़े साम्राज्यके नागरिक होनेका गौरव रखते हैं, समानताके आधार पर बृटिश साम्राज्यमें हमारे नागरिक होनेका नया प्रमाण हमारे देश भ्राता लार्ड सिंहका बृटिश राज्यके मंत्री पद पर नियत होना तथा लार्डकी उपाधि उनको प्रदान किया जाना है, कि जिसका हरएक भारतवासी गौरव कर सकता है। इस साम्राज्यमें जैनधर्मके अनुयायियोंके लिये उन्नतिके सारे द्वार खुले हैं। महानुभावो, भविष्य हमारा पूर्ण व नई आशाओंसे भरा दृष्टिगोचर होता है।

बृटिश निवासियों तथा भारतवासियोंके

साम्राज्यके सिंहासन द्वारा परस्पर प्रेम व भक्ति की रस्सीमें संगठित होना दुनियाके भविष्यके लिये एक होनहार व दैवी बात प्रतीत होती है। धर्म और कर्म दोनों क्षेत्रोंके संगठनसे एक नये युगका विकास हो रहा है।

सम्राट्के पुत्रवियोग पर शोक।

ऐसे समय हमें यह जानकर दुःख हुआ है कि हमारे प्रिय सम्राट् जार्ज पंचम पर; कि जिन्होंने सम्राज्ञी सहित युद्धके घोर कठिन समय अनेक महत्वके कार्योंमें रातदिन परिश्रम करके योग दिया, पुत्रवियोगका वज्र पड़ा। प्रियसज्जनगण, गरीब अथवा अमीर, सन्तान सबके लिये एकसां प्रिय होती है, प्रजा और सम्राट्का संबंध जैसा मैंने निवेदन किया है हमारे साम्राज्यमें बड़ा घनिष्ट है इसलिये स्वाभाविक रीतिसे सम्राट्के इस दुःखमें उनकी जैन प्रजा भी उनके साथ सहानुभूति करती है और राजकुमारकी अकाल मृत्यु पर शोक प्रकट करती है।

कोटा नरेन्द्रको सभाका धन्यवाद।

महानुभावो, अब मैं आपकी आज्ञा लेता हूं कि जैनधर्मसमाजकी ओरसे श्रीमान कोटा नरेन्द्रका, कि जिनकी राजधानीमें आज हम अभिवशन करनेको एकत्रित हुए हैं, हार्दिक धन्यवाद प्रकट करूं।

नरेन्द्रमंडलकी स्थापना पर हर्ष।

हमारी समाजका अधिकांश भाग भारतीय देशी रियासतोंकी प्रजा होनेका गौरव रखती है, इसलिये हमको यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ है कि इस वर्षकी चीफ्स कान्फरेन्समें, जो दो सप्ताह पहिले देहलीमें हुई थी, यह निश्चित कर लिया गया है कि देशी रियासतोंके संबंधमें कठिनाइयोंको दूर करनेके लिये "नरेन्द्र मंडल" स्थायी व नियमितरूपसे स्थापित किया जावे। हमारा विश्वास है, कि हमारे भारतीय नरेन्द्रों का एक मंडल स्थापित हो जानेसे और उनके एक दूसरेसे परामर्श होनेसे देशी रियासतोंके शासनपर बड़ा उपयोगी प्रभाव पड़ेगा।

निस्वार्थ सेवकोंके प्रति कृतज्ञता

मैं पहिले निवेदन कर चुका हूं कि युवकोंके लिये सेवाधर्म परमधर्म है। महानुभावो, उस धर्म मार्गपर चलनेके लिये पहिला पाठ यही है कि हम उन महापुरुषोंके जीवन पर, कि जिन्होंने स्वार्थ रहित अपने तन, मन, धन द्वारा सेवा की, उसका मनन करें, व उनके गुणोंको जानकर उनका अनुकरण करनेका यत्न करें, व उनके लिये कृतज्ञताके भाव प्रकट करें।

ऊंचा पद उन्हीं महापुरुषोंका अधिकार है कि जिन्होंने सेवाको जीवनका मुख्य उद्देश्य समझ उसीमें अपना जीवन परमार्थके लिये व्यतीत किया। मैं क्षमा चाहता हूं, वह परमार्थ नहीं, किन्तु उच्चश्रेणीका स्वार्थ ही है, क्योंकि आंतरीय दृष्टिमें "स्व" व "पर" का अंतर वास्तविक नहीं किन्तु कल्पित है।

जैन समाजका इतिहास ऐसे आदर्श चरित्रोंसे शून्य नहीं है कि जिनका हमारा युवकसमुदाय अपने जीवनमें उपयोगिताके साथ अनुकरण कर सकता है।

हम अपने जीवनमें अनेक महान पुरुषोंको बड़ा कहते हैं क्यों? इसीलिये कि उन्होंने

बड़ी सेवाएं की हैं और करते हैं। हम उनको मान देते हैं, हम उनसे प्रेम करते हैं उसका कारण यही है कि आत्माको 'सेवा' प्रिय है। बड़ा कहलाना अथवा सेवक होना मेरे विचारमें एक ही मानी रखता है। जो व्यक्ति विशेप-रूपसे सेवा करते हैं उनका मान विशेप रूपसे किया जाता है। यह मान हम उनका नहीं करते; किन्तु उसके द्वारा हम उनके अच्छे गुणोंका अनुकरण करनेकी हार्दिक इच्छा प्रकट करते हैं, जिससे हमारे अन्दर भी उन्हीं गुणोंका विकास हो। ऐसी विशेप रीतिसे सेवा करनेवालोंकी गणना जिस समाजमें अधिक होती है उनका ही उस समाजको महत्व अधिक होता है। मैं समझता हूं कि "सेवा" जैन-समाजका मुख्य लक्ष है। परन्तु जहां इस समाजके प्रत्येक व्यक्तिका विशेप रूपसे सेवक होना चाहिये, अधिकतर भाग सेवाके भावसे शून्य दिखाई देता है। हमारी समाजके ऊंचे श्रेणीके सेवकोंकी गणना हाथ की पांच अंगुलियों पर की जा सकती है। महानुभावो, ऐसे महान पुरुषोंमें हम मात्र देवकुमारजी रईस आरा, डिप्टी चंपतरायजी रईस कानपुर, सेठ माणिकचन्द पानाचन्दजी जे. पी. बम्बई, सेठ द्वारकादासजी मथुरा, सेठ परमेष्ठीदासजी कलकत्ता, पं० गोपालदासजी न्यायवाचस्पति मुरेना, इन सबको कि जो यद्यपि आज हम संसारमें नहीं हैं, किन्तु उनकी अपूर्व सेवाके कार्योंके कारण गणना करते हैं और मैं, आप, व दूसरोंसे स्मरण करनेमें अपना गौरव समझते हैं।

वर्तमानमें मेरे भ्राता सर सेठ हुकमचंदजी इन्दौरनिवासी जो सेवा कर रहे हैं वह प्रशंस-नीय है व हमारी पूजनीय बहिन मगनबाई बम्बईवालीके अपूर्व कार्यसे आज इस समाजका बालक बालक भी भली भांति परिचित है।

सेवाके लिये विचारोंकी दृढ़ता।

मैं इन उदाहरणों द्वारा यदि आज अपनी समाजके युवक भ्राताओं व बहिनोंके सन्मुख सेवाके भाव उपस्थित करनेका साहस कर रहा हूं तो उससे मेरा तात्पर्य यही है कि सेवा वह धर्म है जिसके पालनसे न केवल अपने जीवनका कल्याण होता है, किन्तु समाज सुधार, देश सुधारके लिये भी यही एक मार्ग है, और इसीके द्वारा अन्तमें मनुष्य मोक्षको प्राप्त होता है। यदि यह विचार सत्य है तो क्या हमारे लिये यह उचित नहीं कि हम सब अप-नेको योग्य बनानेके लिये यत्न करें। भाइयो तथा बहिनो, सेवा बिना पूंजीके नहीं होती। सेवाके लिये जिस पूंजीकी आवश्यकता है वह सोना, चांदी व जवाहरात नहीं है, जो चलती फिरती छाया है। उसके लिये जिस स्थायी व अमूल्य पूंजीकी आवश्यकता है, वह हमारा दृढ़ विचार है।

विचारकी दृढ़ता इसलिये बड़ी पूंजी है, कि इसके होते ही दूसरी सारी कठिनाइयां भागने लगती हैं। इंग्रेजीके एक विद्वानका कथन है, "Where there is a will, there is a way" जो सेवा हार्दिक भावोंसे होती है वही सच्ची सेवा है। जो धनवान हैं वह अपने हार्दिक भावोंसे स्वतन्त्र धन अर्पण करके देते हैं, परन्तु

जिनके पास धन नहीं वह भी अवश्य उसका प्रमाण दूसरी रीतियोंसे दे सकते हैं। मनुष्य चाहे वह धनवान हो चाहे निर्धन हो, सेवाके अवकाश उसके लिये जहां भी हो, उपस्थित हैं।

अधिवेशनके सम्बन्धमें।

इतना कह कर अब मैं जैन महासभाके उन कार्य व उद्देश्योंकी ओर फिरता हूं कि जिनके लिये हम सब इतने वर्षोंसे बराबर यत्न कर रहे हैं और जिस संबंधमें आज एक बार फिर हम सब इस स्थान पर एकत्रित हुए हैं। यह उत्सव हमारी तीन सभाओंका सम्मलित उत्सव है, अर्थात् भारतवर्षीय दिगंबरजैन महासभा, श्री मालवाप्रांतिकसभा और हाड़ोती प्रांतिकसभा।

भारतवर्षीय महासभा।

भारतवर्षीय महासभाको स्थापित हुए, आज २४ वर्ष हो चुके हैं। मालवा प्रांतिकसभा १९ वर्षसे कार्य करती है, और हाड़ोतीप्रांतिकसभाको यह पहिला ही अधिवेशन है। यद्यपि नामके लिये हम इन तीन सभाओंको पृथक् २ नामसे पुकारते हैं, तदपि वास्तवमें वह एक हैं। भारतीय सभामें प्रांतिक सभाओंका स्थान वही है जैसे मनुष्यके शरीरमें अनेक अंगोंका है। हमारी जैनसमाजका शरीर भारतवर्षीय महासभा है। प्रांतीय सभाएं केवल उसके अंग हैं। इसलिये जो कार्यविवरण प्रांतीय सभाओंका है। वह स्वाभाविक रीतिसे महासभाका कार्य ही है। इतना ही नहीं, किंतु प्रान्तीय सभाओंका जन्म भारतीय महासभासे ही हुआ है और इसलिये आज जो कुछ जाग्रति हम अपनी समाजमें देखते हैं, उसका श्रेय महासभाको ही दिया जाता है। इसी महासभा द्वारा जैनगजट साप्ताहिकपत्र २४ वर्षसे प्रकाशित हो रहा है, तथा इसी महासभा द्वारा एक महाविद्यालय मथुरामें आज २०. वर्षसे स्थापित है कि जिसमें जैनसिद्धांतके साथ व्याकरण, काव्य, न्याय, कोष आदि विषयों पर शिक्षा दी जा रही है। महासभाका एक उपदेशक विभाग भी है। तीर्थोंकी रक्षाका जो कुछ कार्य इस समय तक हो सका है वह इसी महासभाका प्रताप है। इस महासभाकी इस समय निम्नलिखित प्रांतीय शाखासभाएं हैं:—

(१) मालवा, (२) बम्बई, (३) बुंदेलखंड, (४) बरार, (५) नागपुर, (६) हाड़ोती (राजपुताना),

महासभाका हेड कार्टर इस समय सहारनपुरमें है। मुझे भय है कि भारतीय महासभाका जैसा घनिष्ट संबंध प्रांतिक सभाओंसे होना चाहिये, वैसा इस समय नहीं है, क्योंकि यह स्पष्ट रीतिसे प्रतीत होता है कि प्रांतिक सभाओंके कार्यका निरीक्षण अथवा उनमें जैसा महासभाको योग देना चाहिये, वैसा नहीं होता, और संभवतः यही कारण है कि अनेक प्रांतीय सभाएं एक डोरीमें काम न करती हुई पृथक् पृथक् अपनी सुगमताओं व विचारोंके अनुसार कार्य करती हैं। इस विचारणीय विषय पर मैं यहां संकेतरूपसे आप महानुभावोंका ध्यान आकर्षित करता हूं। यह बड़ा ही आवश्यक है कि प्रांतीय और महासभाका कार्य इस प्रकार संगठित कर एक डोरीमें बांधा जावे, जिससे देशके अनेक

भागोंमें समाजसुधारका कार्य उत्तम रीतिसे चल सके, और इसके लिये मेरे कहनेकी आवश्यकता नहीं है, कि भारतीय महासभाका प्रबंध इस प्रकार निर्माणित किया जाना जरूरी है, कि जिससे समस्त प्रांतीय महासभाओंके प्रतिनिधियोंको उसमें योग देनेका अवसर प्राप्त होसके।

मालवा प्रांतिकसभा।

मालवा प्रांतिकसभा, कि जिसका यह १९वां वार्षिक अधिवेशन इसीमें सम्मलित हो रहा है, साधारण रीतिसे समाजसुधारका कार्य अपने अनेक विभागों द्वारा कर रही है। इस सभाके कार्यके मुख्य विभाग इस प्रकार हैं:—

(१) विद्याविभाग, (२) उपदेशकविभाग, (३) अनाथरक्षाविभाग, (४) सरस्वतीभंडार, (५) सभास्थापकविभाग, (६) तीर्थक्षेत्ररक्षाविभाग (७) ट्रेक्टप्रचारकविभाग (८) शुद्धऔषधालय विभाग, (९) मासिकपत्र विभाग।

जो कार्य इन अनेक विभागों द्वारा हो रहा है उसका विस्तरित वर्णन आपको वार्षिक रिपोर्टसे ज्ञात होगा। विद्याविभागकी उल्लेखनीय संस्थाएं "इन्दौरका महाविद्यालय, रतलामका जैनबोर्डिंग स्कूल, इन्दौरका प्रसिद्ध "श्राविकाश्रम" जो श्रीमती कंचनबाईकी उदारताका फल है, अथवा इन्दौर व बड़वाहाकी कन्या पाठशालायें हैं" मालवा प्रांतिक सभाके उपदेशक विभागका कार्य विशेष रीतिसे प्रशंसाके योग्य है, क्योंकि इसके द्वारा मालवाके अनेक स्थानोंको उपदेशका लाभ पहुंचा है और इस प्रांतीयसभाका शुद्धऔषधालयविभाग जिस रीतिसे कार्य कर रहा है वह कार्यकर्ताओंके लिये गौरवकी बात है। यह औषधालय समाजकी एक होनहार संस्था है। मुख्य बात इस औषधालयकी यह है कि औषधियां यहांसे सर्व साधारणको विना मूल्य दी जाती हैं। वास्तवमें इस औषधालय द्वारा प्रांतीय सभा समाजसेवाका एक अमूल्य कार्य कर रही है। इसकी इस समय शाखाएं मालवा प्रांतके उपरान्त मध्य प्रदेश, संयुक्त प्रान्त, नीमाड़, गुजरात, राजपूताना, बागड़ दक्षिण, पंजाब और नेपालमें स्थापित हो चुकी हैं? जिनकी संख्या ११२४ बताई जाती है। ट्रेक्ट प्रचार विभागने गत वर्षोंमें ७ ट्रेक्ट प्रकाशित किये हैं।

हाड़ौती प्रान्तिक सभा।

हाड़ौती प्रान्तिक सभा जिसका यह पहिला अधिवेशन है उसके लिये हम यहांके सभासदोंको हार्दिक बधाई देते हैं। आशा है कि यह सभा इस प्रान्तके लिये समाज सुधारके कार्यमें सहायक होगी।

सभाओंका प्रबन्ध व देशकाल।

सभाओंके प्रबन्ध द्वारा यद्यपि समाजसुधार इस समय तक अवश्य हुए हैं, अनेक कारणोंसे इन सुधारोंकी गति इतनी मन्द हुई है कि हम बहुधा यह नहीं बतला सके कि वास्तवमें जो सुधार हुए हैं वह सभाके कार्य द्वारा हुए हैं अथवा ये स्वयं समयके परिवर्तनका फल हैं। उन कारणोंमें कि जो इस देशमें हर प्रकारके सुधारोंमें बाधक रहे हैं, शिक्षाका अभाव अथवा शिक्षणप्रणालीकी त्रुटियां सबसे बड़ा व मुख्य कारण है। महानुभावो, यह एक मूल कारण हमारी सारी आपत्तियोंका पता ला सकता है।

शिक्षाप्रणाली जो इस देशमें पिछले १०० वर्षोंमें रही है वह भारतनिवासियोंकी आवश्यकतानुसार कदापि निर्माणित नहीं हुई थी; लेकिन एक बड़ा कार्य पिछली शताब्दीकी शिक्षाने जो इस देशमें किया है वह यह है कि पश्चिमीय विचारों व विज्ञानका प्रभाव अधिकतासे भारतवासियों पर पड़ा, और देशमें शान्ति रहनेसे एक प्रकारकी जागृति देश व समाजोंमें पैदा होने लगी, व जहां पश्चिमीय विद्वानोंने भारतवर्षकी प्राचीन philosophyके भंडारोंका अध्ययन करके उसके महत्वको स्वीकृत किया, हमारे देशमें समाजका अधिकतर भाग, जिसपर पश्चिमीय शिक्षाका प्रभाव पड़ा, स्वयं अपने धार्मिक ज्ञानसे वंचित रहा।

धार्मिक ज्ञानके अभावसे पुराने व नयोंसे विरोध।

धार्मिक ज्ञान, विचार तथा अभावसे शून्य शिक्षाप्रणालीने जिन पुरुष और स्त्रियोंको शिक्षित किया वह यदि हमारे प्राचीन धर्मके उच्च सिद्धान्तोंको अपने जीवनका साथ न बना सके, अथवा वे हमारे प्राचीन धर्मसे विमुख रहें तो क्या उसके लिये आप उन्हींको दूषित ठहरावेंगे? यह दोष, महानुभावो, उनका नहीं; किन्तु उस देश कालका है कि जिसमें उनको रहना पड़ना है। विषय बहुत बड़ा व महत्वका है, इसका उल्लेख यद्यपि मैं संक्षिप्त रीतिसे ही यहां पर कर सकता हूं, इस समय इसलिये आवश्यक है कि हमको वे कारण स्पष्ट रीतिसे मालूम होने लगते हैं कि जिनसे वर्तमान अनुसार शिक्षित युवक और उनके घरके बड़े बूढ़ों तथा बंधुओंमें जिन पर पश्चिमीय शिक्षा व विचारोंका प्रभाव नहीं पड़ा विरोध बढ़ता जाता है, इसीलिये एक ओर समाजमें ऐसे युवक पुरुष व स्त्रियोंको देखते हैं कि जो पश्चिमीय सभ्यताके वेगमें बहकर उन्हींके समान विचार स्वाभाविक रीतिसे करते रहते हैं, दूसरी ओर हम उन महान पुरुषोंको पाते हैं कि जिनको साधारण बोल चालमें "पुराने खयालातके लोग" कहनेकी प्रथा पड़ गई है।

आज इस देशकी प्रत्येक समाजके घर२ में यही विरोध दृष्टिगोचर होता है, जिससे सामाजिक सुधारके कार्योंमें बड़ी बाधाएं पड़ी हुई हैं, इतना ही नहीं किन्तु घर और कुटुम्बियोंके परस्पर व्यवहार व प्रीतिमें भी अन्तर पड़ता जाता है। महानुभावो व प्रियबन्धुओ व बहिनो इस बढ़ते हुए अन्तर व भेदका केवल एक और ही कारण है। और वह है, धार्मिक शिक्षाका अभाव, अथवा धार्मिक ज्ञानका उचित रीतिसे प्रचार न किया जाना। हमारे समाजके युवक यदि धर्मसे विमुख हैं अथवा उसकी ओरसे उदासीन हैं तो उसका कारण यही है कि धर्मज्ञान रोचक रूपमें प्राप्त करनेके लिये उनको सुभीते व अवसर प्राप्त नहीं हैं।

नये परिवर्तनमें जैन समाजके लिये नये अवसर।

मैं ऊपर निवेदन कर आया हूं कि दुनियामें बड़ा परिवर्तन हो रहा है, और भी बड़ा परिवर्तन मनुष्य समाज पर आनेवाला है, और यह भी निवेदन कर चुका हूं, कि दुनियाकी समस्त मनुष्य समाज वीतराग विज्ञानके मार्ग पर

अपने विचार आरूढ़ कर रही है, पश्चिमीय राष्ट्रोंको यह अनुभव हो गया है कि कोई सभ्यता, कि जो धार्मिक आधार पर नियमित न हो, सभ्यता नहीं कही जा सकती। धार्मिक शिक्षाको पश्चिमीय राष्ट्र अब अपनी शिक्षा प्रणालीमें महत्वका स्थान देनेकी चेष्टा कर रहे हैं।

महानुभावो; यही बड़ा परिवर्तन भारतमें भी नई आशाएं और नई सुगमताएं पैदा कर रहा है। देशकी राजनैतिक दशाके सुधारके साथ ही शिक्षा प्रणालीका सुधार सामाजिक सुधार विषयों पर एक नया प्रकाश डाल रहा है। नई पद्धति पर शिक्षाका विस्तारके साथ देशमें प्रचार होनेसे बहुतसी कठिनाइयां दूर भागती दिखाई देंगी। नये अवसर व नये विचार समाज व समाजोंके कार्य करनेके लिये आज हमारे सामने आ उपस्थित हुए हैं।

धर्मके उच्च सिद्धांतोंके प्रचारके लिये मेरे विचारमें अद्वितीय है। मनुष्य समाज दुःख व आपत्तिके कारण वैराग अवस्थामें है। हमारे देशवासी पश्चिमीय सभ्यताके टुकड़े होते देख चकित हैं. उनके [illegible]में हमारे प्राचीन धर्म व सभ्यताका गौरव अभी मौजूद है। विचारवान [illegible] यो सिद्धान्तोंके भाव पाठशाला[illegible] है [illegible] यह जाननेके लिये [illegible] विद्यालयका काम [illegible] के प्राचीन धार्मिक योग्य है, क्योंकि इसके [illegible] भरे हुए ग्रन्थोंपर उनकी स्थानोंको उपदेशका [illegible] प्रकार उनके जीवनको [illegible] गुरुकुल [illegible] सकते हैं, वे किस प्रकार कार्य कर रहा है यह [illegible] उच्च सिद्धान्तों पर चल

गौरवपूर्वक अपना जीवन इस प्रकार व्यतीत कर सकते हैं, कि जिससे यह देश भक्त बनें, अच्छे नागरिक कहलावें, पुरुषार्थी बनें, समाजके आभूषण हों, मनुष्य समाजके सेवक हों, व अपने जीवनके धन्धोंमें सफल हों, व उन्नतिशाली कहलावें।

(अपूर्ण)

कलावती ।

(लेखक-श्रीयुत रूपकिशोर जैन, विजयगढ़)

(गतांकसे चालू ।)

५

कलावती विवाह कर शंख नगर आ गई उसने अपनी राजधानीमें अनेक विद्यालय, वाचनालय, अनाथालय, भिक्षुकोंको अन्न वस्त्र, रुग्ण मनुष्य और पशु पक्षियोंको स्वास्थ्यागार, पथिकालय स्थापित किये; बड़े २ जैन मन्दिर निर्माण कराए जिनमें शास्त्र विहित पूजा प्रक्षालनके लिये बुद्धिमान पुजारी नियत किए थे। निदान राजा और रानी बड़े प्रेमसे कालक्षेप करते थे।

कलावतीके सद्भावसे राजा शंख कुछका कुछ बन गया था यह प्रजासे दशमांश भूमि कर लेता था सो भी बलात् नहीं। प्रजा धन धान्यसे परिपूर्ण थी धन, जन, बल आदि किसी शक्तिकी कमी न थी। रानीने कुछ दिनोंमें गर्भ धारण किया।

गर्भ चिन्ह देख राजाको अति हर्ष हुआ परन्तु हर्ष क्षणभंगुर था समय पलट गया। कराल कालकी ऐसी ही विकराल गति है कि आबाल वृद्ध किम्वा पशु इत्यादि इसके जगज्जालमें पड़ कर धराशायी होते हैं।

युवराज जयसेन अपनी बहिन कलावतीको इतने दिन बीतने पर भी विस्मरण न कर सका अपने विश्वस्त सेवकों द्वारा शंख नगर बहिनको बुलाने सन्देशा भेजा। परन्तु शंख रानीको प्राणोंसे अधिक प्यार करता था प्रेमविरह भेजना अस्वीकार किया।

जयसेनने बहिनके लिये दो उत्तम, रौप्य खचित साड़ी भेजी थीं जिनमें यथास्थान बेल बूटोंमे जयसेनका नाम अंकित था।

साड़ी पाकर कलावती अति प्रसन्न हुई। उसने एक साड़ी अपने सुकोमल अंग पर धारण कर परिचारिकाओंसे कहा-" इस साड़ीमें सच्चे प्रेमकी गन्ध आती है, वास्तवमें इसका भेजनेवाला मुझे हृदयसे प्यार करता है।"

शंखने अन्तःपुरमें प्रवेश किया-" साड़ीका भेजनेवाला मुझे हृदयसे प्यार करता है।" रानीके मुखसे सुनकर राजा शंखको बड़ी शंका हुई उसने समझा रानी मुझे नहीं चाहती और किसीसे इसका गुप्त प्रेम है। यह सोचते २ उसका शरीर कांपने लगा क्रोध कम्पित अधरों पर दन्तारोपण होने लगा।

क्रोध मनुष्यको हतबुद्धि बना देता है ज्ञान नष्ट हो जाता है। शंखका मन ऐसा फिरा कि उसने रानीको देशसे निकाल देना निश्चय कर लिया। दिनभर इसी चिन्तामें बीता रातको चाण्डाल बुला राजाने आज्ञा दी-" रानीके दोनों हाथ काटकर वनमें त्याग आओ।"

रानी सो रही थी। चांडाल सुप्तावस्थामें ही गोद दूर उद्यानमें ले गया। सचेत हो रानीने वनमें लानेका कारण पूछा।

चाण्डालने राजाज्ञा-निर्दयिग दण्ड कह सुनाई। रानी सुनकर वज्राहतकी भांति स्तम्भित रह गई, चम्पे जैसा उज्वल रंग पाण्डु रोगीकी नाँई पीला पड़ गया, सहस्र वृश्चिकदंश समान वेदना होने लगी। उसने बहुत सोचा परन्तु कोई अपराध उसे ज्ञात न हुआ उसने अनिवार्य अश्रु बहाते हुए कहा-"बन्धु, हाय क्या समस्त शरीर ही प्राणेश्वरका है यदि उन्हें......" कंठ भग्न हो गया आगे कुछ न कह सकी।

यद्यपि चांडाल आगेकी निधन वार्ता समझ गया परन्तु रानीका सुकुमार शरीर तेज पुंज देख हाथ न काट सका।

रानीने चाण्डालको सोच निमग्न देख कहा-"तुम सेवक हो राजाकी आज्ञाका पालन कर शीघ्र लौट जाओ।"

चाण्डालने देखा पास ही एक शव पड़ा है उसने रुद्ध कण्ठसे कहा-" माताजी, अपनी अंगुली और कंगन इस बांहमें डाल दीजिये मैं काट ले जाऊंगा"

यह कहकर चान्डाल अश्रुधारासे अपना वक्षस्थल भिगोने लगा।

दूसरे दिन जब कटे हुए हाथ राजाके पास पहुंचे तो उसे बड़ा दुख हुआ नेत्रोंसे अश्रुधारा बहने लगी। परन्तु बहुत दिनों तक अनेक चेष्टा करने पर भी राजा रानीको विस्मरण न कर सका।

६

राजमहिषी कलावती निर्जन वनमें बैठी दग्ध हृदय और भग्नकण्ठसे अश्रु बहाते हुए भगवान जिनेन्द्रसे प्रार्थना कर रही है "प्रभो, मैं तो सती मेरी निष्कलंकताके लिये आप ही साक्षी हैं। बस अपने चरणोंमें मुझ दीनातिदीनको आश्रय दो। भगवन्, तुम सर्वज्ञ हो मरण पश्चात् मेरे शुद्धाचरणके विषयमें प्राणेश्वरको पूरा विश्वास होने देना। यदि आप पर मेरा दृढ़ भाव हो-यदि इस अभागिनीकी आपको लज्जा हो तो मरनेके पूर्व एकवार प्राणेश्वरका शुभ दर्शन मिले एक मात्र यही आकांक्षा है।"

रानी जब अनिद हुई तो सामने ही एक साधु महात्मा दृष्टिगत हुए। साधुने विस्मित हो पूछा "पुत्री, तू कौन है?" महारानी कलावतीने अपनी दुखद कथा आद्योपान्त कह सुनाई। साधु नवजात शिशु देखकर अति विषम हुआ उसने दीर्घनिश्वास त्याग पूछा-"पुत्री, क्या किसी साथीके आनेकी प्रतीक्षा है।"

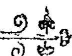
कलावतीने दीर्घनिश्वास त्याग कर कहा-"साथी, एक वही सर्व नियन्ता महावीर स्वामी हैं।"

साधुने समझा कोई कुलीन रमणी है। व्यर्थकी झंझटमें पड़ पतिसे तिरस्कृत हुई है अस्तु। उसने आश्वासन देकर कहा-"जब महावीरके नाममें तुझे इतनी श्रद्धा है तो जबतक तेरे दिन न फिरें हमारे महावीर नामक विहार (आश्रम) को चल यथासम्भव तुझे कुछ कष्ट न होने देंगे।

साधुके उपदेशसे रानी विहारमें जा रही। वह सांसारिक दुःखोंसे मुक्त हो भिक्षुकनियोंकी गोष्ठीमें आनन्दसे जीवन बिताने लगी।

७





सती साध्वीको कलंकित कर मैंने अपार कष्ट दिया। (दीर्घ निश्वास त्याग) आह ! ऐसा अधर्म करके भी मैं जीवित हूं । पापाग्नि, क्यों नहीं मुझ नृशंस कुलाधमको भस्म कर देती ! छत, तू ही क्यों नहीं गिर पड़ती, क्या मैं संसारमें मुख दिखाने योग्य हूं। हाय । रानी ! हा प्राणेश्वरी ! ! " कहते २ राजा अचेत हो गया ।

जब राजा चैतन्य हुआ तो उसने निश्चय किया " जिस प्रकार करविहीन रानी सिंह हिंस्र भयानक पशुओंका कवर हुई है उसी प्रकार मुझे भी प्राण विसर्जन करने चाहिए । " यह सोचकर राजा वनमें जानेको उद्यत हुआ ।

कर्मचारीगण एवम् प्रजाके कानों तक जब उपरोक्त दुःखद घटना पहुंची तो अति विषन्न हुए । सब यही जानते थे कि देवनगरसे आए हुए उनके साथ रानी मायके गई हुई हैं परन्तु राजाने मिथ्या भ्रमवश रानीको त्यागा और दोनों हाथ कटवा चाण्डाल द्वारा निर्वासन दण्ड दिया है तो वह जन सब त्राहि २ करने लगे । सबके भीषण आर्तनादसे स्वर्गोपम शंख नगर छिन्नतपुर दर्शने लगा । क्योंकि रानी जबसे विवाह कर आई प्रजामें धन, जन, बल आदि किसी शक्ति की कमी नहीं रही थी । जनता उन्नतमना नवाविष्कारोंमें लीन थी कि सहसा ऐसा वज्रपात हुआ । अस्तु, ऐसी प्रजापालनैक तत्पर, शंखनगर राज्यकर्त्री सम्राज्ञीको खोकर प्रजा कैसे सन्तोष करती उनका असीम दुःख अकथनीय है ।

राजा वन जानेको उद्यत है । सबही सन्मार्ग पर लानेकी चेष्टा करते हैं परन्तु रानीके वियोगने राजाकी दशा विक्षिप्ततामें परिणत कर दी है। अतएव कोई उसके निश्चयको भङ्ग करनेमें समर्थ न हुआ ।

राजके हृदय पर इसका कुछ प्रभुत्व था परन्तु वह स्वतः विदेशमें व्यापार गया हुआ था अस्तु परस्पर परामर्श कर सब लोग नगरश्रेष्ठीको बुला लाए ।

नगरश्रेष्ठीने राजाको विपन्न देखकर कहा-'राजन् बिना विचारे एक बार जो कुछ आपने किया उसका परिणाम कैसा भयकर और दुखदाई हुआ अब आप पुनः बिना विचारे काम करते हैं जिसका प्रायश्चित होना असम्भव है । कल एक योगिराज अमिततेजसे साक्षात् हुआ था वह यहीं वनमें ही निवास करते हैं यदि आप उनसे उपदेश लाभ करेंगे तो अवश्यमेव शान्ति मिलेगी ।

८

योगीराज अमिततेजने राजाको उपदेश दिया । " यह संसार कर्म भूमि है मन, वचन, और कर्ममें जो कार्य सम्पादन होगा अवश्यमेव उसका फल भोगना पड़ेगा-" यान्यधोरो प्रजन्तुर्जीनरः स्वैरेव कर्मभिः । कूपस्य खनिता यद्वत्प्राकारस्येव कारकः ।

यह समझना कि सुख दुःख किसी औरने जन्म दिया है भ्रम है यह हमारे कर्मोंका फल है । लौकिक भी उक्ति है कि 'प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः' अन्-समस्त दर्शनकारोंने भी कर्मकी सत्ता शब्दान्तरसे स्वीकार की है और फल भी कर्मानुसार ही मानकर अपने २ सिद्धान्तका समर्थन कर सके हैं, केवल कर्मोंके जड़ होनेसे उनका प्रेरक ईश्वर अथवा कोई दूसरा कारण माना है परन्तु जैन लोग स्वात्मासे भिन्न कोई कारण नहीं मानते । यद्यपि कर्म जड़ है तथापि उसकी अनन्त प्रकारकी शक्तियां हैं अतएव शुद्ध-बुद्ध-निरंजन अनन्त शक्तिके स्वामी आत्माको अज्ञानी बनाकर, अपने आधीन शुभाशुभ गतिमें लोहेको चुम्बककी तरह खींचती भांति रहता है उसमें दूसरे प्रेरककी वह अपेक्षा नहीं करता यदि यह शंका की जावे कि जड़ अपकार या उपकार कैसे कर सकता है ? तो एक मदिराको ही ले लीजिये जड़ होने पर आत्माके उपकारक और अनुपकारक प्रत्यक्ष सिद्ध है इसी प्रकार कर्म जड़ होने पर भी आत्माको मोहित कर लेता है । कर्मके प्रायः तीन साधारण रूप हैं, प्रारब्ध-क्रियमाण और संचित । प्रारब्ध तो वर्तमान दशामें

फल दे रहे हैं, क्रियमान् किये जा रहे हैं जिनमेंसे बहुधा संचित होंगे जो आगामी जन्ममें प्रारब्ध बनेंगे।

राजन्, आपने ईर्षा और सन्देहवश रानीको दुःख दिया। आपको विचारना चाहिए ऐसा क्यों हुआ? आपने जिसको दुःख दिया कर्मवश उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्मशुभाशुभ।" जो बीज आपके मनमें उत्पन्न हुआ है जलाकर भस्म कर दीजिये यदि इसमें अंकुर निकल आए तो आपको दुःसह यातना भोगनी पड़ेगी। अब विचारसे काम लें तभी कल्याण होगा।'

योगीके उपदेशसे राजा कुछ शान्त हुआ उसने मन आना किसी और समयको वचित कर दिया।

एक दिन राजाने योगीराजसे कहा—"महाराज, रात मैंने एक स्वप्न देखा है-कल्पवृक्षकी एक लता नीचेकी ओर झुकी हुई है जिसमें एक सुन्दर अनमोल फल लगा हुआ है। इच्छा करते ही लता मेरी ओर झुक जाती है। और......"

बीचमें बात काटकर योगीराजने कहा—"राजन, योग होता है अब आपके दिन फिरे। यह विश्वास रखिए अभी आपकी रानी जीवित है उसने पुत्र प्रसव किया है। आप शीघ्र ही अपने धन अनिंद्य नव शिशुका सुन्दर मुख अवलोकन कर आनन्दित होंगे। आप इसलिए वनमें रानीकी खोज कराइये।"

थोड़ी देर पीछे दत्त राजसभामें उपस्थित हुआ। राजाने भ्रमवश रानीके प्रति किया हुआ अत्याचार रो २ कर कह सुनाया।

दत्तने बड़ा पश्चात्ताप किया—"राजन्, कलावती स्त्री नहीं थी वह मानवी वेशमें साक्षात स्वर्ग राज्यकी अधिष्ठात्री देवी थी। ओह! आपने बिना विचारे हाथ कटवाकर जनसमाजमें कितनी थू थू कराई। लज्जासे बेचारी किसीके सामने आवेगी, आह! यह अपना मुख धोने तकसे असमर्थ होगी!"

' दत्त! मैं रानीकी स्वयम् सेवा सुश्रूषा करूंगा वह बड़ी कष्टसहिष्णु सती साध्वी है मुझे क्षमा कर सेवामें अंगीकार करेगी। अस्तु जिस प्रकार हो सके एकबार रानीसे साक्षात् करा दें मैं तेरा चिर कृतज्ञ रहूंगा।" यह कहकर राजा अश्रुधारामें अपना वक्षस्थल भिगोने लगा।

दत्तने दीर्घनिश्वास त्याग कर कहा—"रानी अवश्यमेव आपको क्षमा कर देगी परन्तु उसका मिलना अति कठिन है। अस्तु अब मैं जाता हूं, यथासम्भव ढूंढ खोजकर शीघ्र लौटूंगा।" यह कहकर दत्तने चाण्डालसे वन इत्यादिका पता पूछकर उसी ओर पयान किया।

साधुके उपदेशसे दश विहारमें आया। यहां उसने अच्छे साधुओंका समाज देखा सहसा कोनेमें बैठी हुई एक भिक्षुकनी पर उसकी दृष्टि पड़ी जो अपने बालकको गोदमें लिये लोरी गा रही थी, हस "हा रानी! हा रानी!!" कहकर चरणोंमें गिर पड़ा। रानीके नेत्र भी नीरव न रह सके पद भी अश्रुधारामें अपना वक्षस्थल भिगोने लगी। इसने राजाका पश्चात्ताप, वियोगाग्निमें जर्जरित होना अपार दुःख तथा आद्योपान्त वह सुनाई और रानीसे, वियोगी आसन्न मृत्यु राजाको दर्शन दे पुनर्जीवित करनेकी प्रार्थना की, परन्तु रानीने अपने आश्रयदाता साधुसे आज्ञा लेनेको बाध्य किया। अस्तु इसने रानीको संग ले जानेकी साधुसे प्रार्थना की।

यद्यपि इसके कहनेसे राजाकी मनोवेदनाका आभास मिल चुका था परन्तु कलावती सती साध्वी है इसका राजाको पूर्ण विश्वास तथा हार्दिक अनुताप देखनेके अभिप्रायसे साधुने राजाको स्वयम् आकर रानीको लिवा ले जानेकी आज्ञा दी।

१०

साधुकी आज्ञानुसार राजा अपने परिचारियों सहित महावीरविहारमें आया। सबसे पूर्व श्री जिनेन्द्र भगवानके दर्शन किये साधुजनोंको बहुत कुछ भेंट अर्पण की तब राजा उस कोठरीमें आया जहां रानीका आवासस्थान था।

कलावतीने स्वयम् अपना करविहीन प्रतिबिम्ब एक कोनेमें स्थापित किया था एक ओर छोटी शय्या पर नवशिशु सुलाया था जो अपने अंगु ठेको चूस रहा था।

राजाने ध्यानपूर्वक प्रतिबिम्बकी ओर टकटकी लगा दी, उनका कोमल हृत्पिण्ड फटने लगा। महीनोंसे जिस मोहनी मूर्तिको हृदय मन्दिरमें स्थापन कर प्रति समय आराधनामें निमग्न रहते थे वही प्राणप्रिया सन्मुख विद्यमान है यह देख भला उन्हें किस प्रकार सन्तोष होता। आज उनकी चिराकांक्षा फलीभूत हुई है वह दौड़कर मूर्तिके पैरोंमें गिर पड़ने ही को थे कि सहसा किसीने पीछेसे राजाका हाथ पकड़ कर कहा—"प्राणेश्वर, अभागी कलावती यह है! वह तो मूर्ति है।" यह कहकर रानी कलावती राजाके शरीरसे लिपट गई। दोनोंके गण्डसे यह अविरल नयनाश्रु झरने लगे।

राजा लज्जासे नमित मुख त्यक्त कलावतीको पश्चात्ताप दृष्टिसे देखते हुए भग्नस्वरसे कहने लगे "प्यारी क्षमा! प्यारी क्षमा!!"

कलावतीने राजाके हाथ जोड़कर कहा—"हैं हैं! प्राणनाथ, आप हाथ न जोड़ें यह काम मेरा है मैं तो आपकी दासी हूं 'पुरुषाण्यपि या प्रोक्ता दृष्ट्वा या न धर्मचक्षुषा। सम्प्रसन्नमुखी भर्तुर्या नारी धर्मभागिनी।'

राजाने दीर्घनिश्वास त्यागकर कहा—"ओह, मैंने यह अत्याचार किया निस्सन्देह मैं पापी हूं प्यारी, मुझे कैसे क्षमा करोगी!"

रानी कलावतीने आंचलसे राजाके आंसु पोंछकर कहा 'स्वामिन् आपका कुछ अपराध नहीं है पूर्वोपार्जित कर्मवश मुझे यह सब यातना भोगनी पड़ी परन्तु आपके हृदयमें मेरे लिये प्रेम...!"

नवशिशु राजकुमार नीचे बैठा रो रहा था राजाने उसे गोदमें उठा लिया। अपरिचित राजाका मुख देख बालक और अधिक रुदन करने लगा। राजाने मुखचुम्बन और मस्तिका घ्राण पश्चात रानीसे कहा 'बालक इसलिये रोता है कि वह एक पापीकी गोदमें है।

"नहीं नहीं महाराज, इसके कारण यह अज्ञात है। बालक समझता है अब इसका सच्चा आश्रयदाता मिल गया।"

सभ्य पाठक, पति पत्नीकी क्षमा प्रार्थना लिखकर अब हम इस प्रकरणको अधिक करुणाजनक नहीं बनाया चाहते वरन् प्रार्थना करते हैं कि हमारी बहिनें इसी प्रकार धर्मज्ञ सती साध्वी बन भगवान जिनेन्द्रदेवके आदेशित कार्योंके सम्पादनमें प्रवृत्त हों। तब ही नारी जन्म सफल होगा।

व्याख्यान।

श्रीमान सेठ सुखदेवजी वज ऑ० मेजिस्ट्रेट।

सभापति स्वागतकारिणी सभा, भारत दि० जैन महासभा, मालवा दि० जैन प्रां० सभा और हाड़ौती प्रां० सभाका संयुक्त अधिवेशन

कोटा।

पंच परम पद प्रणम कर नमूं शारदा माय।
जा प्रसाद उद्यत भयो स्वागतार्थ सुखदाय॥

प्रिय सज्जनवृन्द और महिलाओ,

आज आप लोगोंको इस स्थानमें एकत्रित देखकर जो हर्ष होता है वह वचनातीत है। और आप लोगोंका स्वागत करते हुए मुझे बहुत ही आनन्द होता है, निःसन्देह यह मेरे कोई पुण्य प्रकृतिका ही उदय है जो आप जैसे महानुभावोंके स्वागत करनेका यह अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ है। इसीलिये मैं इसे अपना पूर्ण सौभाग्य और कर्तव्य समझ कर ही इस कार्यमें अग्रसर हुआ हूं। यद्यपि मैं इस कार्यमें बिल्कुल ही अननुभवी हूं और इससे पहिले कभी भी मुझे ऐसा अवसर प्राप्त नहीं हुआ है तो भी अपने भाइयोंके उत्साह दिलाने और इस भावी आनन्दका विचार करके ही स्वागतार्थ उद्यत हो गया हूं, इसमें सन्देह नहीं है कि मेरा यह प्रथमावसर होनेसे संभवतः कितनी ही त्रुटियां इस कार्यमें रह जांय परंतु तो भी आशा है कि वे आप जैसे उदार पुरुषोंके सन्मुख क्षन्तव्य होंगी, कारण कि जिस प्रकार आप लोगोंने मार्गके शीतादि कष्टोंको झेलकर तथा अपने द्रव्य और समयको व्यय करके कृपापूर्वक पधार कर हम लोगोंको आभारी किया है और अपने धर्मानुरागका पूर्ण परिचय दिया है उसी प्रकार ये त्रुटियां भी क्षमा की जावेंगी।

सबसे प्रथम मैं राजराजेश्वर पंचम जार्ज महाराज तथा महाराजाधिराज कोटा नरेशका हृदयसे अभिनंदन करता हूं कि जिनके न्याय शासनमें हम लोग निर्विघ्नतापूर्वक अपने २ धार्मिक और सामाजिक उन्नति सम्बन्धी कार्य करनेमें समर्थ हुए हैं। इसके पश्चात् मैं श्रीमान न्यायाधीश दीवान बहादुर महाशय तथा अन्य राज्यवर्गीय पुरुषोंका भी आभारी हूं कि जो समय समय पर उत्तम प्रबन्ध द्वारा धार्मिक कार्योंमें सहायता पहुंचाते रहते हैं तथा इस अवसर पर भी बहुत कृपा दिखाई है।

हर्षका विषय है कि इस शुभअवसर पर हम लोगोंको अपनी जातीय व धर्म सम्बन्धी उन्नति विधायक मन्तव्योंको प्रगट करनेका समय मिला है इसलिये हम लोगोंका भी कर्तव्य है कि इस अवसरको शक्तिके अनुसार यों ही न जाने देवें और अपने अपने मन्तव्योंको प्रगट करके सर्व सम्मत्यनुसार कर्तव्य स्थिर करके उस पर चलनेका दृढ़ संकल्प कर लेवें ताकि भविष्यमें फिर भी हम लोगोंको पिष्टपेषण (पिसे हुवे को पीसना) करना न पड़े अर्थात् पुराने पास हुए प्रस्तावोंको फिरसे पास करनेका अवसर न आवे और हम आगे आगे बढ़नेमें समर्थ होवें।

क्योंकि जिस समय अन्य समाजें आगे आगे बढ़ी जा रही हैं उस समय हम लोग अपने ही स्थान पर ध्रुव रहें यह बात हमारे अस्तित्वकी विघातक है अर्थात् हम अपने स्थान पर भी नहीं रह सके हैं। हमारा ऐसी अवस्थामें अवश्य ही पतन होगा जैसा कि पूर्व कालीन इतिहासोंको देखनेसे और आजकी स्थिति पर विचार करनेसे विदित होता है। अर्थात् एक वह था कि जब भूमंडलमें यह धर्म दिगन्तव्यापि हो रहा था और जगत सेठ जैसे धनी व पं० प्रवर टोडरमलजी, सदासुखदासजी प्रभृति विद्वानोंसे यह समाज परमकांतियुक्त हो रहा था। आज उसी समाजमें गिने चुने नाम मात्रके लिये दो चार विद्वान व श्रीमान् रह गये हैं और जनसंख्या भी उत्तरोत्तर ह्रास होती हुई अर्थात् प्रति दश वर्ष (मनुष्य गणना)में अपने १०००० हजार भाई भगनियोंको खोकर चुपकी बैठी है अर्थात् इस समय इसकी कुल संख्या (दिगम्बर, श्वेतांबर, स्थानकवासी मिलकर) केवल १२६०००० साढ़े बारह लाख ही रह गई है। यदि यह क्रम बराबर चालू रहा तो अढाई सौ २९० वर्षोंमें फिर स्वच्छ मैदान दृष्टिगत होगा शायद इतिहासके पृष्ठों पर ही जैन व जैनी शब्द दिखाई देगा। महानुभावो, क्या हमारा इस समय भी यही कर्तव्य है कि हम लोग जाति व धर्मकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर केवल अपनी पूर्वोपार्जित लक्ष्मी व भोग सामग्रियोंमें तल्लीन हुये अपने मनुष्य जीवनको अन्य प्राणियोंकी नाई बिताकर कालके मेहमान बन जाय। संसारमें यावत् प्राणी मात्र अपने अस्तित्वको रखते हुए आगे बढ़नेकी चेष्टामें लगे हुए हैं ऐसे समयमें हम भी यदि आगे न चल सकें तो कमसे कम साथ में तो अवश्य ही चलना चाहिये। कारण-'अवसर बीते पे जु फिर पछताये का होय। सूखो खेत किसानको कहा करे फिर तोय।' आज हमको कैसा अच्छा समय प्राप्त हुआ है कि हम लोग अपने साम्राज्यके न्याय शासनमें बिना किसी प्रकारके विघ्नबाधाओंके स्वतंत्रता पूर्वक अपने २ धर्मोंका प्रकाशन कर सके हैं। विशेष हर्ष आप लोगोंको यह जानकर होगा कि गत चार वर्षोंसे जो हमारे सम्राट् महोदय प्राणी मात्रकी स्वाधीनताकी रक्षार्थ युद्धमें लग रहे थे और उस युद्ध कार्यमें आप लोगोंने तन धन तथा जनसे यथासंभव सहायता देकर राज्यभक्ति दर्शाई थी सो वह युद्ध हमारे सम्राट्की जयपूर्वक अंतको प्राप्त हो गया है। जिसके लिये हमको हर्ष मानना चाहिये। और वह हर्ष केवल हमारे लौकिक लाभ दृष्टिसे ही नहीं किंतु धर्म दृष्टिसे भी "अहिंसा परमो धर्म." के अनुसार अनेक प्राणियोंका संहार होना बंद हो गया इसलिये भी मानना योग्य है। अब इससे और कौनसा शांतिका उत्तम अवसर प्राप्त होगा। तात्पर्य सब प्रकार यह समय हमारे अनुकूल है इसलिये हमको अब इस सम्मेलनसे लाभ उठाना चाहिये।

यहां मैं सर्व प्रथम सम्मेलनोंका अभिप्राय प्रगट कर दूं तो युक्तिसंगत होगा। सुहृद्वृन्द, सम्मेलन, मेला, संघ, आदि शब्द एकार्थवाची

हैं। यह संघकी प्रथा नवीन नहीं है किन्तु प्राचीन कालसे प्रायः सब देशों और सब जातियोंमें प्रचलित है। जनसमुदायको किसी अवसर विशेष पर किसी नियुक्त स्थानमें, नियुक्त समयके लिये, किसी अवलम्बनसे इकत्रित होना ही मेला, संघ व सम्मेलन कहा जाता है। सम्मेलनमें अनेक स्थानोंके सभी स्थितिके लोग जैसे विद्वान् मूर्ख, श्रीमान् निर्धन, बाल, वृद्ध युवा, नर नारी, कुमार विवाहित, विधुर वा विधवाएं, योगी वियोगी, सुखी, दुःखी भक्त अभक्त, धर्मानुरागी विषयानुरागी, लोभी उदार, स्वार्थी परमार्थी इत्यादि पधारते हैं। ऐसे अवसरमें यदि समाजके नेतागण चाहें तो बहुत कुछ सुधार कर सकते हैं। क्योंकि इस समय एक दूसरेको अनुकरण करनेका अच्छा अवसर है इन मेलोंका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि मनुष्योंको घरसे निज ग्रामसे निकलनेका अवसर मिलता है कि जिससे जल वायुका परिवर्तन होता है, व्यापार आदिकी दृष्टि बढ़ती है, होशयारी आती है और घर पर अवकाश न मिलनेके कारण देव पूजादि नित्य कर्म यदि नहीं हो सकते थे सो भी यहां पर भले प्रकार हो सकता है परस्पर शिक्षित तत्त्व भाई व विद्वानों द्वारा धर्मोपदेशका लाभ होता है सामाजिक अनुभवी और नेतागण परस्पर मिलकर आदि उत्पन्न हुई कुरीतियों पर विचार करके उन्हें यथायोग्य स्थिति ठीक करनेके लिये भी परस्पर सहाय करते, उपाय सोचते, लोगोंको बताते हैं इस प्रकारके और भी अनेकों लाभ होते हैं जिनसे आप लोग स्वयं परिचित हैं ? परंतु यदि हम लोगोंने मिलकर कुछ लाभ न उठाया तो फिर समाचारपत्रोंवाले हमारी भी समालोचना करनेसे न चूकेंगे, इससे यह फल होगा कि हमारा अमूल्य समय भी गया, द्रव्य भी खर्च हुआ, *और शीतादिकी बाधायें सहन कीं लाभ कुछ* भी नहीं हुआ। कहावत चरितार्थ हुई " कि चने भी जल गये और भुनाई भी लग गई फिर भी भूखे रहे।"

वस्तुतः, मैं पहिले ही कह चुका हूं कि सबके साथ न चलनेसे हमको जीवित नहीं रह सकते हैं इसलिये हमको भी सबके साथ ही दौड़ना होगा। अब हमें यह देखना है कि हम वास्तवमें पिछड़े हुए हैं या कि साथ चल रहे हैं ? तो मालूम होता है कि हम बहुत पिछड़े हुए हैं। अभी हम धार्मिक विषयको धार्मिक मार्मिक विद्यमान विद्वानोंके लिये छोड़कर सामाजिक स्थिति पर ही विचार करते हैं क्योंकि "न धर्मो धार्मिकैः विना" अर्थात धर्मात्माओंके विना धर्म भी (निराधार) नहीं रह सकता है। अब सबसे प्रथम हमारी शिक्षा सम्बन्धी स्थितिहीको ले लीजिये, तो आपको अपनी जातिमें सिवाय मि० [illegible] जैन बार

वर्षोंमें कुछ थोड़ेसे वकील व अध्यापक दिखने लगे हैं, हिन्दीमें तो अब तक किसी भी जैनीने हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी उपाधि प्राप्त ही नहीं की। संस्कृतमें अब तक एक भी वैयाकरण आचार्य नहीं है और न साहित्याचार्य्य ही; यदि हैं तो सिर्फ दो (जैन) न्यायाचार्य ही— १ न्यायाचार्य पं० गणेशप्रसादजी वर्णी और २ पं० मानिकचंदजी न्यायाचार्य, ज्योतिषी पंडित जियालालजी व वैद्य कन्हैयालालजीके सिवाय कोई ज्योतिषी व वैद्य प्रख्यात नहीं है। स्त्रियोंमें शिक्षाका अभाव ही सा है। शिल्प शिक्षाका नाम ही सुननेसे भय होता है और तो जाने दीजिये यह वैश्य जाति जिसको आप लोग सुशोभित कर रहे हैं वाणिज्य प्रधान जाति है परंतु शोकके साथ कहना पड़ता है कि आज यह जाति भी अन्य जातियोंके समान व्यापार विद्यासे अनभिज्ञ रहनेके कारण अत्यन्त दीन पराधीन कार्य (नौकरी) करने लगी है। वैश्य जातिके लिये नौकरी (शब्द) घृणास्पद है परंतु व्यापार न जानने अथवा पूंजीके अभावहीके कारण इस अवस्थाको प्राप्त हो गये हैं। व्यापार भी जो कुछ देख जाता है उसे व्यापार कहते हुए लज्जा आती है वास्तवमें यह तो परस्परमें छीना झपटी ही है अथवा सराफी है। इस बातको हमारे व्यापार विज्ञ भाई भले प्रकार समझ रहे हैं। हाय! जिस जातिमें जगतसेठ जैसे धनी हो गये आज उसमें नगरसेठ तक नहीं दिखाई देते हैं। हमें यह कहना पड़ता है कि हमलोग वास्तवमें व्यापार करना ही भूल गये हैं हमको केवल याद रह गई है दुकानदारी, हमारे पूर्व पुरुष जहाज भराकर देशांतरोंमें जाकर क्रयविक्रय करते और वहांका माल यहां लाकर बेचते इससे अपने देशमें शिल्पकलाकी वृद्धि होती, देशका कच्चा माल (जो कि आज विदेशोंमें जाकर वहांसे पक्का बनकर कई गुणी कीमत पर पीछे यहां आता है) यहीं साफ होकर उसका पक्का माल तैयार होकर विदेशोंमें जाता था। और उसके बदले यहांपर वह वस्तुएं जो यहांके लिये आवश्यक हों और वे यहां नहीं बनती हैं, आती थीं, इस संसारकी बड़ी भारी आवश्यकताकी पूर्ति करनेवाली यह एक वैश्य (वणिक) जाति ही थी, जो कि आज मार्ग भूल गई है। यदि आज भी यह समाज अपने इतिहास व पुराणों परसे विचार करके कर्तव्य पथ पर स्थित हो जाय तो इसमें सन्देह नहीं है कि कुलपरम्परागत रुधिर अभी भी इसके शरीरोंमें बह रहा है यह जाति पुनःशीघ्र दक्षता प्राप्त कर सकती है। परंतु विद्या विना विवेक नहीं और विवेक विना सिद्धि नहीं होती है। अतएव हमारा सर्व प्रथम यह कर्तव्य है कि हम अपनी जातिमें जितनी शीघ्रतासे हो सके विद्या-शिक्षाका प्रचार करें। राज्यभाषा (अंग्रेजी) देशभाषा (हिन्दी) और धर्मभाषा (संस्कृत) यथायोग्य मुख्य गौण रूपसे सदाचार नैतिक व्यवहार और धार्मिकशिक्षाके साथ२ पढ़ावें। उच्च कोटिके विद्वान तैयार करें, उन्हे साथ ही स्वतंत्र आजीवी बनावें, वर्तमान समयके अनुकूल व्यापारी शिक्षा देवें, देशमें शिल्पकलाकी जैसे वृद्धि होवे ऐसे यत्न करें; कल कारखाने खोलें और निराश्रित भाइयोंको कार्यमें लगावें। हमें अब जातिमें शिक्षा इसके लिये नहीं देना चाहिये कि जिससे नौकर तैयार हों वे किन्तु

ऐसे लोग तैयार करना चाहिये जो कि व्यापारादिके द्वारा आजीविका करके अपने जातिहितके लिये कुछ समय लगा सकें। प्राचीन पंडितोंकी जीवनी सुननेसे विदित होता है कि वे लोग व्यापारी थे और व्यापारी होने पर भी बड़े बड़े ग्रन्थ लिख गये, बड़े ग्रन्थोंपर लम्बी टीकायें भाषा वचनिकादि कर गये हैं जिन्हींके प्रसादसे आज हम जैनधर्मको जान रहे हैं, दूसरी बात यह है कि जो भाई व्यापार तो करना चाहते हैं परन्तु पूंजीके विना लाचार होकर नौकरी करने लगते हैं तथा नौकरी न मिलने पर अथवा नौकरी न कर सकनेके कारण "बुभुक्षितः किम् न करोति पापम्" अर्थात् भूखा क्या२ पाप नहीं करता है ? सभी कुछ करता है। इस उक्तिके अनुसार और भी अनेक प्रकारके नहीं करने योग्य कार्य कर बैठते हैं। ऐसी दशामें आवश्यक है कि उन्हें पूंजी (योग्यतानुसार) देकर स्थिर करें, इस कार्यके लिये हमको जैन बैंकोंकी आवश्यकता पड़ेगी। अब प्रश्न होगा कि बैंकोंमें पूंजी कहांसे आवेगी ? तो उत्तर यह है कि इसके लिये हमें चंदा न करना पड़ेगा। किन्तु हमारे तीर्थों व मंदिरों और महानुभावोंने कदम बढ़ाया है इत्यादि।

सामाजिक रीतियोंपर विचार करनेसे तो वही बात है कि 'अपनी मांच उघारिये आपहि मरिये लाज'। सबसे प्रथम हम दाम्पत्य सम्बन्ध ही पर विचार करते हैं तो हमको वही बहुत बेमेल कार्य दृष्टिगोचर होता है अर्थात कहीं तो "बड़ी बहू रो बड़ो भाग" अर्थात् वर छोटा और वधू बड़ी, और कहीं बूढ़े बाबाके साथ छोटीसी बालिका और कहीं बहुत छोटे २ बालक और बालिकाओंका सम्बन्ध होता है जिसके कारण अत्यन्त खराबियां हो रही हैं और उसके लिये **बाल्य विवाह** (१८ वर्षसे कम पुरुष और १२ से कम कन्याका) वृद्धविवाह (४० वर्षसे ऊपर) तथा कन्याविक्रय बंद करना पड़ेगा। इसके सिवाय जातिमेंसे अनावश्यक व्यय कम करना होगा। जिसके लिये वेश्या नृत्य, आतिशबाजी, फुलवारी आदि बंद करके जीमन भी कम करना होगा, पुरुषोंके भी व्याहोंकी कुछ हद (संख्या) नियत करना होगी, और यह भी करना होगा कि एक स्त्री तथा पुत्र पुत्रियोंके रहते हुए, भिखारी अवस्थाके

स्टेशनों पर ५ सेरकी गठरी और विस्तर भी विना कुलीकी सहायतासे नहीं उतार सकते हैं. गाड़ीसे तांगे तक लानेके लिये मन माने पैसे लेकर कुली बाबू लोगोंको पहुंचाता है, आधे मील भी पांव पयादे चलनेसे हांफ जाते हैं, किंचित् भी धूप ठंड सह नहीं सकते हैं। जिनकी यह दशा है उनमें शारीरिक बल कितना होगा सो अनुमान कर लीजियेगा कि जब कोई इन पर कुछ बलात्कार कर बैठता है तो ये पुलिसको पुकारते ही रह जाते हैं और जब तक पुलिसवाला इनकी सहायताको वहां तक पहुंचता है उसके पहिले ही वह आततायी अपनी मनमानी करके चल देता है और ये इस तरफ गया, अभी तो तो था, यहीं था, वहां गया, काला सा था, जवान था इत्यादि पाठ सुनाते ही रह जाते हैं। हाय! जिनके पूर्व पुरुष ऐसे थे कि मनों बोझ उठा सकते तथा कोसों चले जाते थे, जंगल पहाड़ोंमें एकाकी जानेमें जरा भी न हिचकते थे आज उनकी संतान कुली! ओ कुली! करते रह जाते हैं, गाड़ी सीटी देती है सामान भी उतारनेको रहजाता है। यह सब निर्बलताका कारण है; अपक्ववीर्य व क्षीणवीर्यसे जो सन्तान होगी वह ऐसी ही होगी, सो प्रथम तो उत्पत्ति ही ऐसी फिर भी दूध आदि पदार्थ जिनसे हमारे भाइयोंके शरीरको पुष्टि मिलती थी अब देखनेको ही मिलता है। सुना जो कि रुपयाका पक्का २० सेर १५ वर्ष पहिले मिलता था। आज ३ सेर भी कठिनतासे शुद्ध मिलता है और तो जाने दीजिये अनाज भी भर पेट खानेको नहीं मिलता है जिस पर भी बाहरी टाकचिक्य इतना बढ़ गया है कि चाहे भोजनके लिये भले ही एकबार सूखे चने मिलें परंतु पैरमें पांच रुपयाका बढ़िया बूट होना ही चाहिये, बढ़िया कलप कमीज़ और कालर पर होना ही चाहिये, कोट पेन्ट पर स्त्री नित्य फिरना ही चाहिये, डेली हजामत होना और बढ़िया कामनिया आयल तथा पियर्स सोप अवश्य चाहिये इत्यादि, फिर और तुर्रा यह कि उल्टे शरीर शोषक पदार्थोंका सेवन करना। जैसे बीड़ी, चुरुट, चाय, काफी, भंग, सोडावाटर, लेमनेड, बर्फ आदि। भला सोचिये तो सही कि 'ग्रह ग्रहीत पुनि वातवश तिहिं पुनि बीछी मार। ताहि पिवाइये बारुणी कहो कौन उपचार।' इसलिये बन्धुवर्गो, अब केवल विलासिता व ऊपरी बनावटसे ही काम नहीं चलेगा किन्तु आवश्यक है कि भीतरी अवस्था सुधारो। शारीरिक बल बढ़ानेके लिये इन बाल वृद्ध तथा अनमेल व्याहोंको बंद करके ब्रह्मचर्य व्रत पालन (स्वस्त्री संतोष व्रत ही गृहस्थोंका ब्रह्मचर्य है) नियमपूर्वक होना चाहिये। सोडा, बीड़ी, चुरुट आदि हानिकारक पदार्थोंके बदले घी दूध आदि उत्तम पदार्थोंका सेवन करना चाहिये, नित्य यथाशक्ति व्यायाम करना चाहिये। घी दूध प्राप्त करनेके लिये गौशालाएं बनाना होंगीं, गाय भैंस आदि दूध देनेवाले जानवरोंकी रक्षा और पालन करना होगा, पहिले समयमें बराबर पशुशालायें थीं प्रायः प्रत्येक गृहस्थ शक्ति प्रमाण पशु गाय महिषि आदि रखता था, उससे खूब घी दूध खाते गोबरसे गृह शुद्धि होती और जलानेको कंडे होते खेतोंका खाद होता इत्यादि अनेकों लाभ। वास भी इन दिनों बहुतायतसे

होती थी। आज कल घोर पशु हिंसा हो रही है इसीसे खेती आदि कार्योंमें भी बाधा पहुंचने लगी है अब भला घी दूध कहांसे प्राप्त होवे। इसी घोर निष्प्रयोजन हिंसाका फल है कि हमारा देश प्रति वर्ष दुर्भिक्षसे पीड़ित होता चला जा रहा है। हाय, अहिंसा प्रधान देशमें भी परमोपकारी पशुओं तककी रक्षाका न होना यह हमारे लिये लज्जास्पद नहीं तो क्या है! इसलिये हम लोगोंको पशुरक्षा और पशु पालन करना भी कर्तव्य है। यह हमारे शरीर रक्षाका मुख्य साधन होगा। अब शारीरिक बलसे आगे चलिये तो विद्याबलके सम्बन्धमें कह ही चुका हूं। अब मानसिक बलकी भी यह दशा है कि हम सत्यको सत्य कहते हुए हिचकते हैं। हमसे जब कोई कर्मचारी घूंस मांगता है और बिना घूंस वह हमारे कार्यमें कंटक होता है तो हम चुपकेसे उसकी मुट्ठी गरम कर देते हैं परन्तु हममें यह साहस नहीं है कि उसकी इस शिकायतको अधिकारियोंके पास तक पहुंचावें। बहुतसे लोग इस प्रकार घूस देना दया समझते होंगे परन्तु यह आम लोगोंके प्रति घोर अन्याय करना, राज्यकी आज्ञाका उल्लंघन करना है। और भी देखिये कि यदि खेतीमें चूहा भी कुछ गड़बड़ा देवें तो डर जावें इत्यादि। अब सामाजिक बलका तो कहना ही क्या है! इसमें तो ३ और ६ वाली बात है, परन्तु [illegible] पास पास मिलकर प्रेमसे बढ़ते हैं, परन्तु हमारे भाई किसी भी विषयमें ऐकमत्य होकर मिलना नहीं चाहते हैं। सभी अपनी २ ढाई चांवलकी खीर अलग पकाते हैं। कोई तेरापंथी तो कोई बीसपंथी, कोई छापेवाला तो कोई उसका निषेधक, कोई बाबूदल, कोई पंडितदल, कोई ज्ञानानन्दी तो कोई केवल बाह्यक्रियानुयायी इत्यादि। इसलिये ऐक्यमत होकर समाज संगठनकी भी परमावश्यकता है।

अब चलिये संस्थाओंकी अवस्था पर विचारिये तो पहिले तीर्थक्षेत्रों ही को ले लीजिये। तो वहां पर मुनीम पुजारियों और माली ग्वालोंका ही स्वराज्य है। इन्हें कमाना पड़ता नहीं है, भक्तजन भंडार दे जाते हैं और ये लोग मूछों पर ताव देकर मौज उड़ाते हैं। अपने अधिकारी वर्गोंको चापलूसी करके खुश रखते और उलट पुलट समझाकर नये नये मुकद्दमे मामले तैयार करते रहते हैं। इन मुकद्दमोंमें इन लोगोंका पूरा हाथ रहता है। और इनके द्वारा वकीलों आदिका भी काम चलता है। मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूं कि यदि दिगम्बर तथा श्वेताम्बर समाजके नेता स्वयं परस्पर मिल कर चाहें तो इन तीर्थोंका झगड़ोंका निबटेरा हो जाता; परन्तु नौकरशाही के मारे पता ही नहीं लगने पाता है। आज कल इन कोठियोंके मुनीम लोग हाथी पर चढ़ते हैं। आप लोगोंने जैनमित्र, अंक ११ वर्ष २०में 'सत्य घटना पढ़ी होगी' वह निस्सन्देह सत्य ही है। प्रत्येक तीर्थ पर मुनीम पुजारी चौकीदार सिपाही सलाम करते हैं और इनाम मांगते हैं जो इन्हें दे दो वह उदार और उसकी मुंह मुंह पर प्रशंसा कर देते हैं। नहीं देनेवाले [illegible] गाली [illegible] शब्दोंसे दूषित किया जाता है! यही दशा [illegible] कुछ अनु-

नाधिक हमारे जैनमंदिरोंकी समझिये। अब चलिये विद्यालयों छात्रालयों और आश्रमोंकी दशाका निरीक्षण कीजिये तो आपको विदित हो जायगा कि इनसे जितने लाभकी सम्भावना है उसका शतांश भी लाभ कठिनतासे होता है। सदा इनमें कर्मचारियों, अधिकारियों और छात्रोंकी लड़ा लड़ी हुआ करती है इसका कारण केवल प्रबन्धकी कमी है। इन बातोंसे कोई यह अभिप्राय न निकाले कि मैं इनकी शिकायत करके इनको उठा देना चाहता हूं। नहीं २ किंतु मैं चाहता हूं कि इनमें सुप्रबन्ध होवे, क्योंकि व्यय तो हो ही रहा है और लाभ यथार्थ नहीं होता है। मेरी दिगम्बर तथा श्वेतांबर संप्रदायके नेताओंसे भी सविनय प्रार्थना है कि आप लोग परस्पर मिल कर तीर्थोंके झगड़ोंको आपसमें ही, नरमा नरमीसे निबटा लो। जैनधर्मका सिद्धान्त कषायोंको मंद करना है न कि तीव्र करना। देखो, ये तीर्थक्षेत्र वैराग्य, ज्ञान, धर्मध्यानके ही साधन थे जो कि आज आर्त और रौद्र ध्यानके उत्पादक हो रहे हैं। इन तीर्थोंके झगड़ोंसे निवृत्ति पाकर जाति दशा पर विचार करो कि यह कहां जा रही है? इसका अस्तित्व कैसे रहेगा? इत्यादि और जो द्रव्य इन झगड़ोंसे बचेगा उसे शिक्षा खातेमें, अनाथ पालनमें अथवा और भी ऐसे ही सर्वोपयोगी कार्योंमें लगाओ। संस्थाओंकी सुव्यवस्थाकी ओर ध्यान दो जिससे यथोचित लाभ होवे।

अव्यवस्थाका कारण एक यह बड़ा भारी है कि समाज मनुष्योंसे उनकी योग्यतानुसार कार्य नहीं लेती है! यदि वकीलसे दवा कराइयेगा और वैद्यको अदालतमें खड़ा कीजिये तो दोनोंकी फीस ठीकसे भी अधिक देने पर भी रोगी मर जायगा और केश भी बिगड़ जावेगा इसी प्रकार से पंडितोंसे प्रबन्ध व मेनेजरका काम लेना, बाबुओंसे हिसाब किताब व तौल नाप, व्यापारियोंसे पठनक्रम बनवाना इत्यादि। दूसरी बात एक यह भी है कि एक ही आदमीसे "पीर बवर्ची भिश्ती खर"के अर्थात् किसी संस्थाके सुपरिन्टेन्डेन्टको ही लीजिये, तो वह अध्यापन भी करे अध्ययन भी करता जावे, योग्य देखरेख (संस्थाकी पूरी सम्हाल) हिसाब व प्रबन्ध भी रखखे, भोजनशालाकी सम्हाल, सामान लाना रखना, तोलना, चन्दा वसूल करना, लोगोंसे चन्दा नवीन भराना, सहायताकी चिट्ठियां लिखना, अधिकारियोंके पीछे २ फिरना इत्यादि सभी काम करना पड़ते हैं। फल यह होता है कि कोई भी कार्य पूरा नहीं होता है। तीसरी बात यह है कि कोई सार सम्हाल करनेवाला नहीं है। चाहे कोई ईमानदारीसे करे व बेईमानीसे जिसके गले पड़ा सो ही सम्हाले। यहां तो चन्दा देकर छुटकारा पा लिया। इसलिये मैं इस ओर समाजका चित्त आकर्षित करता हूं कि वह संस्थाओंकी योग्य सम्हाल करे और जो मनुष्य जिस कार्यके योग्य होवे उससे वही कार्य लेवे। योग्यतानुसार कार्य और अधिकार दो, एक ही व्यक्ति पर उचितसे अधिक भार मत लादो, योग्य कर्मचारियोंको उचित पुरस्कार और अयोग्यको दण्ड विधान रक्खो, व्यवस्था सुधर जावेगी। व्यक्ति-

चाहिये यह कार्य भी तीर्थरक्षासे कुछ कम पुण्य व महत्वका नहीं है। और वास्तविक प्रभावनाका कार्य है।

प्रभावनाका अभिप्राय जहां तक मैंने समझा है यही है कि जिन लोगोंने जिनधर्मको विपरीत समझ लिया अथवा जो बिल्कुल ही जैनधर्मको नहीं समझे हैं उनको यथार्थ मर्म जैनधर्मका बता देना ही प्रभावना । है। और वह प्रभावना इसलिये नहीं कि इससे [illegible] होगी या वे लोग जैनधर्मको अच्छा कह देंगे इससे ही कुछ हमारा भला हो जायगा इत्यादि किंतु जैनधर्म जीव मात्रका धर्म है और वह सम्पूर्ण जीवोंकी दया बताता है उसको किसी व्यक्ति व समुदायका पक्ष नहीं है। इसीसे वह सबका धर्म है और इसी लिये सभीको उसे जानना चाहिये। आजकल प्रायः लोगोंने जैनधर्मके सम्बन्धमें बहुतसी किंवदंतियां बना रखी हैं। कोई इसे सरावगी व बनियोंका धर्म कहता है, कोई केवल पानी छान कर पीना, आलू आदि कंदमूल नहीं खाना, रात्रिको नहीं खाना, मंदिरमें जाकर दर्शन कर आना मात्रको ही जैनधर्म मान बैठे हैं। कोई कहते हैं कि जैनधर्म गृहस्थोंका धर्म ही नहीं है यह तो साधुओं ही का धर्म है। कोई कहता है जैनधर्मके अनुसार चलेंतो पांव रखनेकी भी जगह नहीं मिले इत्यादि अनन्य कल्पनाएं कर रखी हैं। ऐसे लोगोंको वास्तविक धर्मका स्वरूप बता देना ही प्रभावना है। वास्तवमें जैनधर्मका सिद्धांत है कि विपरीत अभिप्रायको त्याग कर सम्यार्थ तत्त्वोंका श्रद्धान करना और यथाशक्ति अपने पद और शक्तिके अनुसार विषय और कषायोंको कृश करता जावे, और इसलिये इसको प्रत्येक मनुष्य धारण कर सक्ता है। क्या राजा क्या रंक। वास्तवमें यह धर्म क्षत्रियों ही का है। जितने तीर्थंकर हुए हैं वे सब ही क्षत्री थे। लोगोंमें ऐसे विचार फैलना स्वाभाविक है। इस लिये कर्तव्य है कि भ्रन्योंका उद्धार किया जावे, उपदेशक बढ़ाए जावें और उन उपदेशकोंसे केवल धर्म प्रचारका ही काम लिया जावे, उनसे चन्दा इकत्र कराना नहीं चाहिये; यह बात उनके यथार्थ कार्यके लिये बाधक है। उपदेशक लोग अच्छे विद्वान द्रव्य क्षेत्र काल तथा भावके ज्ञाता अनुभवी वयोवृद्ध होना चाहिये, सदाचारी और चारित्रवान होना चाहिये तभी प्रभाव पड़ सकता है अन्यथा नहीं।

स्थानीय व जातीय पंचायतें और शास्त्र सभायें बराबर चालू रहनी चाहिये, स्वाध्यायका प्रचार बढ़ाना चाहिये। इत्यादि ऐसी बहुतसी बातें हैं जिसमें बहुत कुछ सुधार व न्यूनाधिकता करनेकी आवश्यकता है और जिनके सम्बन्धमें उपस्थित विद्वान् मंडली आपको समझावेगी उसे सुन कर आप लोग अपना कर्तव्य पथ दृढ़ रीतिसे निश्चित कर लेवें अब मैं अन्तमें थोड़ासा सभाओंका उद्देश या कर्तव्य कह कर अपने कथनको समाप्त करूंगा।

महानुभावो सभाओं व पंचायतियोंका उद्देश धार्मिक और सामाजिक उन्नति करना है। ये सभायें सिवाय जनसमुदायके और कोई वस्तु हैं। इनमें सम्मिलित होनेवाले महानुभाव अपने अपने २ मत प्रकट करके बहुसम्मतिसे एक

मत स्थिर करते हैं और फिर स्वयम् तदनुसार चल कर औरोंको आदर्श रूप बनकर मार्ग बताते और चलाते हैं। इसीका नाम सभा है और यही उसका उद्देश्य व कर्तव्य है। जो लोग नेता हैं व होनेका दावा करते हैं उन्हें चाहिये कि आदर्श बनें, कारण कि केवल "परोपदेशो पाण्डित्यं" हीसे काम नहीं चल सक्ता है। यह सदासे नियम चला आता है कि "महज्जनः येन गतः स पन्थः" अर्थात् बड़े पुरुष जिस मार्गसे चलते हैं वही मार्ग श्रेय समझा जाता है। और जो लोग केवल खुद फजीहत दीगरे नसीहत करते हैं उनका जनता पर उल्टा प्रभाव पड़ता है। इसलिये सभाओंके नेतागण जैसे सभापति, मंत्री, सभासद आदिको तथा उपदेशकोंको अवश्यही प्रस्तावों पर अमल करना चाहिये, तभी सुधारकी आशाकी जा सकती है 'अन्यथा अरण्ये रोदनं वृथा' वाली कहावत चारितार्थ होगी।

आशा है कि आप मेरे इस वक्तव्य पर विचार करेंगे। अन्तमें आप लोगोको फिर हृदय से स्वागत करता हुआ प्रार्थना करता हूं कि आप अब अपना कार्य्य प्रारंभ करें।

हमारा स्वास्थ्य और यात्रा।

हमारे पाठकोंको यह जानकर खुशी होगी कि हमारा स्वास्थ्य कुछ दिनोंसे अच्छा ही है और हम महासभादिके अधिवेशनमें गत ता० ७ फरवरीको कोटामें सामिल हुए थे। वहांसे हमारा विचार दक्षिणकी यात्राएं करनेका हुआ था और कोई ऐसा साथ ढूंढ रहे थे कि जिसका साथ होनेसे यात्रा भी सुभीतेके साथ होनेके अतिरिक्त जहां २ हम जावें वहांकी संस्थाओंका निरीक्षण करके और सभादि करके कुछ न कुछ समाज सुधारका भी कार्य साथ २ कर सकें। पुण्योदयसे ऐसे मनोभिलषित साथी **मास्टर दीपचंदजी उपदेशक** हमें मिल गये जिनको साथमें लेकर हम गोमट्टस्वामी (जैनबिद्री) तथा मूलबद्री तककी यात्राके लिये प्रयाण किया है और कोटासे झालरापाटन, उज्जैन, मक्सी, बड़नगर, रतलाम इन्दौर, बड़वाहा सिद्धवरकूट होते हुए खंडवा जा रहे हैं और वहांसे अंतरीक्षजी, आ.नेत्रा, अमरावती कारंजा, वर्धा, मुक्तागिरी, भातकुली, बार्सी, कुंथलगिरी और सोलापुर होते हुए जैनबिद्री जावेंगे। इस भ्रमणमें कई संस्थाओंका निरीक्षण करते हैं और सभाएं भी होती हैं जिनकी रिपोर्ट प्रकट होनेकी आवश्यकता है। इसलिये इस भ्रमणकी संक्षिप्त रिपोर्ट इस पत्रमें छपनेके लिये हम भेजते रहेंगे। यदि किसी २ को हमसे पत्रव्यवहार करना हो तो अभी सेठ हीराचंद अमीचंद शाह **सोलापुर** के पते पर लिखें। हम करीब १० दिनमें सोलापुर पहुंचेंगे। ता० २४-२-१९

समाजसेवक—

मूलचंद किसनदास कापड़िया

जैन समाचार।

विवाह समय दान।

भावनगरके सेठ भगवानदास छगनलालजीने अपनी दो बहिन तथा पुत्रीके विवाह समय निम्न प्रकार ३०२) दान किया:-१०१) श्राविकाश्रम मुंबई, १०१) दुष्काल फंड, २१) ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर, २१) स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस, २१) सिद्धान्त भवन ? २१) संतोकव्हेन पाठशाला भावनगर।

सेठ कस्तूरचन्द वेचरदासजीने अपने चिरंजीव पुत्र छगनलालके पाणिग्रहण समय निम्न लिखित ५१) दान किये:-२१) ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुर, ११) श्राविकाश्रम बम्बई, ५) स्या० म० वि० बनारस, ५) सिद्धान्त भवन !, ५) संतोक व्हेन, पाठशाला भावनगर।

इसी प्रसंगपर अन्य गृहस्थोंने भी निम्न प्रकार दान किया है:-

ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुरको-६) अमृतलाल विट्ठलदास। श्राविकाश्रम बंबईको-६) अमृतलाल विठ्ठलदास, २) नारायणदास नरोत्तमदास, २) मगनलाल वेणीचन्द। सन्तोक व्हेन पाठशाला भावनगरको-२) अमृतलाल विट्ठलदास, १) नारायणदास पुरुषोत्तमदास, ५) मगनलाल वेणीचन्द, ११) माणिकलाल, वृलचन्द, ५) मोहनलाल विट्ठलदास, २) मथुरादास प्रभुदास, २) छोटालाल दीपचन्द, २) माणिकचन्द वेणीचन्द, २) परमाणी सखमल, २) [illegible]चन्द मोतीचन्द, १) काळीदास दामुचेर।

अनुकरणीय कार्य-श्रीयुत भाई अमृतलाल विट्ठलदासजी लिखते हैं कि भावनगरके पंचोंने यह अनुकरणीय कार्य किया है कि इस देशमें दुष्कालके असह्य समयमें अनाज, घास, आदिकी मोंघवारीके कारण अनेक मनुष्य दुःखित हो रहे हैं तब जिह्वा लोलुपताके कारण मिठाई पूरी आदि बनाकर जातियोंको जिमाना तथा व्यर्थ व्यय करना योग्य नहीं है। इसी बातको ध्यानमें लेकर इन पंचोंने जातियोंके जीवनवार बन्द करके उसका रुपया शुभकार्यमें उपयोग करनेका ठहराव किया है। ऐसे समयमें प्रत्येक जाति; पंचायती, सभा, मंडल आदिको चाहिये कि इन पंचोंका अनुकरण कर जहां तक बने धनका दुरुपयोग न करके देकर शुभ कार्यमें व्यय करनेका प्रयत्न करें और दूसरोंसे करावें।

सूचना।

परवार सभाका जन्मोत्सव (अधिवेशन)। सम्पूर्ण भारतके परवार भाइयोंसे नम्र निवेदन है कि श्री अतिशय क्षेत्र रामटेकजी जिला नागपुर C P. में परवार सभाका प्रथमाधिवेशन ता० २३-२४-२५ मार्चको होना निश्चित हो चुका है। अतएव सर्व परवार भाइयोंकी उपस्थिति वांछनीय है। आशा है उक्त समय पर आप लोग अवश्य ही पधार कर जात्युन्नतिके कार्यमें भाग लेंगे।

विनीत प्रार्थी-
कन्छेदीलाल B. A. L. L. B.
मंत्री परवार सभा-जबलपुर।

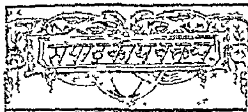
स्तुत्यदान-कटनी निवासी सवाई सिंघई कन्हैयालालजी गिरधारीलालजीके अनुज रतनचंदजी ता० ४ मार्चको पेटमें पीड़ा होनेसे बहुत व्याकुलित हुए। इसी अवसरमें आ[illegible] भाने आशाओंकी अनुमतिसे स्थानीय औषधालय (बोर्डिंग) को रुपीया देना २५१(?)

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधैश्च तत्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्स्वमिदं प्रवर्त्ततांम्, दैगम्बर जैन समाज-मासम् ॥

वर्ष १२ वाँ.	वीर संवत् २४४५. चैत्र, विक्रम सं० १९७५.	अंक ६.



दि० जैन बम्बई प्रा० सभा और महाराष्ट्र खंडेलवाल सभा

पाठकोंको मालूम होगा कि बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाका सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन गजपंथाजी क्षेत्र पर ता० १३-१४-१५ को होना निश्चित हुआ है। इस वर्ष अधिवेशनके सभापति समाज हितैषी, उन्नतिके प्रेमी सेठ सूरचंदजी बनाए गये हैं। उनके सभापतित्वसे समाज बहुत कुछ सांत्वना मिलनेकी आशा करती है।

इसी अवसरपर गजपंथाजीमें महाराष्ट्र खंडेलवाल पंच महासभाका भी वार्षिक अधिवेशन सेठ हरसुखदासजी सुवारीवालोंके सभापतित्वमें होगा ऐसे समयपर जातिसुधार, शिक्षा प्रचार कुरीति निवारण इत्यादि समाजहितके कार्यों पर विचार किया जायगा। अतएव आवश्यकता है कि सर्व स्थानोंसे जैनीभाई और खंडेलवाल भाईयोंके आनेकी है परन्तु बम्बई प्रान्तके ग्राम २ से दश पांच जैनियोंको तो अवश्य ही आना चाहिये जिस ग्रामसे अधिक मनुष्य न आ सके वहांवालोंको चाहिए कि अपना प्रतिनिधि तो गजपंथाजी पर अवश्य ही भेजें। महाराष्ट्र प्रान्तके खंडेलवालोंको अपनी पंच महासभामें सम्मिलित हो कर जातिहितके कार्योंमें अधिक भाग लेना चाहिये। खंडेलवाल जातिमें अशिक्षा और कुरीतियोंका प्रचार देखकर कहना पडता है कि यह जाति बहुत पिछडी हुई है और इसमें संघटसूचकता नहीं है।

वर्त्तमानमें संसारके बडे २ परिवर्त्तनको देख कर और भविष्यमें होनेवाले परिवर्त्तनोंका विचार कर बिना किसी झिझकके स्वीकार करना पडता है कि जैनसमाजकी वर्तमान गतिसे उसकी वास्तविक उन्नति होनेकी आशा नहीं है। आवश्यकता है कि यदि पहिले समाज दिन भरमें १० मील चलता रहा हो तो अब अपनी गति इतनी तीव्र करे कि जिससे दिन भरमें सौ मील चल सके और जो आगे बढी हुई जाति शीघ्र ही उन्नतिके शैलकी शिखर तैर करने लगेगी उनके बराबर हो जाय। अबतक क्या महासभा क्या प्रांतिक सभाएं प्रस्ताव पास करके

ध खिन्न दफ्तर कर देना और प्रायः कागजी घोड़े दौड़ाना ही करती आई है परन्तु यह भली प्रकार समझ लेना चाहिये कि अब इतने हीसे कार्य न चलेगा; किंतु जो प्रस्ताव पास किये गये हैं और जो किये जांय उनके अनुसार कार्य करनेकी आवश्यकता है।

जो कुरीतियां समाजको रसातलमें पहुंचा रही है और दूसरी जातिके सामने उसको मुंह दिखानेमें लज्जित कर रही हैं उनको इस प्रकारके नियम बना कर दबा देना चाहिये जिस प्रकार भारतकी स्वाधीनताको दबानेके लिये रौलट कानून तैयार किये गये। बिना ऐसे नियमोंके बड़े २ धनी जो अपने धनमें मदोन्मत्त हो रहे हैं वे ऐसी कुरीतियोंके करनेसे बाज न आयेंगे और इनके बाज न आनेसे अन्य लोग भी जो इन्हींका अनुकरण करनेवाले हैं इन कुरीतियोंका गला न घोंटेंगे।

समाजकी मनुष्यसंख्या दिनपर दिन घटती जा रही है इसके कारणोंको भी दोनों सभाओंका खोज निकालना कर्त्तव्य है। यदि ये कारण खोज कर लिये गये हों या खोजनेसे अब मिलें तो उनके अनुसार कार्य करनेमें किसी प्रकार का आगा पीछा न करना चाहिये। यदि ऐसे कार्योंके करने कुछ अदूरदर्शी विरोध करें तो उनकी किंचित भी परवाह न करके कार्य प्रारंभ कर देना चाहिये। यदि समाज ऐसे ही विरोधोंसे डरकर अपनेको ऐसी ही अवस्थाके भीतर—अवनतिके अंधकारमय गर्तके भीतर पड़े रहेगी अपनी जनहानिके कारणोंके मेटनेके लिये कुछ उपाय न करेगी तो इसकी जो अवस्था होगी उसको विचारकर हृदय कंपित होता है।

समाजमें स्त्री पुरुष—जो अब भी अज्ञानांधकारमें पड़े हुए स्वयं अपनेको भी नहीं पहिचान पाते हैं, अपने कर्त्तव्योंको भी नहीं जानते, यहां तक कि जैनधर्मकी मुख्य बातोंसे भी अपरिचित हैं—उनमें शिक्षा प्रचार किस प्रकार हो इसका भी विचार करना दोनों सभाओंका परम कर्त्तव्य है। शिक्षाकी प्रशंसा करना व्यर्थ है केवल इतने ही शब्दोंमें समझ लेना चाहिये कि यदि शिक्षाका प्रचार सारे जैन समाजमें हो जाय तो प्रत्येक प्रकारके झगड़े, सर्व कुरीतियां, प्रत्येक दुःख दूर होकर समाज अवनतिसे निकल कर उन्नतिके सिंहासन पर आरूढ़ हो जाय। यहां पर सभाको एक बातका विचार कर लेना और भी बहुत आवश्यक है वह यह कि समाजमें कैसी शिक्षा प्रचारित होनी चाहिये। वर्तमान शिक्षा प्रणाली ही समाजको लाभदायक है या दूसरी या इसमें ही कुछ विशेष परिवर्तन कर देना ही पर्याप्त है।

समाजके सन्मुख इस समय तीन कार्य बहुत आवश्यक हैं एक शिक्षा प्रचार, दूसरा कुरीतियोंका बहिष्कार करना और तीसरा समाजकी वेगसे घटनेवाली जनसंख्याको रोकना।

इन तीनों बातों पर बम्बई प्रांतिक सभा और खंडेलवाल जैन महासभाको अपने अधिवेशन पर विचार करना चाहिये—और जो इनकी पूर्तिके लिये उपायोंकी आवश्यकता हो उनको शीघ्र कार्यरूप परिणत करना चाहिये।

पं० अर्जुनलाल सेठी

पाठकोंको मालूम होगा कि श्रीयुत अर्जुनलालजी सेठी बी० ए० विना किसी अपराधके प्रमाणित हुए वेलोरके जेलमें पडे सड रहे हैं। जयपुर सरकारने उनको ५ वर्षके लिये दूसरी आज्ञा न देने तक कैद रखनेकी आज्ञा घोषित की थी। अब उनको ५ वर्ष जेलमें सडते हुए बीत गये, जयपुर सरकारकी ५ वर्ष वाली आज्ञाकी मुद्दत बीत गयी—परन्तु अभी तक वे कारागृहसे मुक्त नहीं किये गये और न कोई दूसरी आज्ञा की ही घोषणा की गई। कुछ दिन हुए जब सरकारने उनके पीछे गला घोंटू शर्तें लगा कर छोडना चाहा था परन्तु तब भी वे अभी तक नहीं छोड़े गये। न छोडे जानेका कारण कुछ विदित न हुआ, किंतु जहां तक अनुमान होता है पं० अर्जुनलालजीने जयपुर न जाना, लड़कोंको न पढाना और व्याख्यान न देना यह तीनों शर्तें स्वीकार नहीं की अन्यथा कोई कारण नहीं था कि सेठीजी छोड़े जानेपर भी कारावासमें ही सड़ते रहते। यह शर्तें कैसी हाथ, पैर और मुंहको जकड़नेवाली हैं सो पाठक विचार सकते हैं। सेठीजीने इन शर्तोंको नहीं स्वीकार करके उचित किया। वास्तवमें शर्तें स्वीकार करने योग्य नहीं थी।

अब हम सरकारसे केवल इतना निवेदन करना चाहते हैं कि 'सेठीजीके' विषयमें केवल जैन समाजकी ही नहीं किन्तु सारे भारतकी यह धारणा है कि वे निर्दोष हैं फिर ऐसी अवस्थामें उनको कैद करके ही पूरा किया गया, व्यर्थमें सेठीजीको शारीरिक और मानसिक दुःख दिया गया और दिया जा रहा है। विना किसी कारण शान्तिप्रिय जैन समाजके हृदयमें ऐसा आघात पहुंचाया गया जिसे वह कभी न भूलेगा और विना किसी अर्थके भारतवर्षके एक विद्वान्‌को कारावासमें सड़ाया गया और सडाया जा रहा है। यह सब कुछ हुआ सो ठीक, परन्तु अब तो जब कि इंग्लेण्ड सरकार आयर्लेण्डके उन सिनफिनरोंको कैदसे मुक्त कर रही है जिन्होंने खुल्लम खुल्ला ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध बलवा करना चाहा और अब भी उनका आन्दोलन जारी है तब क्या कारण है कि भारत सरकार भारतीय राजनैतिक कैदियोंको नहीं मुक्त करती है! क्या दया और न्याय भी विशेष आदमियोंके लिये है? सबके लिये नहीं युद्ध बन्द हो गया, सुलह भी होनेवाली है, सरकार इंग्लेण्डके राजनैतिक कैदियोंको मुक्त कर रही है, पर निरीह और निराश्रय भारतीय राजनैतिक कैदियोंके छोडनेकी कोई बात नहीं। अर्जुनलालजी सेठीके ५ वर्ष पूर्ण हो गये हैं अब सरकारका परम कर्तव्य है कि उनको छोडकर सेठीजीके कुटुम्ब, जैन समाज और भारत वर्षके शोकाकुल हृदयको शान्त करे। •

महावीर जयंती

जिस जातिको अपने पूर्वजोंका अभिमान नहीं है जो जाति अपने उद्धार कर्ताओंका भक्तिसे स्मरण नहीं करती है उसके जीवनका कुछ भी मूल्य नहीं, इसी प्रकार जिस धर्मके अनुयायी अपने धर्म प्रवर्तकोंका किसी दिन एकत्र हो कर विशेष प्रयोजनके

साथ स्मरण नहीं करते उस जातिका धार्मिकजीवन भी शिथिल है। सिक्खधर्म वाले अपने गुरु नानककी, आर्यसमाजी स्वामी दयानंदकी, शैव महादेवकी, वैष्णव श्री कृष्णकी वर्षभरमें एक दिन जयंती अवश्य मनाते हैं। जैनियोंके लिये भी यह आवश्यक था कि वह भी अपने किसी उपास्य देवताकी जयंती मना कर धार्मिक जीवनको दृढ बनाते। इसी बातको लक्ष्यमें रख कर जैन समाजमें महावीर जयंती चैत्र सुदी १३ को उत्साह और समारोहके साथ मनाई जाने लगी है। चाहिये तो यह कि जिस ग्राम या शहरमें जैनियोंकी वस्ती हो उस २ ग्राम वा शहरमें महावीर जयंती मनाई जाय। इस दिन प्रातःकाल श्री महावीर स्वामीका पूजन करना चाहिये और दोपहरके बाद सर्व जैनियोंको किसी एक स्थानमें एकत्र होकर महावीर स्वामीके जीवनकी गुणावलिका बखान करें। चाहिये समामंडप पुष्पमाल आदिसे भली प्रकार सजाना चाहिये।

और उनकी शंका दूर हो जाती है। इसी प्रकार जब महावीर स्वामी बाल्यावस्थामें ही थे तब ही चारण लब्धिके धारक विजय संजय नामके दो यतियोंकी किसी विषयकी संशय इनको देखते ही दूर हो गई और उन्होंने भगवानका नाम सन्मति प्रसिद्ध किया। महावीर भगवान्‌के बाल्य कालके खेल भी ऐसे हुआ करते थे कि स्वर्गसे देव भी आकर उनके साथ खेलते थे। एक दिन महावीर अन्य बालकोंके साथ २ एक दीर्घकायके वट वृक्षपर चढ़कर खेलने लगे किन्तु इनकी यह साहसपूर्ण क्रीड़ा एक संगम नामक देवको सहा न हुई और उसने अपना भयंकर फणवाले सर्पका रूप रखकर उनको दुःख पहुंचानेके लिये उस वृक्षके मूलको आकर घेर लिया। अन्य बालक तो सर्पको देखते ही भयभीत होकर गिरने लगे; परन्तु अनंत शक्तिके धारी और कर्मरूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले महावीर स्वामी बिना किसी भयके उस सर्पके फनपर पैर रखकर वृक्षसे नीचे उतर आए थे। कहनेका तात्पर्य यही है कि वे

करें तथा जिस प्रकार महावीर स्वामीने जगतके जीवोंका कल्याण किया था उसी प्रकार तुम भी मनुष्यके हितके कार्योंको करके अपना और दूसरोंका कल्याण करो।

समयका प्रवाह और जनसमाजकी गति।

अवनतिके दिन गये उन्नतिके दिन आ रहे हैं; पराधीनताकी बेड़ियां खटाखट टूट रही हैं, और स्वाधीनताके स्वर्ण कंकन धारण किये जा रहे हैं, जहांपर स्वेच्छाचारिताका नगारा बजता था वहां अब स्वतंत्रताकी तूती बोल रही है। अमीरोंके दिन गये अब निर्धनोंके दिन आ रहे हैं। शताब्दियोंसे दुःख और जोरसे दबी हुई प्रजा गर्दन उठाकर सास लेने लगी है। भारतवर्षमें भी स्वतंत्रताकी लहरें वेगसे उठ रही हैं भारत यद्यपि धर्म प्रधान देश है परन्तु वह भी अपने धर्मको आगे रख कर संसारका अनुकरण कर रहा है। संसारका प्रवाह जिस ओर बह रहा है उसी ओर बहनेके लिये वह भी अपने हाथ पैर फेंक रहा है। स्वभाग्य निर्णयका सिद्धान्त प्रत्येक राष्ट्रके लिये जब लागू है तब कोई कारण नहीं जो भारत इससे वंचित रहे। अभी नहीं तो कुछसमय बाद इसको वह प्राप्त कर लेगा। जिस समय वह उसे प्राप्तकर लेगा उस समय भारतवर्ष भारतीयोंका होगा और भारतकी जो जातियां उन्नत होंगी उनका भारतके प्रत्येक कार्यमें हाथ रहेगा। उसके धर्म, धन आदिकी रक्षाका प्रत्येक जातिको ध्यान रहेगा, जो जातियां अवनत होंगी। अशिक्षित, अकर्मण्य, कायर होंगी वे सब या तो पहिले ही प्रवाहमें बह सकनेकी शक्ति न होनेके कारण कालके गालमें पहुंच जांयगी या उन्नत और आगे बढ़ी हुई जातियों द्वारा कुचल डाली जांयगी, उनके अधिकारों, उनके हकों, उनकी मांगोंकी ओर कोई कान न देगा। कोई भले ही यह कहे कि ऐसा न होगा; परन्तु समय हमें यह स्वीकार नहीं करने देता है। कहां है वह बौद्धधर्म जिसका भारतमें साम्राज्य था, कहां है वह ग्रीस जाति जिसका सिक्का यूरोप पर बैठा था, कहां है मुगल साम्राज्य जिसने भारतमें आकर शताब्दियों शासन किया। वे सब शक्तिवालोंको द्वारा कुचल डाले गये, बलशाली धार्मिक आक्रमणोंके द्वारा वे धर्म जिनके अनुयायी अल्प संख्यामें थे दब गये और उनका नाश हो गया या स्थानान्तरमें प्रचारित हुए। वास्तवमें यह वही जमाना है कि जिसमें शक्ति है वही जीनेका अधिकारी है शक्तिहीनको जीनेका कोई अधिकार नहीं।

वर्त्तमान समयमें वे ही देश या जातियां जीवित रह सकती हैं-जिनमें ज्ञान, धन, बल आदि सब प्रकारसे भरपूर हैं, वे जातियां जो अशिक्षित हैं, निर्बल हैं उनको या तो दूसरोंमें मिलकर-दूसरोंका चोला पहिनकर संसारमें जीवित रहना पड़ेगा या वे सदाके लिये पददलित होकर धूलमें मिल जांयगी फिर उनके नाम लेनेवाले केवल इतिहासज्ञ रहेंगे-या उनके अस्तित्वको बतानेवाली पुस्तकें रहेंगी।

भारतवर्षकी वे जातियां जो सामुदायिक शक्तिसे हीन हैं, अज्ञानान्धकारमें पड़ी हैं; परस्परके झगड़ोंमें अपनी शक्ति व्यय कर रही हैं, संसारमें क्या हो रहा है इस तरफसे बिल्कुल

वेपरवाह हैं—उन्हें यदि संसारमें जीवित रहना है तो अपनी सामुदायिक शक्तिको बढ़ाना चाहिये इसके लिये यदि स्वार्थोंका त्याग करना पड़े तो 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पंडितः'—इस नीतिके अनुसार अपने स्वार्थ भी त्याग देना चाहिये, जातिके प्रत्येक बालक व बालिकाको शिक्षित करना चाहिये, ऐसा कोई स्त्री पुरुष न रहे जो लिख पढ़ न सके, परस्परके झगड़ोंको अपने अस्तित्वकी रक्षाके लिये त्याग देने चाहिये और संसार किस ओर जा रहा है उस ओर लक्ष्य देकर अपने कार्योंको उसी ढङ्गसे करना प्रारंभ कर देना चाहिये जिससे वह संसारकी किसी भी सभ्य जातिसे पीछे न रहे और जब जातियां परीक्षाके लिये कसौटी पर कसी जांय तब वह भी बावन तोला पाव रत्ती उतरे किसीसे किसी प्रकार कम न हो। तब ही वह अपने अस्तित्वको संसारमें कायम रख सकती है, अपने हकोंकी रक्षा कर सकती और दूसरे उसके हक हड़प रहे हों तो उनसे छीन सकती है।

जैन समाज भी इस समय सामुदायिक शक्तिमें हीन है—अज्ञानके अंधकारमें पड़ा है, परस्परके झगड़ोंमें अपने समय धन और शक्तिका व्यय कर रहा है और संसारमें क्या हो रहा है उसकी ओर दृष्टिपात नहीं करता है। इसके यह सब लक्षण नाश होनेके हैं। यदि जैन समाज अभीसे न जाग्रत होगा, यदि जैनसमाजके लीडर बहुसंख्यावाले अभीसे संसारका प्रवाह देख कर अपने योग्य समाजको उन्नतिका प्रयत्न न करेंगे, यदि उसके अन्दर शिक्षाका प्रचार करके, पारस्परिक झगड़ेको मिटाकर भारत वर्षके प्रत्येक जैनीको एक सूत्रमें बांधनेका प्रयत्न न करेंगे तो संसारके प्रवाहमें उसका ठहरना असंभव है। वर्तमानमें तो वह संसारके प्रवाहमें ठहरनेमें बिल्कुल असमर्थ उसका स्थान बिलकुल पीछे है। यदि यही दशा रही तो जैन समाज और प्राणोंसे प्यारा जैनधर्म इतिहासज्ञोंकी जिह्वापर और पुस्तकोंके पत्रों पर लिखा हुआ रह जायगा। हमारा ख्याल है—अभी जैन समाज इतनी अकर्मण्य नहीं हो गई है वह आंखोंसे देख सकती है और कानोंसे सुन सकती है, जैसा देख और सुन सकती है वैसा हाथ पैरोंसे कार्य भी कर सकती है, जैनसमाजके नेता भी इतने अदूरदर्शी और निरुद्योगी नहीं है जो जैनसमाजके अस्तित्वके मिटने न देंगे किंतु स्वयं जैनसमाज तथा उसके नेता अनेक विघ्न बाधाओं और सर्व प्रकारकी कठिनाइयोंकी कुछ भी परवाह न करके विरोधियोंको धक्का देते हुए अपने मार्ग कण्टकोंको दूर करके संसारके प्रवाहमें योग्य स्थान प्राप्त करेंगे और जो कहते हैं जैन समाज एक कायर अकर्मण्य और केवल रातको न खाना, पानी छान कर पीना इतने ही में धर्म समझनेवाला समाज है उसको दिखा देगा कि देखो हम कैसे धीर, कर्मवीर और वीर भगवानके सच्चे उपासक हैं।



वार्षिक रिपोर्ट—दुधगांव शिक्षा प्रचारक संस्थाके सातवेंवर्षकी। मि. कार्तिक सु. १० से आश्विन वदी ३० सं. २४४४ तक। प्रकाशक—नानारावजी पेडेकर जनरल सेक्रेटरी दु. शि. प्र. संस्था दुधगांव (सतारा) दुधगांवमें शिक्षाप्रचार करनेवाली कई संस्थाएं हैं इनसे जैन अजैन दोनोंको लाभ पहुंचाया जाता है। प्राथमिक शिक्षण प्राप्त करनेवाले गत वर्ष ३०८ छात्र थे इस वर्ष २७६ छात्र। कमीका कारण ३४ छात्रोंके गांवमें कम हो जानेके हैं। जैनियोंके १२६ लड़के हैं। **कन्याशाला**में ४२ बालिका है जिनमेंसे ३० जैनियोंकी है। इसके साथ **विद्यार्थीश्रम** से भी ४० लड़के स्थानीय और अन्य स्थानके हैं वर्तमान ८ छात्रोंको शिक्षा और भोजन खर्च दिया जाता है। अन्य छात्रोंके लिये भी उनकी इच्छानुसार भोजनालयमें प्रबंध होता है। **ग्रन्थ मन्दिर** है जिसमें ८८० पुस्तके हैं—यह पुस्तकों बालवाचनालय मन्दिर और प्रौढ़ वाचनालय मन्दिर इस प्रकार दो भागोंमें विभक्त हैं। इसी ग्रन्थ मंदिरके निकट मोफत वाचनालय है जिसमें १७ मासिक व ९ अन्य पत्र आते हैं। यहां पब्लिकमें ज्ञान प्रचारके लिये ज्ञानोदय व्याख्यानमाला है इसके द्वारा नित्र २ विषयोंपर विद्वानोंके भाषण होते हैं। एक और शाला, अंग्रेजी स्कूल है, किन्तु लोग इससे लाभ कम उठाते हैं। सब संस्थाओंमें इस वर्ष २१८८॥=॥) की आय हुई और शिक्षा प्रचारक संस्थामें १०८५७॥, विद्यार्थीश्रममें ६४१॥=॥, अन्य मन्दिरमें ११९।-), अंग्रेजी स्कूलमें १६५) खर्च हुए।

महिला महोदय—लेखक मुनिश्री बालविजयजी महाराज और प्रकाशक 'जैन' कार्यालय भावनगर। १७८ पृष्ठकी गुजराती भाषाकी पुस्तकमें कन्याके विवाह समयसे लगाकर गर्भरक्षा, आहार विहार, प्रसूति, जन्म संस्कार आदि बालकके जन्मतरकी सर्व आवश्यक बातोंका प्रथम स्वर्ग विमानमें दर्शन किया है, दूसरेमें संतान पालन, तीसरेमें पुत्रीकी शिक्षा और शिक्षासे लाभ, चौथेमें प्राचीन सतियोंके संक्षिप्त अनुकरणीय जीवनचरित्र और वर्तमान कालकी कुछ परोपकारिणी स्त्रियोंका परिचय, पांचवेंमें विवाह कब करना, कैसे वरके साथ करना, गहने कैसे पहिरना, पतिके प्रतिधर्म, छटेमें प्राचीन स्त्रियोंका जीवनचरित्र और सातवेंमें पुत्रियोंकी प्राचीन कालकी शिक्षा, नियमित वर्ताव, बुद्धि विकाश, सामान्य धर्मशास्त्र, स्त्री सुधारक उपायोंका वर्णन है। पुस्तक गुजराती जाननेवाली स्त्रियोंके लिये बहुत उपयोगी है। मूल्य १) प्रकाशकसे प्राप्त।

श्रीसम्मेदशिखर यात्रादि विवरण (सचित्र) ११२ पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य-यात्रा प्रचार। लेखक द्वारकाप्रसाद जैसवाल, दिगम्बर जैनी—हाथरस (अलीगढ़) और प्रकाशक श्रीमान सेठ गुलाबचंदजी काला, मंत्री श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रभावनी सभा सांभरलेक (राजपूताना)—इस पुस्तकमें प्रथम यात्रा जानेवालोंको आवश्यक सूचनाएं दी गई हैं। फिर लेखकने अपनी यात्राका विवरण दिया है। फिर किरायाका विवरण है। इसके बाद शिखरजी पर्वतपर जो क्रमशः टोंके मिलती है—उनका नाम और प्रक्षाल पूजन करनेके मंत्र और पद्य दिये हैं। इसके बाद पं. जवाहरलाल कृत सम्मेदशिखर पूजा

है। फिर परिक्रमाकी विवरण और-शायरसंघ शिखरजी तक ओर और तीर्थ पड़ते हैं उनका विवरण देकर पुस्तक समाप्त की गई है। लेखक और प्रकाशकका परिश्रम प्रशंसनीय है। यात्रियोंको यात्रा करते समय इस पुस्तकको भी रखनेसे सुभीता होगा।

सोनागिर यात्रा विवरण-(सचित्र) इस पुस्तकके भी लेखक और प्रकाशक भी उक्त पुस्तकके ही महाशय हैं। मूल्य यात्रा प्रचार-पृष्ठ ३२१। पुस्तकका विषय नामसे ही प्रगट है-चित्र और आवश्यक सूचनाके पश्चात् सोनागिरक्षेत्रकी पूजा कवि आशारामजी कृत है। इसके बाद ७० कूटों और १६ मन्दिरोंका विवरण है। यह पुस्तक भी सोनागिरकी यात्रा करनेवालोंके लिये उपयोगी है। उक्त दोनों पुस्तकें प्रकाशकसे प्राप्त होती हैं।

सूचीपत्र—दि० जैन मालवा प्रान्तिक सभाश्रित शुद्ध औषधालय बड़नगर। प्रकाशक लाला भगवानदासजी जैन महामंत्री। औषधालयकी नियमावलीके पश्चात् औषधालयके संक्षिप्त परिचयसे प्रगट होता है कि इस औषधालयकी और सहायता देनेके धर्मकी नफल है। देश हितैषियोंका कर्तव्य है कि इस औषधालयको पवित्र औषधियोंका प्रचार करें और इस औषधालयको आर्थिक सहायता पहुंचावें।

धर्मात्माओंकी भावनापूर्ति।

जिस प्रकार आरोग्यताके लिये शुद्ध अन्न और पवित्र जलकी आवश्यकता है उसी प्रकार मस्तिष्कके आन्दोलनके लिये सात्विक आहार और पवित्र प्रभावपूर्ण स्थानकी आवश्यकता है तथा उसी प्रकार धार्मिक दृष्टिसे धर्मात्माओंकी भावनापूर्तिके लिये **जिनालय-देवमन्दिर है।** ऐसे पवित्र स्थानोंमें व्यवहार करने योग्य वस्तुएं भी परम पवित्र ही होना चाहिये और तब ही साधुओंकी भावना तृप्त होती है इसीसे कहते हैं कि:—

द्रव्योंकी पवित्रतासे भावोंकी पवित्रता होती है।

पवित्र वस्तुएं यही हमारा महालय है

हमारी दक्षिण यात्रा।

(लेखक-मूलचन्द किसनदास कापड़िया।)

कोटाः-माननीय ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीके साथ ता. ६-२-१९ को सूरतसे चलकर ता. ७ को दोपहरको हम कोटा पहुंचे। स्टेशनपर स्वयं-सेवक उपस्थित थे। स्टेशनसे शहर ४ मील है। हम दोनों उदासीन भाई मथुरालालजीके मकानपर कसेरा बाजारमें ठहरे। आप परोपकारी और जैन-धर्मके अच्छे जानकार हैं तथा अपना समय धर्म ध्यानमें व्यतीत करते हैं। यहां महासभा, मालवा प्रां० सभा और हाड़ोती प्रां० सभाका संयुक्त अधिवेशन ता. ७-८-९ फरवरी तक झालरापाटन निवासी रा० सा० सेठ माणिकचंदजी और रा० ब० सेठ कल्याणमलजी इन्दौरके सभापतित्वमें हुआ था जिसकी रिपोर्ट प्रकट हो चुकी है। विशेष यह था कि त्रिलोक मंडल विधानका पूजन प्रातःकालसे होती थी और ६ दिन तक शामको शास्त्र सभा और व्याख्यान सभा होती थी जिसमें ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजी, पं० दीपचंदजी, ब्र० शीतलप्रसादजी आदिके धार्मिक विषयोंपर व्याख्यान हुए थे जिसमें ता० ११ की रात्रिको वाग़में ८ से १२ तक जो सभा हुई थी उसमें तो ११ वक्ताओंके व्याख्यान हुए थे जिसमें हमने 'धर्मोन्नति' पर और पं० दीपचंदजीने 'वीरसंघ' पर व्याख्यान दिया था। पं० दीप-चंदजी तो यहां ८ दिन पहले पहुंच गये थे और मंत्री व्यवस्थामें आ[illegible] सहायता की थी। यहां १२ मंदिर हैं [illegible] ४ मंदिरोंमें ५००-७०० वर्ष पहिलेकी [illegible] प्रतिमाएं पाषाणकी हैं। खंडेलवाल [illegible] अग्रवाल १५० और पोरव[illegible] पाठशाला एक भी नहीं है [illegible] बड़ता है। आशा है कि [illegible]

कार्यकर्तागण इसके लिये कोशिश करेंगे। दो माइलपर नशियांजीमें जो मंदिर और बाग है उसमें एक छत्रीमें शिवलिंग तथा चावडीके पास हनुमान और गणपती स्थापित हैं। आश्चर्य है कि यहां ऐसा क्यों हुआ? यहां शुद्धाम्नायी तेरह पंथीकी विशेष प्रवृत्ति होनेपर भी ऐसा अंधेर क्यों है? बल्कि मुखियाओंका कर्तव्य है कि ऐसी मोटी भूल सुधारनेका शीघ्र प्रयत्न करें। नशियांके पास 'अमर निवास' महल है जिसमें कई खण्ड ऐसे बने हैं कि जानेवाला आदमी भ्रममें पड़ जाता है और बाहर निकलनेका मार्ग नहीं पाता। नदीमें एक ऐसी बड़ी शिला है कि जिसका बहुत भाग नदीमें झुका हुआ है और इसको 'अधर शिला' कहते हैं। ब्र. दिग्विजयसिंहजी आदिके प्रयत्नसे यहां 'वीरसंघ' की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य अन्याय, अत्याचार और अपमानका मूलोच्छेदन करना है। इसका विशेष हाल, नियमादि बाबू **सूरजमल जैन मंत्री, वीरसंघ, मल्हारगंज इन्दौरको** लिखनेसे मिल सकता है। देहली अनाथाश्रमके लड़कोंके यहां उपदेशप्रद गायन और नाटक नित्य होते थे जिसका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ता था। इस संस्थाको करीब १०००) और ऋ. ब्रह्मचर्याश्रमको करीब ५००) सहायता मिली थी तथा [illegible] करीब ५०००) मिल[illegible] और महासभाके भवंध[illegible] भरे गये थे। यहां [illegible] जोकि मु. देहपो [illegible] और जिसने २४ [illegible] [illegible] यहांके [illegible] मंदिर [illegible] ऐसे [illegible]

પ્રયત્ન થતો ન હોવાથી કોમની સ્થીતિ સુધરતી હોય તેમ લાગતું નથી, આ લેખકે જૈનોની કેટલીક કોન્ફરન્સોમાં અને કેટલીક સભામાં ભાગ લીધેલો છે, તેમાં ફક્ત કોન્ફરન્સો અને સભાઓ ઠરાવ પસાર કરતી જોવામાં આવે છે પણ તેનો અમલ બીલકુલ થતો હોય તેમ લાગતું નથી. માટે આખા જૈન સમાજની સાર્વજનીક ઉન્નતિને માટે સમસ્ત જૈન જાતિના આગેવાન નેતાઓ પોતાની અંદર રહેલી માનદશા, મિથ્યાભિમાન, પક્ષપાત, અન્યાયવૃત્તિ, અને આપખુદીને દુર કરી સકલ જૈન સમાજ અને વીરશાસનની ઉન્નતિને માટે કોઇપણ સંગીન કાર્ય હાથ ધરવું જોઇએ. જુદા જુદા ફીરકાઓ વચ્ચેનો ભિન્નભાવ જેમ દુર કરવા યોગ્ય છે તેમ જુદા જુદા ફીરકાઓ વચ્ચેનો કુસંપ પણ દુર કરવા યોગ્ય છે.

હાલમાં કેટલીક વખત થયાં દિગંબર અને શ્વેતામ્બર વચ્ચે સમેદશિખર અને અંતરીક્ષ પાર્શ્વનાથના સંબંધમાં જે તીર્થો સંબંધનો ઝગડો ચાલે છે જેમાં બંને તરફના લાખો રૂપીયા કોર્ટ મારફત બરબાદ થયેલા છે, જો હવે લાંબો વખત ચાલુ ન રહે, ને એક બીજાના ખરા હકનું સંરક્ષણ થાય તેવી રીતથી એક જૈન પંચાત (લવાદ) મારફતે બાહશ્રી વાડીલાલ મોતીલાલ શાહના કહેવા મુજબ નીકાલ આવવો જોઇએ.

માટે શા માટે સંપ નહિ કરીએ ? જ્યારે અમારી ગતિ, અમારી જાતિ, ગોત્ર તેમજ શરીર, બંધન, જન્મભુમી, ભોજ્યપદાર્થ, રહન સહનના નિયમો અને સર્વોપરીશાસનના કર્તા જ્યારે એકજ છે તો કોઇ એવું કારણ નથી કે જે અમારાં એકજ અંગનાં સ્વરૂપને સામાન્ય ઉન્નત્તિના કાર્યમાં ભિન્ન ભિન્ન બનાવી શકે. એકજ સમાજમાં સંપ યાં પારસ્પિક બળ જેટલું વધતું થાય છે તેટલું ભિન્ન ભિન્ન થઇ શકવાથી થતું નથી. માટે ઉપર જણાવેલા કુસંપરૂપી રોગનો નાશ કરવાને તથા તે ફરીથી થવા ન પામે તે મહારોગ તે આપણી ફુટ અનેકતા છે, કે જેણે આપણો ધર્મ, આપણી જાતિ આપણી વિદ્યા વગેરે સર્વને નષ્ટપ્રાય સ્થીતિમાં લાવી મુક્યા છે, માટે આપણી સાર્વજનિક ઉન્નત્તિને માટે આપણી સંકીર્ણતાઓને દુર કરી પૃથક પૃથક શક્તિઓને એકત્ર કરી સંપની વિજય પતાકા ફરકાવવી જોઇએ.

૭. હાનીકારક રિવાજ—નીચે જણાવેલા હાનીકારક રિવાજે આપણા એકલાનું નહિ બલ્કે સારા ભારત વર્ષનું સત્યાનાશ વાળી નાંખ્યું છે. આપણા આ મનુષ્ય ભવરૂપી ક્ષેત્રની અંદર તેની ઉન્નત્તિરૂપી બીજને દહન થવામાં સાધનભૂત હાની કારક રિવાજ એ મુખ્ય છે. ધર્મની અવનતિ કરનાર, આચાર વિચારમાંથી પતન કરનાર વળી તે સાથે આપણા સંસાર વ્યવહારને ધુળમાં મેળવનાર તથા તમામ કોમ (જે જે કોમમાં તે રિવાજ ચાલુ છે તે) ને, તથા દેશને પણ અધમ સ્થીતિએ પહોંચાડનાર પણ તેજ છે. જુના પુરાણે (આપણા પૂર્વજોએ) સમયને અનુસરીને તે પૈકી કેટલાક રિવાજો ખુબ આદરવા સમાજ હિતને ખાતર તે કેટલેક અંશે દાખલ કરેલા, પણ કાળક્રમે સ્વાર્થ અને અજ્ઞાનતાને વશ થઇ તેનો મુળ હેતુ નહિ સમજેતાં "ગાડરીયા પ્રવાહ"ની પેઠે ચાલુ રહેવાથી પરિણામે લાભ નહિ કરતાં હાનીકારક નિવડેલા જણાયા.

જોવામાં આવે છે. આ રિવાજે આપણી જૈન કોમ એકલીને નહિ પરંતુ સઘળી હિંદુ કોમને અધોગતિ રૂપી ઊંડા ખાડામાં ફેંકી દીધા છે. હિંદુસ્તાનમાં સમાયેલી બીજી બધી કોમ કરતાં આપણા જૈન સમાજમાં તે સ્વાર્થ, લોભ, અને જાતિ મત્સર એવા ઊંડાં મુળ ઘાલી બેઠો છે કે આપણો જૈન સમાજ સ્વાર્થનો ત્યાગ કરી જૈન સમાજના હિતને માટે જેમ બને તેમ વેલાસર ચાંપતા ઇલાજો લઇ યોગ્ય સુધારો કરશે નહિ તો સમાજની ઉન્નતિ કોઇ પણ કાળે થનાર નથી.

૨. કજોડાંવાળાં બાળલગ્ન—આ અનિષ્ટને હાનીકારક રિવાજ મિથ્યાકુળાભિમાનીઓમાં ઘણેક ભાગે જોવામાં આવે છે, તેઓની માન્યતા એવી છે કે મારો છોકરો પારણામાંથી પુગાય તો અમો કૃતાર્થ થયા, કેમકે અમારા બાળકો વખતે મોટી ઉમરના થતા કુદરતી ખોડ, બગીયા, ઓરી, અછબડા, વગેરે આવવાથી તેમનો કોઇ ભાવ પુછે નહિ તો અમારૂં કુળ ઓછું થતાની સાથે અમારા બાળકો કુંવારા રહી જાય, આવી ખોટી માન્યતાએ કરી બાળકના નાની ઉંમરમાં એટલે વરની ઉમર ૨ થી ૩ને કન્યાની ઉમર ૫ થી ૬ અને તેથી પણ નાની ઉમરમાં તેમનાં વેવીશાળ કરવામાં આવે છે, જેમાં પછીથી કુદરતી ખોડ આવવાથી તેમાં ફેરફાર થઇ શકતો નથી જેથી પરિણામે એક બીજાને ગદ્ધાપાટુ જીંદગી ગુજારતાં સાથે જો વૈધવ્ય દશા પ્રાપ્ત થાય તો પછી "પડ્યુ પાનું સુધારી લેવાનો" પ્રસંગ આવે છે, માટે તે બંધ કરવાની જરૂર છે.

સાંપ્રત કાળમાં આ અધમ રિવાજે ભારતવર્ષની જૈન અજૈન તથા તમામ હિંદુકોમને કેવી અધોગતિએ પહોંચાડી છે તે નીચેના પદ પરથી સમજાશે.

બાળલગ્ન.

(હરીગીત)

હિંદ ! વહાલા હિંદ !! તારૂં તેજ કેમ ઝાંખું થયું !!!
પુરો દીસે તારા, વીર્ય ક્યાં જાતું રહ્યું !
તનુજ તારા હિંદજના, શાસ્ત્રને ના અનુસરે,
બાળક, એ હિંદમા શો દમ હવે ? ૧

પુત્રનો સો વર્ષ શગિયા, ભાસના મુજને સહી.
ક્યાં ગયાં બેસી વગી, ચરખા વિના શાસે નાડ,
નિજ તનનું ઠેકાણું નહિ તો, દેશ કયાથી સાચવે.
બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૨

બાર વરસે બાપ થાતાં લાજ નહીં ક્યાં આવતી ?
શાને કરો કામાંધ, કોમળ કાય નિર્બળ ભાવથી;
સંસારની શું રીત જાણે કાચું કાલુ જે લવે,
બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમાં શો દમ હવે ? ૩

મૂર્ખ મા ને બાપ પોતે, ભાગ્યવાળા ધારતા,
નિજ પુત્રને ઘર પુત્ર જોવા, પુત્ર ગરદન મારતા;
અભાગીયા કાંઇ મોકાણોને, વહોરી લેવા માંડવે,
બાળક બનાવે બાળકો, એ હિંદમા શો દમ હવે ! ૪

અભંગ રંગ ઉમંગથી, રણ જંગમાં પસરાવતા,
ક્યા ગયા એવા શુર, શત્રુ સૈન્યને હંફાવતા
ઉદ્ધાર તારો હિંદ શુ છે ? શકય થાવો આ ભવે !
બાળક બનાવે બાળકો એ હિંદમા શો દમ હવે ?

હા ! શકા છે કાર્ય એકમાં, પણ એક યુક્તિ આદરો,
સુકાન લઇ મર્કટ હાથથી, જ્ઞાનિને હસ્તે ધરો;
પ્રજોત્પત્તિ જેવાં ઝાઝા, જોખમોનું કામ, તે,
નહિ બાલને પણ સોપવું, તન મન થકી બલવાનને. ૧

મહાશયો ! ઇતિહાસ જાણકારોને માલુમ હશે કે-મધ્યકાળમાં આપણા દુર્દૈવે આપણા પર ધર્માંધને જુલમી મુસલમાની સત્તાનો ઉદય થયો, જે ધર્માંધ પ્રજા હિંદુઓની કેટલીક યુવાન બાળાઓનું હરણ કરી પાણિ ગ્રહણ કરતા, પરણેલીને હરામ સમજતા હતા. જેથી તે ધર્માંધ પ્રજાના જુલમથી બચવા તથા હિંદુ ધર્માનુસાર લગ્નના પવિત્ર રિવાજના સંરક્ષણાર્થે તે વખતના આપણા પૂર્વજોએ-સમયને અનુસરીને બાલપણમાં લગ્ન કરવાનો પ્રથા ચાલુ કર્યો, જે આજકાલ મુસલમાની અધાધુંનીનો સમય બ નાઇ જવા છતાં પણ મજબુત ઘર કરી બેઠો છે, તો હવે તે અધમ રિવાજને દુર કરવા માટે હાલમા આપણા પર સાર્વભૌમ બ્રિટીશ સલ્તનતની ન્યાયી તેમજ શાન્તિ ભરેલી અને શીતલ તેમજ અદલ ઇન્સાફી રાજ્ય સત્તા પ્રસરી રહી છે. જેથી કોઇ પણ જાતની રકેટોક વિના સુધારો કરવાને અનુકુળ સમય મં

રૂપીયા હોય અને તે બાપના બારમા પ્રસંગે આખી નાત જમાડે, ઓના શ્રીમત (અઘરણી) પ્રસંગે આખી નાત જમાડે અને લગ્નાદિ પ્રસંગોમાં મોટા મોટા વરઘોડા તેમ બીજા ખર્ચો કરે અને તેના મુઆ બાદ તેના છોકરા પાસે ખાવાને પાય પણ ન હોય છતાં તે જેટલી પતરાજી રાખે છે. તેનાથી સેંકડો બલકે હજારો ઘણી કહેવાતા મિથ્યાભિમાની કુળવાનોમાં જોવામાં આવે છે.

મુળ પુરૂષ તો-સદ્‌વિદ્યા, સદ્‌ગુણ, સદાચરણ, અને પ્રમાણિકપણાથી ધન પ્રાપ્ત કરી, ધર્મ, જાતિ અને સમાજ હિતને ખાતર સ્વાર્થનો ત્યાગ કરી આત્મભોગ આપી ધર્મ, જ્ઞાતિ, અને સમાજ સેવા બજાવી કુળ સંપત્તિ સંપાદન કરેલી, તેને બદલે હાલમાં નથી જેની પાસે. સદ્‌વિદ્યા, સદ્‌ગુણ, સદાચરણ, કે સમાજ હિતના શુભ વિચાર તેમ નથી પ્રમાણિકપણું કે સત્ય,-કેવળ સ્વાર્થમાંજ મચી રહ્યા છે તો પછી તેઓનું ગુમાન "મારે મોગલને હુકાય પીજાતા" એ માફક ક્યાં સુધી ચાલી શકે? આવી રીતનું નિષ્ઠુરપણું અમારા જૈન સમાજની કેટલીક જ્ઞાતિ અને પેટા જ્ઞાતિના મિથ્યાભિમાની કુળવાનોમાં વ્યાપી રહેલું છે, બીજી કોઈ વાતમાં નહિ પણ કન્યા આપવા લેવામાંજ, પણ હવે વખત આવી લાગ્યો છે કે-કુળવાન કરતાં ગુણવાન વધારે પુજાશે. માટે જૈન સમાજની દરેક જ્ઞાતિના આગેવાનોએ સમાજ હિતને માટે ઉદાર આકૃતિથી દરેક જ્ઞાતિના મનુષ્યો સઘળા એકજ વીર ભગવાનના પુત્રો છીએ, એમ જાણી પોતાનામાં રહેલી સ્વાર્થ વૃત્તિ અને દુંપદનો ત્યાગ કરી તડ અને પેટા વડથી જોડાઇ એક બીજા સાથે કન્યા વ્યવહારથી જોડાઇ જવું જોઇએ.

છીએ, અને ચર્ચા કરીએ છીએ. ત્યારે તે અટકાવવાને ઘણીજ યોજનાની પણ જરૂર છે. તે અટકાવવાના જુદા જુદા જુદા ઈલાજો પૈકી આ પણ એક છે કે મિથ્યાકુળાભિમાને કરી એકજ કોમની અંદર દિલગીરી ભરેલી હદ સુધીના સમુહ પેટા સમુહ પેટા તડ યા પેટા તડ પડી ગયાં છે કે જેના લીધે ઉપર કહેલા કહેવાતા કુળવાનોના અજગરરૂપી વિકસેલા મુખમાં બાલ્યકાળથી તે વૃદ્ધાવસ્થા સુધી એક બીજાની યોગ્યતા જોયા વિના ઉપરા છાપરી કન્યાની જે આહુતીઓ આપવામાં આવે છે તે, અને તેજ જ્ઞાતિનો અમુક વર્ગ જે વિદ્વાન, સદાચરણી, સદ્‌ગુણ સંપન્ન અને સાંગોપાંગ હોવા છતાં તેને જીંદગી પર્યંત પણ કન્યા ન મળે. આવી રીતના મીથ્યાકુળાભિમાને કરી એકજ જ્ઞાતિના હોવા છતાં કન્યા વ્યવહારથી જોડાઇ શકતા નથી એ ખરેખર શોચનીય છે! માટે સામાજીક ઉન્નતિને માટે એક બીજાએ ઉદાર મનથી પરસ્પર લગ્ન સંબંધમાં જોડાઇ જવું. જોઇએ એના જેવું એકે ઉપાય નથી. એ ઉપાય ગમે તો તાત્કાળીક વ્યવહારૂ લાગે છે આ પ્રમાણે થવાથી વ્યવહારનું ક્ષેત્ર વિશાળ થશે જેથી પરિણામે દરેક જ્ઞાતિ યા સમાજમાંથી કુસંપ ક્લેશ દુર થવાની સાથે ઉપર બતાવેલા હાનીકારક રિવાજો જેવા કે-બાળ લગ્ન, કજોડાં, કન્યાવિક્રય, વૃદ્ધ વિવાહ, એકજ ગોળમાં વિવાહ યા લગ્ન આદિ કુરિવાજો દુર થવાની સાથે દરેક જ્ઞાતિ તેમજ સમાજમાં જાતિય પ્રેમ યા સમાજ પ્રેમનો વધારો થવાની સાથે આપણી જ્ઞાતિ અને યા સમાજનો ઉદ્ધાર કરી શકીશું.

व्याख्यान

(भारत० दि० जैन महासभा व मालवा दि० जैन प्रा० सभाका संयुक्त अधिवेशन कोटा (राजपूताना) के सभापति-राय साहब सेठ माणिकचंदजी सेठीके व्याख्यानका शेषांश)

जैनधर्मका महत्व।

महानुभावो, हमारे प्राचीन जैनधर्मके जो उच्च सिद्धान्त आज दुनियाकी मनुष्य समाज पर प्रभाव डाल रहे हैं, विचार करके देखिये, क्या वह सिद्धान्त इतने गंभीर व विशाल नहीं है कि हमारे इन प्रयोजनोंकी सिद्धिका मार्ग हमको दिखा सकें? यदि आज वे सिद्धान्त पश्चिमीय सभ्य राष्ट्रोंको कि जो अपनेको उन्नतिशाली कहते हैं और जिनका अनुकरण करनेमें हमारे युवक अपना सौभाग्य समझते हैं, प्रिय अथवा हितकारी होने लगे हैं, तो अवश्य वे सिद्धान्त इतने विशाल व प्रभावशाली हैं कि यदि हम और हमारे युवक उनको अपने जीवनका साधन बनावें तो हम पश्चिमीय राष्ट्रोंके समान ही नहीं किन्तु उनसे भी बढ़ चढ़ कर उन्नतिशाली बन सकते हैं। हमारी दशा आज उनकी सी है कि जिनके घरकी जमीनमें सोनेकी खान मौजूद है, परन्तु वह फटे हुए चिथड़े जो दूसरेने उतार कर फेंक दिये हैं उनको पहिननेको दौड़ते हैं दूसरोंकी झूठनकी बची खुची पर अपना उदरपूर्ण करना गनीमत समझते हैं। यदि हमको-मेरा यहां संकेत जैन समाजकी युवक समुदायसे है- अपने सुवर्णकी खानका बोध हो जावे, यदि हम उस धनको प्राप्त कर उसका उपयोग करने योग्य बन जावें तो अवश्य जानिये कि हमारे शरीर पर अच्छेसे अच्छे वस्त्र होंगे व हमारे भोजन अतिस्वादिष्ट होंगे।

तात्पर्य मेरे निवेदन करनेका इतना ही है कि यदि हम अपने धर्मके सिद्धांतोंका ठीक अनुभव कर लें, व दुनियाके परिवर्तनको दृष्टिमें रखते हुए उन प्राचीन सिद्धांतों द्वारा अपने जीवनको उपयोगी बनानेका दृढ़ विचार करलें तो फिर हमारी सारी कठिनाइयां दूर होजावेंगी।

जैनधर्म ऐसे गूढ़ व उच्च तत्वोंके रसोंसे भरा हुआ है तथा इतना विशाल है कि उसमें हर श्रेणीके मनुष्योंके लिये अपना जीवन आनन्दमय व कल्याणकारी बनानेकी गुंजायश है।

हमारे धर्मका सार है—

अहिंसा लक्षणो धर्मो ह्यधर्मः प्राणिनां वधः।
तस्माद्धर्मार्थि निर्लोके कर्तव्या प्राणिनां दया॥

इसमें वह सार है कि जिसके लिये अब मनुष्य समाजके हृदय दुनियाके चारों कोनोंमें हिलोरें ले रहे हैं, वैज्ञानिक विद्वान अपने आविष्कारों द्वारा नित्य नये प्रमाण देकर मनुष्य समाजको इस सारकी ओर खींच रहे हैं। यूरोपमें जो इस समय League of Nations बन रहा है उसका एक सिद्धान्त यह माना गया है।

उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्, अर्थात् उदारचित्तवालोंका सारा संसार बन्धु है और हम आशा कर सकते हैं कि अब दुनियाके मंडलकी रचना इसी आधार

पर होगी। जब दुनियाकी रचना ही अब हमारे सिद्धान्तों पर किया जाना मनुष्य-समाजके राजनैतिक नेताओंने स्वीकृत कर लिया, तो क्या हमारा यह कहना व्यर्थ होगा कि जैन धर्मके लिये एक नया और अमूल्य अवसर परमार्थ व परसेवाके लिये उपस्थित होनेवाला है? समय पुकार कर कह रहा है, जैन धर्मके अनुयाइयो, जागो, तुम्हारा समय आ गया।

बान्धवत्व व अहिंसा।

जैन धर्म न केवल अपने सिद्धान्तों द्वारा समस्त मनुष्योंके लिये बान्धवत्वका भाव प्रकट करता है किन्तु "अहिंसा" द्वारा संसारके प्राणी मात्रके लिये दया करना सिखाता है। साधारण मनुष्य समाज, बान्धवत्वकी आवश्यकताको मान, द्वेषोंको मिटानेका यत्न कर रही है, और साथ ही यह ज्ञान भी पैदा होता जा रहा है कि मनुष्य समाजकी जिम्मेदारियां दूसरे प्राणियोंके लिये भी हैं। जैनधर्मके अनुयाई अपने पवित्र आचरण व धर्ममय जीवनसे ऐसे समग्र मनुष्य समाज पर बहुत बड़ा प्रभाव डाल सकते हैं। मैं इस विषय पर अधिक नहीं कहना चाहता, मेरा निवेदन इतना ही है कि हमको समयके संकेत विचारपूर्वक पढ़ लेना चाहिये, समाज व सभाओंके लिये आनेवाले नये समयमें अपनी गति तीव्र करना होगी, उनके कार्य प्रणालीमें परिवर्तन प्रबंधकी युक्तियों द्वारा मितव्ययी व स्थाई समाजकी नींव पैदा करना होगा। जैनसमाज यदि ऐसे अनूठे अवसरका उपयोग करना चाहती है, तो उसके लिये भी अपने कार्यों व प्रणालीमें नई रूह फूंकना आवश्यक होगा।

सभाके नये प्रबन्धकी आवश्यकता।

सबसे बड़ा काम हमारे सामने अपनी महासभा व प्रांतीय सभाओंके सुधारके संबंधमें यह है कि उनके प्रबंधको इस प्रकार रचें कि सभा हम सबकी जीती व जागती सामूहिक शक्ति बने। हमारी सभाओंने गत वर्षोंमें अवश्य सराहनीय कार्य किया है, उनके द्वारा कई सुधार हुए हैं; परन्तु अभी हमको बहुत लंबा रास्ता चलना है। इसीलिये हम उत्सुक हैं कि हमको जो कार्य करना है उसको निश्चित करें, उसके लिये उचित प्रबन्ध कर अनुकूल सामिग्री व सुविधाएं उपस्थित करें।

हमारी समाजका अंतिम अभीष्ट आत्म कल्याण है। आत्मकल्याणके लिये सेवा ही एक सच्चा मार्ग है, बिना पवित्र चरित्रोंके हम सेवक नहीं बन सकते। जीवनको पवित्र व सफल बनानेके लिये आत्मिक व लौकिक ज्ञानकी आवश्यकता है।

हम अब सभाके प्रबंधका अनुमान इन अनेक मार्गों द्वारा करेंगे कि जिनमें हम अपने कार्योंको सुगमतापूर्वक विभाजित कर सकते हैं। वे ये हैं:—

१. शिक्षा

१. बालक व बालिकाओंकी शिक्षा,
२. सामाजिक कुरीतियोंका निवारण,
३. धार्मिक ज्ञानके प्रचारकी व्यवस्था,
४. समाजमें एकताके उपाय,

शिक्षाके विषय पर मुझे अधिक और कहनेकी आवश्यकता नहीं। सभाका पहला उद्देश्य यह होना चाहिये कि जैन समुदायका कोई बालक

अथवा बालिका कुपढ़ न रहने पावे। मेरा विचार है कि जैन समुदायमें अनिवार्य शिक्षा समाज और सभा द्वारा अभीसे किया जाना आवश्यक है। परन्तु इसके लिये स्थान स्थान पर विद्यालयोंकी आवश्यकता होगी इसलिये जितने साधन बालक व बालिकाओंकी शिक्षाके लिये इस समय प्राप्त हैं उनका पूरा पूरा उपयोग करते हुए उन सुविधाओंको किस प्रकार बढ़ाया जावे उसका विचार करना चाहिये। हमारी समाज अथवा जातिके लिये शिक्षा प्रणाली देशकी शिक्षा प्रणालीसे पृथक् नहीं हो सकती। मैं कह आया हूं कि भारतवर्षकी शिक्षा प्रणालीमें एक बड़ा परिवर्तन, राजनैतिक सुधारके साथ होनेके स्पष्ट चिन्ह प्रतीत होते हैं। हमारी सभाको समाजकी विशेष आवश्यकताओंकी ओर ध्यान देकर उनका प्रबन्ध करना है, और वह विशेष आवश्यकताएं मेरे विचारके अनुसार निम्नलिखित हैः-

(१) जैनबालकों व बालिकाओं अथवा युवकोंकी धार्मिक शिक्षाका उचित प्रबन्ध।

(२) निर्धन व अनाथ बालकों व बालिकाओंको शिक्षा पानेके लिये उचित सहायता।

(३) उच्च शिक्षाकी ओर जैन युवकोंको अधिकतासे लाना।

(४) स्त्रीशिक्षाका जैन समुदायमें प्रचार किये जानेके लिये एक बड़ा आन्दोलन अथवा विधवाओंकी शिक्षाका विशेष प्रबन्ध।

(५) व्यापारिक शिक्षा जो हमारी समाजके लिये विशेष रीतिसे आवश्यक है, उसके लिये उपाय करना, व सुविधाएं पैदा करनेके लिये ध्यान देना।

(६) कला व कौशल सम्बन्धी शिक्षाके लिये अपने युवकोंको उद्यत करना व उसके लिये सहायता देना।

सभाका कार्य शिक्षा सम्बन्धी इस प्रकार निर्माणित होनेसे अब हम यह विचार कर सकते हैं कि इनके लिये हमको क्या करना चाहिये। मैं यहां पर यह निवेदन कर देना चाहता हूं कि जैन कॉलेज, जैन हाईस्कूल, जैन विद्यालय जितने भी हैं अथवा नये खोले जावें उनका होना लाभदायक है। परन्तु उनका प्रबन्ध व व उनकी योजना उत्तम रीतिसे होना चाहिये। जैनशिक्षा संस्थाओंमें जहां तक बन सके शिक्षाप्रचारकी उत्तम व नई युक्तियां ग्रहण करना चाहिये।

अब मैं क्रमपूर्वक उन ६ बातों पर आता हूं कि जिन पर मैंने अभी कहा है कि हमारी सभाको विशेष रीतिसे ध्यान देनेकी आवश्यकता है।

१. धार्मिक शिक्षा।

जैन समाजके विद्यालयोंमें तो धार्मिक शिक्षाका प्रबंध होता ही है परन्तु हमको ध्यान देना है उन बालक बालिकाओंकी धार्मिक शिक्षाके उपायों पर कि जो जैन विद्यालयोंके अतिरिक्त दूसरी पाठशालाओंमें पढ़ते हैं, उनके लिये धर्मशिक्षा सम्बन्धी पुस्तकोंका तैयार होना आवश्यक है। यह पुस्तकें श्रेणीवार होनी चाहिये। ऐसी पुस्तकें इस समय तक कुछ तैयार हुई हैं जिनका उपयोग जैनसमाजकी पाठशालाओंमें किया जाता है, परन्तु ऐसी पुस्तकोंके और भी अधिकतर रोचक रूपमें संपादन किये जानेकी

आवश्यकता है। यह कार्य ऐसे ही विद्वान् कर सकते हैं कि जो शिक्षाके कार्यमें निपुण वा धर्मके ज्ञाता हों।

ऐसे केन्द्रोंमें जहां जैन समुदायकी संख्या अच्छी है और जहां बालक सरकारी अथवा अन्य पाठशालाओंमें पढ़ते हैं वहां इस बातका प्रबंध होना चाहिये कि उन पाठशालाओंके प्रबन्धकर्त्ताओंकी आज्ञा प्राप्त कर धार्मिक शिक्षाके लिये मदरसोंमें जैन विद्वानोंद्वारा सभा की ओरसे प्रबंध किया जा सके। धार्मिक शिक्षाका विषय बड़े महत्वका है। मैंने आज आरम्भमें ही इसके संबंधमें बहुत जोर डालकर आप महानुभावोंका ध्यान उसपर दिलाया है।

बनारस हिंदू युनिवर्सिटीमें जैन फिलासफीके प्रोफेसरकी आवश्यकता।

धार्मिक शिक्षाका कार्य उत्तम ढंग पर लानेके लिये यह बहुत आवश्यक मालूम होता है, कि शिक्षाके प्रचार अथवा उसकी पद्धतिके निर्माण करनेका कार्य एक बड़े शिक्षाके केन्द्रसे हो। बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी जो हिन्दू जातिकी नेशनल संस्था है, और जैन समाज हिन्दुओंका आंतरिक अंग है, उससे बढ़कर दूसरा कोई केन्द्र मुझे इस कार्यके लिये अच्छा नहीं प्रतीत होता, और मैं यह विचार नम्रतापूर्वक आज समस्त जैन समुदायके सन्मुख उपस्थित करता हूं कि हमारे हिन्दू महाविद्यालयमें समस्त जैनसमाजकी ओरसे एक अथवा दो प्रोफेसर (Chairs) जैन धर्म (Jain Philosophy) पर लेक्चर देनेके लिये स्थाई कोष स्थापित कर नियत किये जावें, और वहीं पर [illegible] जैन धर्मके Research Scholars के लिये फण्डस् भी रक्खे जावें, उनके कार्यके लिये एक अच्छी Library जैनधर्म ग्रन्थोंकी रहे; जहां जैनधर्मके प्रोफेसर यूनिवर्सिटीमें पढ़नेवाले जैनियोंको उच्च धार्मिक शिक्षा दे सकेंगे, वह बहुत कुछ कार्य एक उत्तम रीतिसे धार्मिक शिक्षाके प्रचारका अपने आदेशमें करा सकेंगे। इस बड़े व महत्वके कार्यके लिये जैन समुदायके तीनों सम्प्रदायोंके मिलकर काम करनेकी बड़ी आवश्यकता है, और मैं आशा करता हूं कि इसपर तीनों सम्प्रदायोंके नेता शीघ्र विचार करेंगे।

२. गरीब अथवा अनाथ बालकोंकी सहायता।

गरीब बालकोंको शिक्षा पानेके लिये सहायता करना, उसके लिये धन एकत्रित करके उसका उपयोग करना, इसपर सभाको विशेष रूपसे ध्यान देना चाहिये। कितने होनहार लड़के गरीबीके कारण उच्च अथवा उपयोगी शिक्षाके लाभसे वंचित रह जाते हैं। समाजका सबसे बड़ा धन उसके बालक हैं और इसीलिये उनको उन्नतिके पूर्ण अवसर देना सभा ही का ही कर्तव्य है।

जैन समाजका इस समय देहलीमें एक अनाथालय है, जिसकी व्यवस्था इस समय संतोषजनक नहीं है। मैं सभाका ध्यान उसपर दिलाता हूं, उसके लिये धन की व प्रबन्ध की बड़ी आवश्यकता है।

३. उच्च शिक्षा।

मुझे यह कहनेमें बड़ा दुःख होता है कि हमारी समाजमें उच्च शिक्षाकी ओर लोगोंका ध्यान

दिया जाना चाहिये, नहीं दिया जाता। समाजमें उच्च शिक्षा न होनेसे हम सुधारके कार्योंमें कितने असमर्थ रहते हैं, यह प्रत्यक्ष है। उच्च शिक्षाके लिये देशमें जितनी सुविधाएं हैं, हमारे युवकोंको उनसे पूर्ण लाभ उठाना चाहिये। उच्च शिक्षासे ही एक घनिष्ठ संबंध उच्च व्यापारिक शिक्षा तथा कला कौशल सम्बन्धी शिक्षासे है जिनपर मैं आगे चलकर निवेदन करूंगा।

४ स्त्री शिक्षाके लिये आन्दोलन।

स्त्री शिक्षाकी आवश्यकता व लाभ को समाजने स्वीकृत कर लिया है, उसमें अब कोई वाद विवाद नहीं है। समाजके सारे सुधारोंका केन्द्र गृहस्थका घर है, उस घरकी शोभा व पवित्रता स्त्रियों द्वारा है अशिक्षित स्त्रियां समाजके कुरूप हैं। शिक्षित स्त्रियां समाजका आभूषण व बल होंगी। समाज अपनी अर्द्धांगियोंको अशिक्षित रखकर कदापि आगे नहीं बढ़ सकता। दोनों अंग समान अपने अपने कर्तव्यके लिये दक्ष होना चाहिये। जैन धर्मने स्त्रियोंको उच्च स्थान दिया है।

" यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते
तत्र देवताः "

समाजमें उनके कर्तव्य स्पष्ट हैं। स्त्रियोंकी शिक्षा प्रणालीके विषयमें बहुत कुछ कहा जा सकता है। समय थोड़ा है। मैं केवल संकेतमात्र यह निवेदन करता हूं कि हमारे देशमें स्त्रियोंकी शिक्षापद्धतिके निर्माणित करनेके लिये ध्यानपूर्वक विचार किया जा रहा है हम इस विषयमें अवश्य पश्चिमीय शिक्षा पद्धतिका अनुकरण नहीं कर सकते। स्त्रियोंकी उच्च शिक्षाके विषयमें कुछ कहना इस समय भूल होगी सभाका इस समय कर्तव्य यह है कि समाजमें उपदेशकों अथवा उपदेशिकाओं द्वारा एक बड़ा आन्दोलन स्त्री शिक्षाके प्रचारका किया जावे व कन्यापाठशालाओंके खोलनेकी ओर पूरा जोर दिया जावे। समाजकी स्थापित की हुई कन्यापाठशालाओं की संख्या बहुत ही कम है। मैं अपने समाज भाइयोंसे अपील करता हूं कि इस कार्यमें देर करना बड़ी भूल होगी।

विधवाओंकी शिक्षा।

विधवाओंको उचित शिक्षा दिये जानेका प्रश्न इसी संबंधमें विचारणीय है। इस समय जैन विधवाओंके लिये हमारी समाजके चार " श्राविका आश्रम " बम्बई, इन्दौर, देहली, मुरादाबादमें स्थापित हैं, जहां पर विधवाओंको अधिकतर धार्मिक शिक्षा दी जाती है। यह सब नई संस्थाएं हैं। हमारा उद्देश्य ऐसी संस्थाओंसे यह होना चाहिये कि हम अपनी उन बहिनोंको, कि जिनका दुर्भाग्यवश जीवनका सहारा संसारसे उठ गया, जीवनके उद्देश्यका मर्म सिखाकर उनका जीवन पवित्र, मंगलमय व समाजके लिये उपयोगी बनावें। वह लोग कि जो धर्मके अटल नियमोंके तत्वको न समझ सामाजिक सुधारकी आड़में विधवा विवाहके लिये आन्दोलन करते हैं उनसे जैन समाज कदापि सहानुभूति नहीं कर सकता, इसीलिये जैन समाजकी जिम्मेदारियां विधवाओंका जीवन समाज व जगत सेवाके मार्ग पर पवित्र कल्याणकारी बनानेके लिये और भी अधिक है।

यदि हमारी समाज इस जिम्मेदारीको अपने ऊपर उचित रीतिसे उठाकर पूरा कर ले तो मेरा दृढ़ विश्वास है कि हम विधवा विवाहके प्रश्नको बड़ी सुगमता पूर्वक हलकर सकेंगे। जैन धर्म विवाहको धार्मिक संस्कार मानता है और उसपर इस समय भी दृढ़ रीतिसे स्थिर है। विधवाओंके जीवनके लिये उपचारिका, उपदेशिका, शिक्षिका व उनके साथ ही आर्यिका इत्यादि अनेक उच्च मार्ग खुले हुए हैं।

व्यापारिक शिक्षा।

जैन समुदायका अधिकांश भाग व्यापारिक है, इसलिये व्यापारिक शिक्षाका प्रश्न हमारे आर्थिक साधनोंके लिये बड़े महत्त्वका है। यह शिक्षा इस समय हमारे युवकोंको हमारी ही दुकानोंद्वारा मिलती है। हमारे यहांके हिसाब किताबकी प्रणाली व व्यापारिक ढंग बिल्कुल हमारे मारवाड़ी व दूसरे देश भाइयोंसे मिलता जुलता है। व्यापारिक शिक्षाके लिये हमारी समाजको उनसे मिलजुल कर काम करना लाभदायक होगा। हमारी आवश्यकतानुसार व हमारी वर्तमान पद्धतिकी सब उत्तम बातोंको लेते हुए पश्चिमीय व्यापारिक शिक्षा पद्धति (Commercial Educational System) की उपयोगी बातोंको हमको अपनी पद्धतिमें शामिल करना होगा। देश देशान्तरोंका भ्रमण व समुद्र पार देशोंमें आर्थिक सिद्धिके लिये पहुंचना अब हमारे लिये आवश्यकीय प्रतीत होता जाता है। यह वह प्रश्न, जिसमें हमको अपने देश भाइयोंसे मिलकर काम करना है व समाजके नेताओं द्वारा तय करना है, सभाको शीघ्र अपने हाथमें लेना चाहिये।

कला कौशल सम्बन्धी शिक्षा।

व्यापारिक शिक्षासे मिलता जुलता ही प्रश्न कला व कौशलकी शिक्षा है। कला व कौशल, व्यापारका एक बड़ा साधन है। इस समय हमारे देशमें अनेक प्रकारके नये कारखाने खोलनेका उपाय व औद्योगिक उन्नतिके लिये कार्य किया जा रहा है। भारत सरकारने सर टॉमस हालेन्डकी अध्यक्षतामें जो औद्योगिक कमीशन बिठाया था उसने इसी वर्ष अपना कार्य समाप्त करके रिपोर्ट प्रकाशित की है। विज्ञानके उपयोग, खोज व प्रचारसे नये अवसर उपस्थित होंगे। जैन समाजको ऐसे अवसरमें पूरा लाभ उठानेके लिये तैयार होना चाहिये।

मेरा इसके सम्बन्धमें अधिक कहना व्यर्थ होगा, जितना ही आप इस पर विचार करेंगे उतना ही अधिक इसका महत्व आपको प्रतीत होगा, हमको अपने ही कारखानोंके लिये योग्य युवक तैयार करनेका प्रबन्ध अभीसे करना चाहिये और सभा ही समाजको इस कार्यमें मार्ग दिखा सकती है।

२–धार्मिक ज्ञानका प्रचार।

शिक्षा सम्बन्धी कार्यके साथ ही दूसरा विषय सभाके सन्मुख धार्मिक ज्ञानके प्रचारका है। जैन धर्मका साहित्य अनेक अपूर्व रहस्योंसे भरा हुआ है यह रहस्य व सिद्धान्त मनुष्य समाजके कल्याणके लिये हैं, हम जैन अनुयाइयोंका यह धर्म है कि हम मनुष्य समाजको सेवा उन्हीं उच्च सिद्धान्तों

के प्रचार द्वारा करें, कि जो हमको दुनियामें सब पदार्थोंसे अधिक प्रिय हैं। जैनधर्मके उच्च सिद्धान्तोंकी पश्चिमीय अनेक अनुभवी विद्वानोंने मुक्त कंठसे प्रशंसा की है, यदि वे रहस्य व तत्वकी बातें उचित रीतिसे शिक्षित समाजके सन्मुख उपस्थित की जावें तो अवश्य एक बड़ा अर्थ सिद्ध होगा, उसमें हमारा प्रयोजन कदापि यह नहीं होना चाहिये कि लोग जैन धर्मको स्वीकृत कर इस सम्प्रदायमें सम्मिलित हों। हमारा भाव इस प्रचारके कार्यमें सेवाका भाव है। हम अपने भंडारके खजाने विचारवान समुदायके सन्मुख इसलिये रखनेका यत्न करेंगे कि हमारे उच्च सिद्धान्तोंका प्रभाव उनके द्वारा मनुष्य समाजपर पड़े, धर्म जीवनमें है। सम्प्रदायमें नहीं। सेवाका प्रयोजन केवल निस्वार्थ सेवा है। इस आदर्शको लेकर जो कार्य प्रचारका होगा उसमें सफलता मिलना आवश्यक है। ऐसे महान कार्यके लिये पहिला साधन विद्वान व सदाचारी प्रचारकोंका तैयार करना है। इस समय यह कार्य मुरेना, इन्दौर, हस्तनागपुर व मथुरा ब्रह्मचर्यआश्रम व महाविद्यालयों द्वारा हो रहा है; परन्तु जो विद्वान तैयार किये जा रहे हैं वह एक ही प्रकारके हैं, आवश्यकता इस बात की है कि आज कलकी शिक्षित समाजमें हमारे धर्मके सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके लिये ऐसे प्रचारक तैयार किये जायें कि जो पश्चिमीय साहित्यमें प्रवीण हों, और जिनको हमारे धर्मके उच्च सिद्धान्तोंका ज्ञान हो। आरम्भमें इनके लिये सहज उपाय यही है कि जो मैंने ऊपर निवेदन किया है कि बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटीमें जैन फिलासफीके प्रोफेसरोंके लिये व Research scholars व Readers के लिये फौरन ही धनकी योजना कर स्थाई प्रबन्ध किया जावे।

ऊपर बताये हुए जो विद्यालय धार्मिक विद्वानोंके तैयार करनेके लिये स्थापित हैं उनका प्रबंध भी जहां तक हो सके इसी बताये हुए आधार पर लाना चाहिये।

सरस्वती भंडार, ग्रन्थोंका संग्रह व प्रकाशन।

सरस्वती भवनोंकी स्थापना पर गत वर्षोंमें बहुत कुछ जोर दिया गया है। जैनधर्मका कितना बड़ा साहित्य भंडार इस समय तक गुप्त पड़ा है, और उसका केवल एक कारण हमारी समाजकी उदासीनता है। इस संबंधमें बड़े खोज व कार्यकी आवश्यकता है। हम आशा करते हैं कि हमारे जो प्राचीन ग्रन्थ जर्मनी व अन्य देशोंमें चले गये हैं वह फिर बृटिश सरकारकी द्वारा पीछे इस देशको लानेका यत्न किया जावेगा।

इस समय भारतवर्षमें भी अनेक स्थान पर (जैसे ईडर, नागौर) अनेक प्राचीन ग्रंथ तालोंमें बंद पड़े दीमकका आहार हो रहे हैं, यह ग्रंथ केवल जैन समाजकी ही मिलकियत (Property) नहीं, किंतु मनुष्य समाजका धन है। इसलिये हमारी समाजको, कि जो उनकी Trustee समझी जाती है, उनके संग्रह करने व उनको नाशसे बचाने तथा उनके प्रकाशन व प्रचारका कार्य तीव्रतासे करना चाहिये। मैं अपील करता हूं, कि इस कार्यमें हमारे योग्य भ्राता श्रीयुत पन्नालालजी बाकलीवाल कलकत्तावालोंको सभासे इस कार्यमें पूर्ण सहायता दी जावेगी,

मुझे यह कहनेमें हर्ष है कि श्रीयुत ऐलक पन्नालालजी महाराज द्वारा एक विशाल सरस्वती भवनकी स्थापना झालरापाटनमें भी इस समय हो रही है और मुझे आशा है कि बहुत कुछ उपयोगी कार्य इसके द्वारा होगा।

धार्मिक ग्रन्थोंकी वृहत् सूची।

इस समय जैन मंदिरमें धार्मिक ग्रन्थ जो मौजूद हैं उनकी सूचियां मंदिरोंमें ही रहती हैं; मैं अपील करता हूं कि समस्त मंदिरोंके ग्रंथोंकी एक वृहत् सूची तय्यार करनेका कार्य सभाको अपने हाथमें लेना चाहिये।

धार्मिक संस्कार।

धार्मिक संस्कारोंके संबंधमें जो प्रभाव समाज .. डालता है उसका आन्दोलन धार्मिक प्रचारकों द्वारा होना चाहिये।

३. सामाजिक कुरीतियोंका निवारण।

बाल विवाह।

सभाकी स्थापनाके दिवससे ही सामाजिक कुरीतियोंको मिटानेका प्रश्न हाथमें लिया गया था। और हमको यह देखकर हर्ष है कि बहुतसी कुरीतियां मिट गई हैं अथवा मिटती जाती हैं; परंतु ऐसी कुरीतियां कि जिनका समाजके भविष्य पर बड़ा हानिकारक असर पड़ रहा है अब भी हमारी समाजमें उपस्थित हैं।

सबसे बड़ी हानिकारक बात बालविवाह है। समय आ गया है कि अब सभाको अपने कानून द्वारा बालविवाह करनेवालोंको दंडनीय ठहराना चाहिये। हम अपने [illegible] अब इसके द्वारा एक दिन भी नहीं सहन कर सकते। बालविवाहकी रोक दंड द्वारा छोटी उम्रकी विधवाओंकी संख्याको स्वतः कम कर देगी, और एक बड़ी असुविधा जो इस समय समाजके सामने उपस्थित है, निवारण हो जावेगी।

वृद्धविवाह।

वृद्ध अवस्थाके पुरुषोंका छोटी उमरकी कन्याओंके साथ विवाहको समाजने निन्दित ठहरा दिया है परंतु उसकी रोकके लिये समाजने कभी कोई शस्त्र पैदा नहीं किया, कोई सुधार उस समय तक नहीं हो सकता जब तक समाजकी पुलिस अपने शस्त्रोंके भय द्वारा सभाके कानूनकी पाबन्दी न करावे।

व्यर्थव्यय।

व्यर्थ व्ययकी कुरीति हमारी समाजके अनेक दुखोंका एक बड़ा कारण है, जितना धन व्यर्थ रीतिसे शादी, मृतकजीमन, व दूसरे अनेक कुमार्गोंमें व्यय होता है, यदि वही धन सभाको समाजके सामूहिक कार्योंके लिये मिल सके तो कोई कठिनाई हमारे सामने न रहे, शादी, मौत, अथवा दूसरे कार्योंमें व्यय किस सीमाके भीतर हो इसके पक्के नियम बनाये जाकर उन पर अमल कराना चाहिये, सभाके बनाये हुए नियमोंको जो न माने उसको समाजसे दंड देना चाहिये।

ऐसे धनाढ्य पुरुष कि जिनके पास धन व्यर्थ व्यय करनेको मौजूद है उनसे हमारी अपील है कि वह धन समयानुसार दानमें दें, वह दान नहीं, मेरा है, जिससे समाज व धर्मका शीघ्र कल्याण हो।

४. एकयता

सभा व समाजका जो परम कर्तव्य व उद्देश्य होना चाहिये, अब मैं उस पर आता हूं, और यह है "जैन समाजकी एकयता"

तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े।

महानुभावो, जिस प्राचीन धर्मके हम अनुयायी हैं, वह हमको दुनिया भरके लिये बान्धवत्वका भाव सिखाता है। हर व्यक्ति कि जो जैनी शब्द द्वारा सम्बोधित किया जाता है उसमें बान्धवत्वकी मात्रा इसीलिये विशेषतासे झलकना चाहिये। यही जैनियोंका **वात्सल्य धर्म** है। मुझे विश्वास है कि आज इस सभामें कोई ऐसा व्यक्ति मौजूद नहीं है कि जो इस धर्मका पक्षपाती न हो, परन्तु क्या यह धर्म हमारा कथन मात्रके लिये ही है? धर्म वही है जिसका प्रभाव अनुयाइयों द्वारा प्रकट हो। क्या हम और हमारी समाजें वास्तवमें उसका पालन कर रहे हैं? शोक है, नहीं।

तीर्थक्षेत्र सम्बन्धी जो झगड़े जैन समाजमें प्रचलित हैं, यदि उनका इस समय तक उचित रीतिसे निबटारा नहीं होने पाया, तो उसका एक कारण यही है कि बान्धवत्व भावमें उसको निबटानेका हमारी समाजोंने यत्न नहीं किया जिन तीर्थक्षेत्रों द्वारा जैन समाज शांतिका मार्ग ढूंढती थी वही तीर्थक्षेत्र आज महा अशांतिके कारण बनाये गये हैं। महानुभावो, इस प्रश्नको परस्पर मेल जोलसे बन्धवत्व भावमें जल्द निबटारेका यत्न करना चाहिये। जो धन हम झगड़ोंमें व्यर्थव्यय कर रहे हैं वही धन समाजके उपयोगी कार्योंका साधन बन सकता है। तीर्थक्षेत्रोंके झगड़े इस समय जैन समाजमें बान्धवत्व भावके विकासके बाधक हैं, इसीलिये इनको शीघ्र तय करनेकी आवश्यकता है।

पंचायतें।

आपसके झगड़ोंके निपटानेके लिये जातीय व स्थानीय पंचायतोंकी स्थापना पर पिछले अधिवेशनोंमें जोर दिया गया था; परन्तु इस समय तक कोई उन्नति उस कार्यमें नहीं हुई। मेरा विचार है कि ऐसी पंचायतोंकी स्थापनाके लिये सभाको उत्तेजन देना चाहिये, इस सम्बन्धमें खंडेलवाल महाराष्ट्र जैन सभा, व नागपुर प्रान्तीय सभाने जो कार्य कर दिया है, उससे हम शिक्षा ले सकते हैं।

महानुभावो, मुझे भय है कि मैं आपका बहुत समय ले चुका हूं मैंने यत्न किया है कि ऐसे महत्वके अवसर पर जो प्रश्न विचारणीय हैं उनको संक्षिप्त किन्तु स्पष्ट रूपसे आपके सामने उपस्थित करूं।

पटेल बिल।

एक और महत्वका विषय, जिसपर आज इस स्थानसे जैन समाजकी ओरसे स्पष्ट शब्दोंमें विचार प्रकट किया जाना आवश्यक है वह है "**पटेलका विवाह बिल।**" जैन समाज अपने धार्मिक सिद्धातोंके आधार पर इस बिलका विरोधी है, और हमारा कर्तव्य होगा कि हम इस संबंधमें और दूसरी हिन्दू जातियोंके साथ इस बिलका विरोध करें।

जैन समाचारपत्रोंके सम्पादकोंसे अपील।

जैन समाजके समाचार पत्रोंके सम्पादकोंसे मैं एक विनयपूर्वक अपील करता हूं, सभाके रक्ष

तिके कार्योंमें समाचार, पत्रोंका आश्रय ढूंढना पड़ता है, हमारे समाजके समाचार पत्र अब हमारी सभाओंके प्रोगामके अनुसार विषयोंपर जोर देंगे और बार बार उनपर लेखनी द्वारा समाजको चेतावनी देंगे तभी कुछ कार्य होना संभव है। मुझे आशा है कि मेरी इस प्रार्थना पर सम्पादक महाशय अवश्य ध्यान देंगे।

महानुभावो, अब मैं इस भाषणके अंतमें फिर एक वार आपकी उस असीम कृपाके लिये व मानके लिये जो आपने मुझे प्रदान किया है सविनय धन्यवाद प्रकट करता हूं। और अपने बंधुओं तथा बहिनोंसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूं कि "जैन धर्म व जैन समाज" का भविष्य तुम्हारा है; और तुम्हारे ही हाथमें है, उसको प्रभावशाली बनानेका यत्न करो। "जैन धर्म" का प्रभाव यदि दुनिया पर डालना है, तो वह हमारे आचरण द्वारा पड़ेगा। वह प्रभाव सिद्धांतोंका ढोल बजानेसे नहीं पड़ सकता जो पुरुष अथवा स्त्री अपनेको 'जैन' कहने में बाद उसी समय जैनी होनेका गौरव का

देवकी चरित्र।

(लेखक-फूलचन्द अग्रवाल, मुरार-ग्वालियर)

आजकल होलीकी छुट्टियां हैं इसलिये बाजारमें खूब चहल पहल रहती है। भीड़के घमसानके कारण बाज़ारोंके दृश्य सुहावने देख पड़ते हैं। यार दोस्तोंसे मिलता जुलता और बाजारोंमें घूमता हुआ मैं ठीक साढ़े आठ बजे अपने घर वापिस आया। घरमें प्रवेश करते ही मेरे नौकर लल्लूने मुझे एक बात कहकर आश्चर्यमें डाल दिया। उस समय मैंने भी कुछ ध्यान न दिया और लल्लूके साथ उलटे पावों लौट गया। मार्गके बाजार और गलियां लांघता मैं बड़े बाजारमें पहुंचा। वहां मुझे मेरे मित्र पंडितजी मिले। उन्होंने मुझसे प्रश्न किया कि मैं कहां जा रहा था? मैंने उनसे कह दिया कि घरपर कोई व्यक्ति भागता हुआ कह गया है कि मेरे मित्रमंडलके मित्रोंमें कुछ झगड़ा हो गया है वहीं पर मुझे बुलाया है। यदि मुझसे और उस व्यक्तिसे मुंह दर मुंह बात होती तो मैं सत्यासत्यका विचार करता। इस समय यदि मुझे आश्चर्य हुआ तो भी चुपचाप चला आया।

रहस्यका पता लगेगा। मैंने व्यग्र होकर पूछा, "तब क्या मामला कुछ और है? उसने अवश्य कहकर' कहना आरंभ किया—"लगभग आधा घंटा हुआ जिस समय मेरे घर पर आकर किसीनें आवाज दी कि तुम्हें बाबूजीके यहां बुलाया है। बस इतना कहकर वह चला गया। मैं घरके भीतर था इस कारण न देख सका वह कौन था और क्यों आया था। उसी समय मैं बाबूजीके यहां पहुंचा। बाबूजी अपने कमरमें बैठे हुए एकांतमें किसी गहन विषयपर विचार कर रहे थे। मेरे प्रवेश करने और बुलानेका कारण पूछने पर वे मुझसे क्रुद्ध हुए मैं चुपचाप वहांसे लौटा। सदर द्वारपर आते ही एक अपने मित्रसे मैंने यही कथा कही तब उसने कहा यह वही देवकी है जिसने सहस्रों घरोंके स्त्री पुरुषोंको नर्कका मार्ग दिखाया है। इतना सुनते ही मेरे शरीरमें बिजली दौड़ गई और उसकी खोजमें निकल पड़ा, इसी बीच आप मिल गये। बोलिये अब क्या करना चाहिये? मेरी इच्छा तो यही है कि आज उसे पकड़कर उसको भरपूर दंड देना चाहिये ताकि फिर कभी वह ऐसा करनेका साहस न करे और उसे कुछ शिक्षा लग जाय।"

पंडितजीका और मेरा परामर्श हो गया। मेरे अनुरोध करनेपर प्रथम हम लोग मित्र मंडलमें गये। वहांका दरबार गरम था। हम दोनोंके प्रवेश करते ही वे लोग सब एकदम हंस पड़े और कुछ आपसमें बातें करने लगे जिनको हम दोनों न समझ सके, अलबत्ता इन बातोंका हमने यही सार निकाला कदाचित् देवकीको मरदाने भेषमें हमारे घर भेजनेकी उन्हींकी शरारत थी; क्योंकि उनमेंसे दो एक ऐसे भी थे जो उसके (देवकीके) परम भक्त थे। यद्यपि उस समय उन लोगोंने आग्रह भी किया, किंतु हम लोग न ठहरे उसकी तलाशमें चल दिये। समय भी ठीक ग्यारहका हो गया।

पाठको! इस समय जब कि मैं एक रहस्यका भंडा फोड़ने चला हूं तो आपसे कुछ भी न छिपाऊंगा और यहां यह भी बतला देना ठीक समझता हूं कि कुछ दिवससे मैं एक मामलेकी तलाशमें हूं। मैं सी० आई० डी०का एक इन्सपेक्टर हूं और मुझे गुप्त अड्डोंका पता लगानेका काम सौंपा गया है। मेरा सी० आई० डी० का कार्य करना किसी पर विदित नहीं। अपने स्वार्थके लिये न मैं किसी पर अत्याचार करता हूं और न अनाचार; यही कारण है कि सब लोग मुझसे प्रसन्न रहते हैं और मेरे कार्यसे अनभिज्ञ हैं। यहां पर व्यभिचार बढ़ चला है। कुमारियोंके कौमार नष्ट होनेकी बात जहां तहां सुनी जाती है और कुमारियां भगा ले जाई जाती हैं। इस कार्यके लिये मेरी मातहतीमें कई आदमी दिये गये हैं।

मैं देवकीको केवल एक व्यभिचारिणी स्त्री समझता था इसके अतिरिक्त कुछ नहीं, किंतु मुझे बादको ज्ञात हुआ वह बड़ी साहसी भीषण स्त्री है। उसने बड़े २ अनर्थ किये हैं।

समय अधिक होनेसे पंडितजी अपने घरको चले गये, किंतु हम लोग बालकी खाल निकालनेवाले जासूस हमें चैन कहां। कुछ समय तक मैं विचार करता रहा पश्चात् सदर

बाजारमें मैंने एक युवाको लम्बी डगोंसे जाते हुए देखा। मैंने उसका पीछा करना उचित न समझा। तुरंत ही एक सिपाहीके हाथमें रुपया दे उसके कानमें कह दिया कि वह किसी तरकीबसे उस आदमीको शहरके बाहर लाल कोठीमें ले आवे।

मैं अकेला ही गलियां लांघकर नदीपर पहुंचा। नदी वेगसे वह रही थी। नाव खेना मैं जानता हूं किंतु बिना मांझीके पूछे उसकी नाव कैसे खोलता ? लाल कोठी नदी पार है। मैंने मांझीको जगाया और नाव तैयार कराई। इसी बीच दो युवा पुरुष आ पहुंचे। वे भी नदी पार जाना चाहते थे। पूरी नावका किराया आठ आना मैंने मांझीको दिया। उनमेंसे एकने आवश्यक कार्यवश उस पार जानेकी इच्छासे उसी नावमें बैठना चाहा; क्योंकि वहांपर केवल एक ही नाव थी। मांझी कह क्या सकता था उन दोनोंको बैठाना मेरी इच्छापर निर्भर था। मुझे उनकी दीनता पर करुणा आ गई और उनको बैठा लिया। मार्गमें मेरी उनसे कुछ बातचीत न हुई। केवल मैंने इतना ही पूछा कि वे कहां जाना चाहते हैं !

उन्होंने कहा—लाला फेटीके महलेमें सम्मलित होने।

पश्चात् उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं कहां जाना चाहता हूं ! मेरा भी वही उत्तर था। उन दोनोंमेंसे एक कुछ घबड़ाया सा जान पड़ता था मेरा उत्तर सुन उसे भ्रम हुआ।

इस समय प्रचंड हवा चल रही थी इससे नदीका प्रवाह और भी बढ़ गया था इसी लिये मांझी नावको तिरछी खे रहा था। लगभग आधे घंटेमें हम लोग उस पार हुए और लाल कोठीकी पग डंडीपर चलने लगे।

पन्द्रह मिनिट चलनेपर वह मार्ग समाप्त हुआ और हम लोग सिंहद्वारसे कोठीमें घुसे। वहांपर बहुत कान लगानेपर भी किसी प्रकारकी गाने बजानेकी ध्वनि न सुनाई देनेपर उनमेंसे एक युवाके पैर खिसकते थे और उसका संदेह बढ़ता जाता था।

इन दोनों अपरिचितोंके परिचयकी पाठको ! आपको बड़ी चिंता होगी। हम भी आपको कष्ट न देकर यहींपर आपको बतलाये देते हैं। इन दोनोंमेंसे एक वह कानिस्टबिल है जिसको मैंने रुपया दिया था। दूसरा वही व्यक्ति है जिसको लानेके लिये उस कानिस्टबिलसे कहा था। सब कुछ जानते हुए भी नावमें बैठे हुए अथवा लालकोठीकी ओर चलते हुए मैंने उससे बात न की; क्योंकि मुझे इस बातका पूरा ध्यान था कि कहीं वह मेरी कार्यवाहीको समझ न ले और कहीं उसके जीमें यह संदेह न हो जाय कि मैंने उसे पहचान लिया है। अंधेरी रात्रि होनेपर भी वह मेरी ओर पीठ किये बैठा था।

बार बार वह युवा उस कानिस्टबिलसे अपने संदेहकी बात कहता था। कानिस्टबिल बराबर उसे आश्वासन दे रहा था। बागके ठीक बीचो बीच कोठी पर पहुंचते ही वह युवा बहुत बिगड़ा और उस कानिस्टबिलको लताड़कर अपना प्रभाव जमाकर भागना चाहता था उसी समय मैं उसके पास जा पहुंचा और मैंने

कहा इस कार्यमें वेचारे कानिस्टबिलका कोई दोष नहीं। दोष मेरा है।

युवा–यहां परदेशमें मेरा अपना पराया कोई नहीं। आपको इस प्रकार मुझे धोखा देनेसे क्या लाभ?

मैं-इस प्रकार आपका छुटकारा नहीं हो सकता।

युवा–तब किस प्रकार छुटकारा हो सकता है?

मैं–इस प्रकारः–जब तुम अपनी जीवनी आदिसे अंत तक मुझे सुनाओ। मुझे मालूम हुआ है कि तुम्हारी जीवनीमें बड़े२ रहस्य है।

युवा–कैसी जीवनी? क्या बात?

मैं–मेरे सामने तुम्हारी एक चाल भी काम न आयगी।

इतना कहकर मैंने जेबसे एक पिस्तौल निकाल उसके माथे पर लगा दी और कहा "या तो अपना चरित्र बताओ अन्यथा अभी तुझे यमपुर भेजकर अपना हृदय शीतल करूंगा।"

वह पत्थरकी भांति सन्न खड़ा रहा मुखसे बोल न निकला।

उसे मौन देख फिर मैंने उससे कहा यदि वह अपना वृत्तांत मुझे न बतलायगा तो मैं उसके प्राण लिये बिना कदापि न छोडूंगा। वह थर२ कांपने लगा और उसपर मेरा प्रभाव जम गया। उसके नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बह चली। वह बारम्बार मुझसे अपने छुटकारेकी प्रार्थना करता था, किंतु मैंने एकपर कान नहीं दिया।

अंत वह ईश्वरसे प्रार्थना करने लगा और अपनी प्राचीन स्मृतियां यादकर पश्चात्ताप करने लगा। आध घंटा इसी प्रकार बीता जब उसका चित्त शांत हुआ वह बोला–बाबूजी! क्यों वृथा इस मेरे पापकर्मको सुनते हो? मेरी प्रार्थना है कि अब आप अपनी गोलीका शिकार बनायें अथवा अथाह नदीमें मुझे ढकेल दें, कारण अब मैं संसारमें अधिक जीवित रहना नहीं चाहता।

नहीं, नहीं, ऐसा नहीं। मैं यह उचित समझता हूं कि प्रथम तुम अपनी कथा कहो और मुझे आज्ञा दो मैं उसे छपाकर संसारको बतला दूं ताकि कभी कोई तुम्हारी भांति पापमार्गमें सुखकी आशा न करे।

इस समय वह संसारसे विरक्त हो गया था, उसके विचार शुद्ध हो गये थे। वह चहता था कि नारी जातिको मेरी जैसी पातकी कुल कलंकनी, पति हत्यारीसे संसारको कुछ भी शिक्षा मिले तो मैं नरकमें पड़ी हुई भी प्रसन्न रहूंगी। पश्चात् उसने इस प्रकार कहना आरंभ किया:–

बाबूजी! यह तो आप जानते ही हैं कि मैं जातिकी मारवाड़ी बाइन हूं। मेरा नाम देवकी है। इस समय मेरा मन विरक्त हो रहा है और एक क्षण भी अपना कलंकी मुख संसारको दिखाना नहीं चाहती। इस समय एक २ करके पिछले पाप कर्म मेरे नेत्रोंके सामने आ आकर मुझे भयभीत कर रहे हैं। मेरी इच्छा यही है कि शीघ्र ही अपनी जीवन लीला समाप्त करूं। मैं नहीं समझती कोई दंड मेरे पापोंके लिये उपयुक्त हो सकता है सुखके भ्रममें आकर मैंने बड़े २ अनर्थ किये

हैं किंतु कहीं भी सुख नहीं पाया इतना फिर भी कहती हूं कि पुरुष जाति यदि अपना कर्तव्य निभावे तो स्त्रियां इतनी दुश्चरित्रा न हों।

मैं जिस समय पांच वर्षकी थी उसी समयसे जजमानोंके नवयुवकों तथा अड़ोसी पड़ोसियोंकी आंखोंमें खटकने लगी। वे मुझे प्यार भी करते थे और घूरघूरकर भी देखा करते थे। मैं उन दिनों क्या समझती थी जो कोई मुझे प्यार करता और पैसे देता उसीकी गोदमें बैठती। दिन दिन मेरा सौंदर्य बढ़ने लगा छोटे बड़े सब ही की दृष्टि मुझपर पड़ने लगी।

हमारे यहांकी रीतिके अनुसार नित्य जजमानोंके यहां आने जानेका काम ठहरा। नाई ब्राह्मणोंका कहीं परदा ही नहीं होता। बेरोकटोक हम आते जाते हैं। सेठ लोग अपने घरकी सुधि भी नहीं लेते अलबत्ता इधर उधर लार टपकाते फिरते हैं।

मेरी मांकी अवस्था इस समय ३० वर्षकी है लेकिन उसका शरीर अब भी ऐसा गठा हुआ और उसकी सुन्दरतामें नामको भी बल नहीं आया है। वह अब भी षोडश वर्षीया युवती जान पड़ती है। जब वह नख शिखसे शृंगार करके वेष भूषण पहनती है उस समय सेठकी सेठानी मचली है। बहुतसे युवा उसे सेठानी ही कहा करते हैं। उसके सेठानी कहानेका भी कारण है। "

"कारण क्या है जी! उसका नाम क्या है ?" मैंने पूछा।

"इस समय मैं आपसे कोई भी बात छिपा न रखूंगी। वैश्य जातिके कई सेठजी उसकी घातमें लगे रहते हैं, किंतु वह आज सेठ राधेलालकी अंकशायिनी हो रही है। उसका नाम गुलाबो है। राधेलाल समझते हैं कि वह उनके प्रेमपाशमें बंधी थी किंतु उनका ऐसा सोचना भ्रम था। उसने अपना ध्येय रुपया कमाना और चैन करना बना रक्खा है"

"बाबूजी! जिस प्रकार मेरी माता सेठोंकी सेठानी बन रही है उसी प्रकार मेरा भाई किशना जो नाचने गानेमें प्रवीण है और नाचके तमाशेमें सदैव नायिका अथवा नायकका पार्ट लेता है, वह एक अच्छा एक्टर है, उसपर सहस्रों सेठानियां मुग्ध रहती हैं। वह भी पट्टा चैन करता है।

व्यभिचारिणी माताकी अधीनता और छत्र छायामें रहकर मैं कब सदाचारिणी रह सकती थी। इस बातका तो आप सहजमें ही अनुमान कर सकते हैं। मेरे लिये लोग व्याकुल होने लगे। इधर मैं अपनी माताकी चाल ढाल, बोली बानी, नाज और नखरोंका स्वतः ही अनुकरण करने लगी। बहुत दिन तक मेरी मांने सेठ राधेलालको टाला, झांसा पट्टी भी दी। अंतमें एक दिन मुझे भंग पिलाई गई। जब मैं भंगके नशेमें चूर हो गई उस समय मुझे सेठजीके कमरेमें ले जाकर सुला दिया। बस उसी दिनसे मेरी जीवनधारा दूसरी ओर बह चली।

यदि मैं नायन हूं तो क्या हुआ। असलमें मारवाड़िन तो हूं। मारवाड़ी वैश्योंके यहां बालविवाहका बोलबाला ठहरा। इन लोगोंमें [illegible]

वैश्योंसे ही अधिक रहता है इसी कारण हमारी रीति रिवाजमें कोई भेदभाव नहीं, बस मेरी १२ वर्षकी अवस्थामें पासके शान्तिपुर नगरके एक नाईके बालकसे सगाई कर दी गई। आयुमें वह बालक मुझसे अधिक छोटा नहीं केवल एक ही वर्ष छोटा था, किंतु मेरी अवस्थाके सामने वह निरा बालक था। सुख और चैनसे रहने, खूब खानेको मिलने और स्त्रीजातिके स्वभाविक गुणके अनुसार मैं उस अवस्थामें भी पूरी स्त्री थी। इसपर किसीने ध्यान नहीं दिया। एक तो माताकी संगतिसे मैं दूसरे ही काममें फंस गई इसपर बालक पतिका सहवास; मैं किस प्रकार धैर्य धरती और अपनी चढ़ती हुई जवानीकी उमंगोंको रोकती। मुझमें वैसी सामर्थ्य कहां थी। उस समय उन पाप कर्मोंमें ही मैंने सुख समझ रक्खा था।

(अपूर्ण।)



विश्व-वन्द्य! विश्वेश! विश्व-प्रियता-अगार,हो,
करुणासिन्धु! कृपालु! दीन-जनमनाधार हो,
दीनदयालु! अगम्य! परात्पर! हृदय-सार हो,
अमित पापका पुञ्ज भस्म हो, जले, छार हो।
सत्य सुपथ पर सब चलें, सत्य धर्म स्वीकार हो,
चहुं दिशि उन्नत भव प्रभो! यही जैन संसार हो।

कन्हैयालाल जैन

वाक्यामृत।

मैं जिसका समर्थन करता हूं वह ऐसे स्वामित्ववादका एक प्रकार—यदि उसे सर्व स्वामित्व वाद कहा जाय तो—यह है कि जिससे मनुष्य यह धारणा करले कि वह स्वार्थ और आलस्य पूर्ण एकान्तमें अन्य सबसे पृथक् रह ही नहीं सकता किन्तु उसे पड़ोसियों और परमात्माके प्रति कर्तव्य पालन करना है और उनकी ओर दुर्लक्ष करनेसे अथवा उनको न पालन करनेसे उसको ऐसा दण्ड भोगना पड़ेगा जो दण्ड मनुष्योंके बनाये हुए कानूनोंके दण्डोंसे भी अधिक कठोर है।

ए. सि. बेन्सन

* * * *

अन्य कार्योंकी अपेक्षा दान मनुष्यके चरित्रको अधिक उज्वल करता है।

साउथ.

* * * *

प्रेम रखो। स्वयं अपने लिये ही नहीं किंतु आकाशमें भ्रमण करनेवाले सूर्यके समान मनुष्य मात्रको अपना भाई समझकर सबकी सेवा करो।

शिलर

* * * *

अपनी की हुई सेवाका वारवार स्मरण कराना यह सेवाका बदला लेनेके बराबर ही है।

रेसिन

* * * *

दयामें अनिवार्य जादूभरी शक्ति है। अन्य सब योग्यताएं दयाकी अपेक्षा हीन बलवाली हैं। दया उग्र कोपको शान्त करती है। चचल

प्रेमको स्थिर बनाती है। सौंदर्य्यसे हृदय मोहित होता है किन्तु दया प्रेमकी पशुवृत्तिको उन्नत बनाती है।

रॉचेस्टर

* * * *

द्रव्यका नहीं तो हृदयका किंचित् दान देना चाहिये।

पोस्कवीयर क्वेस्नल

* * * *

तुमसे हो सके उतनी, सर्व प्रकार, सर्व मनुष्योंकी, सर्वत्र, हर समय, पूर्ण शान्तिसे और हो सके वहां तक कल्याण करो

फ्रांसिस पिगु

* * * *

प्रेमपूर्वक दिया गया छोटेसे छोटा दान भी महान दान है

फिलीमैन



सुधार-उपकार

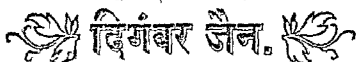


क्या प्रियवर! यह ही है नर-कर्तव्य निभाना?
क्या कहलाना यही-सफल निज जन्म बनाना?
मानव जीवनका उद्देश यही प्रियवर है?
क्या उन्नति पथ हुआ कभी [illegible] प्रस्तर है?
पारस्परिक विरोधसे ही निज उन्नति चाहते?
स्वार्थात्मक कर्तव्य कर जन्मोद्देश निबाहते?॥
जो दूसरोंको कर [illegible] कोई बढ़े,
प्रेम प्रतीतिकी रीति नीतिको कहीं भगावे।
कर [illegible] जातिके लोप दिया,
सामाजिक कुरीतियोंको बलहीन बनाए।
उसे आप अपना अशुभ चिन्तक क्यों है मानते?
उसके सत्योपदेशको आप न क्यों पहिचानते?॥
कर सहायता उसे सहायक क्यों न बनाते?
उन्नति गतिके मार्ग कहो क्यों भूले जाते?
बिन कारणके कार्य सिद्ध क्या हो सकता है?
बिना किए उपचार रोग क्या खो सकता है?
तब अपने उपकारके द्वार न क्यों विस्तृत करो?
दि० । दृष्टिसे अभ्युदयका पथ निरखो प्रियवरो!॥
दिन दिन नूतन सम्प्रदाय बन रही यहां है,
मिथ प्रेमकी झलक दीखती नहीं यहां है।
होकर टुकड़े भिन्न जैन नित छिन्न हो रहा,
चहुंदिशि भीषण पतन ज्वाल है प्रज्वलित महा।
उन्नत हो यदि एक तब जल उठता है दूसरा,
सूख गई हा! भूमि अब शस्य शामला उर्वरा॥
लखकर उन्नत एक-दूसरा गतप्राण हो,
उन्नति परकी उस द्वेषीके लिए बाण हो।
उत्साहित तो दूर लगाते पथमें कण्टक,
होते हैं वे स्वयं जाति-उन्नति-हित बाधक।
जलते हैं वे देखकर परिश्रान्ति अविरामको।
नाम चाहते हैं मनो नहीं चाहते कामको॥
तत्पर यह सब दुष्भाव एकता धार लो,
विगत [illegible] आतङ्क अहमें [illegible] लो।
जाति कुरीति विनाशक दलमें प्रिय! [illegible]।
सामाजिक उत्थान भार उरमें विचार लो॥
सम्यक् दृष्टि बनो अगर नर करना उत्थान हो,
नातर मत बैठो [illegible]।

कन्हैयालाल जैन



॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥



THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधैश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततां, दैगम्बर जैन समाज मात्रम् ॥

वर्ष १२ वाँ ‖ वीर सं० २४४५ ज्येष्ठ विक्रम सं० १९७६. ‖ अंक ८



हमारा शोक। किसको यह जानकर शोक न होगा कि श्रीमती बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाके सुयोग्य सभासद बम्बईके हीराचंद गुमानजी जैन बोर्डिंग, हीराबाग, ईडर पाठशाला, बोरसद लायब्रेरी आदिके एक ट्रस्टी और सभासद, अहमदाबाद बोर्डिंगके सेक्रेटरी श्रीयुत लल्लूभाई परमानंददास पारिख L C E का गत ? जूनको हृदयकी गति अकस्मात रुक जानेसे स्वर्गवास हो गया। आपका जन्म बोरसद ग्राम जिला अहमदाबादमें मेवाडा जातिमें हुआ था। जातिमें आपके कुटुम्बका और आपका बहुत मान था। इस समय आप बम्बईमें इन्कमटेक्स डिपार्टमेन्टके ऑफिसरके पदपर थे और भारी वेतन पाते थे। आपने L C T की इंजिनियरिंगकी उच्च परीक्षा पास की थी और उन्हींकी अच्छी योग्यता थे। आपने कुछ दिन तक इन्कमटेक्स कलेक्टरके स्थान पर भी कार्य किया था। और कार्य निपुणता और प्रामाणिकतासे राज्यमान्य और लोकमान्य दोनों हो गये थे। सन् १०म आप अपने छोटे भाईको लेकर व्यापारार्थ जर्मनी भी गये थे और कुछ दिन तक वहां आपकी कोठी रही थी। वहांसे लौट कर आप रतलाम दि० जैन बोर्डिंगके मंत्री और बम्बई दि० जै० प्रांतिक सभाके सहकारी महामंत्री भी रहे। इस समय आप एक मासकी छुट्टी लेकर वायु परिवर्तनार्थ आबू चले गये थे वहांसे लौटते समय अहमदाबादके निकट डांगरवा स्टेशनके पास रेलमें ही आपके प्राण पखेरू उड गये। पाठकोंको यह जान कर और भी दुःख होगा कि लल्लुभाईकी वर्तमान पत्नी हमारे ज्येष्ठ सहोदर जीवनलालजीकी ज्येष्ठ पुत्री हैं जिसका विवाह हुए अभी केवल पांच ही मास हुए थे। कर्मोंकी लीला विचित्र है। जिस बातका स्वप्नमें भी ख्याल न था वह आंखोंके सामने आया। आप परोपकारके कार्योंमें बहुत भाग लेते थे। जो मनुष्य इनके पास किसी कार्यके लिये आता उसका कार्य ये कर देते थे। आपके

उद्योगसे बोरसद ग्राममें अनेक सार्वजनिक कार्य हुए थे। ता० २ जनवरी बोरसदका सब कारबार भी बन्द रहा था।

भाई लल्लुभाईके अकस्मात् स्वर्गवाससे जो हानि जैन समाजकी हुई है इसकी शीघ्र पूर्ति न हो सकेगी, और जो शोक उनके कुटुंबियों पर आ पड़ा है वह लिखे नहीं लिखे जाता। आपके एक बड़े भाई और एक छोटे भाई हैं। पहिली पत्नीसे एक पुत्र और एक पुत्री भी है।

\+ + +

सर्वत्र क्षोभ।

समयने विचित्र पलटा खाया है। लोगोंकी बुद्धिमें भी परिवर्तन हो गया है। जो वस्तु किसी समय लोग मस्तकमें लगाते थे आज वही पैरोंको छूती दिखाई पड़ती है, जिनको लोग पूज्य मानते थे उन पर उनका पूज्य भाव नहीं रहा; जिनकी प्रशंसा करते हुए उनका पेट फूल जाता था उनको भी यद्वा तद्वा कहनेमें जिह्वा कुण्ठित नहीं होती। संसारमें एक प्रकारकी सभ्यताकी दुन्दुभी बज रही है जो अपना घटाटोप सारे संसार पर छाये हुए है, लोग उस सभ्यताके पैर चूमते हैं और जहां वह नहीं है उसको लानेके लिये नवीन आसमानके कुलावे एक किये डालते हैं। उस सभ्यताकी ऐसी ज्योति है जिससे प्रकाशके साथ अन्धकार भी है, पर सभ्यताभिमानी और उस सभ्यताके दासोंको वह अवनति रूप-दुष्परिणाम रूप-अन्धकार नहीं दिखाई देता। उनमें बहुतसे लोग इसके सिवे सर्व प्रकारके कार्य सभ्यतानुकूल करनेमें लगाते हैं। भारतवर्ष धर्म प्रधान देश है अतः नाना प्रकारके धर्मोंका होना भी संभव है। और उसके साथ ही वर्ण और जाति भेदका होना भी अनिवार्य है। पर नवीन सभ्यताके अभिमानियोंको यह इष्ट नहीं, अतः वे इसके दूर करने-भेदोंके मिटानेका उद्योग किया करते हैं। अनेक नये धर्मोंकी स्थापना हुई, धर्मोंमें परिवर्तन हुए। जैनधर्म और जैन समाजमें भी परिवर्तन करनेवाले पैदा हुए। अब तक तो दिगम्बर समाजमें ऐसे विचारवालोंकी धूम दिखाई पड़ती थी पर अब श्वेताम्बर समाजमें भी एक २ करके इनकी उत्पत्ति होती दिखाई पड़ रही है। वर्तमानमें श्वेताम्बर समाजमें पं० बहेचरदासके भाषणोंसे क्षोभ फैला हुआ दिखाई पड़ता है। पंडितजीके सिद्धान्तसे देवद्रव्य कोई वस्तु ही नहीं और जैनधर्म एवं जैन समाजमें परिवर्तन होना चाहिए आदि।

× × ×

नैमित्तिक अधिवेशन।

उदयपुर मेवाड़में गत ज्येष्ठ वदी २ से ७ तक दिल्लीके लाला सोहनलालजीके सभापतित्वमें भारतवर्षीय दि० जैन महासभा और मालवा प्रांतिक दिगम्बर जैन सभाके नैमित्तिक अधिवेशन सफलताके साथ हो गये। अधिवेशनमें न्यायाचार्य पं० माणिकचंदजी, ब्र० शीतलप्रसादजी, पं० खूबचंदजी, ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजी, पं० कस्तूरचंद महोपदेशक, पं० गोरीलालजी, पं० मक्खनलालजी, पं० इन्द्रलालजी शास्त्री, ब्र० ज्ञानानन्दजी, बा० सूरजमलजी आदि विद्वान और दिगम्बर मुनि चन्द्रसागरजी, ऐलक त्यागी पन्नालालजी महाराज आदि १२ त्यागी

श्रावक उपस्थित थे। सभामें उक्त विद्वानोंके सिवाय, अजैन विद्वान रायबहादुर पं० गौरीशंकर झा और कन्हैयालाल मेहताके क्रमसे जैनधर्मके प्राचीनत्व और मनुष्य कर्तव्य पर प्रभावशाली एवं सारगर्भित भाषण हुए। उदयपुरमें वैष्णव अग्रवाल बहुत हैं जो जैनियोंसे बहुत प्रेम रखते हैं। इस उत्सव पर भी उन्होंने सब प्रकारसे प्रबन्ध करनेमें उद्योग किया। किसी प्रकारका जैन और अजैनमें मतमुटाव न था। एक दिन कुंवर महाराणा साहब भी मंडप देखने पधारे थे। उदयपुरकी सेठ मोतीचंद प्रेमचन्द दि० जैन पाठशालाके लिये अपील किये जाने पर करीब ८१००) की प्राप्ति हुई। सभापतिने भी उपदेशक फंडमें ४००) दिये। जेठ वदी ७ को ऐलक पन्नालालजीका केशलोच हुआ। इसी समय एक जैनसंयमी संघकी स्थापना हुई। संघपति मुनि चन्द्रसागरजी और उपसंघपति ऐलक पन्नालालजी हैं। यह उत्सव मुनि महाराज व त्यागियों व जैन अजैनके परस्पर प्रेमके कारण एक स्मारक रहेगा।

संयुक्त सभाके अधिवेशनमें निम्नलिखित आशयके प्रस्ताव पास हुए:—

१—भा० दि० जैन महासभाके सभापति सर सेठ हुकमचन्दजीने जो सभापतिके कार्यसे स्तीफा भेजा है वह अस्वीकार किया गया औरकार्य करते रहनेकी प्रार्थना की गई।

२—कोटा नरेशने जो जैन मूर्तियोंको देनेकी उदारता दिखाई उसके लिये धन्यवाद।

३—ग्वालियर नरेशने बड़नगर औषधालयको तीस रुपये मासिक सहायता प्रदान की है तदर्थ धन्यवाद दिया गया।

४—लाला मन्नूप्रसादजीको अबतक मंत्रीका कार्य योग्यतापूर्वक करते रहनेके लिये धन्यवाद।

५—महा सभाकी नियमावली संशोधन करनेके लिये एक कमेटी बनाई जाय।

६—उदयपुरकी जैन पाठशाला दृढ़ की जाय और प्रान्तीय छात्रोंके लिये एक छात्रालय खोला जाय और प्रबन्धके लिये एक कमेटी बने।

७—दि० जैन तीर्थक्षेत्रों, मन्दिरों, पाठशालाओं विद्यालयों आदि शिक्षा संस्थाओं धर्मादा आदिके हिसाब प्रति वर्ष कार्तिक शु० १५ तक महासभाके दफ्तरमें आना चाहिये। और वे संस्थाएं अपना हिसाब साफ रखें।

८—मथुराकी किसी कंपनीने अंगूठीमें बाहुबलिकी मूर्ति बनाना शुरू किया है उसका बनाना रोका जाय।

९—तीर्थ क्षेत्र कमेटीका हिसाब सहकारी महामंत्री आडिट कराकर महासभाके दफ्तरमें आगामी अधिवेशन तक भेजें।

१०—स्वदेशी मालका व्यवहार जैन स्त्री पुरुष करें। और धनाढ्य भी अपना द्रव्य भारतके कच्चे मालको पक्का बनानेमें लगावें।

११—बावनगजा बड़वानीकी प्राचीन मूर्तिके रक्षाके लिये छतरी आदि आवश्यक क्रिया शीघ्र पूर्ण कराई जाय।

१२—मर्दुमशुमारीमें सर्व दि० जैनी धर्मके खानेमें दिगम्बर जैन और जातिके खानेमें अग्रवाल, खंडेलवाल आदि लिखावें।

१३–उदयपुर राज्यमें केशरियाजीकी प्रबन्धकारिणी कमेटीमें दिगम्बर जैन मेम्बरमें भी होने चाहिए ऐसी महाराजा साहबसे प्रार्थना की जाय।

१४–दशलाक्षण पर्वमें श्वेताम्बर पर्युषण पर्वकी तरह, कलाल, हलवाइयोंकी भट्टियां कसाई खटिकों आदिके हिंसाके कारबार बन्द रहें ऐसी महाराना साहबसे प्रार्थना की गई।

१५–भारतवर्षीय दि. जैन संस्थाओंकी अंतरंग जांचके लिये एक कमीशन दो वर्षके लिये नियत किया जाय जो संस्थाओंकी व्यवस्था और भावी सुप्रबन्धकी रिपोर्ट महासभाको दे। उसमें ब्र० ज्ञानानंद, बाबा भागीरथ वर्णी, पं० बंशीधर शास्त्री मेम्बर और बाबू सूरजमल मंत्री नियत किये जांय।

१६–जैनगजट उपदेशक विभागमें कार्तिक कृष्ण ३० स० ७७ तक ६४००) रुपया अधिक खर्च होनेकी संभावना है। उसके ६४ हिस्से करके उदार महाशयोंसे स्वीकार करनेकी प्रार्थना की जाय।

१७–साकरोदा उदयपुर रियासतमें जैन मन्दिर बनानेकी आज्ञा अभी तक नहीं मिली अतः यहांके ठाकुरसाहबसे जैन मंदिर बनानेकी आज्ञा देनेकी प्रार्थना की जाय।

१८–सभाओंके कार्य चलाने व उपयोगी संस्थाओंके लिये एक जनरल फंड एकत्र किया जाय।

× × ×

श्रीयुत पं. पन्नालाल बाकलीवाल महामंत्री जैन सिद्धान्त प्रकाशिनी

हिन्दी बंगला जैन मासिक पत्र।

संस्थाका बहुत दिनसे यह विचार था कि एक संस्थाकी ओरसे अजैन विद्वानोंमें जैन धर्मके उच्च कोटिके सिद्धान्तोंका प्रचार करके उनके हृदयपर जैन धर्मका प्रभाव जमानेके लिये एक हिन्दी और बंगला भाषाका मासिक पत्र निकले। पर आर्थिक स्थिति ठीक न होनेके कारण संस्था अब तक इस कार्यके लिये असमर्थ रही। संस्थाका अब पवित्र प्रेस खुला गया है परंतु कागजकी बड़ी मंहगाईके कारण संस्थाका इतना साहस नहीं होता है कि बिना अन्य लोगोंकी सहायताके वह मासिक पत्र निकाल कर हजार पन्द्रह सौका घाटा सह सके। अतः पांच छः फारमका मासिक निकालनेके लिये यदि आप लोगोंसे संस्थाको १५००) वार्षिक सहायता कुछ दिनके लिये मिल जावे तो एक मासिकपत्र सहजमें निकल सकेगा। यदि १००) या कमसे कम ५०) वार्षिक देनेवाले ३० भी धर्मात्मा निकल आवें तो यह परमोत्कृष्ट कार्य शीघ्र प्रारम्भ हो जाय और संस्थाके मुख्य उद्देश्यकी सिद्धि हो जाय। हम अपने पाठकों व अन्य उदार सज्जनोंसे कहेंगे कि पंडितजीके धर्म प्रचारके इस कार्यमें अवश्य हाथ बटावें।

× × ×

ગુજરાત પ્રાંતનાં જૈનીઓની શિથિલતા.

સંસારમાં એક પ્રકારની ઉન્નતિની લેહરો તીવ્ર ગતિથી ફેલાઈ રહી છે, ભારતમાં પણ તે આવીને ભારતવાસિઓની ગાઢ નિદ્રા ભંગ કરી રહી છે. બોરવાની મુર્ખ

એકજ અવયવમાં કોઇ પ્રકારની અસ્વસ્થતા હોય તો સર્વ શરીર દુઃખી થઇ પડે છે અને તે શરીરથી કોઇ પણ ઉત્તમ કાર્ય પૂર્ણ રીતિથી થઇ શકતું નથી, તેવી રીતે ભલે જૈન સમાજ પોતાનામાં સુધારો ધર્મપ્રચાર, શિક્ષણનો વિસ્તાર કુરીતિ બહિષ્કાર આદિ નાના પ્રકારનાં કાર્યો કરવામાં સતત્ ઉદ્યોગ કરતી રહે પણ જો તેનું એક પણ અંગ આલસ્ય, શિથિલ, ઉત્સાહહીન હોય તો જૈન સમાજનું કોઇ પણ કાર્ય સફલ થઇ શકતું નથી. આ સમયમાં જૈન સમાજની ઉન્નતિને માટે યુક્ત પ્રાન્ત પંજાબપ્રાન્ત, મધ્યપ્રાન્ત, દક્ષિણપ્રાન્ત આદિ સર્વ દેશોના જૈન બન્ધુ સતત્ પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે પણ લખતાં દિલગીરી થાય છે કે મ્હારા ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનીઓ ગાઢ નિદ્રામાં પડી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે અને એવી સ્થિતિ ઘણી દુઃખદાયક છે હમણા એક તાજો બનાવ બન્યો છે કે જ્યારે મુંબઇ દિગમ્બર જૈન પ્રાન્તિક સભાનું ૧૭ મું અધિવેશન ગજપંથાજી પર ભરાયું હતું ત્યારે ભાઇ અમૃતલાલ વિઠ્ઠલદાસ ધામી ભાવનગરવાલા અને બેચાર છોકરાઓ સિવાય એક પણ ગુજરાતી ભાઇ ત્યાં આવ્યા ન હતા. જો કોઇ કહેવા માંગે કે આવી સભાથી કંઇ પણ લાભ થતો નથી તો હું કહીશ કે આ તમ્હારી ભુલ ભરેલી વાત છે. આવા સમયમા એક પણ દેશ એવો નથી કે જેણે સભા દ્વારાજ પોતાની ઉન્નતિ ન કરી હોય. ભારતમાં પણ આ સમય જે કાંઇક ઉન્નતિના પ્રભાતની જ્યોતિ ઝળકાય છે તો તે પણ સભાઓનીજ કૃપા છે. જૈન સમાજની પણ ૨૦ વર્ષ પહેલાં જેવી સ્થિતિ હતી તે વિચારતા હું કહિશ કે તેહનાં કરતાં આજ અનેક ઘણી તેની સારી સ્થિતિ છે આ ઉન્નતિનું કારણ શું છે? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એજ છે કે સભા. સભા કાંઇક મોટા મોટા મંડપ અને સારા સારા ચલકાટ કરતા વસ્ત્રોથીજ નહીં પણ જ્યાં લોકો કોઇપણ કાર્યના માટે એકત્ર થાય તેજ સભા કહેવાય છે. જે સભા જાતિ અને ધર્મની ઉન્નતિ માટે હોય છે તે સભામાં સામેલ થવાનું તે જાતિ અને તે ધર્મના અનુયાયીઓની ફરજ છે. જે મનુષ્ય આવા કાર્યમાં સામેલ નથી થતા તે પોતાને જાતિને અને ધર્મને ધોકો પહોંચાડે છે. ગુજરાત પ્રાન્તના જૈનીઓ પણ થોડા સમયથી પોતાના કર્તવ્યને ભુલી ગયા છે. અને સભા કોન્ફરંસ આદિમાં સામેલ થઇને જાતિ અને ધર્મની ઉન્નતિના કાર્યોમાં ભાગ લેવામાં પાછલ રહે છે. જો ગુજરાત પ્રાન્તનાં જૈનીઓ પોતાની ફર્જ બજાવવામાં ખંત, સાહસ અને તન મન ધનથી નં લાગશે તો આ શિથિલતાનું પરિણામ ઘણું નઠારૂં આવવા સંભવ છે. એથી હું સાનુરોધ દિગમ્બર જૈન ભાઇઓને કહું છું કે તમે પોતાની સ્થિતિનો વિચાર કરો, તમે જાતિની દશાનો વિચાર કરો તમે પ્રાણથી પણ વ્હાલા પોતાના જૈનધર્મની અવનત દશાનો ખ્યાલ કરો, અને પોતાના દેશની પડતી દશાનો વિચાર કરીને અને પોતાના હૃદયપર હાથ ધરીને પૂછો કે તમારી શિથિલતા લાભદાયક છે કે નુકશાનકારક છે. જો તમને લાભદાયક માલમ પડે તો ખુશીથી તમે ચાદર ઓઢીને ગાઢ નિદ્રામાં પડી ઉંઘાજ કરો અને જો નુકસાનકારક માલમ પડે તો આજથીજ તમે પોતાની ભૂલનું પ્રાયશ્ચિત લઇને જાતિ, ધર્મ અને દેશના કાર્યોમાં પૂર્ણ બલ અને પ્રયત્નથી ભાગ લેવા માંડો.



चित्तौरकी चढ़ाइयां। लेखक—बाबू गौरीशंकर लाल अख्तर। प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। पृष्ठ १०९ मूल्य ॥=) पुस्तक ऐतिहासिक है। इसमें चित्तौड़की तीन लड़ाइयोंका वर्णन है। पहिली लड़ाईमें महाराणी पद्मिनीका सैकड़ों राजपूत रमणियोंके साथ चितामें प्रवेश होने तकका वर्णन है।

दूसरी लड़ाईमें महाराणी करुणावतीका अनेक राजपूत रमणियोंके साथ चितापवेश और महाराना उदयसिंहका वर्णन है। जिस समय पन्ना दासी अपने इकलौते पुत्रकी बलि देकर उदयसिंहको छिपाकर कमलमेरके किले पर ले गई थी और आशासा नामक किलेके अधिकारीसे राणाके पालन पोषणकी प्रार्थना की थी। यह आशासा वैश्य और जैनी था। उस समय पहिले तो आशासाने बनवीरके भयसे उदयसिंहको अपने यहां आश्रय देनेसे इन्कार कर दिया परन्तु जब उसकी वृद्धी माताने कहा कि "प्रजाका कर्तव्य है कि राजाके लिये प्रजा दुःखका सहन करे। यह तेरा राजा है तेरे जीवन और ऐश्वर्यका स्वामी है। तेरे लिये आजका दिन सुख और ऐश्वर्यकी वृद्धिका कारण होगा" तब आशासाने उदयसिंहको अपने यहां रख लिया और पाल पोषकर बड़ा किया। तीसरी लड़ाईमें, हल्दी घाटीका युद्ध, महाराणा प्रताप, शक्तिसिंहके ११ पुत्रोंकी वीरता, दिल्ली और मेवाड़के मिलापका वर्णन है। पुस्तककी भाषा छपाई आदि उत्तम है।

प्रेमोपहार—लेखक—कृष्णविहारी मिश्र बी० ए० एल एल० बी०। प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य ।) यह पुस्तक अंग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध कवि 'टेनीसन' की 'एनक आर्डन' नामक कविताका गद्यात्मक स्वतंत्र अनुवाद है। लेखकने अध्यायके आदि अन्तमें हिन्दी कवियोंकी उक्तियां मनोरंजनके लिये दी हैं। यह पुस्तक प्रेम रसकी एक गल्प है। नायक नायिका आदिके नाम भी भारतीय कर दिये हैं। पुस्तक पढ़नेसे पाश्चात्य दाम्पत्य प्रेमका एक अद्भुत दृश्य दृष्टिगोचर होता है।

तन मन और पारिस्थितियोंका नेता मनुष्य—सद्विचार पुस्तकमालाकी ८ वीं पुस्तक। अनुवादक—बा० दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए. और नाथुराम सिंघई। प्रकाशक हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ। मूल्य ।) यह पुस्तक जेम्स एलनकी Man King of mind, Body and circumstances नामक पुस्तकका अनुवाद है। पुस्तक पढ़नेसे विचार शुद्ध होते हैं, आत्मिक बल बढ़ता है, साहस और स्वावलंबनकी शिक्षा मिलती है।

प्रातःकाल और सायंकालके विचार—सद्विचार पुस्तक मालाकी ९ वीं पुस्तक, अनुवादक— बाबू दयाचंद गोयलीय बी ए०। प्रकाशक—हिन्दी साहित्य भंडार लखनऊ मूल्य ।=) यह पुस्तक श्रीमती लिली एल द्वारा संकलित Morning and evening thoughts का अनुवाद है। इस पुस्तक पाश्चात्य विद्वान महात्मा जेम्स एलन भिन्न २ पुस्तकोंसे मासके ३१ दिनों प्रातःकाल और सायंकालके विचारने योग्य बातें संग्रहीत की गई हैं। नैतिक पुस्तक है पढ़नेसे विचार विशुद्ध होते हैं।

ऊपरकी चारों पुस्तकें पाठकोंको एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए।

पद्मावती पुरवाल—द्वितीय वर्ष प्रथम अंक। संपादक—पं० गजाधरलालजी न्यायतीर्थ और प्रकाशक—श्रीलालजी काव्यतीर्थ वार्षिक मूल्य २)। पहिले यह मासिक

खुले पत्रोंमें निकलता था अब पुस्तकके आकारमें निकलता है। इसमें एक हास्यजनक और शिक्षाप्रद चित्र भी है। लेख और कविताएं उपयोगी हैं। पद्मावती परवार भाइयोंको ग्राहक बन कर अवश्य लाभ उठाना चाहिए। पत्र व्यवहारका पता-मैनेजर पद्मावती पुरवाल, महेन्द्र बोसलेन श्याम नं० ८ बाजार कलकत्ता।

खंडेलवाल जैन—अंक ४-सम्पादक जवरचंद मेठी। खंडेलवाल जातिके लाभके इसमें कई उपयोगी लेख हैं। समय चक्रके स्तम्भमें अच्छे नोट रहते हैं। वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता-मैनेजर खंडेलवाल जैन, कार्यालय गोतमपुरा (मालवा।)

जैसवाल जैन-भाग दो अंक प्रथम। ऑ० संपादक 'महेन्द्र'। इस अंकमें बा. मोतीलालजी जैन एम. ए. और कृष्णगोपालजी माथुरके लेख उत्तम हैं किन्तु जैसवाल जातिके सम्बन्धके कोई लेख नहीं। जिसकी प्रत्येक अंकमें आवश्यकता है तब भी सम्पादकका उत्साह श्लाघ्य है। वार्षिक मूल्य १।) मंगानेका पता मैनेजर जैसवाल जैन, मानपाडा आगरा।

जिनेश्वर पदसंग्रह-(प्रथम भाग) यह पुस्तक कुचामणनिवासी स्व० कविवर पं० जिनेश्वरदासजी पद्मावती पुरवालके ६१ पदोंका संग्रह है। प्रकाशक-जैन मित्रमंडली ८ नं० महेन्द्र बोसलेन श्याम बाजार कलकत्ता। पंडितजीके भजन पुरानी शैलीके उत्तम हैं। मूल्य ॥) प्रकाशकसे प्राप्त।



हो गया—श्री सद्विद्याप्रकाशिनी जैन सभा लाडनू और जैन युवक सम्मेलन सुजानगढ़ (मारवाड़) का अधिवेशन हो गया।

छात्रवृत्ति-मथुरा महाविद्यालयके लिये १६ छात्रोंको एक वर्षके लिये दस २ रुपयेकी सहायता उदार सज्जनों द्वारा प्राप्त हुई है। अन्य सज्जनोंको इसी प्रकार सहायता देना चाहिये।

महावीर जयन्ति-इस वर्ष भी भिन्न २ स्थानोंपर महावीर जयंति मनाई गई। इन्दौरमें यह जयंती वैष्णव संप्रदायके आचार्य शंकराचार्य करवीर मठके सभापतित्वमें मनाई गई। आपने अपने भाषणमें जैन धर्मके सम्बन्धमें बहुत अच्छे विचार प्रगट किये और जैनधर्मसे सहानुभूति दिखाई। एक अजैन धर्माचार्यद्वारा जैनियोंके प्लेटफार्म पर सभापतिके आसनसे ऐसे उद्गारोंका निकलना प्रथम ही वार है।

हाईस्कूल-बडौत जिला मेरटका जैन मिडिल स्कूल जुलाईसे हाईस्कूल हो जायगा।

जैन कालिज-हालमें जैन सिद्धान्त भवन आराके वार्षिकोत्सवके सभापति सेठ हरप्रसादजीने आश्रमें एक जैन कालिजके लिये ५० हजारके नकद और एक २० हजारके मूल्यका स्थान देनेकी प्रतिज्ञा की है। आपने देश और जातिके हितार्थ ३ लाखकी लागतकी जमींदारी जिसकी १५ हजार वार्षिक आमदनी है निकाल दी है।

अधिवेशन–गत २७–२८ मईको बंबईमें सेठ हीराचंद नेमचंदके सभापतित्वमें जैन सैतवाल शिक्षण परिषदका प्रथम अधिवेशन हो गया। कई उपयोगी प्रस्ताव पास हुए।

केवल ज्ञान जयंती–शोलापुरमें गत वैशाख सुदी १० को महावीर स्वामीकी केवल ज्ञान जयंती मनाई गई।

तीर्थोंके मामले-सम्मेदशिखर पर्वत पर पुष्पदंतकी टोंक पर श्वेताम्बर ऐसे चरणोंकी स्थापना करना चाहते थे जिनके चारो कोनोंपर शंख, पीछी, कमंडल और फूलकी आकृतियां अंकित थी सो पुलिसके द्वारा स्थापना रुकवा दी गई। केस नं० २७९ पट्टा सम्बन्धी अपीलकी बहस पूर्ण हो गई। फैसला सुनाना बाकी है। शिखरजीकी टोंकों, धर्मशाला तथा पूजा सम्बन्धी अपीलकी सुनवाई भी शीघ्र प्रारंभ होगी। अतिशय क्षेत्र मक्सी पार्श्वनाथके सम्बन्धमें श्वेताम्बरियोंने दिगम्बर समाज पर दिवानी दावा किया है।

वेदी प्रतिष्ठा–शिमलामें जैन मन्दिर की शीघ्र ही वेदी प्रतिष्ठा समारोहसे होनेवाली है बड़े २ विद्वानोंको आनेके लिये निमंत्रण दिया गया है।

जातिच्युति–नागपुरके बल्वंतराय यल्वेश्वर नामक एक सैतवालने भादों मासमें दूकान बनवा ली थी इसपर सैतवाल पंचायतने उसको जातिसे बाहर कर दिया। इस छोटीसी बातके लिये पंचायतको ऐसा दंड देना कदापि उचित न था। नागपुरके भाइयोंका कर्तव्य है कि उसको जातिमें मिला लेवें।

तामिल पत्र–मद्रासके मि. आदिनैनार तामिल भाषामें 'धर्मशीलन' नामका उपयोगी मासिक पत्र निकालते हैं। उसमें कई तामिल जैन ग्रन्थोंका अनुवाद प्रगट हो चुका है। पत्रका वार्षिक मूल्य १) है।

उत्तीर्ण–सागर निवासी पं० मुन्नालालजी बनारस संस्कृत कालेजकी साहित्याचार्यके प्रथम खंडकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए हैं।

नागोरका भण्डार–इसमें जैन धर्मकी ८१ हजार पुस्तकें हैं। जिसमें भारतकी कई प्राचीन लिपियोंमें लिखी बहुतसी पुस्तकें हैं। परन्तु खेद है कि नौ वर्षोंसे पुस्तकोंके वेष्टन तक नहीं खुले। भण्डारकी रक्षा करना जैन बालक तकका परम कर्तव्य है। जैन समाजकी ही नहीं किन्तु भारतकी सम्पत्ति प्राचीन साहित्य ही है।

जैन पंडितोंसे निवेदन।

आचरण, पुरुषार्थ और कर्तव्य।

(ले० श्रीयुत कन्हैयालाल जैन)

महात्मा 'वीर' महात्मा 'बुद्धदेव' महात्मा 'महम्मद' और अन्य पुरातन ऋषि, महर्षि, महा-पुरुषोंमें और हममें क्या अन्तर है? वे क्यों हमसे उच्च बन गये? वे क्यों आदर्श, और पूज्य हो गये? इनका कारण यदि सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करेंगे तो वह केवल उनका शुद्धाचरण और पौरुष ही मालूम होगा। वे शुद्धाचारी और पुरुषार्थी थे, वे कहना ही नहीं अपितु करना भी जानते थे। हम दुराचारी और आलसी हैं, साहस-हीन हैं, उत्साह-रहित हैं। निर्जीव-सम होकर मोह-निद्रामें सोते हुए आकाश पातालके स्वप्न देख रहे हैं। हम सोचते हैं, यदि सहस्र व्यक्तियोंमेंसे एक व्यक्ति सोया रहेगा तो क्या हानि होगी? कुछ भी नहीं। किन्तु यह नहीं देखते कि एक एक बूँद करके समुद्र भरता है, एक एक बूँदसे वृष्टि मूसलाधार बन जाती है; एक एक चिन-गारीसे भयंकर आग बन जाती है। ये बातें हम नहीं समझते; परन्तु वे समझते थे; इसीसे हममें और उन महात्माओंमें बहुत बड़ा अन्तर पड़ गया है। इसीसे वे उन्नतिके सर्वोच्च शिखर पर चढ़ गये थे और हम अवनतिके अगाध अंधकूपमें गिर गये। हममें और उनमें जो अन्तर पड़ा है उसका कारण शुद्धाचार है; क्यों के जितने गुण हैं सब शुद्धाचारके अन्तर्गत हैं। अतएव उनकी उन्नतिका और हमारी अवनतिका कारण मैं तो यही कहूंगा कि उनका शुद्धाचरण और हमारा दुराचरण है। जितना शुद्धाचारमें और दुरा-चारमें अन्तर है उतना ही उनमें और हममें है। हम अपना शील-चारित्र उत्तम बनावें, पौरुष करना सीखें, कार्यार्थी बनें तो मैं कहूंगा कि हमारे लिए भी उस दशाको पहुंचना कुछ कठिन नहीं है। हम भी शनैः शनैः उन्नतिके शिखरकी ओर बढ़ने लगेंगे; कोई कष्ट या विपत्ति उन्नति-पथमें आकर हमें न रोक सकेगी। अभी हम डरते हैं; और सोचते हैं—अमुक कार्य सम्पादन करनेमें हमें इतनी आपदाएँ सहनी होंगी; इतने व्यक्तियोंके कटु वाक्य सहने होंगे; इतने जनोंसे बुरा बनना पड़ेगा; इतने पुरानी लकीरके फकीरोंसे कलह (वादविवाद) करना होगा; इतने निरक्षर प्राचीन प्रथानुगामियोंको समझाना होगा; इतने अपढ़ किन्तु अभिमानियोंकी धुत्कार और फटकार सहनी होगी, इतने स्थानों पर अमुक अमुक क्लेश उठाने होंगे। परन्तु ये भाव हमारे हृदयमें उसी समय तक हैं और हमें डराते हैं जब तक कि हम सच्चारित्री बनकर अपने कर्तव्यमें नहीं लगते हैं। सच्चारित्री बनकर हम किसी कार्यका या किसी सुधारका भार अपने ऊपर लेंगे तब फिर कैसा ही कष्ट और कैसी ही दुःखकी बाढ़ हमारे सामने आवे; हमारी कार्य-गतिमें बाधा डाले-हम किसीकी भी परवाह न करेंगे, हमारी कार्य-गति चाहे वह धर्मोद्धारके पथपर हो,

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंधेरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लाभके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी भूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस बातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लाभके नियम जानने लगे हैं और उन्हीके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहांके मनुष्य अक्सर सर्दी जुखामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्केके हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और चुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ? साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लाभकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगें उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किंतु जो पदार्थ सात्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लजीज और उम्दा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लजीज भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है

खानेसे थोड़ा थोड़ा खाना अच्छा है। पानी भी अधिक पीनेसे नुकसान होता है। अधिक पानी पीनेसे जठराग्नि बिगड़ जाती है और अजीर्ण भी हो जाता है। इसलिए भोजन ऐसा करना चाहिए कि जिसमें अधिक प्यास न लगे।

पोशाक—यह प्रश्न भी बड़ा ही महत्वका है। कपड़े स्वास्थ्यको अच्छा बनानेमें बड़ी मदद देते हैं। गर्मी, बरसात, जाड़ाकी बाधाको दूर करते हैं और शरीरको सुख देते हैं। इसलिए कपड़ोंकी ओर पूरा २ ध्यान देना चाहिए। कपड़े समयानुकूल पहिनना चाहिए, इससे स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। वैद्यक ग्रन्थोंमें भी ऋतुचर्या वर्णनमें कपड़ोंका वर्णन दिया है कि किस मौसिममें कैसा कपड़ा पहिनना चाहिए। जिन लोगोंको स्वास्थ्य-अच्छा रखनेकी इच्छा है उन्हें चाहिए कि वे वैद्यकके अष्टांग हृदय जैसी पुस्तकोंका अवलोकन करें। आज कल लोग फैशनके इतने गुलाम हैं कि उन्हें स्वास्थ्यकी कुछ भी परवा नहीं। उनके जान चाहे स्वास्थ्य रहे या जाए परन्तु वे फैशनको नहीं छोड़ेंगे। इसी फैशनके कारण सैकड़ों मनुष्योंने स्वास्थ्यसे हाथ धो डाला है। अतः जिन्हें स्वास्थ्यसे प्रेम है उन्हें चाहिए कि वे फैशनपर न मर कर स्वास्थ्यकी ओर ध्यान दें। कुछ बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य तो ठीक हो सकता है परन्तु बिलकुल बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य फिर ठीक नहीं होनेका।

कपड़ेके प्रयोगमें एक बातका और ध्यान रखना चाहिए और वह यह कि न कपड़ा अधिक ढीला हो और न अधिक गाढ़ा; किंतु शरीरसे मिला हुआ हो। ऐसा कपड़ा पहिननेसे स्वास्थ्यको बड़ा लाभ पहुंचता है।

तुम्हीं पर मूंड मुंडाई है।

(लेखक—मास्टर दीपचंद परवार)

किसी दिन एक चौबेजी प्रातःकाल शारीरिक नित्य क्रियासे निश्चिन्त हो तोंद पर हाथ धरे उदर देवकी अर्चा सामग्री प्राप्त करनेकी चिंतामें जा रहे थे, कि भाग्यवशात् किसी गृहस्थने उन्हें प्रणाम किया, बस उस गृहस्थका प्रणाम करना था, कि चौबेजी आशीर्वाद देते हुए "चिरंजीव यजमान", उसीके घर पर जा अड़े और लगे ईश्वरको धन्यवाद देने "जय हो गोपाल लाल श्रीकृष्ण कन्हैयाकी", कि जिसने चिंता करते ही दाता भेज दिया। यजमान प्रसन्न रहो, आज हमारा भोजन तुम्हारे ही यहां होगा। श्री ठाकुरजीका भोग आज भाग्यसे तुम्हारे ही हिस्सेमें आया। अच्छा भाग्यवान, आज तो भोगके लिये मोहन खीर और हलुवा आदि मिष्टान्न बना लेना। मेरा तो सरल स्वभाव है, टेरने बुलानेकी अधिक अड़चन न करना। मैं आप ही समय पर आ जाऊंगा। इत्यादि।

यह सद्गृहस्थ चौबेजीकी बातें सुनकर बड़ा चक्करमें पड़ा कि यह क्या आफत आ पड़ी? क्या प्रणाम करना ही पाप है? या प्रणाम करनेका यह प्रायश्चित्त (दण्ड) भोगना पड़ता है? इससे अच्छा था, कि मैं प्रणाम ही न करता। अस्तु जो हुआ सो ठीक है अब यह बला कैसे टले? बहुतसे सोचनेके अनन्तर बोला, महाराज यह क्या प्रणामका फल है? मैंने तो आपको निमंत्रण ही नहीं दिया, तब कहांका भोजन और कहांका टेरना बुलाना।

देखकर बड़ा ही विस्मय होता है कि आज कल लोग प्रायः मकानके अंधेरे भागमें ही रहना ज्यादा पसंद करते हैं। इसका पहला कारण या तो यह है कि उनके बाप दादे ऐसा करते चले आए हैं इस लिए वे अपने बाप दादाओंकी प्रथाको त्यागना नहीं चाहते या वे स्वास्थ्य-लाभके फायदे जानते ही नहीं। अतः वे ऐसी भूल करते हैं अन्यथा कोई कारण नहीं कि लोग जिस बातको बुरा समझें और फिर उसीको करें। हर्षकी बात है कि अब बहुतसे लोग स्वास्थ्य लाभके नियम जानने लगे हैं और उन्हीके अनुसार चलनेका भी प्रयत्न करते हैं। प्रकाश और वायु स्वास्थ्य वृद्धिके मुख्य कारण हैं इसलिये मनुष्योंको इनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

जिस मकानमें ठंड या सील अधिक रहती है वहांके मनुष्य अक्सर सर्दी जुखामसे पीड़ित रहते हैं। अतः ऐसे मकानमें रहना निषेध है। मकान हमेशा हवादार होना चाहिये। जिस मकानमें वायुका अच्छी तरह प्रवेश न हो, उस मकानमें कभी पैर भी न रखना चाहिए। वायुकी कमीके कारण अनेक रोग हो जाते हैं। इसलिए मकानमें वायु और रोशनीका पूर्ण प्रबन्ध रखना चाहिए। सोते समय कभी खिड़कियां बन्द करके न सोना चाहिए कारण कि इससे ताजी हवाकी गति रुक जाती है।

भोजन और पानी—यदि हम इन दोनों चीजोंको आवश्यकतानुसार कहें तो कुछ भी अयुक्ति नहीं। [illegible] बार एक अनुभवी डाक्टरने कहा [illegible] कि मैं जो ७० वर्ष जैसी बड़ी अवस्था तक जीवित रहा इसका कारण यही है कि मैंने अपने सारे जीवनभर अच्छा खाया पिया।

मुझे क्या खाना और पीना चाहिए?

कब मुझे खाना और पीना चाहिए?

ये दोनों प्रश्न बड़े ही मार्केके हैं। जो लोग वृद्धावस्थामें भी स्वस्थ सुखी और चुस्त रहना चाहते हैं उन्हें इन प्रश्नोंका उत्तर स्वयं देना चाहिए।

पहली बात जो हमें मालूम करना चाहिए, यह है कि हम क्या खाएँ और क्या न खाएँ? साधारण तौरसे बहुत ही थोड़ी चीजें हमारे खानेके लिए हैं, परन्तु स्वास्थ्य लाभकी दृष्टिसे उनको भी छोड़ देना चाहिए। जो पदार्थ तालुको अच्छे लगें उन्हें कदापि न खाना चाहिए; किंतु जो पदार्थ सात्विक हों उन्हें खाना चाहिए। लजीज और उम्दा भोजन बहुत देरमें पचता है; किन्तु सामान्य भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इस लिए लजीज भोजनके बजाय सामान्य भोजन खाना ही अच्छा है। दूसरी बात यह है कि भोजनका समय नियत होना चाहिए और उस नियत समय पर ही खाना चाहिए। ऐसा करनेसे भोजनको पचनेका समय मिल जाता है। परन्तु इसका ख्याल न करके बार बार खा लेना ठीक नहीं। बहुतसे ऐसा करते हैं कि थोड़ा थोड़ा खानेकी बजाय एकबारमें कई बारका भोजन खा जाते हैं। इससे बड़ी भारी हानि होती है। वह यह कि खाना जल्दी हजम नहीं होता और दूसरे मंदाग्नि और अजीर्ण भी हो जाता है। अतः एकबार इकट्ठा

प्रकार यहीं होगी। ऐसी हसी तो तुम लोग हसा ही करते हो, अस्तु हसी खुशीसे रहना ही अच्छा है, उदासीन रहना गृहस्थोंको उचित ही नहीं है, जो उदास रहते है वे तो सामे चलते फिरते चैतन्य ताजिया है। मै समझ गया तुम्हारी इच्छा है कि धूप हो गई है इस लिये भोजन करके ही जाना सो ठीक है। तुम दयावान हो, दूसरोंके सुख दुखको समझ सकते हो। बहुत ठीक—मैं अब भोजन करके जाऊगा, लडके बच्चोंको सदेशा लगाये देता हू। अरे भैया गोवर्धन, घर पर जाओ तो लडकनसे कह देना जल्दी आवें, यहा सब तैयारी है।

सदगृहस्थ—नहीं महाराज, घर जाइये हमारी सामर्थ नहीं है।

चौबे—ठीक है, तुम बडे विनयवान हो कहा है-

बडे बडाई न करें, बड न बोलें बोल।
हीरा मुहसे न कहे, बड़ा हमारा मोल ॥

अहा! तुम प्रेमीयोंको यही कहना उचित है परन्तु हम जानते है। भैया तुम सामर्थवान हो, तुम्हीं जैसे लोगों पर तो हमने मूड मुडाई है।

सदगृहस्थ—यह क्या कहते हो महाराज, मूड मुडाओ अपने माता पिता बडे बूढोंपर, मुझ पर क्यों?

चौबे—बाबा जो खानेको देवे वही माई बाप, सो हमारे तो माई बाप तुम्हीं हो, तुम्हीं अन्नदाता हो। अच्छा पिताजी, अब तो भूख लगी है, तुम दो तो दो नहीं तो हम घरमें घुस कर माईजीसे लेकर खायगे, चाहे अच्छी तरह खिलाओ चाहे बुरी तरह परतु खिलाना ही पडेगा। सीधे दो नही तो टेढे लेंगे, हमारा तो हक है। तुम्हारे जैसा साहू छोडकर और कहा जाय?

सदगृहस्थ—महाराज, घर जाओ और कहां जाओगे।

चौबे—यजमान, सो तो हम घर ही में बैठे हैं कौन जगलमें बैठे है। यहा खाई हो, यहीं रहें सो।

सदगृहस्थ—महाराज, वह घर जहा चौबाइनजी रहती है।

चौबे—सो तो चिंता ही क्या? वे भी यहीं आ जावेंगी, बच्चे भी आ जावेंगे, धन्य हो यजमान बडे सज्जन हो। दयालु हो तो ऐसा हो, क्योंकि तुमने सोचा कि अकेली चौबाइन और पतोहू क्यों रह जाय? वे भी यहीं बना बनाया जीम लेंगी। सो ऐसा ही होगा, उन्हें भी बुलाये लेता हू। जा रे बड्डू, अपनी माको बुला ला, जा बेटा जल्दी आना, भला।

सदगृहस्थ—महाराजजी, इस प्रकार किसी के घर बलात्कार धन्ना धरकर आप जैसे हृष्ट पुष्ट पुरुषोंको कदापि उचित नहीं है किन्तु आपको चाहिये कि परिश्रम करके ही भोजन किया करें।

चौबे सत्य है यजमान, मैं नित्य ही परिश्रम करके भोजन करता हू, प्रात काल उठकर वृन्द रमणियोंके नायक गोपालजीका नाम लेकर भोजनकी चिंता करता हू, शौच जाता हू, दन्तधावन करता हू, नहाता हू, दंड पेलता हू, इधर उधर फिरकर यजमान को ढूढ लेता हू फिर उसके द्वारा प्राप्त हुआ भोजन पेट पर हाथ फेर फेर कर आनन्दसे धीरे २ खाता हू ...

चौबेजी–यजमान घबरावो नहीं, मेरा कुछ बहुत खर्च नहीं है, मेरा एक शिष्य और दो बालक हैं केवल वे ही साथ आवेंगे; रही चौबाइनजी सो न हो सके तो उनके लिये सासु बहु दोनोंके जितना सीधा सामान भेज देना, परन्तु जल्दी करना, क्योंकि धूप पड़नेसे गर्मी चढ़ जाया करती है।

सदगृहस्थ–महाराज, मैंने तो किसी का भी न्योता नहीं किया न सीधा ही देनेको कहा है।

चौबे–यजमान, चिंता नहीं; यह सब घरकी बात है। गैरों को न्योता देने व मनानेकी आवश्यकता होती है। तुमतो बना लेना और तुमसे न बने तो हलवाईके यहांकी ही सही उसीमें संतोष करेंगे। हम लोग जैसा समय देखते हैं वैसा ही कर लेते हैं। रही नकद दक्षिणाकी बात सो औरोंकी और बात है, तुमसे थोड़ीही में (कमसे कम पांच रु. में ही) समझ जांयगे।

सदगृहस्थ–महाराज, यह क्या कह रहे हैं! किससे कह रहे हैं? मेरी शक्ति नहीं है कि आपको न्योता दूं।

चौबेजी–यजमान, ऐसा नहीं विचारना चाहिए। तुम बड़े सज्जन धर्मात्मा हो, आगेका विचार आज क्यों करना! आजके न्योतेकी चिंता करो, देरी होती है, मैं जरा विजिया ले आऊं।

सदगृहस्थ–अभी गले क्यों पड़ते हो, मैंने न्योता नहीं किया।

चौबे–यजमान सुनो, हम विप्रवर्ण सब वर्णोंमें श्रेष्ठ हैं सो गले क्यों पड़ने लगे! हम तो सिर चढ़ते हैं और इतनमें उत्तम भोजन करते हैं। गले पड़े क्षत्री, पीठ पड़े वैश्य और पैर पड़े शूद्र, हम तो सिर चढ़ेंगे।

सदगृहस्थ–महाराज, क्या बलात्कार सिर चढ़ेंगे, जब कोई चढ़ावे ही नहीं तब?

चौबे–यजमान यह कलयुग है, इसमें यही नीति है कि "मान न मान मैं तेरा महमान"। सो क्या हम इस नीतिको छोड़कर पापी बनें, राम राम–छिः छिः यह तो न होगा। भला जब हम ही नीतिको छोड़ दें तो तुम लोग तो छोड़ोगे ही। सो भाई आजकल चाहे कोई सिर न भी चढ़ावे, तो भी अपन तो चढ़ बैठें; नहीं तो भला यह गृहस्थीका खर्चा कहांसे पूरा पडे। इस कलिकालमें कौन ऐसा मूर्ख है? जो ठाड़े बैठे बोझा उठा ले। यहां तो यह नित्यका धंधा है। अच्छा अब जाओ तैयारी करो पित्त तीक्ष्ण है।

सदगृहस्थ–महाराज यह न होगा, आप कहीं और देखिये, नहीं तो जमनामें मुंह धो आये।

चौबे–अरे मूर्ख, चौबाइनसे मैंने जल पानको मांगा था सो वे बोलीं–कहीं अंत देखो, सो मैं आज्ञा शिरोधार्य करके तो तेरे यहां आया, अब कहां जाऊं? तू नाहक शंका करता है कि मैंने हाथ मुंह नहीं धोया। मैं तो प्रातःकालही शौचादि क्रिया कर आया हूं, तेरे पर नहीं करूंगा और मुंहकी कौन कहे सब अंग धो आया (नहा आया) हूं। अब तो भोग ही लगाना है। सो जहां तेरे यहां तैयार हुआ कि बस।

सदगृहस्थ–महाराज कृपा कर आप जाइये। यहां आपकी इच्छाकी पूर्ति नहीं होनेकी

चौबेजी–क्या कहा? इच्छाकी पूर्ति नहीं

जैन सामाजिक सुधारणा.

લેખક-મોતીલાલ ત્રીકમદાસ માલવી બાકરોલ

(અંક ૭ થી ચાલુ)

તેરીજ રીતે ભારતવર્ષની અન્ય કોમોમાં વિધવાઓનું પ્રમાણ ઘટતું જાય છે. ત્યારે અમારા જૈન સમાજમાં તેનું પ્રમાણ દિન પ્રતિદિન વધતુંજ જાય છે. સને ૧૯૧૧ ની છેલ્લી વસ્તી ગણત્રી પ્રમાણે જઇનોની કુલ વસ્તી ૧૨૪૮૧૪૮ મનુષ્યની ગણવામાં આવી હતી. તે પૈકી ૬૦૪૬૨૯ સ્ત્રીઓમાં ૧૫૩૨૯૭ અર્થાત્ પ્રતિ સેંકડે ૫ ૩/૧૦ સ્ત્રીઓ જૈન સમાજમાં વિધવા હતી. હિંદુઓમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૧ ૬/૧૦ સન ૧૯૦૧ માં ૧ સન ૧૯૧૧ માં ૧૦ ૫/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. ક્રિસ્ચિયનોમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૨ ૬/૧૦ સન ૧૯૦૧ માં ૧૨ ૬/૧૦ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૧ ૬/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. પારસિઓમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૩ ૬/૧૦ સન ૧૯૦૧ માં ૧૪ ૨/૧૦ સન ૧૯૧૧ માં ૧૩ ૫/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. મુસલમાનોમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૫ ૬/૧૦ તથા સન ૧૯૧૧ માં ૧૪ ૬/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. શિખોમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૫ સન ૧૯૦૧ માં ૧૩ ૬/૧૦ તથા સન ૧૯૧૧ માં પ્રતિ સેંકડે ૧૫ સ્ત્રીઓ વિધવા હતી, હિંદુઓમાં સન ૧૮૯૧ માં ૧૭ સન ૧૯૦૧ માં ૧૯ ૩/૧૦ અને સને ૧૯૧૧ માં ૧૮ ૬/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી. ઉપર પ્રમાણે લાખો અને કરોડોની સંખ્યા ધરાવતી અન્ય કોમોમાં જ્યારે વિધવાઓનું પ્રમાણ હતું ત્યારે અમારા જૈન સમાજની બાર અને તેર લાખની અલ્પ સંખ્યા ધરાવતી જૈનકોમમાં તેની સંખ્યા સન ૧૮૯૧માં ૧૩ ૬/૧૦ સન ૧૯૦૧માં ૨૩ ૬/૧૦ તથા સન ૧૯૧૧માં ૨૫ ૬/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા હતી. સન ૧૯૧૧ની સાલમાં જે વિધવાઓની સંખ્યાનું પ્રમાણ બતાવ્યું તેમાં ફક્ત ૨૦ થી ૪૦ વર્ષ સુધીની ઉમરની વિધવા સ્ત્રીઓની સંખ્યા ગણવામાં આવે તો જણાઇ આવે છે કે ૨૦ થી ૪૦ વર્ષ સુધીની ૨૦૪૭૦૫ સ્ત્રીઓમાંથી ૪૮૪૬૬ અર્થાત ૨૩ ૬/૧૦ પ્રતિ સેંકડે વિધવા સ્ત્રીઓ હતી, પાંચને દશ વર્ષની વિધવાનો પણ તેમાં સમાવેશ થાય છે.

મહાશયો ! ઉપર જણાવેલા બાળલગ્ન, કજોડાં, કન્યાવિક્રય, વૃદ્ધ વિવાહ આદિ અનિષ્ટકારક રિવાજ અમારા જૈનસમાજના જીવનનું રક્તપી અમારા સ્વાસ્થ્યનો નાશ કરી બાળક અને બાળકીઓના વિવાહ (લગ્ન-દંપત્તિપ્રેમ) અને ચારિત્રપર માઠી અસર કરી દિન પ્રતિદિન અધોગતિને પ્રાપ્ત કરી રહ્યા છે. તેનું મુળ કારણ અમારી જ્ઞાતીની સંકુચિત મર્યાદા (દરેક જ્ઞાતિની અંદર અંદર એકજ કોમના સમુહ અને પેટા સમુહ અને તેને નિભાવી રાખનાર મિથ્યાભિમાની જ્ઞાતિના સ્વાર્થ વૃત્તિના અગ્રેસર શેઠીયાઓજ) છે. કેમકે જમાનાને અનુસરી સામાજિક-સુધારો કરવામાં તે આડખીલારૂપ છે. કે જે તડ યા પેટાતડ અને સમુહને લીધે તેમજ સ્થળાંતરને લીધે વીસા વીસા સાથે ને દશા દશા સાથે એકજ કોમના હોવા છતાં તડ યા સામાતડને લીધે એક બીજાને કન્યા પણ આપી શકતા નથી, તેમ સાથે બેસી જમતા પણ નથી, એ ખરેખર શોચનિય છે ! જેમ કન્યા વ્યવહારની મર્યાદા ટુંકી કરીયે તેમ કન્યાની ખોટ પડે છે. જેથી યોગ્ય કન્યાને વર મેળવવામાં અડચણ પડે છે, જેથી પરિણામે કજોડાં થાય છે, પૈસા આપીને (કન્યા વિક્રયથી) કન્યા ખરીદવી પડે છે, જેથી જ્ઞાતિના સાધારણ તેમજ ગરીબ સ્થીતિવાળાને કન્યા બીલકુલ મળી શકતી નથી. જેથી છેવટ ઘરો ઘરના ટંટા ફીસાદ વડે સમુહના સમુહ અને તડાંતાતડ અને પેટતડ પડે છે. તે એટલે સુધી કે તે એક બીજાની કન્યા વ્યવહાર ને ખાવાપીવા નો વ્યવહાર પણ તોડી નાંખે છે. મા દિકરી અને સગા ભાઇઓ પણ [illegible]

નહિ તો બીજું શું ? આપણે કોમ સમાજ યા દેશમાં સંપ અને એકયતા કરવાની વાતો કરીયે છીએ, પણ લોકો તો તેથી ઉલટું વલણ પકડે છે કેટલાક પોતપોતાનાં તડ યા સમુહ સુધારવા મથન કરે છે તે એવા વિચારથી કે અમુક તડ યા સમુહ સુધરશે તો આખી જ્ઞાતિ સમાજ યા દેશ સુધરશે, પણ આ સંકુચિત મર્યાદાનું કાર્ય ધારેલી નેમ પાર પાડી શકશે નહિ, એથી સર્વત્ર પણે ભ્રાતૃભાવ પ્રગટ થવાને બદલે પોતાના તડ યા સમુહને મદદ કરવાનું યા પોષવાનું વલણ પકડશે; એથી ભારતવર્ષ એ મારો દેશ છે સમગ્ર હિંદી પ્રજા એ એક છે, તેના વાસાની જૈન કોમ એ એક વ્યક્તિ છે, તેના સુખ દુઃખમાં ભાગ લેવા હું બંધાયેલો છું, તેની ઉન્નતિ કરવી એ મારૂં કર્તવ્ય છે, આવા વિચાર ભાગેજ ઉદ્દભવી શકશે.

ઉપર જણાવી ગયા પ્રમાણે મિથ્યા કુલાભિમાને આ બાબતમાં કોઇ વ્યવહારૂ પગલાં ભરશે કે માત્ર ભમણાં ચાવીને ટગર ટગર જોયા કરશે ! અમારા આચાર્યો, ધર્મગુરૂ ભટ્ટારકોને આ બાબતની કંઇ પડી નથી, ત્યારે આ માઠી અને ભયંકર સ્થીતી શું આપોઆપ સુધરી જશે ! કે પછી દિવસે દિવસે તેથી પણ વધુને વધુ ખરાબ તેમજ અધમ સ્થીતીમાં આવી પડીશું ? આ એક ગંભીર સવાલ છે. માટે જ્યાં સુધી દરેક કોમ યા સમાજમાં સ્વાર્થત્યાગી અને આત્મભોગી વીરનરો પેદા થશે નહિ ત્યાં સુધી આપણી આ અવનતિ કાયમ રહેવાની, અને દિન પ્રતિદિન તેથી પણ વધારે ને વધારે ને વધારે અધોગતિએ પહોંચવાના એ નક્કી સમજવું.

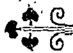
પ્રિય બંધુઓ ! મારે ફરી ફરીને આપને યાદ દેવડાવવું પડે છે કે ઉપર જણાવેલાં કારણો પેટી તડ પેટાતડ અને સમુહ અને પેટા સમુહ કરી આપણી દરેક જૈન જાતિઓની સ્થીતિ છિન્ન

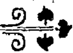
તેને જીંદગી પર્યંત જ્ઞાતિ બહિષ્કારની શિક્ષા થાય છે. હાલમાં જ્ઞાતિયો જેવી રીતે જીવંત છે તેવી પ્રાચીન કાળમાં હતી તેવું કોઇ પુરાણકે સાહિત્ય કહી શકે તેમ નથી સાંપ્રતકાળમાં ભારત વર્ષની બીજી કોમો દિન પ્રતિદિન આગળ વધતી જાયે છે ત્યારે અમારી જૈન કોમ દીન પ્રતિદીન પછાત પડતી જાય છે. આધુનિક જૈન કોમ અને સમાજ પોતાનું જીવન કેવી રીતે હટાવી રહેલ છે તે નીચેની હકીકત પરથી સમજાશે.

ઉપર જણાવ્યા પ્રમાણે તડ પેટાતડ અને સમુહ અને પેટા સમુહોથી છોકરા છોકરીઓને પરણાવવાની (લગનની) હદ તદન ટુંકી થઇ ગઇ છે. જેથી કેળવણી, વય, લાયકાત, સ્થાવિ વગેરે કાંઇ પણ જોવામાં આવતું નથી, મન વગરનાં અને ના પસંદગીનાં ફરજ્યાત લગ્નો થાય છે; જેથી લાયક કન્યાને યોગ્ય વર મળતો નથી તેમ લાયક વરને યોગ્ય કન્યા મલતી નથી, જેથી પરિણામે દંપતિ પ્રેમ અને જીવનનો નાશ થતાની સાથે કેટલોક દેખવાપણો વર્ગ કુંવારી જીંદગી ગાળી નિર્વંશ થતો જોવામાં આવે છે, બીજી તરફથી કન્યાવિક્રયને વૃદ્ધલગ્નના હિમાયતીયો બાળલગ્નના રિવાજને સુરતપણે વળગી રહી બાળવિધવાના પ્રમાણમાં વધારો કરી રહ્યા છે, વગેરે અનેક કારણો માણસાઇની સ્વતંત્રતા પર તરાપ મારે છે. પરદેશગમન કરવાનો સખત બંદોબસ્ત હોવાથી વિદ્યા, કળાને હુન્નર મેળવવાનાં બારણાં બંધ થાય છે, જ્ઞાતિના આગેવાન બુદ્ધિથી પણ સમજી ન શકાય તેવા કાયદા બાંધે છે, વળી આ કાયદામાં ફેરફાર કરવાનો હક કાયદા પાળનારને પણ નથી વગેરે અનેક ગેરકાયદા છે તે આ સ્થળે સ્થળસંકોચથી આપી શકતો નથી.

બંધુઓ! હું જ્ઞાતિ બંધન તોડી જ્ઞાતિઓની હદ બીલકુલ એકાંગી જવા માગતો નથી તેમ જ્ઞાતિઓના ઝગડાઓમાં હું માથું મારવાને ચાહતો [illegible] એટલું તો સ્પષ્ટ છે કે જ્ઞાતિઓની અંદર અમુક ઝગડાનાં કારણ તેઓમાં હોય છે છતાં તે કેટલીક વખતે જ્ઞાતિની અમુક વ્યક્તિના દુરાગ્રહને લીધે જ્ઞાતિમાં ચાલતા આવેલો શેઠાઇ હક વરીકે આગેવાનોના જુલ્હાકી દોર કેળવણીથી બેનસીબ રહેલી જ્ઞાતિની અમુક વ્યક્તિ આગળ અસલની માફક પુરજોશથી ચાલતો જોવામાં આવે છે. છતાં આધુનિક કેળવાયેલો વર્ગ ચાલતા આવેલા રિવાજોમાં જ્ઞાતિ હિતને સમાજ હિતને ખાતર જમાનાને અનુસરતો ફેરફાર કરવાને પ્રયત્ન કરે અને ઘણા વખતથી ચાલતા આવેલા શેઠાઇ હક અને આગેવાનોના જુલ્હાકી દોર આગળ પોતાનું શિર નમાવવા ના પાડે તો ઉપર જણાવેલા જુના વિચારના જુલ્હાકી દોર ચલાવનારો વર્ગ ગંભીર રૂપ પકડી તે કેળવાયેલા વર્ગને જ્ઞાતિ બહિષ્કાર વગેરેની શિક્ષા કરવાને પણ ચુકતો નથી. પણ હવે દરેક જ્ઞાતિના શેઠીઆઓ અને આગેવાનોએ સમજવાનું છે કે હવે આ વીસમી સદીમાં જમાનો બદલાયેલો છે, સ્વતંત્રતા સૌ કોઇને વહાલી છે, તેમ લોકો પોતાનો હક શું છે તે સમજતા થયા છે, અને રાજદ્વારી વિષયોની માફક સામાજિક બાબતોમાં પણ તે પોતાના હક ભોગવવાને લાયક થયા છે તો અમો આશા રાખીયે છીએ કે દરેક જ્ઞાતિના કેળવાયેલા તેમજ પ્રમાણિક અને કર્તવ્યદક્ષ પુરૂષોની કમીટી નીમી જ્ઞાતિમાં થતો પક્ષપાત અને અન્યાય તેમજ કોલાહલ દુર કરી સાર્વજનિક હિત તરફ દૃષ્ટિ કરી પોતાના પ્રતિષ્ઠા જાળવશે તેમ નહિ કરતાં દુરાગ્રહ અને હઠ પકડી પોતાની સત્તાના તોરમાં નમ્યું નહિ આપે તો કહેવાની જરૂર નથી કે હાલનો કેળવાયેલો વર્ગ અન્યાય અને આપ ખુદી સત્તાનો દોર તોડવાને યોગ્ય શસ્ત્રોનો ઉપયોગ કર્યા સિવાય રહેશે નહિ.

પ્રિય મહાશય! હવે આ વિષય પર વધુ વિવેચન કરવાની જરૂર નથી, તો ઉપર જણાવેલા કારણથી આપણી કોમ આપણી સમાજ આપણો ધર્મ અને દેશ અધોગતિએ પહોંચતો જાય છે એમાં તો સંશયપદ છેજ નહિ. ભૂતકાળની મહત્તામાંજ અભિમાન આણી રહ્યા છે





દેશની ઉન્નતિ જોઈ હાય આપણે આમજ બેસી રહીશું ? શું આપણા હાથમાં કોઇ ઉપાયજ રહ્યો નથી ! શું આપણી બુદ્ધિનો વિનાશ થયો છે ! આવી ચિંતા કરી બળ્યા કરીશું ? ના ના તમરી સ્થીતિનો અભ્યાસ કરો ! અને અન્ય દેશની જાહોજલાલી અને ઉન્નતિનાં કારણો તપાસી તમારી જ્ઞાતિ અને સમાજહિતને ખાતર નીચેનું પદ ધ્યાનમાં રાખી સ્વાર્થનો ત્યાગ કરી ઉન્નત કાર્યમાં કર્ત્તવ્ય પરાયણ થવાને સોગન લ્યો.

રાજર્ષિ ભર્તૃહરિનાં કહેલાં નીચે મુજબ નીતિસુત્ર તથા શ્રીયુત બાહરશી કુવરજી વિઠ્ઠલભાઇ મહેતાનું નીતિ પદ હૃદયમાં કોતરી રાખી જ્ઞાતિ અને સમાજ હિતને ખાતર દરેક જ્ઞાતિની અંદર સ્વાર્થમાં અંધ બનેલા નરાધમોની તરફથી નિંદા, અપમાન, અપયશ તેમજ સેંકડો અંતરાયો આવે તો તેની પણ દરકાર રાખ્યા સિવાય પોતાનું કર્ત્તવ્ય સમજીને કર્ત્તવ્યપરાયણ થાઓ, સોગન લ્યો અને રાજર્ષિ ભર્તૃહરિના કહેવા મુજબ—

प्रारभ्यते न खलु विघ्न भयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहिता विरमंति मध्याः ।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजंति ॥ १ ॥

ભાવાર્થ—વિઘ્નના ભયથી અધમ પુરૂષો કાર્યનો આરંભજ કરતા નથી, અને મધ્યમ પુરૂષ કાર્યનો પ્રારંભ તો કરે છેજ પણ અતિ વિઘ્ન આવતાં તે કાર્ય પડતું મુકીદે છે. પણ ઉત્તમ પુરૂષો તો વિઘ્નોથી વારંવાર હણાવા છતાં પણ નાસીપાસ નથતાં—

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्यायान् पथः प्रविचलंति पदं न धीराः ॥ २ ॥

ભાવાર્થ—નીતિ નિપુણ પુરૂષ નિંદા કરો પણ ચાહ્યો જાઓ, મૃત્યુ આજે થાઓ કે એક યુગ પછીથી થાઓ, તો પણ ધીર પુરૂષો ન્યાયને માર્ગેથી એક પગલું પણ પાછા હઠતા નથી.

ગુજલ—કવ્વાલી.

અમારી જ્ઞાતિના માટે ધરી કફની અમે અંગે
બધી છોડી હવે મોજે ધરી કફની અમે અંગે.
અમારી સુખ સંપત્તિ દીધી જહાનમ મહીં ફેંકી
હવે લગની લગી જ્ઞાતિ ધરી કફની અમે અંગે
છવાયાં ધાડ પડ કાગાં અમારાં અંતરો ભેદી
ખરે ઉચ્છેદ તે કરવા ધરી કફની અમે અંગે.
સદાયે બેસતાં ઉઠતાં અમારી જ્ઞાતિની ચડતી
ચમકવા ચોદિશા માંહી ધરી કફની અમે અંગે.
નથી નિંદાથી ડરવાના નથી કંઇ માનની પરવા
અમારે તો સહુ સરખું ધરી કફની અમે અંગે.
રહી છે અંતરે આશા અમારી જ્ઞાતિના શ્રેયે,
મહેચ્છા પૂર્ણ એ કરવા ધરી કફની અમે અંગે.

ઉપર મુજબ જૈન કોમ અને જૈનસમાજની ઉન્નતિને માટે જૈનજાતિ યા સમાજનો ગમે તે મનુષ્ય ગમેતેવી દુઃખી હાલતમાં હોય તો તેના પ્રત્યે તમારી ઉદાર વૃત્તિને જવાબદારીની ફરજ સમજી સઘળા એકજ વીર ભગવાનના પુત્રો છીએ એવી રીત ખરા જિગર અને પ્યારની લાગણીથી ભેટી તેમની ઉન્નતિને યથાશક્તિ સહાય તેમજ આત્મભોગ આપી સમાજ પ્રેમ અને પ્રભુ પ્રીતિ મેળવો નહી તો પછી આપણી ઉન્નતિની આશા "न भूतो न भविष्यति" માની સેનાની સાથે આપણેજ હાથે નીચે મુજબ અધોગતિને પ્રાપ્ત થશું.

दावाग्नि दहशे सर्वा जैन जाति,
ऐसे असंख्य वरसो तणुं वेर जुवो.
देशे प्रमाणो सौ जैन प्रजानो वाडो,
रहेशे पछी अधमता तणो उग्र धाडो.
जे आ पुरातन जैन समाज अंग,
थाशे विशुद्ध मार्दव परेथी सगे,
ॐ शांति ! शांति ! ! शांति ! ! !

નોટઃ—સુજ્ઞ વાંચક વૃંદ ! આ લેખ ભારતવર્ષની આપણી જૈનજાતિ, સમાજ, અને દેશોન્નતિને માટે મેં મારી અલ્પમતિ અનુસાર નિષ્પક્ષપાત પણે લખી જૈનસમાજ પ્રત્યેની મારી જે ફરજ બજાવી છે, તેમાં કોઇ ખામી મા હોય માલુમ પડે તો તેને માટે હંસ પકૃતિથી તે દોષો પ્રતિ અલક્ષ કરી જૈનજાતિ અને જૈન સમાજ હિતને માટે સાર વસ્તુ ગ્રહણ કરશો તો મારો આ લેખ લખવાનો શ્રમ સાફલ્ય થયો સમજાશે.

આપણી ઉન્નતિ।

રાતનો સમય છે નવેક વાગ્યા છે. જે વખતે બધા માણસો પોત પોતાનું કામ આટોપી લેવાની તૈયારી કરી રહયા છે તે વખતે ગુજરાત કોલેજની બોર્ડીંગમાં એક રૂમમાં બે વિદ્યાર્થીઓ કે જેઓ એકજ જાતિના હતા તે નીચે પ્રમાણે વાર્તાલાપ કરી રહયા છે.

"ભાઇ મોહન," ઉમરમાં નાના દેખાતા વિદ્યાર્થીએ પોતાના સાથીને કહયું આજે આપણે દિવસના સંતોષકારક રીતે વાંચ્યું છે તો અત્યારે કંઇક વાર્તાલાપ કરીએ તો ઠીક."

"હા, ભાઇ રમણ," મોટા દેખાતા વિદ્યાર્થીએ કહ્યું મારો પણ એજ વિચાર હતો પરંતુ તમને અભ્યાસમાં ખલલ ન પડે એવું ઇચ્છીનેજ આ વાત મેં ઉચારી નહોતી. ત્યારે ભાઇ મોહન, આપણે કઇ બાબત ઉપાડશું ?

વાહ ભાઇ મોહન બાબત ખોળવાની કેવી ? જોને આપણો હિંદુ સંસાર ! આપણે સ્ત્રી કેળવણીમાં કેટલા પછાત છીએ આપણામાં મેટ્રિક થયેલી સ્ત્રીઓ તો ગણી ગાંઠીજ છે. અને ગ્રેજ્યુએટસ તો આંગળીને વેઢે ગણાય તેટલીજ છે.

હા ભાઇ મોહન, એ બધું તદન ખરૂં છે પણ એ વાતનો આપણા હિંદુઓને માટે લગભગ ... જેવીજ છે. પરંતુ આપણાં બાળકોને પારસીઓનાં તથા યુરોપીય ... હોશિયાર નહિ જોતાં ... જોઇએ છીએ તેનું શું ...

ભાઇ રમણ, કારણ તે ... બધાં અત્યારે કહેવા જાઉં ... મારો પાર ખુટે નહિ. માત્ર ... કહીશ. પહેલું કારણ તો એ ... કેળવાયલી નહિ એટલે બાળકો ... જોઇતું શિક્ષણ મળી શકતું ... બીચારી સ્ત્રીઓનો એમાં કંઇ ... એમનાં માબાપ એમને કેળવ... બીચારી લેને. અરે માબાપોનો ... કારણકે છોકરીઓને બાર તેર ... પરણાવી દે એટલે બીચારી ... અપાવવાનો વખત કેવી રીતે ...

વાહ ભાઇ, બુદ્ધિ તો ઠીક ... ન જ મોટી ભુલ છે જો તેઓ ... સત્તર વરસની વયે પરણાવે તો ... કેળવણી મળી શકે. જે વયે ... "લગ્ન" એટલે શું તે ન સમજતી ... બીચારીઓનાં લગ્ન કરી દે ... ઉંઢણું બન્ને સમગુણી હોતાં નથી ... થવાને બદલે હદય ભગ્ન થાય ...

હા ભાઇ મોહન, જો મારી બુ ... તો વ્હારી એ ક્યાં વધારે મારી ... પણ જો કન્યાઓ સોળ વર્ષની ... બાવીસ વરસના જોઇએ તે ક્યાંથી ...

વાહ ભાઇ રમણ, બહુજ સુંદ... સવાલ. જેમ કન્યાઓને મોડી પર... છોકરાઓને પણ મોડા પરણાવવા ... બધું જાણતો આપણી પાસે છે ... માબાપ કે જે જુના પુરાણા ... ભરેલાં તેમને તે વળી હૃદય, લગ્ન, ... બધી બાબતોની ક્યાંથી ખબર હો... એમ સમજે ... પરણાવેલા ...

परन्तु विद्यार्थी भी कम आते हैं तथा धर्मशिक्षाकी पढ़ाई बिलकुल ठीक नहीं पाई गई जिसका कारण जैन अध्यापकका न होना ही है। यह जानकर आनंद हुआ कि सेठ प्रद्युम्नसा चांगासाकी पहिन वजाबाई जो पढ़ी लिखी और बाल विधवा हैं वे अवकाशके समय अपने घर पर ८-१० कन्याओंको बुलाकर रोज पढ़ाती हैं। और भी पढ़ी लिखी बाइयोंको आपका अनुकरण करना चाहिये। यहांसे चलकर ता० ४ को-

मूर्तिजापुर आये और दूसरी ट्रेनके जानेमें विलंब होनेसे शहरमें गये। बघेरा और सेतवालके १२ घर तथा एक मंदिर है। यहां मनोहर बापुजी महाजनसे मिले जो बघेरा जातिमें प्रथम वकील होनहार हैं। आपके विचार अच्छे हैं हम लोगोंको अच्छा स्वागत किया। यहांसे शामको चलकर रात्रिको एलिचपुर आये और वहांसे २ मील पर परतवाड़ा जाकर सेठ मोतीलाल चंपालालके यहां ठहरे आप लोग गिरनारजीकी यात्राको गये थे इससे सभा न हो सकी और रात्रिको २ बजे गाड़ीमें चलकर ता० ५को सुबह ६ बजे-

जिसका दर्शन किया। नारायण बकाराम सेतवालका एक ही घर है। शामको ४ बजे हम लोग-

परतवाड़ा-आये। दो मंदिर हैं जिनके दर्शन किये। एक मंदिरका जीर्णोद्धार हो रहा है। सेठ किशन मोतीके जीनमें मनोहर चैत्यालय है जिसका दर्शन किया। यहां ठहरनेका भी प्रबंध है तथा मंदिरमें पूजन, बैठने आदि सभी प्रकारका सुभीता है। सभी कौमके लिये तथा यहां पशुओंके पानी पीनेका प्रबंध है। यहांसे भातकुली होकर अमरावती जानेके लिये ५) में गाड़ी कर ली। भातकुली अमरावती और कुरम स्टेशनसे भी जा सकते हैं परंतु इस तरह जानेसे समय और द्रव्यका बचाव होनेके सिवाय बहुत सुभीता हुआ। ता० ७को दुपहरको हम लोग-

भातकुली-पहुंचे। यहां श्री आदिनाथ स्वामीकी कुछ पाषाणकी प्राचीन प्रतिमा बिना लेखकी हैं जिसका दर्शन पूजन किया। यहां मंदिरमें और धर्मशालामें अस्वच्छता पाई गई जिसके लिये नवीन मनीम रावजी सावको ताकीद की गई।

हैं, नित्य शास्त्रसभा होती है, स्त्रियोंको भी श्रीकस्तूरी बाई शास्त्र सुनाती है। मगनबाई हिन्दी कन्याशाला देखी। २९ लड़कियां पढ़ती हैं परन्तु छुट्टी होनेसे बुलाने पर ६ लड़कियां आई थी। प्रबंध अच्छा है। धार्मिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है, सभी शिक्षा दी जाती है। श्रीकस्तूरीबाई और एक अध्यापक पढ़ाते हैं, इस पाठशाला में १ ट्रेन्ड पाठिका रखकर प्रविष्ट करानेका विचार चल रहा है, ऐसा होने से यह शाला अधिक काल स्थायी हो जायगी। दि. जैन बोर्डिंगका निरीक्षण किया। सेठ चिरंजीलालजीके परिश्रम से रु. १००००) लगकर मकान भी बन गया है, १७ विद्यार्थी रहते हैं, और भी १०-१५ रह सके ऐसा प्रबंध है। अभी सुप्र० और धर्म शिक्षक न होनेसे धर्मशिक्षा नहीं होती है परन्तु धर्माध्यापक पं० अमोलकचंदजी शीघ्र ही आनेवाले हैं जो कि सुप्रि०का भी कार्य करेंगे। रात्रिको एक सभा वकील केदारनाथ (सभापति होमरूल लीग)के सभापतित्वमें की गई जिसमें पं० दीपचंदजीने हमारा (आत्माका) उद्धार कैसे हो इस विषय पर धार्मिक (अध्यात्मिक) रीतिसे पौन घंटे तक व्याख्यान दिया और हमने सामाजिक उद्धार पर विवेचन किया। सभापतिने पंडितजीके व्याख्यानकी प्रशंसा करते हुए इस एक कार्यमें अति उत्साही भाई चिरंजीलालजीको धन्यवाद दिया और १० बजे सभा विसर्जन हुई। जनसंख्या ६० थी जिसमें पौना भाग अजैनका ही था यानी हमारे दि० भाई बहुत ही कम उपस्थित हुए थे। मारवाड़ी हाईस्कूल देखा जिसमें २०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। यह स्कूल रा० ब० सेठ जमनालालजीकी विशेष सहायतासे सुचारु रूपसे चलता है। स्कूलके लिये शहर बाहर नवीन मकान बन रहा है। ता० १० को स्टेशनके पास मराठा बोर्डिंग देखी जिसमें ३० विद्यार्थी रहते हैं और प्रबंध उत्तम है। मारवाड़ी बोर्डिंग भी देखी जिसमें ८० विद्यार्थी रहते हैं और प्रबंध बहुत अच्छा है। पं० विद्यार्थियोंको २०) मासिक तक पढ़ता है बहुत विद्यार्थी येह ही है जैसा कि हमारी [illegible] नहीं पाया जाता। सेठ [illegible] साहबके उत्साह, धर्मप्रेम और द्रव्य व्ययके कारणसे येह बोर्डिंग उमरावतीमें है। अपनेमें भाई चिरंजीलालजी बहुत उत्साही और धर्मप्रेमी है तथा ये शहरके सार्वजनिक कार्योंमें भी बहुत योग देते है। यहांसे चल कर ता० ११ को सुबहके—

नागपुर—आये, इतवारीमें सेठ गुलाबसावजीके मंदिरमें ठहरे। दर्शन पूजन आदि किये और म० धीरसेन स्वामी जो यहां आये हुए थे मिले। कुछ धर्म चर्चा भी हुई। यहां १४ मंदिर हैं तथा जनसंख्या करीब २०० है। यहां से ता. १२ को सुबह चलकर—

रामटेक—आये स्टेशनसे तीर्थ २ मील है। यहां श्री शांतिनाथ स्वामीकी पीत पाषाणकी करीब ९ फुट ऊंची प्राचीन खड्गासन प्रतिमा जि॥ लेसकी मनोज्ञ है। मंदिर ७ है अब विशेष होनेकी आवश्यकता नहीं है। यहां पढ़ना फके रात्रिको—

नागपुर—वापिस आये। यहांके सभी परवार भाई मिले तो मालूम हुआ कि रामटेक पर परवार सभाका प्रारंभिक अधिवेशन ता० २३से २५ मार्चको होनेवाला है। हम लोग तो यहांसे औरंगाबाद जानेवाले थे परंतु पं० दीपचंदजी परवार अपनी जातिमें एक सुयोग्य विद्वान और अच्छे व्याख्याता होनेसे परवार भाइयोंने सभा होने तक यहां ठहरनेके लिये इतना आग्रह किया कि हम लोगोंको यहां सभा होने तक ठहरना ही पड़ा। यहां कुल १४ मंदिर और जनसंख्या करीब ३५० होने पर भी १ भी पाठशाला नहीं न कन्या पाठशाला ही है जिसके लिये कोशिश करने पर सेठ फतेचंद दीपचंदने २५) मासिक तककी अध्यापिका अपने खर्चसे बुलानेको स्वीकार किया। हम मगनबाई संचालित श्रावि० काश्रम बम्बई तथा इंदौरसे एक सुयोग्य अध्यापिका भेजनेकी प्रार्थना करते हैं ताकि यहां स्त्रीशिक्षण प्रारंभ हो जाय। यहां स्त्रियोंका नित्य पुरुषोंका शास्त्र बचता है। बोर्डिंगमें भी कॉलेजके सिर्फ ६ विद्यार्थी पढ़ते हैं। बोर्डिंग सेठ गुलाबसावजीके [illegible]

होती है। संस्कृत धर्मध्यापक पं० शांतिराजय्या शास्त्री हैं। आप वीर संघके भी सभासद हुए। व्यायामशाला है परन्तु अभी बंद थी। मासिक खर्च करीब ४००) है जो शेठ वर्द्धमानय्याजी देते रहते हैं। एक भी विद्यार्थी पेड नहीं है। शेठजी इतने विद्याप्रेमी हैं कि कुल खर्चा आप ही चलाते हैं परन्तु अभी स्थायी फंड नहीं निकाला है जिसके होनेकी अतीव और शीघ्र आवश्यकता है। लायब्रेरी, वाचनालय भी है तथा साप्ताहिक सभा भी होती है। इस बोर्डिंगका कार्य देख कर हम दोनोंको अतीव आनंद हुआ। यहांके विद्यार्थी बहुत मिष्ट भाषी हैं। गवर्नमेंट ओरियन्टल लायब्रेरी देखी। इसमें ६००० ताडपत्रके ग्रन्थ हैं जिसमें करीब (१००) जैनग्रन्थ हैं। जो कोई ग्रंथ देते हैं उनको लेकर सुरक्षित रखते हैं। ताडपत्रोंके ग्रन्थ संस्कृत, प्राकृत, कनडी, तेलगु भाषाके तथा कानडी, देवनागरी, तामील आदि लिपिके हैं जिसमें ६० अलमारियें हैं। यहां हस्तलिखित और मुद्रित कुल ग्रन्थ करीब ३०००० हैं। अलग २ १०-१५ पंडित बैठे हुए थे। कोई संशोधन करता था, कोई कापी करता था, कोई बांचता था, कोई प्रूफ देखता था, तो कोई अनुवाद कर रहा था। संस्कृत जैनग्रन्थकी कापी हो रही थी। भट्टारकंक कविकृत कर्नाटकी शब्दानुशासन (भाषा मंजरी) व्याकरण मुद्रित देखा। केशराज प्रणीत व्याकरण देखा। ग्रन्थोंकी सूची भी मिलती है। पं० दयाचंद्र शास्त्रीजी, पं० नाथूराम प्रेमी आदि पंडितगण यहां जाकर कुछ दिन ठहरें और सभी जैन ग्रंथोंका निरीक्षण करें तो कई अर्जन ग्रन्थोंका पता लग सकता है। अभीसे देखने और बांचने देते हैं। आरसु (राज्यकीय) बोर्डिंग स्कूल देखा। २७ वर्षसे राज्यकी ओरसे चलती है। १५० क्षत्री लड़के रहते और पढ़ते हैं। मिडल अंग्रेजी तक शिक्षा होती है, और हाई स्कूलमें जाने वालेको स्कालरशिप देते हैं। वार्षिक खर्च २०००) है, व्यायामशाला भी है, टोर्चिंग एक्जामिनिंग यूनिवर्सिटी भी देखी, न्यू युनिवर्सिटी इंग्लिश लायब्रेरी भी देखी। इसमें ५००० पुस्तक हैं, संस्कृत कालेज भी है, जिसमें २०० विद्यार्थी पढ़ते हैं, और १०० को भोजन मिलता है, महारानी फिमेल कालेज, स्त्रियोंका बोर्डिंग हाउस आदि और भी बहुतसी संस्थायें हैं, जिनका निरीक्षण समयाभावसे नहीं कर सके। सारांश कि यह शहर विद्याका उत्तम केंद्र और रमणीक स्थान है। हरएक यात्रीको म्हैसूरका निरीक्षण अवश्य करना चाहिये। यहांसे ता० १७की दुपहरको चलकर मंदगिरी स्टेशन शामको पहूंचे और वर्षा होनेसे वहां रातभर रहना पड़ा और सुबह यहांसे १२ माईल बैल गाड़ीमें चलकर ता० १४-४-१९ दुपहरको १२ बजे श्री **श्रवणबेलगोला (गोमटस्वामी)** पहूंचे।

(अपूर्ण)

|| श्रीवीतरागाय नमः ||

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततास्, दैगम्बरं जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १२ वाँ.	वीर संवत् २४४५. भाद्रपद. विक्रम सं० १९७६.	अंक ११.

दशलक्षण धर्मकी लावनी।

(ले०-पं० गौरेलाल जैन-कटनी)

है दशलक्षण व' धर्म परम सुखकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥टेक॥
जे गाली देत अजान कोधमें आके ।
तिन हृदय नहीं कुछ ज्ञान सुनो चित लाके ।
ये अशुभ कर्मके योग देत दुःख आके ।
उनसे मत कीजे द्रोह क्ष धर्म आके ॥
झेला-सुन प्यारे यह क्रोध महा दुखदानी ।
सुन प्यारे यह क्रोध करे बहु हानी ॥
सुन प्यारे धर क्षमा भाव सुख दानी ।
सुन प्यारे यह क्षमा धर्मकी खानी ॥
कीजे समता रस पान यही हितकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

*　　*　　*

यह मान महा दुख खान, नर्क पहुंचावे ।
तू तन धन यौवनका क्या जोर जनावे ?
जैसा पूरब भव किया तू वैसा पावे ।
मत कर घमंट क्यों नाहक दुर्गति जावे ॥
झेला-सुन प्यारे रावणने मान जनाया ।
सुन प्यारे वो मर कर नर्क सिधाया ॥
सुन प्यारे तज मान महा दुखदाई ।
सुन प्यारे भज मार्दव गुण सुखदाई ॥
वर कोमल सुधा सुपान सर्म दातारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

*　　*　　*

कोईके साथ मत कपट फन्द फैलाओ ।
जो मनमें होवे वचन उसे फरमाओ ॥
जो करना तुमको उसे साफ बतलाओ ।
छल कर क्यों नाहक परके प्राण सताओ ॥
झेला-सुन प्यारे नहि दगा किसीसे कीजे ।
सुन प्यारे परिणाम सरल निज कीजे ॥
सुन प्यारे छलकर विष बंधन कीजे ।
सुन प्यारे जिन मारगमें चित दीजे ॥
छल कपट त्याग भज आर्जव गुण सुखकारी ।
ताको निज शक्ति समान करो नर नारी ॥

*　　*　　*

मत बोलो झूठे बैन मनुष तन पाके ।
नहिं पावोगे दुःख अधिक नर्कमें जाके ॥
सत वचनोंमें हो लीन कहूं समझाके ।
जामें तेरा यश रहे जगतमें छाके ॥
झेला-सुन प्यारे सत वचनोंमें लव लाना ।
सुन प्यारे नहि झूठ वचन बतलाना ॥
सुन प्यारे वसु भूप झूठ वच द्वारा ।
सुन प्यारे वो मरकर नर्क सिधारा ॥
सत वचन बोल नारद गयो स्वर्ग मझारी ॥ताको

तज लोभ पापका मूल महा दुखदाई ।
संतोष सुधा कर पान महा सुखदाई ॥
जो जप तप संयम शील ध्यान शुभ ध्याता ।
सो सदा शुद्ध पापादिक मैल बहाता ॥
झेला–सुन प्यारे गंगा जलमें नित न्हाया ।
सुन प्यारे नहि पाप मैल धुलि पाया ॥
सुन प्यारे सात धातुमय काया ।
सुन प्यारे मुनि यासे नेह हटाया ॥
तज अशुचि भाव कर **शौच** सुगुणसे यारी॥ताको

* * *

मन जीवमात्र पर करुणा भाव विचारो ।
पाचों इन्द्री वश करो कषाय निवारो ॥
धर संयम मन वच विषय भोगको टारो ।
फिर पूर्वोपार्जित पाप क्षिणकमें जारो ॥
झेला–सुन प्यारे ये विषय भोग दुखदाई ।
सुन प्यारे नहि इनसे करो मिताई ॥
सुन प्यारे धर संयम व्रत सुखदाई ।
सुन प्यारे यह भव भव केर सहाई ॥
है **संयम** रतन अमोल करो रखवारी॥ताको॥

* * *

ये अष्टकर्म बलवान सताते सबको ।
यथा इन्द्र चन्द्र अहमिन्द्र रुलाते सबको ॥
अब आयो उत्तम दाव तुम्हारो सबको ।
ताते करो तपु धर्म मिले सुख तुमको ॥
झेला–सुन प्यारे तू बसो निगोद मझारा ।
सुन प्यारे फिर धारा त्रस तन धारा ॥
सुन प्यारे अब लिया मनुष अवतारा ।
सुन प्यारे तप साध होय निस्तारा ॥
है द्वादश जाके भेद मोक्ष करतारी ॥ताको॥

* * *

यह पूर्व पुन्य संयोग लक्ष्मी पाई ।
ताको निज शक्ति समान खर्चिये भाई ॥
औषधि श्रुत अभय आहार जिनागम गाई ।
ये दान चार चहु संघको दीजे भाई ॥
झेला–सुन प्यारे धनको विश्वास न कीजे ।
सुन प्यारे परमार्थमें व्यय कीजे ॥
सुन प्यारे नित दान चार विध दीजे ।
सुन प्यारे यह त्याग धर्म गह लीजे ॥
यह **त्याग** धर्म अति पर्म सर्म दातारी॥ताको

* * *

बहुधा परग्रहको भार महा दुखदाता ।
नित चिन्ता पावक देह लहे नहि साता ॥
संतोष धार नहि तृष्णा प्यास बुझाता ।
फंस कर परिग्रहके फन्द धर्म बिसरता ॥
झेला–सुन प्यारे परिग्रहकी संख्या कीजे ।
सुन प्यारे नहि उससे अधिक गहीजे ॥
सुन प्यारे **आकिंचन** व्रत धर लीजे ।
सुन प्यारे मन वच तृष्णा तज दीजे ॥
कर परिग्रहको परिमाण मिले सुख भारी ॥ताको॥

* * *

है शील शिरोमणि रतन जगतमें खासा ।
कर ताकी रक्षा मिले मुक्तिका वासा ॥
तज परभामिनका साथ महा दुखदाता ।
दृढ़ ब्रह्मचर्य व्रत पाल धर्मका नाता ॥
झेला–सुन प्यारे एक भवन सेठ व्रतधारी ।
सुन प्यारे नहीं हरी मंजूषा नारी ॥
सुन प्यारे तब धरत दृष्टि निहारी ।
सुन प्यारे तिन पाई मार अपारी ॥
फिर प्रकट भयो व्रत पाल धर्म सुखकारी ॥ताको॥

* * *

यह पाकर नर भव अनूप सफल करनाजी।
उत्तम क्षमादि दश धर्म हृदय धरनाजी॥
भगवन्त श्री अरहंत–भक्ति करनाजी।
पर निज आतमका ध्यान कर्म हरनाजी॥
झेला–सुन प्यारे अब मूलचंद समझाते।
सुन प्यारे अब **गोरेलाल** छंद गाते॥
सुन प्यारे हम विनय एक फरमाते।
सुन प्यारे त्रुटियां सब माफ कराते॥
यह रचा सहजपुर स्थानमें स्वपर हितकारी॥
ताको० ॥

મેવાડા (ભટેવરા) જ્ઞાતિને સુચના.

ગુજરાતના મેવાડા બંધુઓને જણાવવાનું કે આપણા પૂર્વજો મેવાડ દેશના ભટેવરા ગામથી કઇ સાલમાં અને કેવા સંજોગોમાં અહીં આવ્યા, અહીં આવતા અગાઉ વચ્ચે વચ્ચે કયાં કયાં આપણા લોકોએ નિવાસ કર્યો, અત્રે આવી કયા કયા ગામોમાં પ્રથમ રહ્યા, ત્યાર બાદ કયે કયે સ્થળે વસ્યા, દશા અને વીસા એમ બે ભેદ શાથી અને કયા આચાર્યના વખતમાં પડયા, સોજીત્રા અને અંકલેશ્વરના મેવાડા બંધુઓને સંબંધ હતો કે નહીં, મેવાડાના ગોત્ર કેટલા અને કયાં કયાં ગોત્રનો મુળ પુરૂષ કોણ હતો, કયા આચાર્યે ગોત્ર સ્થાપ્યાં, આપણી ઉત્પત્તિ વૈશ્યમાંથી કે પછી બીજી કોઇ કોમમાંથી થઇ વગેરે હકિકતનો સંપૂર્ણ હેવાલ પ્રગટ થવાની જરૂર છે, તો જણાવવાનું કે જો કોઇ વિદ્વાન મેવાડા ભાઇ યા અન્ય કોઇ ઉપરની હકિકત ખુલાસાવાર લખી મોકલશે તો તેને ઈનામ રૂ. ૨૫) હમારા તરફથી આપવામાં આવશે, તો સ્વાર્થ સાથે પરમાર્થનું કામ સમજી ઇતિહાસજ્ઞ બંધુ ખોજ કરી મને લખી જણાવશે તો ઉપકાર થશે.

મોહનલાલ મથુરાદાસ
કાણીસા (ખંભાત.)



ब्रह्मचारी भगवानदीनजी

पाठकोंको मालूम होगा कि ब्र० भगवानदीनजी पानीपतमें भाषण देनेके सम्बन्धमें पुलिस द्वारा गिरफ्तार किये गये थे। अब उनपर करनालके मजिस्ट्रेटकी अदालतमें आपत्ति जनक बातें भाषणमें कहनेके कारण मुकदमा चल रहा है। भगवानदीनजीकी तरफसे श्रीयुत बाबू अजितप्रसादजी एम० ए०एल०एल०बी० वकील लखनऊ और दयालराम मुख्तार करनाल पैरवी कर रहे हैं। भगवानदीनजीपर जिन बातोंके कहनेके कारण यह राजनैतिक अभियोग लगाया गया है वह ऐसी ही हैं, जैसे "रौलेटबिलसे पुलिसके कान्सटेबिलको गिरफ्तार करनेके सब अधिकार मिल जाते हैं, इस समयसे मुगल साम्राज्यके समय प्रजा अधिक सुखी थी, भारतवर्षका व्यापार अंगरेजोंने नष्ट कर दिया आदि।"

ब्र०भगवानदीनजी देश हितैषी और धर्मात्मा पुरुष हैं। आपने जैन जातिकी सेवा करनेके लिये नौकरी छोड़ दी और अपने बालबच्चोंका मोह त्याग दिया। जाति सेवा ही इनका एक व्रत है। सरकारके विरुद्ध हमने इनको कभी नहीं सुना यह एक राजभक्त गृहत्यागी ब्रह्मचारी थे और इनका जीवन धार्मिक जीवन है। उधर पं० अर्जुनलालजी सेठी बी. ए. को जेलमें हद्दसे

हुए और इधर इनार इस प्रकारका मुकदमा होता देखकर जैन समाजको बहुत आश्चर्य और दुःख हो रहा है। सरकारकी जैन समाजके नेताओं उपदेशकोंकी ओर वक्रदृष्टि देखकर बड़ी चिन्ता उत्पन्न होगई है। यदि सरकारने सेठीजीकी तरह ब्रह्मचारी भगवानदीनजीके साथ भी उचित न्याय—दूधका दूध पानीका पानी न किया तो जैन समाजमें और असंतोष फैलेगा। जैन वकीलोंको चाहिये कि करनाल जाकर अपने एक जातिहितैषीको संकटसे मुक्त करावें। संभव है यह मामला अधिक दिन तक चले और द्रव्यकी अधिक आवश्यकता पड़े। यद्यपि अभीतक भगवानदीनजीकी ओरसे समाजसे किसी प्रकारकी सहायता नहीं मांगी गई है पर समाजका कर्तव्य है कि इस मामलेकी पैरवीके लिये हर प्रकार तैयार रहे। दुर्भाग्यसे यदि भगवानदीनजीको मजिस्ट्रेटकी अदालतसे सजाका हुक्म हो गया तो अपील हाईकोर्ट तक ही नहीं किन्तु प्रिवी कौंसिल तक करनी चाहिये। यह मामला केवल भगवानदीनजी तक ही सम्बन्ध नहीं रखता है किन्तु इसका सम्बन्ध कुल जैनसमाजसे है इसलिये सर्व प्रकारका भेदभाव मिटाकर भगवानदीनजीके मामलेकी अन्त तक पैरवी कर न्याय प्राप्त कराना चाहिये।

* * *

सारे जैन समाजमें अंग्रेजी भाषामें प्रकट होनेवाला मासिक पत्र जैन गजट। सिर्फ 'जैनगजट' ही था जो कि १५ वर्ष हुए प्रकट होता था परन्तु उसके संपादक बाबू अजिततप्रसादजी वकील एम. ए. एल एल. बी. लखनऊके बनारस चले जानेसे आपने ६ माहसे बंद कर दिया था परन्तु हमें लिखते अत्यंत हर्ष होता है कि जैनगजट विशेष समय बंद नहीं रहा और एक नहीं परन्तु तीन संपादकोंके संपादनसे फिर प्रकट होने लगा है जिसका प्रथम अंक जुलाई माहका हमें प्राप्त हुआ है। संपादकोंके नाम बेरिस्टर मि. जुगमंदिरलाल जैनी एम. ए., बाबू अजितप्रसादजी वकील (५६ दुर्गा कुंड बनारस) और **सी. एस. मल्लीनाथ**, २१ पेरोश वेंकट चार, आयर स्ट्रीट, ज्योर्ज टाउन, **मद्रास** हैं। श्रीयुत मल्लीनाथजीके ही विशेष परिश्रम और अर्थ व्ययका ही यह फल है कि जैन गजटका पुनर्जीवन हो सका है और बाबू अजितप्रसादजी तथा बेरिस्टर साहबने लेखादि भेजना स्वीकार किया है। यह अंक ३४ पृष्ठका १२ लेखोंसे सुसज्जित है जिसमें The under currents of Jainism, Jains and the Tamil Literature, Pandit Ajitprasadji's letter, Ancient J. Indian culture आदि लेख पढ़ने योग्य हैं। संपादकीय नोट भी मार्केके हैं। खेद है ऐसे एक ही अंग्रेजी पत्रकी ग्राहक संख्या बहुत ही कम है इस लिये अंग्रेजी पढ़े लिखे जैन भाइयोंका फर्ज है कि इस मासिकपत्रके ग्राहक अवश्य हो जिससे कि संपादकोंका उत्साह कार्य करनेमें बढ़े। वार्षिक मूल्य सिर्फ २) है। मिलनेका पता मद्रास Madras ही है।

* * *

जैन सिद्धांत प्रकाशक। जैन सिद्धांतोद्धारक समाजसेवक बाल ब्रह्मचारी पं० पन्नालालजी बाकलीवाल कई वर्षोंसे कलकत्तेमें हैं और वहां शुद्ध प्रेस भी खोला है जिससे कई जैन ग्रन्थ सानुवाद प्रकट हुए हैं और होने वाले हैं परन्तु इसके साथ २ एक महत्वका कार्य करनेका आपने साहस किया है वह आदरणीय है। बंगाल प्रांत बहुत बड़ा है इससे बंगाली भाषा और लिपि जाननेवाले भी बहुत हैं तथा बंगाली साहित्य भी सब भाषाके साहित्योंसे प्रथम पंक्ति पर है और बंगाल प्रांतमें सत्य धर्मके खोजी भी बहुतसे विद्वान् मौजुद हैं जिनको जैनधर्मका परिचय करानेकी परमावश्यकता है इस लिये पंडितजीने बंगाली भाषामें " जैन सिद्धांत प्रकाशक " नामक मासिक पत्र निकालनेके लिये पत्रोंमें अपील की है। जिसमें दर्शाया है कि इसके दो वर्षके घाटेके लिये कमसे कम १९००) की आवश्यकता है जिसकी पूर्ति १००) या ५०) दो वर्षके लिये श्रीमानोंसे प्राप्त होनेसे हो सकती है। इसमें अब तक ६०६) भरे गये हैं और विशेषकी आवश्यकता है जिस पर हम श्रीमानोंका ध्यान आकर्षित करते हैं। यदि आश्विन मास तक सहायता पूरी न होगी तो पंडितजी हताश हो कर आये हुए रु. वापिस करनेवाले हैं इस लिये श्रीमानोंका फर्ज है कि इस कार्यके लिये पंडितजीको १००) या ५०) भेजनेका तुर्त ही वादा करें। पता इस प्रकार है—जैन सिद्धांत प्रकाशिनी संस्था, नं. ८ महेंद्र बोसलेन, बाग बाजार, कलकत्ता।

उत्तमक्षमा। हमारा सर्वोत्तम पुण्यपर्व श्री दशलाक्षणपर्व सानंद पूर्ण हुआ है और बहुतसे स्थानोंपर यह पर्व विशेष रूपसे व्यतीत हुआ है जिसमें मुनिश्री चन्द्रसागरजी कई बहिनो तथा भाईयोंने एक माहके उपवास भी किये थे। धर्मके दशलक्षणोंमें सर्वोत्कृष्ट धर्म श्री "उत्तमक्षमा" है और हमारे सभी भाई इस पर्वके बाद परस्पर उत्तम क्षमाकी याचना करके वर्ष भरमें किये गये अपराधोंकी क्षमा मांगते हैं। तथा स्नेही संबंधियोंसे भी पत्रद्वारा उत्तम क्षमाकी याचना करते हैं। हमारे कार्यालयमें भी बहुतसे स्नेहियोंके क्षमापणके पत्र आये हैं उन सबको पृथक् २ उत्तर लिखनेको हम लाचार हैं इसलिये इस पत्र द्वारा ही 'दिगम्बर जैन' के वाचक वर्गसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हुए निवेदन करते हैं कि एक पत्रकारका कार्य ऐसा है कि सत्य हाल लिखनेसे या सत्य निवेदन करनेसे कई भाइयोंको बुरा लगता है परन्तु पत्रकारका तो यह फर्ज है कि निडर होकर पक्षपात रहित संपादन कार्य करना चाहिये और ऐसा करनेसे हमारेसे जो कुछ भी कटु शब्द वर्ष भरमें लिखे गये हो और जिससे किसीका मन क्लेशित हुआ हो तो हम उसके लिये उन भाइयोंसे उत्तम क्षमाकी याचना करते हैं और हम यही चाहते हैं कि आत्माका मूल स्वभाव उत्तम क्षमा रूप ही है इसलिये हमारे पाठकोंमें भी उत्तम क्षमा धर्मका वास ही अहर्निश हो जिससे कि संसारमें सुख और शांतिकी स्थापना हो। तथास्तु।

ईडरगढना मंदिरनो

जीर्णोद्धार.

ઇડર શહેર ગુજરાતમાં આરાવલીની ઉપત્યકામાં છે. ઇતિહાસથી આ નગર ઘણું જુનું હોય તેમ લાગે છે. પ્રથમ અહિંયાં દિગંબર જૈન ધર્મની પ્રભાવના સારી હતી અને જૈનીઓની સંખ્યા ઘણીજ હતી. આ દેશથીજ દક્ષિણ, મેવાડ આદિ દેશોમાં હુમડ ભાઇઓ ગયા છે તે પ્રસિદ્ધ છે. ઇડરના પર્વતના શિખર ઉપર એક ભવ્ય દિગંબર જૈન મંદિર છે. આ મંદિર ઘણું જુનું અને અતિશયવાળું છે અને અત્યારે આ મંદિર અત્યંત ભગ્નાવસ્થામાં જીર્ણ શીર્ણ થઇ રહેલું છે. વરસાદના દહાડાઓમાં પ્રતિમાજી ઉપર પાણી પડે છે અને તે નીવ (મૂળ) માંથી સાંધા બધા ખરી ગયા હોય તેમ છે, આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર હાલ ન થાય તો અલ્પકાળમાંજ નામ શેષ થઇ જવાનો સંભવ છે.

આ મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર પ્રથમ બે ત્રણવાર થયેલો છે. સંવત ૧૨૦૫ ના ફાગણ વદ ૨ ના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર થયો હોય તેમ આ મંદિરમાં સ્થિત કાયોત્સર્ગ એક પ્રતિમાથી અંકિત થાય છે. બીજી વખતે ભટ્ટારક વાદીભૂષણજીએ ૧૬૫૧ માહા સુદ ૫ના દિવસે જીર્ણોદ્ધાર કરાવ્યો હતો. આ મંદિર પત્થરોથી મજબુત બાંધેલું હોવાથી અત્યાર સુધી અસ્તિત્વ ધરાવે છે, પણ હાલમાં એની અવસ્થા અતિશય જીર્ણ શીર્ણ છે અને એનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવાની ખાસ જરૂર છે.

નવીન દેહેરાસર કરાવવા કરતાં જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવવો તે શ્રેષ્ટ છે. વળી જુના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધારથી દિગંબર જૈનધર્મના પ્રાચીનતાના ચિન્હો અસ્તિત્વમાં રહેશે.

વર્તમાન સમયમાં દિગંબર જૈનધર્મનાં કંઇ પણ પ્રાચીન ચિન્હો છે તો શાસ્ત્ર, જિનપ્રતિમા અને જિનાલય છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં કહેલું છે કે—

निरालम्बस्यं धर्मस्य स्थितिर्यस्मात्ततः सतां ।
मुक्तिप्रासादसोपानं, आप्तैरुक्तो जिनालयः॥

અર્થ—જીન મંદિરોથી ધર્મની સ્થિતિ રહેલીજ છે તેમ મોક્ષનો માર્ગ જિનાલયજ છે.

આ મંદિરના જીર્ણોદ્ધાર માટે કારીગરોની સલાહ લેતાં એમ જણાય છે કે તેમાં ઓછામાં ઓછા રૂ. ૫००००) થશે, માટે સર્વ દિગંબર જૈન ભાઇઓને નમ્ર પ્રાર્થના છે કે પોતાનાં કમાયેલા શુભ દ્રવ્યનો ઉપયોગ જે કોઇ ભાગ્યશાળી કરશે તે મહાન પુણ્ય અને યશના ભાગી થશે.

જે સદ્‌ગૃહસ્થો અથવા બ્હેનો પોતાના નામ આવા શુભકાર્યથી અમર કરવા ઇચ્છતા હોય તેમને અમો નમ્ર વિનંતિ કરીએ છીએ કે જે રૂ. ૩०१) આપશે તેમના મુબારક નામની તકતીઓ સદરહુ દેહેરાસરની ડેવડી ઉપર ચોંટાડવામાં આવશે. અને જે રૂ. १०००) ની રકમ આપશે તેમના મુબારક નામની તકતીઓ દેહેરાસરના સભા મંડપમાં લગાવવામાં આવશે અને જે મૂળ ગભારાઓનો આરસ પાથરશે તથા વેદી પબાસણ વીગેરેનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવશે તેમના મુબારક નામની તકતીઓ પબાસણો ઉપર લગાડવામાં આવશે.

જે ભાઇઓને આ કાર્યમાં દાન કરવું હોય તેમ પત્રવ્યવહાર કરવો હોય તે નીચેને સરનામે લખવો—

१. લલ્લુભાઇ લક્ષ્મીચંદ
સરાફ બજાર, મુંબાઇ.

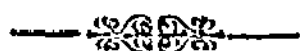
२. દોશી પદમશી જીવતદાસ
ઇડર (મહીકાંઠા).

ભાઇઓના સેવક—
નન્દનલાલ જૈન વૈદ્ય.

उदैपुरके मेलेका नेता अभीतक मालूम नहीं हुआ है। वीर कार्यालयने प्रतिज्ञा की है कि जब तक पता मालूम न होगा मैं विरार पत्री न लूंगा।

गुजाती है, जमा बराबर नहीं है। कमेटीने रायदेशके पंचों समक्ष भट्टारकजीके हिसाबमें गफलत सुनाई और यह प्रस्ताव रक्खा कि महाराज एक रायदेशका दि० जैन भाईको मुनीम रखे परन्तु सुनते हैं कि सावली टप्पाके भाइयोंने इसका भी विरोध किया था।

समाज सेवी-नंनलाल जैन, ईडर।





खंडवा-के बाबू गुलाबसा कचरुसाने ८०००) की जायदाद वहांकी जैन पाठशालाको दी है।

अलीगढ़-में आसोज सुदी १५ से वदी ४ तक रथोत्सव होगा।

चातुर्मास-ब्रह्मचारी सुखानंदजीने महमूदाबादमें, ब्र० सुवानीलालजीने बारा सिवनीमें और ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजीने सतना (रीवां) में चातुर्मास किया है। कुंवर साहबने सतनामें एक सभा स्थापित की है जिसमें व्याख्यान करना सिखाते हैं।

मुनिश्री-चंद्रसागरजीने पारोदा (पो. गढी, बांसवाड़ा) में चातुर्मास किया है। आपने एक माहके उपवास आनंद एवं ध्यानपूर्वक पूर्ण किये हैं। दर्शनाभिलाषी उदयपुर, सलूंबर और मंदसोर तरफसे आ रहे हैं।

बागड़में विद्यालयकी स्थापना-श्रीमान् ब्र० शीतलप्रसादजीने बागड़में बागीदोरामें चातुर्मास किया है और आपके प्रयत्नसे बांसवाड़ामें विद्यालय और बोर्डिंग खोलनेका निश्चय हुआ है। इसके लिये बना बनाया अपना मकान और २७१९०।-) नगद रा. सा. सेठ विनयचंद चंपालालने दिये हैं। विद्यालयका नाम 'रायसाहब सेठ विनयचंद दिगंबर जैन बागड़ प्रांतीय विद्यालय और बोर्डिंग' होगा। इसमें मुख्यतासे संस्कृत और धर्मकी शिक्षा तथा गौणतासे लौकिक शिक्षा भी दी जावेगी। अभी २० अनपढ और २० पढ विद्यार्थी लिये जावेंगे। पेढसे सिर्फ ५) मासिक फीस लेवेंगे। सभापति सेठ विनयचंदजी, मंत्री दोशी जीवराजजी बागीदोरा, उपमंत्री धनराजजी तलवाडा और अधिष्ठाता पं. बुद्धचंदजी लश्कर निवासी नियत हुए हैं। विद्यालय खोलनेका मुहूर्त आसोज सुदी १५ गुरुवारको होगा जिस मौके पर बागड प्रान्तके सभी दि० जैनोंको प्रवेश कराने योग्य लडकों सहित अवश्य पधारना चाहिये।

बांसवाड़ामें-ब्र० शीतलप्रसादजीके पधारनेसे दो आम सभाएँ हुई थी जिसमें ब्रह्मचारीजीने सच्चे सुखका उपाय और कन्याविक्रय निषेध पर प्रभावशाली व्याख्यान दिये थे।

स्वर्गस्थ हुए-फल्टन निवासी बाल ब्रह्मचारी बाबा दुलीचंदजी छबड़ा जो कई वर्षोंसे [illegible]में रहते थे और जिनकी उम्र करीब ८० वर्षकी थी, स्वर्गवासी हुए हैं। आपने [illegible]में एक सरस्वती भवन स्थापित किया था और अनेक ग्रन्थ भी लिखे हैं।

ईडरगढ़के दिगंबरी श्वेताम्बरी मंदिर।

दिगंबरोंकी प्राचीनता।

वादीभूषण कब हुए?

सुज्ञ विचारकवृंद! अभी थोड़े दिन हुए ईडरगढ़ (इल्वदुर्ग) के ऊपर श्वेतांबर भाइयोंने बावन जिनालयका जीर्णोद्धार कराया है, यह जीर्णोद्धार भारतके समस्तसंघसे कोष (फंड) एकत्रित्त करके कराया है इसी लिये इसकी रिपोर्ट हालमें प्रकाशित हुई है। रिपोर्टके देखनेसे यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि हमारे श्वेतांबर भाईयोंने यह-कार्य बड़ी योग्यता और विपुल-द्रव्य १०६४९५॥)४ खर्चकर महान पुण्य-का कार्य किया है, परन्तु इसके साथ रिपोर्टमें कई बातें नितान्त असत्य और हास्यास्पद लिख दी हैं। यद्यपि इन झूठी बातोंके प्रत्युत्तर लिखनेकी विशेष आवश्यकता नहीं थी क्योंकि इतिहाससे यह लिखना स्वयमेव ही विचारज्ञोंके हृदयमें असत्य और अप्रमाणित दीख रहा है तो भी हमारे श्वेताम्बर भाइयोंमें आज कल ऐसी धुन समाई है कि अन्यके तीर्थ और मन्दिरोंको अपनाने लगे हैं, पक्षपातसे सर्वत्र कलहके बीज बो रहे हैं। अस्तु, ये बातें इन लोगोंको ही शोभा देती हैं, परन्तु जिन२ तीर्थ और मंदिरोंकी बाबत ये लोग प्रमाण देते हैं वे बिल्कुल बनावटी और नितान्त झूठे होते हैं। श्रीसम्मेद शिखरके मुकद्दमेमें जो बाद-शाही फरमान पेश किया था वह कोर्टसे झूठ साबित हो गया। हालमें तारंगा पर्वतको अप-ना बताते हैं परन्तु वह भी अप्रमाणसा प्रतीत होता है। रासमालामें यह लिखा है कि तारं-गाजी पर कुमारपाल महाराजने अजितनाथका मंदिर बनाया उसके प्रथम भी वहां पर मंदिर थे अर्थात् दिगंबर मंदिर उससे प्रथमका बना हुआ था। इसी प्रकार सब जगह यही गड़बड मच रही है, समाजकी शक्ति क्षीण होती चली जाती है, साथमें वैमनस्य बढ़ता चला जा रहा है। अस्तु, हमारे भाइयोंको सुमति हो।

रिपोर्टकी भूमिकामें यह बावन जिनालय संप्रति राजाने विक्रम संवतसे प्रथम बनाया, और उसका जीर्णोद्धार सेठ बच्छराज १, कुमारपाल २, गोविंदराज ३ और चंपकशाह ४ ने अनुक्रमसे किया। अस्तु, जो कुछ भी हो, परन्तु 'महीकांठा मेन्युअल' यह लिखता है कि श्वेतांबर भाइयोंके मंदिरसे दिगंबर जैन मंदिर अतिशय प्राचीन है। इसी प्रकार रास-मालामें यह मंदिर कुमारपाल महाराजने बना-या लिखा है परन्तु सोमसौभाग्य काव्यमें इल्व दुर्गके वर्णनमें ईडरगढ़के शांतिनाथके मंदिर-का उल्लेख नहीं है। क्या उस समय यह मंदिर अस्तित्वमें नहीं था? जिस प्रकार श्री ऋषभदेवके मंदिरका वृत्तांत सोमसौभाग्य काव्य एवं अन्य प्राचीन पुस्तकोंमें मिलता है, इस प्रकार इन बावन जिनालयका उल्लेख नहीं दृष्टिपथ हुआ। देखनेसे यही प्रतीत हो-ता है। रासमालाकर्ता लिखता है कि "दुर्ग में जैनोंके दो मंदिर हैं उनमेंसे एक दक्षिण दिशावाला मंदिर जो टेकरी पर है अतिशय प्राचीन है, और दूसरा बड़ा मंदिर है,,।

अस्तु, दोनों मंदिरोंकी प्रतिमाओंके शिला-लेख देखनेसे भी दिगंबर प्रतिमा ही अतिशय प्राचीन ठहरती हैं।

ईडर-गुजरातमें अतिशय प्रसिद्ध प्राचीन शहर है। यहां पर दिगंबरजैन धर्मकी महिमा राजाओंके ऊपर प्रभाव डालनेवाली प्रसिद्ध थी। वर्तमानमें भी दिगंबर जैनोंकी वस्ती अधिक है। यहां पर षड्भाषाचक्रवर्ति-आध्यात्मकोविद-तार्किकसिंह श्रीसकलकीर्ति-शुभचंद्र-वादिभूषण-यशकीर्ति आदि बड़े २ प्रसिद्ध भट्टारक हो गये हैं जिनके बनाये हुए हजारों ग्रन्थ ईडर भंडारमें जीर्ण शीर्ण अवस्थामें अब भी मौजूद हैं। इन भट्टारकोंकी बृहत् पट्टावली अभी हालमें निकली है। इन लोगोंने क्या२ कार्य किये? कितने वाद जीते? कितने ग्रन्थ बनाये? इत्यादि बातोंका उल्लेख कुछ २ मिलता है। दुःखकी बात यह है कि आज तक हमारा इतिहास छिपा हुआ भंडारोंमें गुप्त बन्द रखा हुआ है। अतएव दिगंबर जैन धर्मकी महत्वता और उनके उच्च प्रभावशाली एवं चमत्कृत व यों ही आभा विश्व पर नहीं पड़ी। इसलिये कितने ही झूठे उपलंभ हमें हमारे अन्य भाइयोंसे सुननेके प्रसंग आये। एवं इतिहास दृष्टिसे भी दिगंबर जैन धर्मके नेताओंके प्रभावसे संसार वंचित रहा। ऐसा होनेसे जो देखनेमें आया या लोगा सुना वह साधारण जनताकी दृष्टिपथमें सत्य प्रतीत होने लगता है, धीरे २ वह बात दृढ़ हो जाती है और सत्य छिप जाता है। भारतवर्षके इतिहासके विषयमें भी यही विद्वानोंका मत है। अस्तु, इस रिपोर्टमें ईडरका संक्षिप्त इतिहास भी लिखा है। यह इतिहास कहां तक सत्य है यह पढ़नेसे विद्वानोंको स्वयमेव निश्चय हो जायगा। यद्यपि यह संक्षिप्त इतिहास एकपक्षीय दृष्टिसे लिखा गया है और राजप्रकरण रासमाला आदि ग्रन्थोंसे तुलना करते हुए यह सिद्ध करनेका ढंग रचा हैकि यह जो कुछ लिखा है वह सत्य है आत्म श्लाघा नहीं है। वाचकवृन्द इसका निर्णय स्वयं करें।

इस रिपोर्टमें एक स्थान पर "दिगंबर संप्रदायमां साधुओ तद्दन नग्न रहे छे. आजना जमानामां नग्नपणे विचरवुं महा कठिन होई तेवा साधुओ क्वचित जोवामां आवे छे, नग्न साधुओ-क्षपणको : दिने दिने उग्र विहार अने क्रियानी विकटताथी अविद्यमान थता गया, पण तेने बदले शिथिलाचारी भट्टारको थया। तेने वेशने लईने अगाउ रक्तांबरो कहवामां आवता"। उपरोक्त लेखमें लेखकने भट्टारक स्थापनके लिये जो युक्ति प्रदान की है वह असत्य है कारण भट्टारकोंकी उत्पत्तिमें यह कारण नहीं है किन्तु सन् १२९५ में आलमशाह-अलाउद्दीन बादशाहकी धर्ममें आस्था नहीं थी। इसकी सभामें राघो और चेतन दो ब्राह्मण भी थे जो कि नास्तिक मतके पक्षपाती मंत्रवादी तथा विद्वान थे। ये बादशाहके मनको और भी धर्मशून्य करते रहते थे। एक दिन उन्होंने बादशाहको बहकाया कि सर्व धर्मोंकी परीक्षा होनी चाहिये। जो सत्य ठहरे उसके सिवाय सबको मुसल्मान बना दिया जावे। बादशाहने देहलीमें आज्ञा दी

कि सर्व अपने २ गुरुओंको लेकर आवें नहीं तो हमारा मुसलमानी धर्म स्वीकार करना पड़ेगा। उस समय मुनिवर महावसेन (महासेन) अपने तपोबलसे एक रात्रिमें ही संघ सहित गिरनार पर्वतसे आकाश मार्गसे देहली आये। और श्मशानमें सर्पदंशसे मूर्छित बालकको अपनी तपोमहिमासे सजीवन किया एवं उक्त दोनों मंत्रवादी ब्राह्मणोंने मंत्रोंसे अनेक कौतुक दिखलाये। एक समय उक्त द्विज पुत्रोंने मंत्रके प्रभावसे मुनिके कमण्डलुमें मछली कर दी और श्रीमुनिवर महासेनकी परीक्षा ली, तो मुनिवरकी तपोमहिमासे कमण्डलुमें पुष्प मालिकायें होगई। इसलिये बादशाह प्रभृति समस्त नगर कौतुकान्वित होगया फिर तो अपमान क्लेदित उक्त दोनों ब्राह्मण पुत्रोंने मुनिवरके साथ वाद किया और पराजित हुए, जिससे बादशाहने जैन दिगंबर मुनिवरकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की और धर्मपर दृढ़ प्रतीति हुई, हिंसाकर्म राज्यमें बंद कराये और भी इन मुनिवरने चमत्कार बतलाये जो कि ईडर भंडार गुटका नं० ७ के लेखसे स्पष्ट मालूम होता है। बादशाहकी बेगमको मुनिके दर्शनकी प्रबल इच्छा हुई तो बादशाहने मुनिवरसे प्रार्थना की तो विवश हो मुनिने वस्त्र धारण किये। तबसे ही भट्टारक स्थापित हुए ऐसा लेख और दंतकथाओंसे मालूम होता है। ये भट्टारक शिथिलाचारी और क्रियाहीन नहीं होते थे किन्तु विद्वान् और सदाचारी होते थे। यह उनकी अपरिमित ग्रन्थावलिसे प्रत्येक सुज्ञ जान सक्ते हैं। अस्तु, ये भट्टारक पद कोई मुनिपद नहीं है किन्तु ग्रहस्थाचार्यका पद है। ग्रहस्थ उपयोगी आवश्यक परिग्रहको रखते हुए धर्मरक्षा करते हैं। देखो जिनसंहितामें भट्टारक लक्षण—

सर्वशास्त्रकलाभिज्ञो नानागच्छाभिवर्धकः।
महामना प्रभाभावी भट्टारक इतीष्यते॥

आगे चलकर लेखकने एक अद्भुत समस्या लिखी है। वह यह है:—

ईडर पुराधिप महाशय श्रीनारायण सभा समक्ष वादिभूषण क्षपणक निराकरिष्णूनां वागडदेशे घाटिल नगरे योधशूरपति रायमलदेव भ्रातव्य सहस्रमल राज्ञः पुरः पत्रावलंबन पुरसरं क्षपणक भट्टारक गुणचन्द्रनयिनां इत्थं प्रकारक प्रवचन प्रभावना समुत्सर्पेण विधिवेधसां महोपाध्याय श्री ९ श्री शांतिचंद्रगणिपादानां चरणाम्बुजभृंगायमाण गणि लालचन्द्रेण लेखि मुनि लाभचंद्र पठनार्थं" साथमें कुलव्वजरासका भी उल्लेख दिखाया है।

इस लेखमालाके सत्यासत्यका निर्णय तो विद्वान पाठक करेंगे तो भी सत्य घटनाकी सूचना करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं।

प्रथम तो उक्त लेखकी सबूतीमें लेखकने रासमालाके ६५६–६५७ पृष्ठ दिये हैं। रासमालामें यह बात कहीं भी नहीं लिखी है। हां नारायणराव (द्वितीय) के राज्य कालका वर्णन है परन्तु रासमाला ६५६–६५७में यह वृत्त नहीं है। लेखकने किस ढंग और धोखेसे लेख मिलाया है। उसका नमूना देखने योग्य है।

"शांतिचंद्र उपाध्याये ईडरगढना महाशय श्री नारायणनी सभामां त्यांना दिगम्बर भट्टारक वादीभूषणनी साथे वाद करी तेने पराजित कर्या हता, नारायणदासे जे वंडमां मदद करी हती ते वंड अकबरे जाते चढ़ीने उतारी बेसाड़ी दीधुं"

इन वाक्योंका संबंध भी तो नहीं मिलता। इस प्रकार एक प्रकरणमें दूसरा प्रकरण बेप्रसंग बनावटी लिखना कितना हास्यास्पद है? भला रासमालाके पृष्ठ झूंठ मूंठ धोखा देनेको ही लिखे थे क्या? यद्यपि ये बातें रासमालासे नहीं मिलतीं तो भी वादीभूषण कब हुए? और उनका शांतिचंद्रके साथ विवाद हुआ या नहीं? इस विषयके ऊहापोहमें इतना ही लिखना अधिक समझते हैं कि नारायणराव ईडरमें शाह अकबरके अंत समयमें राज्यासन अलंकृत करते थे। देखो रासमाला पृष्ठ ६४०–६९७ तक। अस्तु, इतिहासज्ञोंसे अकबर बादशाहका समय छिपा नहीं है। सन् १५७२में (रासमाला पृष्ठ ६९६) अकबर बादशाहने वंड जीत कर लिया। नारायणराव सन् १५७३में हारे और छिप कर पोलका आश्रय लिया और बीरमदेवको राज्य शासन मिला। तत्काल पुत्र और पिता दोनों अकबर बादशाहके दरबारमें गये और बीरमदेवने सभा सिंहको पकड़ कर बता दिया; बादशाह प्रसन्न हुए, वीरमदेव स्वदेश आये कि पिता (नारायणराव द्वितीय)का स्वर्गवास हो गया। (देखो रासमाला पृष्ठ ६९८)।

रासमालाके आधारसे नारायणराव सन् १९७० या १९७८में पंचत्व हो गये। अर्थात् नारायणका राज्य काल सन् १५१०–१५७३ तक रहा।

अब **वादीभूषण कब हुए**, कौन थे, उनने कौन कौन कार्य किये, कितने वाद जीते, कितने ग्रन्थ बनाये? इन विषयोंका नीचे प्रमाणोंसे बहुत कुछ निर्णय हो जायगा।

सलूंबर नगरमें संवत १६६४में वादीभूषणने सीताहरणरास लिखा है। ईडरगढ ऊपरके दिगम्बर जैन मंदिरमें कुछ प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा की है। उनका संवत् १६६१ माघ वदी ९ लिखा है। श्री केशरियाजी धुलेव रिषभदेवके मंदिरमें महान धूमधामसे संवत् १६६८में माघ सुदी ९को प्रतिष्ठा कराई थी। श्री वादीभूषणने श्री केशरियाजीके मंदिरका भी उद्धार उसी समय कराया था। पुनः पुनः लगातार कई बार केशरियाजीमें रह कर प्रतिष्ठा कराई। वादीभूषण महाराजने सं. १६९२में श्री तारंगाजी पर प्रतिष्ठा कराई और पद्मप्रभुकी प्रतिमा नानचंदजी....से हुई, यह प्रतिमा खंडित अभी तारंगामें मौजूद है। ईडर संभवनाथके प्रसिद्ध मंदिरमें सं. १६६१ ६४–६८में प्रतिष्ठा कराई और जीर्णोद्धार कराया। ईडरके पार्श्वनाथके मंदिरमें सं. १६६९में पद्मप्रभुकी प्रतिष्ठा कराई और इसी वर्ष स्वर्गारोहण हुए। वादीभूषणका जन्म अनुमान सं. १६३५ में हुआ और ये जयपुरके रहनेवाले खंडेलवाल वंशके शिरोमणि थे। संवत १६५०के लगभग भट्टारकका पद सुशोभित किया। सं. १६६१में ईडरके गढके ऊपरके मंदिरमें प्रतिष्ठा प्रथम कराई। जिसका लेख—

संवत १६५१ वर्षे माघ वदी ५ सोमे श्री मूल-संघे श्रीभट्टारकगुणकीर्ति तत्पट्टे भट्टारक श्री वादी-भूषण गुरूपदेशात् ईडर (इलर) वास्तव्य हुमड़ दोशी आसा भार्या लक्ष्मी सुता वाई झिलां श्री नेमिनाथं प्रतिष्ठितं नित्य प्रणमति।

उक्त प्रतिमाओंके लेखसे वादीभूषण १६५० से १६६९ तक भट्टारक पदको सुशोभित करते रहे। इन लेखमालाओंसे तो नारायण-रावका वादीभूषणके समयमें अस्तित्व नहीं था किंतु वीरमदेवका शासन था, पाठकगण स्वयमेव ही विचार कर सक्ते हैं। तो उक्त रिपो-र्टमें शांतिचंद्र उपाध्यायने वादिभूषणको नारायण-रावकी राजयसभामें परास्त किया-यह लिखना कितना असंगत प्रतीत होता है। और रास-मालाका प्रमाण दिया वह भी रासमालामें नहीं मिला। श्री विजयकीर्ति भट्टारक सं. १५६८ में विराजमान थे उनके पीछे शुभचंद्रजी हुए। यह भट्टारक न्याय शास्त्रके अद्भुत ज्ञाता थे। इन्होंने १६ वाद बनाये और पूजन आदिके ग्रन्थ बनाये एवं न्यायके अनेक ग्रन्थ बनाये हैं। इनका विशेष वर्णन पुनः लिखा जायगा। शुभचंद्रके पट्टपर सुमतिकीर्ति, सुमतिकीर्तिके पट्ट पर गुणकीर्ति और गुणकी-र्तिके पट्टाधिकारी वादिभूषण थे।

(देखो माणिकचंद जीवनचरित्र पृष्ठ ३१)

श्री वादिभूषणके पट्टाधिकारी रामकीर्ति (द्वितीय) सं. १६७०में विराजमान हुए और उन्होंने वादीभूषणके विषयमें अनेक प्रशस्ति लिखी हैं। पाठकोंके अवलोकनार्थ कुछ यहां पर देना अनुचित नहीं होगा—

तरगदपंकजविकाशनपद्मबंधुः।
जीयात्कुवादिमुखकैरवपद्मबंधुः॥
कवियाकुरुकृतिमिरनाशनपद्मबंधुः।
वादिभूषण गुरुर्जित पद्मबंधुः॥
यो नानागमशब्दतर्कनिपुणो मान्यैर्नृपैः पूजितः।
कर्णाटे कलिकालगौतमसमो भट्टारकाधीश्वरः॥
वादेऽनेकजिता कुवादिगणितो रत्नत्रयालंकृतः।
श्रीमान् शुभचन्दवद्विजयते श्रीवादिभूषो गुरुः॥२॥

अर्थात् आचार्य वादिभूषण गुणकीर्तिके पट्ट-पर असाधारण प्रतिभाशाली, न्यायशास्त्रमें अतिशय निपुण, अनेक मान्य नृपतियोंसे पूजित, अनेक आगमको जाननेवाले और कर्णाटक प्रभृति देशोंमें अनेक विद्वानोंको पराजित करने-वाले, गौतम समान तेजस्वी, यथार्थ नामवाले अर्थात् वादियोंमें भूषण (शिरोमणी) वादिभूषण गुरु विजय प्राप्त करो। गुटका नं. ८ पृष्ठ २३८ में वादिभूषणके लिये यह लिखा है—

पाट महोत्सव घर २ जय बोलो, वादीचंद गुरु गछ सोहाकर भावो। साह वीरा तन यात वीरुप्यन जन मन मोहन पुत्र पामो। वंश हुमड़ (यहां पर हुमड वंश लिखा है) सु तिलक सोहित जिनमति गुन गावो। कुअर (आसोज) सुदानणी (सुदी) पचम (५) महाव्रत दीक्ष धरावो। जीता अनेक वादिगण जेने अद्भुत विद्य धरावो। तर्कशितके विचार विचक्षण लक्षण वादीद्र मंड्या॥

इस गुटकेमें अनेक जगह वादिभूषणके वाद जीतनेके गीत लिखे हैं। लेख बढ़ जानेके भयसें नहीं लिख सके।

दुर्वादिमदसंहर्त्ता वादे येन पराजिता
.... श्री वादिभूषो गुरुः
कुनयकोटि कुजपाटन पटुत्तममर्दित दुर्मतवादि
स्याद्वादनय तर्पित अनेक भविमन संचार।
न्यायनिगम अध्यात्मचंद्र तर्कागम घोषित निर्नाद
(वीरम) देव नृपति पूजित श्रीवादिभूषण जीते वाद

इत्यादि अनेक प्रशस्ति मिलती हैं। वादिभूषणने कौन २ से ग्रन्थ निर्मापित किये यह विशेषतासे भंडार खुटने पर प्रसिद्ध किये जायंगे।

उपरोक्त प्रशस्तिसे शांतिचंद्र उपाध्यायका वृत्त ठीक नहीं प्रतीत होता है। अस्तु जो हो, एक तो समयमें महान अंतर है, द्वितीय अपने आप दंत कथा रूप प्रशस्ति पर विश्वास प्रतीत नहीं है। उक्त लेखमें रक्तांबर क्षपणक शब्द आये हैं। रक्तांबर और क्षपणक शब्दोंका अर्थ बुद्धके यति होता है। भट्टारकोंको क्षपणक नहीं कहा जाता और न प्रसिद्ध है। शब्दचिंतामणि नामक कोशमें क्षपणकका अर्थ पृष्ठ ३६९ में "बौद्धमतनो दिगम्बर साधु" ऐसा लिखा है और बौद्धगुरु प्रायः रक्त वस्त्र पहनते थे। शायद शांतिचंद्र उपाध्यायने कोई वादिभूषण बौद्ध साधुको पराजित किया हो। परन्तु उसका उल्लेख रासमालामें नहीं है। दूसरे उक्त लेख प्रमाण नहीं होनेका एक दूसरा भी कारण है वह यह है कि उक्त लेखमें (पृष्ठ ४८) ऊपर लिखा है":-

वादिभूषण शिवाकरिन्दूनां वागन्देवे पाट-शिलानां श्रीभूपति रायमल देव प्रत्यक्ष सार-सभास्थ वादः पुर क्षपणक पुरःसरं रक्तांबर क्षपणक दुर्धर कृता।

यह तो संस्कृतमें लेख है और भाषा मूल रासकी पुस्तकमें "वादिभूषण दिगंबर मोती पाम्यो जय जयकार रे"

मूल ग्रन्थमें केवल वादिभूषणको मोता लिखा है और उस ग्रन्थकी प्रशस्तिमें गुणकीर्तिको भी मोता लिखा है। प्रशस्ति ठीक है या मूल ग्रन्थ यह तो पाठक निर्णय करें; परन्तु एक बड़े मजेकी बात तो यह है कि वादिभूषणके गुरु गुणकीर्ति थे। क्या गुणकीर्तिके पट्टाधिकारी होने पर भी वादिभूषण पट्ट पर बिराजमान हुए? यह बिलकुल सफेद झूंठ है! इस प्रकार लेखकको ऊटपटांग लिखना अच्छा नहीं है।

रिपोर्टमें रणमल्लकी चोकीवाले दिगम्बर जैन मंदिरको अपनानेके लिये भी उल्लेख किया है परन्तु प्रमाण कुछ भी नहीं। केवल राज्यतंत्रसे संबंध मिला कर धृष्टताका दृढ साहस किया है। उक्त मंदिरमें वर्तमानमें भी जैन दिगम्बर मूर्ति भग्नावस्थामें मौजूद है। साक्षात् हरण करना यह कैसी कुचाल? अस्तु यह मंदिर दिगम्बर जैनोंका है और उसके अनेक कारण तो मंदिरके देखनेसे ही प्रतीत होते हैं। हम भाइयोंको सचेत कर शांतिकी प्रार्थना करते हैं। हो सका तो ईडरका सच्चा इतिहास भाईयोंकी सेवामें पुनः उपस्थित करूंगा।

शोधक—

नन्दनलाल जैन वैद्य विशारद।

महासभाके नाम
खुली चिट्ठी।

श्रीयुक्त महामंत्री, दिग० जैन महासभा, सादर जुहारु। अपरंच समाचार यह है कि महासभाकी सीमा कहां तक है? इसमें क्या सभी प्रकारके दिगम्बर जैन शामिल हो सक्ते हैं? क्योंकि महासभा विधवाव्याहको बुरा अवश्य ही समझती है और उसका कर्त्तव्य भी है कि इसके अनुसार वह उसका खंडन करे और जो लोग विधवाव्याह करते कराते होवें उनको महासभामें सम्मिलित न करे और यदि सम्मिलित होवें तो उन्हें पृथक् कर देवे क्योंकि यदि वह निरंतर खंडन न करेगी और उन लोगोंको शामिल रखेगी तो शास्त्री पंडितजनोंके कथनानुसार वह विधवाव्याहकी पक्षपातनी हो जावेगी। इस हिसाबसे यदि वह विधवाव्याह करने करानेवालोंको पृथक् करेगी तो दक्षिण प्रांतका एक बहुत बड़ा भाग (सेतवाल, पंचम, चतुर्थ, कासार आदि जातियां जिनमें सैकड़ों वर्षोंसे यह प्रथा प्रचलित है) महासभासे पृथक् हो जावेगा और फिर यह महासभा केवल उत्तर प्रांतीय रह जावेगी कारण कि वे लोग अब तो इस प्रथाको बंद कर ही नहीं सक्ते हैं। यदि कोई कदाचित अपना निजी सम्बन्ध ऐसा न करे तो समाजसे पृथक् कर नहीं सक्ता है,

अब ऐसी दशामें महासभा महासभा नहीं कही जा सक्ती है और न वह समस्त दिगम्बर जैनियोंकी ओरसे उत्तरदायित्व रख सकेगी। इसी प्रकार तीर्थक्षेत्र कमेटीकी कार्रवाई भी एक देशीय ठहरेगी और बड़ा भारी झगड़ा खड़ा हो जावेगा क्योंकि तीर्थक्षेत्र कमेटी महासभाकी शाखा है। उसके भी वे ही उद्देश्य हैं जो महासभाके हैं इत्यादि।

यदि महासभामें दक्षिण प्रांतीय भाई शामिल हो सक्ते व हैं और वह समस्त भारतवर्ष व समस्त दिगम्बर जैनी मात्रकी है, तो वास्तवमें महासभा है।

अब प्रश्न यह होता है कि जब महासभामें समस्त दिगम्बर जैनी जिनमें विधवाव्याह करनेवाले भी हैं शामिल हैं और हो सक्ते हैं तो **वीरसंघ** पर क्यों ऐसी शंका की गई कि वह विधवाव्याहका यदि खंडन नहीं करता तो उसका पक्षपाती है। यदि यह कहा जाय कि महासभा ऐसे झगड़ालू विषयोंको हाथमें न लेकर वह परस्पर अविरोधी बातोंको लेकर संगठित हुई है तो ठीक है और इसी प्रकारसे कार्य चल सकता है कारण कि यदि पृथक् २ विचारों वालोंके अनुसार महासभाके विभाग होंगे तो वह फिर महासभा न रह जायगी। कारण कि कोई शुद्धाम्नायी, कोई तेरापंथी, बीसपंथी, छापा पंथी, हस्त लिखित पंथी, विधवा विवाहके विरोधी और पक्षपाती इत्यादि अनेक भेदवाले भी सामान्य धर्म अपेक्षा मिलकर कार्य कर सक्ते हैं और विशेष धर्मापेक्षा पृथक् ही हैं।

यदि इसी प्रकार **वीर संघ** भी सामान्य प्रकार परस्पर विरोधी बातोंको स्थान न देता

हुआ और अपने नियमोंके अनुसार (जिनमें कि पाक्षिक श्रावककी योग्यता बताई गई है) भर्ती करता तो क्या हानि थी ? हमारी समझमें तो जितने लोग शामिल होते वे सब सप्त व्यसन त्यागी, नशा त्यागी, देव धर्म गुरुके (दिगम्बर जैन सिद्धान्तानुसार) अनुयायी तथा किसी एक भाषाके जानकार इत्यादि, वढ़नेमें लाभ ही था, फिर न जाने क्यों उदयपुरमें पंडित खूबचन्दजी शास्त्री, पं० नन्दनलालजी, बाबा भागीरजी वर्णी, ब्र० ज्ञानानंदजी आदिने इकदम वीर संघ पर प्रबल आक्रमण किया ? क्या इन्होंने संघका कोई कार्य अनुचित देखा था ? जबकि उसकी सभी कार्रवाई महासभासे प्रतिकूल नहीं थी तो इस प्रकारसे उसपर आक्रमण करना, उसे धर्मघातक बताना सर्वथा अन्याय है। क्या महासभा व्यसन त्याग, नशा त्याग, पढ़ना, पढ़ाना, देव धर्मगुरुके श्रद्धान आदि जो कि वीर संघके नियम व उद्देश्योंमें हैं बुरा समझती है ? या कोई भी नियम उसका महासभाके प्रतिकूल है तो प्रगट करना चाहिये; क्योंकि वीरसंघ **किसीको भी धोखेमें डालना नहीं चाहता है।** हम चाहते हैं कि आप कृपा करके हमारी इस चिट्ठीका उत्तर किसी जैन पत्रमें प्रगट कर देवेंगे कि ये संघको क्या समझते हैं और महासभामें इसलिये ये भाई भी शामिल हैं व हो सकते हैं या नहीं जिनमें विषय व्याह मनाते हैं ! इस चिट्ठीके लिखने और उत्तर मांगनेकी आवश्यकता यों हुई कि जिनके अदेनसका भाव [illegible] लोग यत्र तत्र चिट्ठियां वीरसंघके विरुद्ध भिन्न भिन्न पर लोगोंको भड़काते हैं। हम उनकी इस कार्रवाईको अनुचित समझते हैं। ऐसा कुलियामें गुड़ फोड़ना अन्याय और डरपोकपन है, जो कुछ भी कहना होवे खुलासा प्रगट ही कह कर उत्तर लेना ठीक है। आशा है कि आप अवश्य ही महासभाके महामंत्रीकी हैसियतसे उत्तर प्रकट करेंगे। आपका—

उपमंत्री, वीरसंघ।

रक्षा-बंधन-स्फोट.

(जैन मित्रनी पहेलीनो विस्तारथी जवाब)

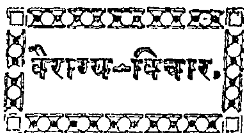
दोहरो.

વાસી શહેર ઇંદોરના, નામ છે મુન્નાલાલ,
પહેલી લખી નિજ જ્ઞાનથી, અર્થ લખું છું હાલ.
વસ્તુ તેનો એજ છે, શ્રાવણ સુદી માંય,
પુર્ણીમા જે હોય છે, હર્ષ ઘણેરો થાય.
અક્ષર તેના પાંચ છે, પ્રગટી વિષ્ણુ કુમાર,
સાતસો મુનિનો ટળ્યો, ઉપસર્ગ તે વાર.
ત્રીજ બીજ અરૂ પ્રથમથી, અક્ષર થાયે રૂપ,
તીર્થ પવિત્ર તે જાણીએ, પૂજે મોટા ભૂપ.
બીજા અને પહેલા થકી, ક્ષાર બને શુભ નામ,
વૈદ્ય જન ઉપયોગમાં, આવે હરનિશ કામ.
પંચ ક્ષાર જણો વળી, ગુણ જેના છે અપાર,
આપે તે આરોગ્યને, કહી દઈ નિરધાર.
પહેલા બીજાથી બને, રક્ષા શબ્દ એક,
ક્ષત્રિયોનો ધર્મ છે, એમાં મીન ન મેખ.
ત્રીજા ચોથાથી બને, બન્ધ શબ્દ નિરધાર,
સપ્ત કર્મમાં જાણીએ, ચોથે બંધનું નામ.
દૂર થાય જો આત્મથી, થાય પવિત્ર તમામ,
શુદ્ધ બને પરમ આત્મા, ધ્યાન ધરે આનન્દ.
કર્મ બન્ધ દૂરે કરી, સાધે સિદ્ધ સ્વછન્દ,
ચોથા પંચમ સંગથી, થાવે મનનું નામ.
લક્ષ્મી કોષ કહે વળી, કે દોલતનું નામ,
ધન જો પામે હોય તે, હોય સુખ અપાર.
એમ કોઈ માને વળી, કહ્યા છે નિરધાર,

નિર્ધન જે વિદ્વાન છે, કરે ન ગણતી કોય.
નિજ કન્યા દેવે નહિ, એ ધનનો મહિમાય,
ધનના મિથ્યા ગર્વથી, પ્રાપ કરે બહુ વીધ.
ગુણવંત સર્વને દેખીને, ગર્વ ધરે અઘટીત,
નિર્ધન તે ધન કારણે, કરે વિક્રય ન્યાય.
આપે વૃદ્ધ કે બાળને, ધન માટે કન્યાય,
વાત વિચારે તે નહિ, કે પુત્રીને દુઃખ.
સ્વ સુખ આપ વિચારીને દે પુત્રીને દુઃખ,
એવા જનને આપશે, નિજ પુત્રીઓ શ્રાપ.
મરજો સ્વાર્થી તે જનો, દુષ્ટ તેહ માબાપ.
અશુભ કૃત્ય તે આદરે, છોડી નિજનો ધર્મ.
જાણુ થયે તે આપશે, વૃદ્ધ પતિને મર્મ,
આ જન્મે દુઃખ લે.ગવી પુત્રી પિતા સંઘાથ
અંતે નરકે તે જશે, દુઃખ ભોગે અસહાત.
અહો જૈની વિચારીને કૃત્ય એહથી આજ,
સુખ પુત્રીનું ધારીને, દેજો યોગ્ય વર સાથ.
ઉપરના શબ્દોથી બને, નામ જે એક પ્રકાર,
રક્ષા બંધન નામ છે. ઉંચ નીચ તહેવાર.
મુળ પર્વ જિન ધર્મનું, કહ્યું છે શાસ્ત્રોમાય,
અલ્પ બુદ્ધિ હું શું કહું, પાળો ભવી સુખ હોય.
પૂર્ણ પહેલીની કરી, જૈન મિત્રને કાજ,
કહે સુબાળક જૈન યહ, વંદી શ્રીજિનરાજ. ×

સાહિત્ય સેવક—દુઃખી હૃદય.

× વીર સંવત ૨૪૪૩મા જૈન મિત્રમાં રક્ષાબંધન મેંને પહેલી અર્થાત્ સમસ્યા દહોરા નિવાસી સુન્દરલાલ જૈન તરફથી પૂછેલી, તેનો ઉત્તર મેં હિંદીમાં લખી મોકલેલી, તેનું ગુજરાતી ભાષાંતર ઉપયોગી જાણવાથી લખી મોકલ્યું છે



(લેખકઃ—એક દુઃખી હૃદય)

ગતાકથી ચાલુ.

સ્થળ—બજાર—ચોક.

પાત્રો—કોટવાલ, ધનદત્ત શેઠ, યશપાલ શેઠ, સિપાઇઓ અને પાછળથી સચીવ સહિત નરપતિ (રાજન)

(કોટવાલ ધનદત્ત તથા યશપાલને પકડી બજારમા થઇ ન્યાય મંદિર તરફ લઇ જાય છે. રસ્તામાં મધ્ય ચોકમા આવતા કોટવાલ ધનદત્તને ઉદ્દેશી કહેવા લાગ્યો)

કોટવાલ—કેમ શેઠ, આપ સમજુ થઇ પરાયા માણસને બિભત્સ શબ્દોથી અપમાન આપો તે સારૂં કહેવાય કે?

ધનદત્ત—સાહેબ, આ માણસ (યશપાલ શેઠ) પરાયા નથી, પણ મારા વેવાઇ અને વળી જ્ઞાતિના છે, તેથીજ આટલાથી માંડી વાળવું પડ્યું છે, નહિ તો ક્યારનોએ યમભટનનો રસ્તો બતાવી દીધો હોત.

યશપાલ—(ધનદત્તના વજ્ર પ્રહારોથી ક્રોધ કરી) હવે બસ? જોયો છે મોટો મારકણીયાનો છોકરો છું તે મારાથી કંઇ અજાણ્યું નથી. જો હવેથી એક પણ શબ્દનો ઉચ્ચાર કરીશ, તો જોયા જેવું થશે.

(યશપાલના આ જવાબથી ધનદત્ત ખીજવાઇ ગયા અને યશપાલને મારવા દોડ્યા તેમજ કેટલીક અઘટિત ગાળો પણ દઇ વાળી.)

(કોટવાલે પોતાની હયાતિમા તકરાર થતી અટકાવતાં ધનદત્ત શેઠને એક ફટકો લગાવી પોલીસને હવાલે કર્યો.)

(એટલામાજ તે નગરનો રાજા ત્યાં આવી ગયો.)

નૃપતિ—અરે રત્નસિંહ (કોટવાલનું નામ)! આ ઉચ્ચ ગણાતા શ્રેષ્ઠીગણોને કેમ બંધનયુક્ત સ્થિતિમાં ઉભા રાખ્યા છે?

ધનદત્ત—હા.મહારાજ, કોટવાલ સાહેબ નાહકના હમારી ઇજ્જત પર પાણી ફેરવવા પ્રયાસ કરે છે.

રત્નસિંહ—હવે બેસ ઇજતના ખાં! એક અક્ષર પણ બોલો તો આ દંડકાનો ભોગ થવું પડશે.

હજુર, આ સૃષ્ટિમાંથી આ ધનદત્ત શેઠે પોતાની આઠ વર્ષની પુત્રી આ યશપાલ શેઠના પચાસ વર્ષના પુત્ર સાથે પરણાવવા ઠરાવ કર્યો અને તે આ દુષ્ટ હૃદયના અને કુળવાનનો ડોળ કરનાર યશપાલ શેઠે મંજુર રાખ્યો અને લગ્ન દિવસ પણ મુકરર કર્યો, પરંતુ કોણ જાણે કે શાથી તે લગ્ન જ્ઞાતિના પંચોને અઘટિત લાગ્યું, જેથી તેઓએ બંને શેઠને બોલાવી એ સંબંધ તોડી નાંખવા સુચવ્યું, પરંતુ આ દુષ્ટ હૃદયના સ્વાર્થાંધ યશપાલે તેમ સત્યવાનનો ડોળ કરનાર ધનદત્તે માન્યું નહિ, જેથી જ્ઞાતિવાળાએ દિલગીર થઇ ઉભય (બંને) ને જ્ઞાતિમાંથી બહિષ્કાર કર્યા.

જ્ઞાતિ પંચમાંથી ઘેર જતાં ઝવેરીચોકમાં ઉભય સામસામી ગાળોનો વરસાદ વરસાવતા હતા, ત્યાં હજારો મનુષ્યોની ઠઠ જામી હતી અને વૃદ્ધ વણિકોનું વૃદ્ધ લગ્ન સ્થાપિત સંભાષણ સાંભળતા હતા તેજ અરસામાં યશપાલ શેઠને વૃદ્ધાવસ્થા હોવા છતાં એકાએક ક્રોધ ચઢી આવ્યો અને તેમને લાકડી ઉપાડવાની મનની ઇચ્છા ઉત્પન્ન થઇ અને ધનદત્ત શેઠને એક સપાટો લગાવી પણ દીધો, જેનાથી તેમની પાઘડી જમીનદોસ્ત થઇ ગઇ અને તેઓ પણ જમીન દોસ્ત થતા બચી ગયા. આ બનાવ મારી હાજરીમાં બનેલો હતો, જેથી મારી પોલિસની ફરજ અદા કરવાના પ્રતાપથી મેં બંનેને શાંત પાડ્યા, પણ તેની કંઇ અસર થઇ નહિ, જેથી નિરૂપાયે મારે કોટવાલી નિયમને માન આપી બંધન યુક્ત કરવા પડ્યા અને તેમને તેજ સ્થિતિમાં હું આપ શ્રીની હજુરમાં લાવેલો છું. હવે આપ યોગ્ય ન્યાય આપો.

ધનદત્ત—મહારાજ, હું પસ્તાઉં છું, પણ હવે સુવા પછી ડહાપણ શા કામનું? બાપજી, હું ગરીબ માર્યો જાઉં છું. મને આપ એવો રસ્તો બતાવો કે-મારી પુત્રીનું લગ્ન પણ થાય અને જ્ઞાતિવાળા મારા તરફ રહેમ રાખે.

યશપાલ—મહારાજ, બધી વાત ખરી પણ-મારા પુત્રના નિમિત્તની કન્યા બીજે આપી શકાશે નહિ. એકને માટે નિર્માણ કરેલી કન્યા બીજાને આપવી એ મહા અધર્મ ગણાય.

બાપજી, મારે આટલે એંશી વર્ષે વંશ જશે. તેનો વિચાર કરી મારા પુત્રનું લગ્ન થાય તેમ બતાવોજી.

નૃપતિ—શેઠીયાઓ, મને ઘણી દિલગીરી થાય છે કે-ભારતવર્ષમાં હિંદુઓની ચાર વર્ણો પૈકી ઉચ્ચ વૈશ્ય અર્થાત્ વાણીયા કે-જેઓ વંશ પરંપરાથી જ્ઞાન પામેલા અને વિચાર પૂર્વક કામ કરવાવાળા છે, જેઓ અગમ બુદ્ધિવાળા કહેવાય છે, વળી તેમાં પણ તમે તો વીર પ્રભુના સેવકો એટલે કે શ્રાવક અર્થાત્ જૈન ધર્મનું અવલંબન કરવાવાળા છો, હિંસાના પરિત્યાગી છો, અહિંસા ધર્મના પ્રચારક છો, પ્રાણી માત્ર પર દયા કરનારા કહેવાઓ છો, તો તમેજ જ્યારે આમ તમારાં પુત્ર પુત્રી પર દયા ખાતા નથી, પુત્ર પુત્રીના ભવિષ્યનો વિચાર બાંધતા નથી, તેમ જ્ઞાતિના નિયમોને પણ પાળતા નથી, તો પછી તમે શ્રાવક શાના? તમે અહિંસા પરમો ધર્મ: પાળવાવાળા શેના? વળી બતાવો કે-તમારા કયા શાસ્ત્રમાં આઠ વર્ષની પુત્રીને પચાસ વર્ષના વૃદ્ધ ખખ્ખર સાથે પરણાવવા આજ્ઞા છે? વળી બતાવો કે-તમારા કયા શાસ્ત્રમાં આવાં અયોગ્ય લગ્નો તોડાય નહિ, એમ લખ્યું છે.

શાસ્ત્રમાં તો એમ ખાસ લખેલું છે કે-વિવાહ કર્યા પછી વર દેશાંતર ચાલ્યો જાય ને ત્રણ વર્ષ સુધી ખબર કાઢે નહિ તેમ નપુંસક થઇ જાય, અંગહીન થાય, રોગી થઇ જાય, યા કુળવાનની સાથે સંબંધ કર્યો હોય અને નીચ નિકળે તો, એ સંબંધથી વર કન્યા ઉભય બંનેને નારાજ હોય

તો પંચને જણાવી વિવાહ ભંગ કરવો અને બીજે યોગ્ય સ્થળે લાયક જોડાથી સંબંધ બાંધવો.

વળી બતાવો કે તમારા કયા શાસ્ત્રમાં સામસામી ગાળાગાળી ટંટા કરવાનું બતાવ્યું છે. ઉલ્ટું તમારા શાસ્ત્રોમાં તો દુનિયાના સર્વ જીવો સમાન છે, જેથી એકમેકથી સલાહસંપથી વર્તવું અને કોઇની પણ લાગણી દુખાય એ શબ્દ-એ ાર્ય કરવું નહિ, એમ બતાવેલું છે.

મને કહેતાં પણ શરમ આવે છે કે-તમારા જેવા શ્રીમંત અને જ્ઞાનવાળા વૈશ્યો જ્યારે આમ નિર્દય અને ઘાતકીપણું બતાવી પોતાનાં સંતાનોના મુખ પર શલ્યા મુકશે, તો બિચારા ગરીબ અને બુદ્ધની તો વાતજ શી કે જેને સારાસારનો વિચાર નથી, જે પોતાનાં સંતાનોને યોગ્ય જોડાંથી વિભૂષિત કરે છે. તમોને જરા પણ શરમ આવે છે કે-તમારું શ્રાવકનું કર્તવ્ય શું અને તમો કરો છો શું ?

છપ્પા.

શ્રાવક તેનું નામ, જગે જે સત્ય અનુસરતા,
શ્રાવક તેનું નામ, દિલથી હિંસા ત્યજતા.
શ્રાવક તેનું નામ, ચોરી નહિ મુદ્દલ કરતા,
શ્રાવક તેનું નામ, પરસ્ત્રી દૂરથી ત્યજતા.
વળી શ્રાવક તેનું નામ છે, જે ગુણિકા નવ રાખતા;
નિજ ધર્મ કાર્યે દઢ રહી, સત્ય પંથે મ્હાલતા.

(૨)

શ્રાવક તેનું નામ, દાન કન્યાનું કરતા,
શ્રાવક તેનું નામ, સંતતિ સુખને ધરતા.
શ્રાવક તેનું નામ, પુત્રીનું ધન નવ લેતા,
શ્રાવક તેનું નામ, નીતિને પંથે પળતા.
વળી શ્રાવક તેનું નામ છે, જે ઐક્ય હિત રાખતા;
વૃદ્ધ લગ્નને બાળલગ્ન, દુ-ર-થી પરિત્યાગતા.

(શાર્દૂલ વિક્રિડીતમ)

એવા શ્રાવક વંશમાં નિપજ્યા, નેમી પ્રભુ કૃષ્ણને.
આવો ભીમ યુધિષ્ઠિર નૃપ વળી, લોકો પૂજે વીરને.
વળી મન્છી સમ હેત ભાવ ધરતા, બહુ થયા ધાર્મિકો
આચાર્યો જિનસેન કુંદ જનમ્યા, જેના થયા શ્રાવકો.

(વસંત તિલકાવૃત્તમ)

રૂડે સુવંશ પ્રગટી જગમાં નરો જે,
અર્પી જીવન નિજતણું જગમાંહી પ્રેમે;
મેલી ફરીથી સુકીર્તિ જગમાંહી જેણે,
પાયે નમું લળી લળી દીલથી હું તેને.
કર્મો તણો જય કરે જિન નામ કહાવે,
જેનો સુવંશ જગમાં જનને દીપાવે;
જેના સુપંથમાં જન શિવ જાયે,
સ્વર્ગો તણાં સુખથકી વધુ સુખ જ્યાં હે. ૨

એજ ખરા શ્રાવક છે અને એમના પ્રમાણે તમે વર્તન સુધારો અને ભવિષ્યમાં તમારી પ્રજા-તમારી સંતતિનું શ્રેય ઇચ્છો. બાળલગ્નથી તમને, તમારી જ્ઞાતિને, તમારા સમાજને અને તમારા દેશને સુદ્ધાંત નુકશાન છે. વૃદ્ધલગ્ન અને કજોડાંથી પણ તેમજ છે.

વળી તે દુષ્ટ પ્રથાઓના પ્રતાપે પતિ પત્નિને સામસામી અણગમો ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનાથી બંનેને પ્રેમ જામી શકતો નથી. તેમજ તેમના પ્રેમનો આખરે અંત આવે છે અને તેમ કરવા જતાં વખતે એકાદ દંપતિના સૌભાગ્યને પણ હાનિ પહોંચે છે. શેઠિયાઓ ! પ્રેમ ત્યાંજ સુખ અને પ્રેમ તેજ સંસાર સાગરમાંથી પાર કરવાવાળી વસ્તુ છે. જેમ ઇશ્વર પ્રત્યે પ્રેમ કરવાથી, તેના ચિદ્રૂપ સ્વરૂપનું ધ્યાન કરવાથી અને આત્માનું શોધન કરવાથી આ જીવ સંસારનાં તુચ્છ સુખોનો ત્યાગ કરી પરમ દૈવિક અને અલૌકિક સુખનો સ્વાદ કરવા આગળ વધે છે. અને અંતે તે સિદ્ધ ભૂમિને પ્રાપ્ત થાય છે, તેવીજ રીતે પતિ પત્નિને સામસામી પ્રેમ થવાથી સંપૂર્ણ સુખનાં ભોક્તા થઈ અંતે મનુષ્ય દેહનું કલ્યાણ કરે છે.

તમારી જ્ઞાતિ-તમારા ધર્મ સંબંધે વધુ હું જાણતો નથી, પણ મને આશા છે કે આટલેથીજ તમારું મન તમારાં સંતાનોના ભલા તરફ ઉતર્યુ હશે.

શેઠિયાઓ, માનો ને સીધે રસ્તે કામ ચલાવો, નહિ તો આખરે નિરૂપાયે હમારે ન્યાયના બંધારણમાં ઉતરી અમલને રસ્તે દોરાવું પડશે.

ધનદત્ત—મહારાજ, મ્હારે હવે મારી કન્યા યશપાલના પુત્ર અરે ! વૃદ્ધ સમાન તે શેઠીયા સાથે પરણાવવી નથી, પણ યશપાલ મારા સામે અદાલતે દોડે તેનું શું કરૂં, જેથી ડરનો માર્યો હા, હા, કરૂં છું, બાકી વિવાહ કર્યો ત્યારે તેમના પુત્રને જોયા સિવાય-પચીસ વર્ષનો જાણીનેજ વિવાહ કરેલો, પણ પછી ચાલીશ વર્ષની વાત જાણવામાં આવી, ત્યારથી મારૂં મન ઉદાસજ રહેતું હતું, પરંતુ ગ્નાતિના બંધારણને લીધે ઈલાજ હતો નહિ, જેથીજ લગ્ન દિવસ મુકરર કરતા સુધીનો વખત આવી પહોંચ્યો. બાપજી; તમે કહો તેમ કરૂં.

(આનંદપુર નગર સાત લાખ માણસની વસ્તીવાળું આબાદ શહેર હતું. તેમ ત્યાં તે શેઠીયાઓની નાતનાં ૨૦૦૦ ઘર હતાં જેથીજ સામસામી પિછાન ઓછી હતી.)

નૃપતિ—શેઠ, તમારે નિશ્ચિંત રહેવું. હું હજુ એક વખત યશપાલને સમજાવી જોઉં, પછી તેનો રસ્તો કરતાં શું પડે. કેમ યશપાલ શેઠ, તમે આ વિવાહ ફોક કર્યાનો કરાર ધનદત્ત શેઠને લખી આપો છો કે નહિ ?

યશપાલ—સાહેબ, ગમે તો મારી તમામ મિલકત નાશ પામે યા હું અને મારા પુત્રો નાશ પામીએ, પણ તે વાત મારાથી બનવાની નથી. મહારાજ, બેઅદબી માફ કરશો ?

નૃપતિ—શેઠ, માનો, હજુ માનો અને ધનદત્તની નિર્મળ બાળાને શિરથી ગંભ્યતા રૂપી બધા પાઠી લઇ સ્યા અને એમાંજ તમો સુખી થશો. તમારા જેવા નીચ પુરૂષોએજ બાળલગ્ન અને વૃદ્ધલગ્નની પ્રથા ઘુસાડી દીધી છે, પણ જોઉં છું કે તમારો વિચાર કેટલે સુધી પાર આવે છે.

યશપાલ—મહારાજ, અમારી જ્ઞાતિઓની તકરારમાં રાજાએ વચ્ચે પડવું એ ન્યાય વિરૂદ્ધ ગણાય છે. કોઇના ધર્મમાં-કોઇના વ્યવહારમાં રાજાએ હાથ ઘાલવો જોઇએ નહિ.

રાજા—પ્રજાની સુખાકારી જાળવવી એ રાજાનો ધર્મ છે અને તેથીજ મેં જ્ઞાતિ-સુધારણા નામનો નવો નિયમ પસાર કર્યો છે અને કેવળ હુકમ પસાર પણ કરી દીધો છે તે તેમોને ખબર નહિ હોય. ભલે ખબર ન હોય પણ અત્યારનાજ મારા હુકમને માન આપી તમારે ધનદત્તને કરારનામું લખી આપવું પડશે.

યશપાલ—મારાથી મારી ઇજ્જતને ખલેલ કરનાર કોઇપણ કાર્ય થઇ શકશે નહિ, તેમ કરારનામું પણ લખી શકાશે નહિ.

નૃપતિ—(ક્રોધ કરી) અરે રત્નસિંહ! આ દુષ્ટ વણિક સમજાવ્યો સમજે તેમ નથી, તેને એકદમ લોહબંધથી બંધનયુક્ત કરી દરબારગઢમાં હાજર કરો (એટલું કહી રાજા નગરચર્યાર્થે ચાલી નિકળ્યો.)

(રાજાના ગયા પછી કોટવાલે પોલિસને યશપાળને દરબારગઢમાં સખ્ત પેહેરા સહિત લઇ જવા ફરમાવ્યું અને ધનદત્તને તેમની પુત્રી માટે યોગ્ય વર શોધવા કહ્યું, અને પોતે ઓફિસે જવા રવાના થઇ ગયો.)

(પોલિસ અને શેઠ યશપાલ બજાર વચ્ચે દરબારગઢ તરફ જવા લાગ્યા. રસ્તામાં ટીખળી લોકો શેઠને મશ્કરી કરી ચીડવવા લાગ્યા જે શેઠથી સહન નહિ થવાથી આખરે તેમણે ગુપ્ત રુદન આરંભ્યું. દરબારગઢ જતાં સુધી રસ્તામાં ઘણી વખત પોલીસે શેઠને દંડ પ્રહાર પણ કર્યા હતાં પણ પુત્રવધૂ લોલુપી વૃદ્ધ ખચ્ચર તે બધું સહન કરતો હતો.)

(એક બાજુ યશપાલને બંધનમાં રાખી રાજાએ ધનદત્તની છોકરીને તેજ નગરના એક સાધારણ સ્થિતિના વણિકના પુત્ર સાથે પરણાવી કે જેની ઉમર ૧૭ વર્ષની હતી. લગ્ન વખતે પોતે પણ હાજર રહ્યા)

લગ્ન કાર્ય થઇ રહ્યા પછી રાજાએ યશપાલને ન્યાયની કોર્ટમાં હાજર કર્યો ત્યાં તેમને બચાવને પુરાવો માગ્યા સિવાયજ જ્ઞાતિ સુધારણા નિયમ(ના કલમ પ્રમાણે રૂ. ૫००) ના દંડની સજા સાથે ચોવીસ કલાક કેદ કર્યો, યશપાલે બચાવ ઘણો તજવીજ કરી, પણ તે સઘળી વ્યર્થ અને પોતાને દંડ ભરવો પડ્યો, કેદ ભોગવી ઇજ્જત ગઇ, પુત્રવધૂ ગઇ અને ગાંઠ પણ

કેમકે ત્યાર પછી કોઇએ તેમના પુત્રને કન્યા આપી નહિ કારણ કે તેમની જ્ઞાતિઓએ તેવાઓને કન્યા આપવા બંધી કરી હતી.

હું ઉપલો સંવાદ વાંચી ઘણોજ ખુશી થયો અને મને અહોભાગ્ય સમજવા લાગ્યો કે હજુ ઠીક છે કે મારા પિતાને શિર કંઈ ઉપાધિ નડી નથી નહિ તો ટકાના બની જાત, એમ વિચાર કરી સંસારની અનિત્યતા સમજી તે વખતે ઘરમાંજ રહ્યા.

આ વાતને થોડાક દિવસ થયા પછી એક વખત મારા પિતાએ મારાં ગૃહિણીને કંઇક કાર્ય કરવાનું કહ્યું હશે, જે તેણે કર્યું નહિ અને જ્યારે મારાં પિતાએ કામ ન થવાનું કારણ પુછ્યું ત્યારે જવાબ આપ્યો કે-હું કંઇ તમારૂં લોંડીપણુ કરવાને આવી નથી, તમારે ફાવે તો કરો, હુ તે કાર્ય કરવાની નથી. તમે વધુ સંતાપશો નહિ. વહુનો ઉદ્ધત જવાબ સાંભળી મારા પિતા દિલગીર થયા અને વિચાર કરી બોલ્યા કે વહુ, આમ ઉતાવળા શું થાઓ છો? જરા ધીમે રહી કામ કરો. આવું નાજુક કાર્ય તમો નહિ કરો તો કોણ કરશે?

વહુ બોલી ઉઠયાં કે-શું, મારેજ માટે સરજાયું છે? હમેંજ એવી ગુલામગીરી કરીશું? તમારે ફાવે તો કરો નહિ તો સુઇ જાવ. મને આ ઘરમાં આવી બેસવા વખત મળ્યો નહિ અને તમારા કામનો અંત પણ આવ્યો નહિ. હવેથી મને કંઇ પણ કહેવું નહિ, નહિ તો હું મારા પિયર ચાલી જઇશ.

આ બનાવથી મારા પિતા બહુજ દિલગીર થયા અને કર્મને દોષ દેતા મન સાથે કહેવા લાગ્યા કે-ચંદન કહેતો હતો કે-મારૂં **લગ્ન મારી સંમતિ સિવાય તથા કન્યાના ગુણોની તપાસ કર્યા સિવાય થાય છે એમાં** સુખ મળશેજ નહિ, એ વાત ખરી પડી ને મેં ગોટામાં મોટી ભુલ કરી કે-પૂર્ણ તપાસ કર્યા સિવાય મારા પુત્રને લબાડીદાસને ત્યાં પરણાવ્યો. અરેરે દૈવ! મેં મારે હાથેજ મારા પુત્રના ભવિષ્ય પર પગ દીધો અને તે બિચારાને દુઃખી કર્યો. છાની તપાસ કરતાં તેનું વલણ પણ તેને લીધે વૈરાગ્ય તરફ ખેંચાતું હોય એમ જણાય છે તેનું કારણ પણ હુંજ છું. ખરેખર શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે તે ખરૂં છે કે **બાપ તેવા બેટા ને વડ તેવા** ટેટા, એવી રીતે તે તેના બાપ પ્રમાણે લબાડીજ છે, તે નહિ હોય તો હવે થશે, તે તેના શબ્દો હાજર શાક્ષી પુરે છે. શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે કુળવાન જોઈ વિવાહ કરવો, પુત્રવધુ કુળવાન, રૂપવાન લાવવી એ વાત ખરી છે.

આમ વિચાર કરતા હતા કે અચાનક મારાં ફોઇ ત્યાં આવી પહોંચ્યાં. તેમણે મારા પિતાને (તેમના ભાઇને) ઉદ્વિગ્ન જોઇ પુછ્યું, ભાઇ ઉદાસ કેમ દેખાઓ છો? મારા પિતાએ ઉત્તર વાળ્યો-કાંઇ નહિ, મારાં ફોઇ આગ્રહ કરતાં બોલ્યાં કે ના ભાઇ કહો, તને મારા સમ! કેમ ઉદાસ છે અને વિચારગ્રસ્ત સ્થિતિમા હોય તેમ જણાય છે. ચંદન કંઇ બોલ્યો તો નથીને? આ સાંભળી મારા પિતાએ સર્વે હકીકત તેમની બ્હેનને કહી સંભળાવી તે સાંભળી મારા ફોઈ દિલગીર થયાં અને આંખમાં આંસુ લાવી ગદગદ કંઠે બોલ્યાં-અરેરે પ્રભુ! મારાં ભાઇને આટલે વર્ષે જંપવા વખત આવતં, પણ પુત્રવધુ તેના માબાપ જેવી દુષ્ટ મળી. શું મારા ભાઇને હાથેજ સર્વ કામ કરવાનું લખ્યું હશે? ના, ના, ગમે તેમ કરી હું મારા ચંદનને ફરી પરણાવીશ અને મારા ભાઇને કામથીમુક્ત કરીશ. જોઉં છું કે એ અજ્ઞાન છોકરી ક્યાં સુધી તેનું ધાર્યું કરે છે.

આવો પાકો ઠરાવ કરી મારાં ફોઇએ મને બોલાવ્યો, અને પુછ્યું—

ભાઈ ચંદન, તું સાચું ન બોલે તો મારા સમ! તારે ને રૂપિણીને બને છે કે નહિ? તું શરમ રાખ્યા સિવાય ખરૂં કહી દે.

મેં કહ્યું-ફોઈ, મેં સંસારમાં આવી કોઇ પણ સુખનો લ્હાવો લીધો નથી. મ્હારી મા અને નાનપણમાંજ મુકી મરણ પામી, ત્યારથી મારા સુખનો સૂર્ય અસ્ત થએલો છે. વળી જ્યારથી મારૂં લગ્ન થયું ને આ કર્મચંડાળ મારે ઘેર આવી ત્યારથી મેં સુખે ભોજન સરખું પણ કર્યું નથી. ઘરમાં

કલહરૂપી શત્રુ ઘર ઘાલી બેઠો છે, તે ઘરનાં સર્વ માણસોથી વાતે વાતે લડી ઉઠે છે. ને તે સર્વ જણ મનેજ મેણાંનાં વાક્-પ્રહાર કરે છે, જેને લીધેજ હું રાત્રિ દિવસ વિચારગ્રસ્ત રહું છું. મને ક્યાં જવું, શું કરવું, એ કંઇ સૂઝતું નથી. ઓ મ્હારાં વહાલાં ફોઈ! મને આ દુઃખ દરિયામાંથી બચાવો, નહિ તો હું ડુબી જઇશ. મારે આ દુનિયામાં આશરો ફક્ત મારોજ છે. મારા પિતાએ મને આ સાલ વળગાડ્યું છે, જેથી મારે ઝંપવા વારો નથી.

ફોઇ, શું હિંદુ સંસારમા આમ લાકડે માકડું વળગાડવાના વિવાહો થાય છે? ના, ના. હું ઘણાજ જણને જોઉં છું કે તેમને મારા જેવું છેજ નહિ. આ માણસ તો વિચિત્ર જણાય છે. તે મને જુએ છે તો ખરો ચલાવે છે. જો હું ન હોઉં તો આનંદ, તેમ અત્રે આવી તે કદિ પણ હસમુખી રહી નથી. પણ પીયરમાં ને બીજાં સ્નેહીને ઘેર આનંદથી રહે છે, ત્યાં ઘરનાં કામ પોતાનાં જાણી કરે છે અને અહીં ચિંતા વગર પરાયું સમજી કરે છે, એટલે તેમાં ભલીવાર આવેજ નહિ.

ફોઇ, મારાં વહાલાં ફોઇ, મારાથી આ બુધી કપટજાળ સહન થતી નથી. તેમાં તો મને તેના માતા પિતાની શિખવણી હોય. તેમ ભાસે છે. ફોઇ, આપ વૃદ્ધ છો, સમજુ છો, મને રસ્તો બતાવો કે જેથી હું સુખી થાઉં.

ભાઈ, તારાં દુઃખ સાંભળી મારી છાતી ફાટી જાય છે, પણ શું કરું, વાત વહી ગઇ છે માટે તકદીર પર ભરોસો રાખ. જે બનવા કાળ હશે તે બનશે, નહિ તો તારા વિવાહ કરતી વખતેજ મેં તારા પિતાને ના કહ્યું હતું, પણ તે વખતે તેમણે મારું કહ્યું માન્યું નહિ ને તારું સગપણ નાની ઉમરમાંજ કરી દીધું, તેનાજ આ ફળ ચાખવાં પડે છે.

તપાસ કરું ને તારી ધ્યાનમાં આવે તો સંબંધ જોડીએ કે જેથી ફરી આવા બનાવો થવા વખત આવે નહિ.

મેં કહ્યું-ફોઇ, હું આ એકજ દુઃખથી થાકી ગયો છું ત્યાં તમો વળી બીજીની વાત કરો છો, જો મારા ભાગ્યમાં સુખ હોય તો આજ અનુકૂળ હોય, પણ મારા ભાગ્યમાં નહિ એટલે કોનો દોષ કાઢીએ? હું ફરીથી લગ્ન કરી બીજીનો ભવ બાળીશ નહિ. વળી જો ભાગ્યયોગે સારા સ્વભાવની મળે તો હરકત નહિ, પણ ન૦ણતે છે તેવી મળે તો દાઝ્યા ઉપર ડામ તરિકે વળી કલહમાં વૃદ્ધિ થાય, માટે મારો તો દઢ ઠરાવ છે કે હવેથી લગ્ન કરવું નહિ.

મારાં ફોઇએ કહ્યું—ભાઈ, આપણે તપાસ કરી યોગ્ય સાથેજ સંબંધ કરીશું, પણ લગ્ન તો કરવુંજ પડશે. મેં કહ્યું-પણ મારો જીવ કોઇ બીજાજ સ્વરૂપમાં પરિણમે છે એટલે મને હવે એ સંબંધમાં કહેવું નહિ.

મારાં ફોઇ નિરાશ થઇ મારા પિતા પાસે ગયાં ને કહેવા લાગ્યાં-ભાઇ, ચંદનના વિચારો પલટાઇ ગયા છે. તે ફરી લગ્ન કરવાનો નથી તેમ તેના જવાબોથી મને તેનો ભરોસો પણ પડતો નથી, માટે આપણે તેની પૂર્ણ તપાસ રાખવી નહિ તો પસ્તાવું પડશે.

ભાઇ, જો માનો તો એક સલાહ બતાવું. મારા પિતાએ કહ્યું-બ્હેન, ખુશીથી કહે. તું મારું સારુંજ બોલીશ એમ મને ખાત્રી છે. મારાં ફોઇએ કહ્યું—ભાઈ, હવે તું લગ્ન કરે તો સારું કેમકે ચંદન એકનો એક પુત્ર છે તેમ તેના ગૃહસ્થાશ્રમથી પુત્રની આશા રખાયજ નહિ, કેમકે પૂર્ણ સ્નેહથી સહવાસ થાય ત્યારેજ સંતાનનો લાભ થાય, માટે તું ફરી લગ્ન કરે તો આપણા વંશનો અંત આવતો અટકે કેમકે કહ્યું છે કે-" એક આંખની આંખ નહિ ને એક પુત્ર તે પુત્ર નહિ. માટે તું ફરી લગ્ન કરે તો આપણા વંશની વૃદ્ધિ થાય, તારે શિર કામનો ભાર ઓછો થાય અને મને પણ લાભ થાય.

મારા પિતાએ કહ્યું-બ્હેન, આટલે વર્ષે-પુત્ર મોટી ઉમરનો થયો, વળી [illegible] લગ્ન [illegible]

હું લગ્ન કરૂં તે કેમ શોભે? વખતે આવનાર સ્ત્રી દુર્ગુણી નિકળી તો મારૂં કર્મજ ફુટ્યું.

મારાં ફોઇએ કહ્યું–ભાઇ, આપણે તપાસ કરી પછીજ સંબંધ જોડીશું, પણ મારા પિતાએ કહ્યું-હવે આ શરીરનો ભરોસો નહિ. વખતે હું પરણું ને મરણ થાય તો તે બિચારીને કેટલું સોસવું પડે? વળી લોકો વાતો કરે તે જુદી.

મારાં ફોઇ બોલ્યાં–પણ ભાઈ, શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે–વંશની વૃદ્ધિ કરવાની ઉમેદવાળો પુરૂષ પચાસ વર્ષની ઉમર સુધી લગ્ન કરી શકે છે. વળી મોત કહ્યું થતું નથી, તે તો કુદરતી બનાવ છે. વખતે સો વર્ષ પણ જીવાય ને વખતે પચીસે પણ જવાય, માટે તું લગ્ન કર અને મારૂં કહ્યું માન.

મારા પિતાએ પૂર્ણ વિચાર કરી, કલહ ઓછો કરવાના, કામનો બોજો ઉતારવાના, વંશવૃદ્ધિ કરવાના, બ્હેનને પ્રસન્ન કરવાના, એક વિધવા બનાવવાના વિગેરે વિગેરે શુભાશુભ ઉદ્દેશોથી લગ્ન કરવા હા પાડી અને મારા ફોઇ કન્યાની તપાસ કરવા તુર્તજ ચાલી નીકળ્યા.

બીજે દિવસે અગીયાર વાગે આવ્યા ને મારા પિતાને કહેવા લાગ્યા કે–ભાઇ સ્વરૂપચંદ શેઠની કાન્તા નામની કન્યા ૧૩ વર્ષની છે. નિશાળમાં છઠ્ઠી ચોપડી ભણે છે ને ઘરકામમાં પણ હોશિઆર છે. રૂ. ૨૦૦૦) માં આપવાનું તેના પિતા કહે છે જો વિચાર હોય તો ચાલ મારી સાથે એટલે તપાસ કરી સંબંધ જોડીએ.

મારા પિતા બ્હેનના આગ્રહથી કહો કે દુઃખનો ભાર ઉતારવાના ઉદ્દેશથી કહો કે મારી નવી મા લાવવાના ઉમંગથી કહો પણ ને બ્હેનની સાથે જવાને તરતજ તૈયાર થઇ ગયા ને સ્વરૂપચંદ શેઠને ત્યાં ગયા. ત્યાં જઇ તપાસ કરવાની વાત બાજુ પર મૂકી રૂા. ૨૫૦૦)માં વિવાહ નક્કી કર્યો.

અરે વિષમ કાળ! તને ધિક્કાર છે કે તારા પ્રતાપે માણસ પોતાની ગાય જેવી કન્યાને કસાઇવાડે આપવા તૈયાર થાય છે, અર્થાત્ વેચાણ કરી વૃદ્ધોને આપવા લાગ્યા છે.

વિવાહ કરી લગ્ન પણ કરી દીધું. પાછળ પૂર્ણ હકિકત સંપાદકજી સ્થાન આપતાં અવકાશ માટેજ હુંડામાં પતાવું છું. (અપૂર્ણ)

पल्लीवाल जातिका उद्धार कैसे होगा ?

वर्तमानमें पल्लीवाल जातिमें जैसा अज्ञानांधकार, कुरीति प्रचार, अनैक्यता और असावधानताका प्रबल साम्राज्य है वैसा किसी और जातिमें न होगा। विना लिखा पढ़ा मनुष्य पशुके सदृश ही होता है। उसका मनुष्य होना न होना बराबर है। जिस जातिमें कुरीतियोंका फैला रहना, विधवाओं और कुंवारोंकी वृद्धि होना, कन्याओंकी गाय भैंसके समान विक्री होना, व्यभिचार, निर्बल सन्तान होना या उनमें रोग बना रहना आदि जारी रहता है उस जातिका अधःपतन हो जाता है और उस जातिमें रहना योग्य मनुष्योंके लिये दुष्कर हो जाता है। अनैक्यताके होनेसे जातिमें विद्याप्रचार, जातिसुधार, धर्मप्रचार, कुरीति-बहिष्कार आदि कोई उत्तम कार्य जातिमें सफलताको प्राप्त नहीं हो पाते। अनैक्यताके होनेसे बड़े २ साम्राज्य, बड़े २ राज्य, जातियां, समाज, घर, मनुष्य नष्ट भ्रष्ट हो गये और हो रहे हैं। भारत और जैन समाजकी इस अधोगतिका कारण एक फूट ही है। जहां इसने पैर रखा वहीं चौपट कर दिया। असावधानता यानी प्रमाद भी सब शक्तियोंके होते हुए मनुष्यको उन्नति नहीं करने देता है। जिस जातिमें इसका राज्य है वह भी अधोगतिको प्राप्त हुए विना नहीं रहती।

पल्लीवाल जातिमेंसे अज्ञान, कुरीतियां, अनैक्य, प्रमाद आदि सब बुरी बातोंका उन्मूलन

करनेके लिये **भारतवर्षीय पल्लीवाल जैन सभा**का जन्म हुआ है। यह सभा जातिमें ज्ञानका प्रकाश करेगी, बालक बालिकाओंको शिक्षित बनायेगी, बूढोंके साथ ९-१० वर्षकी कन्याका विवाह होना बंद करायेगी, गाय भैंस जैसे पशुके समान बिकती हुई कन्याओंकी रक्षा करेगी, आठ२ नौ२ वर्षके लड़के लड़कीका विवाह होनेसे जातिको रोकेगी, जातिमें फैली हुई फूटका काला मुंह करके निकालेगी, कुंवारों और विधवाओंकी बढ़ती हुई संख्याको रोकनेका प्रयत्न करेगी, और ऐसा होनेपर ही पल्लीवाल जातिका उद्धार होगा। अतः जिन वृद्धोंको अपनी संतानको अधोगतिकी ओर जाते देख दुःख होता है वे अपनी जातीय सभामें सम्मिलित होकर अपनी संतानकी रक्षा करें, जिन नवयुवकोंको अपनी दुर्दशाग्रस्त पिछड़ी हुई जाति पर दया आती है और वे उसके उद्धारके लिये कुछ करना चाहते हैं तो वे भी अपनी सभाके सभासद बन कर एक बार जातिमें सिंहनाद बजा दें और बतादें कि तुम्हारे उद्धारके लिये सभा सब कुछ करनेको तैयार है। बिना सुसंगठित सभाके जातिका कल्याण नहीं हो सकता और बिना उत्साही नवयुवकोंके सभाका कल्याण नहीं। इसलिये हम बार २ उत्साही नवयुवकोंसे जोर देकर कहते हैं कि अब आपको अपनी शक्तियोंके चमत्कार बतानेका समय आया है। उठो, अब न सोओ, बिना कुछ सोच विचार किये सभाके सभासद बन जाओ। सभासदी फार्म व नियम एक पोस्टकार्ड लिखकर मंगा लो। तुम स्वयं सभासद बनो और दूसरोंसे बननेके लिये प्रेरणा करो। जब सौसे अधिक सभाके सभासद हो जायगे तब इसका किसी स्थानपर प्रारंभिक अधिवेशन भी किया जायगा। उसी समय सभाकी प्रबन्धकारिणी कमेटी बनाई जायगी, नियमावली बनकर पास होगी और सभाको प्रथम जात्युन्नतिके लिये कौन२ से कार्य करने चाहिये आदि निर्णय होगा। अतएव हमारा पुनः निवेदन है कि ऐ पल्लीवाल भाइयो! यदि आप अपना, अपनी सन्तानका और अपनी जातिका कल्याण चाहते हो तो इस सभाके शीघ्र सभासद बनो। सभासदी फीस केवल ३) तीन रुपये वार्षिक है। विज्ञेषु किं बहुना।

जातिसेवक—
जुगमंदिरलाल जेवरिया
मंत्री, भा. पल्लीवाल जैन सभा,
चंदावाड़ी, सूरत।

ईडरमें रायदेशके पंच।

घड़ालीकी प्राचीनता।

गत ज्येष्ट, आषाढ़ मासमें यहां पर रायदेशके समस्त पंच एकत्रित हुए थे। जन संख्या १०० से अधिक थी। पुराने जमानेकी रीति और ढंगसे पंचायत तथा सभायें प्रति दिन होती थीं, अनेक विषयोंपर ऊहापोह पूर्वक विचार किया जाता था। दुःख केवल इतना है कि रायदेशमें पढ़े लिखे विचारशील कम हैं, इसलिये इतने दिनों तक पंच एकत्रित होने पर भी कुछ भी कार्य नहीं हुआ। अस्तु, क्षेत्रका उदय न होनेसे जनवामें भी सुबुद्धि नहीं होती है। रायदेश ज्ञानमें कितना पीछे है जिसके कहनेसे लाज आती है। एक तो रायदेशके भाई छोटे २ ग्रामोंमें रहते हैं जहां पर न तो सर्कारी पाठशाला (मदरसा) ही है और न खानगी चटशाल ही है कि जिससे व्यवहारिक शिक्षा तो ले सकें, धर्मशिक्षाकी बात दूर रही। धर्मशिक्षाके विना आचार विचारकी जो हालत है वह किसीसे छिपी नहीं है। ग्राम्य जीवन होनेसे संतान भी जड़रूप होती चली जा रही है, ऐसे विकट समयमें रायदेशके पंचोंका कर्तव्य था कि अपनी संतानको सुधारनेके लिये कुछ उपाय करते। दानवीर सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द मुंबई से यहां पर पधारे थे और इस देशकी जड़ता और अज्ञानको देखकर चकित हो गये थे, तब तत्काल ही अहमदाबादमें सेठ प्रेमचन्द मोतीचन्द दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोल दिया, परंतु दुःख है कि उस बोर्डिंगसे रायदेशके भाई लाभ न ले सके। आज तक रायदेशमेंसे एक भी विद्यार्थीने बोर्डिंगमें रहकर अपने जीवन सुधारनेका कार्य नहीं किया। हां, ईडरसे दो चार विद्यार्थियोंने कुछ लाभ लिया। रायदेशकी इतनी गिरी हुई हालत है कि शुद्ध णमोकार मंत्रका पाठ किसी महाशयको आता हो, तो फिर शास्त्र स्वाध्याय पूजन किसको आता है यह आप ही विचार करिये।

रायदेशके पंचोंके समक्ष, ईडरमें दिगम्बर जैन बोर्डिंग खोलनेका प्रस्ताव रक्खा गया था और सेठ लल्लूभाई लखमीचन्द चौकसी बम्बई प्रभृति अनेक महाशयोंने पूर्ण प्रयत्न भी किया, प्रति दिन इसका विचार भी पंचायतमें उपस्थित होता था। बोर्डिंगकी व्यवस्थाके लिये फिलहाल यह प्रबंध किया था कि प्रति घर वर्षमें २) रु० चंदा लिया जाय। रायदेशमें दिगम्बर जैनियोंके अनुमान ४०० घर हैं इसलिये अनुमान ८००) रुपये वार्षिक आमदनी विना फंडके एकत्रित सुगमतासे हो सक्ती है और दो रुपये अनुमान एक वर्षमें किसी भाईको देना कठिन नहीं होगा। दो हजार रुपये बोर्डिंगके लिये पाठशालामें जमा भी हैं। सिवाय शोलापुरके कई धर्मात्मा दानवीर सज्जनोंने बोर्डिंग खुलने पर पूर्ण सहायता देनेकी पाठशालाकी विजिटबुकमें सम्मति-प्रदान की है, साथमें पाठशालाके फंडसे पूर्ण सहायता हो सक्ती थी। इतने सरल और उत्तम उपाय होने पर भी रायदेशके पंचोंने अपनी संतान सुधारनेका प्रयत्न नहीं किया। दो महीने तक एक-

त्रित होनेमें करीब दश हजार रु. खर्च हुये होंगे । यदि इतना रुपया बोर्डिंगमें लगाया होता तो आपकी संतान चिरकाल तक जीवनको सुधार कर उत्तम भोजन करती ।

रायदेशमें यह भी प्रथा है कि पंच और मंदिरका एक वहीवट है इसलिये जहां कहीं पंच एकत्रित होते हैं तो बस उसी खातामेंसे सभी खर्च होता है अर्थात देवद्रव्यका उपयोग किया जाता है जब कि देवद्रव्य सुकृत कार्य करनेके लिये होता है । भाइयो, विचारो तो सही यह कितना अंधेर है ! रायदेशके पंचोंकि सन्मानार्थ आठ दश पाखी (जीमन) हुई थीं और उसमें कई हजार रु० खर्च हुए थे ।

रायदेशके पंच क्यों एकत्रित हुए थे ? ईडरके पास वडाली प्राचीन नगरी है, इसको पुराने जमानेमें **वटपुर** शहर कहते थे । यहां पर **अमीझरा पार्श्वनाथ** नामका अतिशय तीर्थ है । प्रथम वडालीमें दिगंबर जैनियोंके बहुत घर थे । और इस मन्दिरमें अनेक अतिशय स्वाभाविक निरंतर होते रहते थे । प्रतिमाजी (जो कि दिगंबरी है) मे **अमृतकी वर्षा** हुआ करती थी । और देश विदेशसे अनेक दिगम्बर जैनोंका संघ वंदना करनेके लिये आता था ।

* इस तीर्थकी वंदनाके संबंधमें एक भजन इस प्रकार है:—

रायदेश माहि भला वडाली,
जिन भवन भलु दीसनेरे ।
दरसन मेरी प्रगटयो पासजी,
दीठ जिसी दरसु दीसनेरे ॥
अतिशय देत मनोहर मूरति,
सुन्दर बहि हरिहरे ।
संघ सह भली यात्रा आवि,
अमीझ वरसि मेहनरे ॥
अंग अनोपम सुन्दर सोहे,
वासव तणा मन मोहनरे ।
नीलवर्ण काया जिन दीपि,
दिनकर कोटिन जीपरे ॥
विषम व्याधि वेलाज्वर व्याधि,
भागि दुरगति दूरनेरे ।
बावन चंदन घनघोल करी,
नित पूजो केसर कपूरनेरे ॥
श्री शुभचंद्र विख्यात पटधर,
मुनि वीरचंद पास पाय लागिरे ।
जन्म जरा मरण रोग निवारो,
एटलु जिन पास मागीयेरे ॥

ये शुभचंद्रके पट्टाधिकारी वीरचंदजी कारंजा गादीके अधिपति थे । इनका पट्टाभिषेक सं० १५९७के सालमें हुआ ऐसा अनुमान होता है और वीरचंदके पट्टाधिकारी श्री प्रभाचन्द्रजी हुए । श्रीमुनि वीरचन्द संघ सहित वडालीकी यात्रा करनेको पधारे । सुनते हैं कि इनने अमीझरा पारसनाथका जीर्णोद्धार कराया था । यह पद गुटका नं० २६में लिखा है और संभवनाथके चैत्यालयमें मौजूद है । पाना १५०. वडाली बाबत इस गुटकेमें कई प्रमाण लिखे हैं । वर्तमानमें दक्षिणके भाई अपनी संतानका क्षौर संस्कार (मुंडन) वडालीमें ही आकर कराते हैं । संवत १६०३में छत्रसाल नामक हुमड दिगम्बर जैनने इस मंदिरकी यात्रा की और यहां पर जीर्णोद्धार कराया; देखो गुटका नं० ७। सं. १७०९ भट्टारक वादिचन्द्र (प्रभाचन्द्र) जिन्होंने मगसंघ तीर्थ पर भट्टारक पद प्राप्त किया जिसका वर्णन गुटका नं० ७ में इस प्रकार है:—

"श्री प्रभाचंद्र गुरुराय; तस उपदेशे श्रवणे सुनी, मन वसियुं वैरागरे। छाउजी गाइये कर जोडी गुरु प्रति कहिं; मझडूं संजम सार, आदेश विना नवि दीजिये; घरिजई करो विचार। मायकनीं आदेश मागवोरे, चाल्यो अति उल्लास; मझ अनुमति देज्यो सही, लेसूं संजमभार। संसार दुख है अति घणां; नवि कोई शरने होय, गजपंथे यात्रा करी; लीधी दीक्षा चंग, हांसीबाई उच्छव करी, संघनी वीरा रंगरे। कनक भाई श्रावक दई; कंकोत्री एक लक्षरे, आव्या संघ सहु साथरे।"

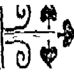
अर्थात् प्रभाचंद्रजीने गजपंथ शिखर पर दीक्षा ली और एक लाख कुंकुमपत्रिका सर्वत्र भेजी थी। जनसंख्या अनुमान उस समय लाखों-की हुई थी। वे ही प्रभाचंद्र भट्टारक जिनने अनेक ग्रन्थ निर्मापित किये हैं, संघ सहित बडाली अमीझरा पार्श्वनाथ वंदना करनेको खास पधारे थे और वहां पर कई मास रहे। इन्हीं प्रभाचंद्रजीने रत्नकरण्ड श्रावकाचारकी संस्कृत टीका अमीझरामें बनाई थी ऐसा अनुमान होता है।

संवत १६८७ वर्षे फाल्गुन मासे वच्छपुर (बडाली) नगरे अमीझरा पार्श्वनाथचैत्यालमे भट्टारक श्रीगुणचंद्रे लिखितं परमहंस राजग्रंथ पूर्ण भयानि।

यह पुस्तक ईडर संभवनाथके मंदिरमें मौजूद है। और रामकीर्ति महाराजने भी बडाली अमीझरामें संघ सहित यात्रा की। यशकीर्ति महाराज सलुंवरसे आते हुए अमीझरामें ठहरते थे। कनककीर्ति महाराजने संवत् १९३३में अमीझरामें प्रतिष्ठा कराई थी। अमीझरामें ११०९ सालकी खडगासन दि० मूर्तियां हैं। यहां पर अभी दिगंबर भाइयोंकी वस्ती न होनेसे श्वेतांबर भाइयोंने उक्त मंदिर पर ध्वजादण्ड चढ़ाया था और उसके करनेकी खास जरूरत थी। ध्वजा बहुत वर्षोंसे गिर पड़ी थी। हमारे भाई अतिशय प्रमादी हैं। यह कार्य कडियादराके पंचोंको करना उचित था परंतु रायदेशके भाई प्रमादी हो रहे हैं अस्तु हमें बडालीके श्वेतांबर संघका धन्यवाद मानना चाहिये कि वे इस मंदिरका [जहांपर दिगंबर जैनोंकी वस्ती नहीं होनेसे] प्रबंध करते हैं और रायदेशके पंचों समक्ष बडालीके संघने यह वचन दिया है कि आप अपने मंदिरको संभालिये और कलश (एंडु) चढ़ाइये व प्रतिमा विराजमान कराइये इत्यादि। हम बडालीके श्वेतांबर संघकी वात्सल्यताकी सराहना करते हैं और सब भाईयोंको हिल मिलकर चलनेकी प्रार्थना करते हैं और बडालीके पंचोंकी सुमतिकी प्रशंसा करते हैं।

नन्दनलाल जैन वैद्य विशारद।





हमारी दक्षिण यात्रा।

(लेखकः—मूलचन्द किसनदास कापड़िया)

(गतांकसे आगे)

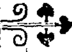
श्री गोमट्टस्वामी (श्रवणबेलगोला)—ता. १८-४-१९की दुपहरको पहुंचे और भट्टारक चारुकीर्तिजीकी धर्मशालामें ठहरे। यहां मथुरावाले लाला किरोड़ीलालजी और आगरावाले बाबू लक्ष्मीचंदजी बम्बईसे आये हुए थे उनका मिलाप हुआ। धूप हो जानेसे पहाड़ पर नहीं चढ़ सके परंतु स्नानादिसे निवृत्त हो कर गांवमें सभी मंदिरोंके दर्शन किये तथा नित्य नियमादि पूजा भी की। गांवमें ७ मंदिर हैं जिसमें एक मंदिर बड़ा है। पास ही जिननाथपुरमें २ मंदिर तथा बस्तीहल्लीमें १ मंदिर है। सभी मंदिर करीब सं. १२०० के बने हुए हैं। जैन उपाध्यायके २५, जोगारके ५०, चतुर्थके २ और पंचमका १ घर हैं। उपाध्यायोंकी आजीविका गोमट्टस्वामीसे ही चलती है। श्री गोम्मटस्वामीको मैसूर राज्यकी ओरसे ४ गांव शाके १७६२ से मिले हुए हैं जिसकी आमदनी वार्षिक २०००) आती है और इस वार्षिका सब हिसाबादि पं. भट्टारक चारुकीर्तिजीके पास ही रहता है। जमीन तथा खास पाषाण के बोर्ड पर पाये जाते है, जिनका तथा आसपासके प्राचीन मंदिर तथा पहाड़ोंका सचित्र वर्णन इन्सक्रिपसन्स एट श्रवण बेलगोला (Inscriptions at Shravanbelgola) नामक अंग्रेजी ग्रंथमें प्रकट हुआ है जो करीब १८) में आरक्यालोजिकल डारेक्टर बेंगलोर तथा गवर्नमेंट बुक डिपो बेंगलोरमें मिलता है। एक मंदिरमें निरी कसौटीके दो खंभे प्राचीन कारीगरीके हैं जिसकी परीक्षा सोनेका आभूषण घिस कर की गई थी। यहां पंचामृत अभिषेककी प्रथा इतनी अधिकता पर पहुंचा दी गई है कि कई प्रकारकी दाल, चावल, खोपरेका चूरमा, खीर, केले, आदि भगवान पर चढ़ाते हैं तथा नित्य पके चावलका नैवेद्य धरते हैं, यहांतक कि यहुतसे रिवाज वैष्णव जैसे हो गये हैं जिसको उपाध्यायोंने ही अपने स्वार्थके लिये बढ़ा दिया मालूम होता है क्योंकि वे ही उठाकर उसका उपयोग करते हैं। भट्टारक चारुकीर्तिका मंदिर-मठ कई प्रकारके परिग्रहोंसे पूर्ण है। उनके पास स्फटिक, परवाला, हीरा, आदिकी १२ प्रतिमा हैं जिनका पूजन होता है। सभी मंदिरोंमें मात्र मूलनायककी ही पूजा प्रक्षाल और अभिषेक बार २ होता है परंतु अन्य सभी प्रतिमाओंकी छेरा मात्र प्रक्षाल कभी भी नहीं होती

दृश्य अतीव मनोहर है। पहाड़पर कुल ७ मंदिर हैं जिसमें मुख्य मंदिर तो श्री गोम्मटस्वामी यानी श्री बाहुबलस्वामीका ही है जिसका वर्णन करना हमारी लेखनीसे बाहर है। कई वर्षोंसे हमारी अभिलाषा श्री गोम्मटेश्वरके दर्शन की थी वह आज ही पूर्ण हुई। श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमा करीब २५ फिट चौड़ी और ६० फिट ऊंची सुंदराकार ऐसी भव्य और अतिशय युक्त है कि कितने वर्ष बीते गये तो भी शीत धूप और वर्षाकी बाधा सहते हुए भी प्रतिमा इतनी निर्मल और शुक्ल वर्णकी है कि जैसे आज ही निर्माण की गई हो। मात्र चरण ही नित्य पूजन अभिषेक करनेके कारणसे काले पड़ गये हैं। इस भव्य और सारे संसारमें प्रसिद्ध प्राचीन प्रतिमाका निर्माण श्री चामुंडरायने करीब सं० ६०० में कराया था और प्रतिष्ठा श्री नेमीचंद सिद्धांतचक्रवर्तीने की थी। प्रतिमाजीके अंगपर वृक्षवेल लिपटी हुई है तथा सर्पादि चरणके पासमें खेल रहे मालूम होते हैं। कमलके आसनपर प्रतिमा खड़ी की गई है और कमरसे ऊपरका भाग चारों ओरसे बिलकुल निराधार है। प्रतिमाजीकी छाया नहीं पड़ती है ऐसा सुननेमें आता था परंतु अभी हमको तो छाया पड़ती हुई दिखती थी। शायद पहले न भी पड़ती हो। प्रतिमाजीकी एक ओर कनड़ी लेख है और दूसरी ओर लिखा है कि "चामुंडराजे करवियले गंगराने सुताळय करवियले." प्रतिमाजीकी चारों ओर खड्गासन और श्याम २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्राचीन प्रतिमाएं तथा अन्य प्रतिमाएं भी हैं। हमने श्री गोम्मटस्वामीका दूध, दही, जलादिसे अभिषेक किया और बड़े आनंदके साथ नित्य पूजा, निर्वाण क्षेत्र पूजा, श्री बाहुबल स्वामीकी पूजन जो कि पं. दीपचंदजीने ही बनाई है पढ़ी। आजकी पूजनका आनंद अपार था और श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमाजीके पाससे हटनेका मन नहीं होता था। अंतमें पं. दीपचंदजीने एक नवीन पद बनाकर पढ़ा जो हमें बहुत पसंद आया इससे नीचेसे लिख लिया था जो इस प्रकार है—

धन्य धन्य बाहुबली स्वामी,
अविचल ध्यान लगाया है ॥ टेक ।
राज्य विषै जब चक्रवर्तीने,
आज्ञापत्र पठाया है ।
आन न मानी तब स्वामीने,
बहु संग्राम मचाया है ॥ धन्य० १ ॥
नेत्र मल्ल, जलयुद्ध मांही,
चक्रेश्वर मान घटाया है ।
चक्र चलत लख ज्येष्ठ भ्रातका,
उर वैराग समाया है ॥ धन्य० २ ॥
धिक् धिक् अथिर विषय इंद्रिय सुख,
भ्रमवश जगत लुभाया है ।
जीरण तृणवत् त्याग क्षणकमें,
निजानंद मन भाया है ॥ धन्य० ३ ॥
ध्यान लगायो अचल मेरुवत्,
मृगगण साज सुजाया है ।
च्यूंटी आदि बमीट रोपे,
नागवेल लपटाया है ॥ धन्य० ४ ॥
लेश शल्य निःशेष होत ही,
केवल लह शिव पाया है ।
सो अनंत बलधारी प्रभुको,
दीपचंद शिर नाया है ॥ धन्य० ५ ॥

श्री विंध्यगिरीका दर्शन करके उतरे और फिर तुर्त ही दूसरी ओर आये हुये चंद्रगिरी पहाड़पर चढ़े। यह विंध्यगिरीसे छोटा है। इस पर कुल १४ प्राचीन मंदिर और बहुतसे शिलालेख हैं। इसके पास एक ग्राममें दो मंदिर और हैं उनके भी दर्शन किये। इस प्रकार दर्शन करके ग्राममें आये और ग्रामके मंदिरोंके दर्शन भी किये और २ बजे धर्मशालामें पहुंचे। ग्रामको यहां देपरा, डूंगरपुर, थाणा आदिके ७ भाई यात्राथ आये, वे हम दोनोंको देखकर आनंदित हुए क्योंकि उनको भी मूडबिद्रीकी यात्राके लिये साथीकी आवश्यक्ता थी। ता. २० को गोम्मटस्वामीकी दूसरी वंदना अभिषेक तथा पूजन पूर्वक की और होमादि सभी क्रिया करके हमने श्री गोम्मटस्वामीके समक्ष यज्ञोपवीत धारण किया। क्रिया पं० दीपचंदजीने कराई थी।





इसकी खुशीमें १।) शास्त्रदान और ११) विद्यादान किया। इस प्रकार ता. २१-२२ को भी वंदना की। हिसाब सब भट्टारकजी ही रखते हैं इसलिये प्रबंधक कमेटीकी आवश्यकता है। मूर्तिरक्षक फंडके करीब १५०००) हैं परन्तु इतनेमें मूर्तिपर मंडप होनेका प्रबंध नहीं हो सकता और न आवश्यकता भी है इसलिये इसके व्याजसे प्रति १०-१२ वर्षके बाद महाअभिषेक करना चाहिये। तीर्थक्षेत्र कमेटीमें १०००) बोर्डिंगके जमा हैं परन्तु प्रबंध कुछ भी नहीं होता। भट्टारकजी और शास्त्रीजीके प्रबंध करनेपर ही बोर्डिंग तथा अन्य प्रबंध हो सकेगा। शास्त्रीजीको 'दिगंबर जैन' को भेजना स्वीकार किया। यहां ८ दिनपर बाजार भरता है वह भी देखा। यहां केले और श्रीफल सस्ते मिलते हैं तथा आम भी चैत्र महीनेमें कच्चे पक्के मिलते थे। 'जैनमित्रका' एक ग्राहक हुआ। यहांसे मूडबिद्री रेलमें भी जा सकते हैं परन्तु हमारा बेलगावसे ही जानेका निश्चय था क्योंकि इससे बीचकी सभी यात्रा हो जाती है। ता० २२ की रात्रिको हम दोनों, बम्बईवाले, डूंगरपुरवाले, कोल्हापुरवाले इस तरह ३० आदमी ७ गाड़ीमें हासनके लिये रवाना हुए क्योंकि मूडबिद्री तरफकी गाड़ी यहां दो दिन विशेष ठहरनेपर भी न मिल सकी थी (बहुत करके तो मिल जाती है) ता० २३ की दुपहरको ३० माइल पर—

हासन—आये। यहां दो मंदिर हैं। मंदिरमें ही धर्मशाला बनी हुई है उसमें ठहरे। यहां २ घर जैन ब्राह्मण और २२ घर जैन वैश्यके हैं। यहांके मंदिरकी प्रतिमा भी प्राचीन है। मेद है कि सिवाय गृहस्थके किसीकी प्रक्षाल नहीं होती। यहांसे मूडबिद्री तरफकी पांच गाड़ी पचीस २ रुपयेमें की और ता. २४ की रात्रिको यहांसे चलकर ता. २५ की सुबहको १० बजे २० माइल पर—

हालेबीड—पहुंचे। यह छोटासा ग्राम होनेपर भी अतीव प्राचीन और देखने योग्य स्थान है। यहां धर्मशाला न होनेसे खुली जगहमें ही ठहरे। यहां ३ मंदिर अतीव प्राचीन हैं जिसमें एक बड़ेमें पार्श्वनाथजीकी प्राचीन श्यामवर्ण कायोत्सर्ग प्रतिमा बिना लेखकी है। इसमें कई शिलालेख भी बड़े२ हैं। और कसौटीके बड़े२ १४ खंभे हैं इसकी भी परीक्षा की थी। दूसरे शांतिनाथजीके मंदिरमें भी १२ कसौटीके खंभे और खुदाईका काम सुंदर है। मानस्तंभ भी है। तीसरा मंदिर मल्लिनाथका है। यह छोटा है। यहां शिवके भी २ मंदिर प्राचीन हैं जिसमें एक तो इतना विशाल और भव्य है कि जिसकी बनावट और खुदाईके काममें लाखों तो क्या करोड़ों रुपये लगे होंगे। यह देखनेके योग्य ही है। दंतकथासे मालूम हुआ कि यहां पहले विष्णुवर्धन राजा जैन थे जिन्होंने १४० जैन मंदिर बनवाये थे परंतु उनके वैष्णव हो जानेसे उन्होंने ही सभी मंदिर तोड़वा डाले तब राजाकी माताके आग्रहसे ३ मंदिर ऐसे ही रहने दिये थे। यहां जैन ब्राह्मणका एक ही घर है। मैसूर सरकारसे कुछ जमीन मिली है जिसकी आय ८०) रु० आती है उसीसे जैसे तैसे खर्च चलता है। यात्री भी विशेष नहीं आते। यहां धर्मशालाकी खास आवश्यक्ता है। इस तीर्थका विशेष हाल श्रवणबेलगोलाके भट्टारकके पास है। हमारे साथवाले बाबू लक्ष्मीचंदजी 'दिगंबर जैन' और 'जैनमित्र' के ग्राहक हुए। रात्रिको यहांसे चलकर ता. २६ की सुबहको २८ माइल—

गोनेबीड—पहुंचे। मंदिर नहीं है। तालाब पर ठहरना पड़ता है। यहांके जंगलका दृश्य मनोहर है। यहांसे रात्रिको चलकर १२ माइल पर ता. २७ को **बनकल** पहुंचे और नदी पर मुकाम किया। यहां भी मंदिर आदि नहीं है। यहांसे रात्रिको चलकर २० माइल पर ता. २८ को **चारमाडी** आये। यहां भी मंदिर नहीं है। पोस्ट आफिस है। एक बंगलेमें ठहरे। यहांसे रात्रिको चले और सुबह होते२ ४ बजे निर्गल आये जिसमें मंदिर होनेसे ठहरकर दर्शन किये। यहां जैन ब्राह्मणके २ घर हैं श्री पार्श्वनाथजीकी श्याम प्रतिमा बिना लेखकी अति प्राचीन है। यहांसे चलकर ता. २९ की दुपहरको १० माइल—

धर्मस्थल—पहुंचे। जैन उपाध्यायके ३ घर और मंदिर २ हैं—उसमें एक थी चंद्रप्रभुका प्राचीन मंदिर ९०० वर्षका पुराना है। सिवाय मूलनायकके सभी प्रतिमाओंकी प्रक्षाल नहीं होती! यहां मनजय्या हेंगडे रहते हैं जो जैन हैं और सारे गांवके प्रबंधक हैं। इनके मकान पर दूसरा मंदिर है। यहां वैष्णव (शिव) मंदिर बड़ा है जिसकी मान्यता बहुत है और उसका प्रबंध हेंगडेके वंशज ही करते आये हैं। यहां जो कोई आते हैं उनको तीन दिन तक भोजना-दिसे सत्कार करते हैं। मंदिर वादिराज मधवाचार्यने करीब ७००–८०० वर्ष पर बंधाया था ऐसा कहते हैं। जिसको आवश्यक्ता हो उसको यहांसे वस्त्र धन भी मिलता है। जैन अजैन सभीको कुछ भी विना भेदभाव देते हैं। इस तरह प्रति वर्ष १ लाख रुपये दानमें खर्च होता है। यहां विना फीसका प्राथमिक स्कूल है और संस्कृत पाठशाला खुलनेवाली है। ५ जैन विद्यार्थियोंको स्कालरशिप भी भेजी जाती है। हेंगडेजी संस्कृत अच्छी जानते हैं और जैन शास्त्रके भी जानकार हैं। आप जैनधर्मका बहुत कुछ उपकार कर सक्ते हैं। आप 'जैनमित्र'के ग्राहक हुए। यहां मालूम हुआ कि बेंगलोरसे 'जिनमत प्रकाशिका' नामक मासिक कनडी भाषामें प्रकट होता है। सं० पद्मराज पंडित और मूल्य १॥) वार्षिक है। तथा 'धर्मशासन' नामक तामिल भाषाका मासिक मद्रासमें प्रकट होने लगा है। सं. आदि नैय्यर है। चंद्रनाथजीके मंदिरमें सभी प्रतिमाओंकी प्रक्षाल करानेको हेंगडेजीसे निवेदन किया। दिन भर यहां आनंदसे विता। रात्रिको जाते समय हेंगडेजीने हमको और पं. दीपचंदजीको एक २ पेपरकटर चंदनकी लकडीका दोनों ओर एकसी नकासीके कामका भेटमें दिया। यहांसे चलकर करीब १५ माइल पर ता. ३० को दुपहरको—

वेणूर—आये। ८ घर जैन उपाध्याय और ७ घर जैनियोंके हैं। पासके ग्रामोंमें और भी ५० घर जैनियोंके हैं वे भी आते जाते हैं। ठहरनेके लिये धर्मशाला है। प्राचीन ८ मंदिर हैं एकमें **श्री गोम्मटस्वामी**की प्रतिमा विशाल-मैदानमें २१ फीट ऊंची है। प्रति फाल्गुन सुदी १५ को मेला भरता है तब १००० आदमी एकत्र होते हैं। एक मंदिरमें श्यामवर्णकी कायोत्सर्ग २४ तीर्थंकरोंकी २४ प्रतिमाएं हैं। मंदिर ८०० वर्षका पुराना है। यहां भी सब प्रतिमाओंकी प्रक्षाल नहीं होती। यहांसे रात्रिको चलकर ता. १–५–१९ को सुबहको मूडबिद्री आये। (अपूर्ण)

षोडशकारण भावना।

दोहा–जे तुम षोडश भावना, भावहु चित हुलसाय।
पाप कटै, पातक नशै, तिर्थंकर[1] बंध लहाय॥

चौपाई।

पहिली भावना 'विशुद्धि' कहाई।
ताहि वेग अब धारो भाई॥
तत्वादि श्रद्धा चित्त धराई।
सेउ तो अनन्त सुख लहाई॥ १॥
दुसर 'विनयसम्पन्नता' आई।
सबकी विनय करो मन लाई॥
दर्श, ज्ञान, चरित्र, तप उपचारी।
विनय पंच प्रकार बताई॥ २॥
अहिंसादि व्रत पालन भाई।
'अनतिचार शील' व्रत गाई॥
कुशीलादि जु मन भाव छुड़ाई।

[1] तीर्थंकर

ताहि भाउ निर्दोष धराई ॥३॥
'आनन' को नाम 'ज्ञान' कहाई ।
तामें चित्त लगावन भाई ॥
'उपयोग' कहो सो मन ल्याई ।
सदा तत्व अभ्यास कराई ॥ ४ ॥
संसार 'विषय' भुजंग लखाई
अनुरागो धरम, चित्त लाई ॥
धर्मात्मामें नेह बढ़ाई ।
सेउ 'संवेग' तो सुख पाई ॥५॥
शक्ति समदान प्रीति लगाई ।
देउ सुपात्रे पुन्य लहाई ॥
भोजन, औषध, ज्ञानादि जोई ।
दान चार प्रकार जताई ॥ ६ ॥
इच्छा निरोधे सम्यक् लाई ।
सोई 'तप' दृढ़ जानो भाई ॥
बाह्य अभ्यंतर भेद लाई ।
सो दोय प्रकार बतलाई ॥ ७ ॥
मरण काल समीपे जब आई ।
तब शुद्ध भाव मनमें लाई ॥
त्यागे प्राण निःशल्य होई ।
सु 'साधु समाधि' जानो भाई ॥ ८ ॥
सेवा सम मंत्र और न कोई ।
मन इच्छित फलदाता सोई ॥
रोगी, धर्मस्नेही जु होई ।
तासु 'सेवा' करो मन लाई ॥ ९ ॥
सत दर्शन, ज्ञान, चारित्र लाई ।
जाने चारो घाति नशाई ॥
ता आतमको मनमें धारी ।
भक्ति कर सु 'अरहत भक्ति' गाई ॥ १० ॥
जो शिक्षा, दीक्षा, देवे ज्ञानी ।
अरु असते सत दृढ़ कराई ॥
तिन संघ पतिको सेवो भाई ।
'आचार्य भक्ति' सोइ गाई ॥ ११ ॥
पूजो, सेवो वे तत्वज्ञानी ।
जिन द्वादशांग मन भाई ॥
'बहु श्रुतिभक्ति' भावना सोई ।
तासु भावो जु करम नशाई ॥ १२ ॥
अब जिनवानी वेग मन लाई ।
पूजो भज; भव दुक्ख हराई ॥
नशावन हारी वसु करम जई ।
'प्रवचन भक्ति' भावना कई ॥ १३ ॥
निज पट् कर्तव्य हानि न लाई ।
सामायिक, वन्दनादि कराई ॥
भावना 'अवश्यका परिहाणी' ।
पुन्य बड़ावन हारि कहाई ॥ १४ ॥
मिथ्यामत फैलो चहुँ ओरी ।
अब जिन भानु प्रभा नशाई ॥
रत्नत्रय मुक्ति पथ प्रगटाई ।
'मार्ग प्रभावन' कर भाई ॥ १५ ॥
सदा कर जीवनकी भलाई ।
'वात्सल्य अंगहि' मन लाई ॥
सुश्रावक उत्तम जग मांही ।
तासु सम अवर नांहि कोई ॥ १६ ॥

सोरठा।

पूरन भई है सोय, सोलह कारण भावना।
मन्द जो मति होय, भावे जैनी भावना॥
पावे जैनी सोय, मोक्षसदन सु सुहावना।
अब शीघ्र ही होय, 'भारत' गुरी प्रवीना॥

कामताप्रसाद जैन,
अलीगंज (एटा)।

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बरं जैन-समाज-मानसम् ॥

वर्ष १२ वाँ.	वीर संवत् २४४५. आश्विन. विक्रम सं० १९७६.	अंक १२.



वीरनिर्वाण और वीर संवत।

जबसे करीब २५०० वर्ष पहले श्री पावापुरीमें हमारे अंतिम तीर्थंकर श्रीमहावीरस्वामीने आश्विन व. १४ (गु.)की पिछली रात्रिको निर्वाणपद प्राप्त किया था तबसे मात्र जैनोंमें ही नहीं परन्तु जैन अजैन सभी भाइयोंमें दीपावली पर्व धूमधामसे मनाया जाता है और यह सार्वजनिक पर्व हो गया है। जैनियोंमें इसी अमावास्याकी प्रभातको महावीर निर्वाण पूजन किया जाता है और निर्वाणलड्डू चढ़ाया जाता है उस वक्त निर्वाणकांड भाषा और गाथा तथा संक्षिप्त महावीरचरित्र भी सब भाइयों—बहिनोंको सुनानेकी परम आवश्यकता है तथा इसी दिन सुबह या रात्रिको एक जाहिर सभा करके महावीरके गुणानुवाद और उसपरसे हमें क्या२ शिक्षा लेनी चाहिये इस पर जाहिर व्याख्यान होनेकी भी आवश्यकता है। अब हरएक भाई चिट्ठी पत्री, दस्तावेज, हिसाब वही आदिमें सबसे प्रथम संवत लिखते हैं जिसमें आजकल ई. सन् लिखनेका तो सामान्य रिवाजसा पड़ गया है और इसके साथ २ विक्रम संवत और शालिवाहन शक भी कई भाई लिखते हैं परन्तु कई वर्षोंसे आन्दोलन करनेपर भी अब भी हमारे बहुतसे जैनी भाई **वीरनिर्वाण संवत** नहीं लिखते यह शोचनीय है। वीर निर्वाण संवत लिखनेसे हमारे धर्मका गौरव बढ़ता है और महावीर प्रभूको हुए कितने वर्ष हुए यह तुर्त मालूम होता है इस लिये हम सब भाइयोंको एकवार फिर याद दिलाते हैं कि अपनी वहियोंमें तथा चिट्ठी पत्रीमें आगामी वर्षमें श्री वीरनिर्वाण संवत २४४६ लिखना न भूले। वहीमें इस प्रकार लिखना चाहिये—वीरनिर्वाण सं. २४४६ विक्रम सं० १९७६ (मा. १९७७) कार्तिक शुक्ल १ वार शुक्र ता० २४—१०—१९। दूसरी एक सूचना यह भी है कि नयी वहीमें ॐ और स्वस्तिकके साथ २ श्रीऋषभ निर्वाण संवत भी वर्षमें एकवार अवश्य लिखना चाहिये। ऋषभ निर्वाण संवत इस प्रकार लिखे—श्री ऋषभ संवत ४१३४५२६३०३० २०८२०३१७७७४५१२१९१९९९९९

९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९९
९९९९९९९९९९९९९९९९९१०४४६।

* * *

वर्षांत।

श्री वीर सं० २४४६ पूर्ण हुआ और उसके साथ २ दिगंबर जैनका १२ वां वर्ष भी पूर्ण होता है। हमारी अस्वस्थता और भ्रमण आदिके कारणोंसे इस वर्षके अंक बराबर नियमित नहीं निकल सके हैं तौभी सभी अंक निकले गये हैं और सिर्फ ११) विशेष लेकर करीब ९००) पृष्ठका स्व० सेठ माणिकचंदजीका सचित्र जीवनचरित्र ग्राहकोंको भेंटमें भेजा गया है जिसको स्वाध्याय रूपसे अक्षरशः मननपूर्वक बांचनेके लिये हमारे ग्राहकोंको हम फिर याद दिलाते हैं क्योंकि इसमें ऐसी २ घटनाओंका वर्णन है कि जिसके पढ़नेसे अमीर और गरीब सभीको अनेक प्रकारकी शिक्षा मिल सकती है तथा जैनोंका बहुतसा इतिहास भी इससे मालूम पडता है। नवीन वर्षमें प्रति वर्षकी भांति करीब १२५ पृष्ठका सचित्र खास अंक निकाला जायगा परंतु प्रेसमें हमारी अनुपस्थितिसे अव्यवस्था और जाहिरमें प्रकट करनेसे हमें संकोच होता है ऐसे कौटुंबिक कारणोंसे वह अंक प्रकट करनेमें कुछ विलंब होगा तो भी जहां तक हो यह अंक और सचित्र तिथिदर्पण एक मासके भीतर प्रकट किया जायगा। नवीन वर्षमें कमसे कम तीन चार पुस्तकें उपहारमें दी जायगी और मूल्य तो १॥) ही लिया जायगा। यह भी लिखने हमें खेद होता है कि इस वर्षमें अनियमितादि कारणोंसे ग्राहक संख्या भी कुछ कम हुई है परन्तु आशा है कि नवीन वर्षमें वह बढ़ जायगी। नवीन वर्षमें अच्छे २ उपयोगी लेख प्रकट करनेका विशेष प्रबंध किया जा रहा है। ग्राहकगण धैर्य रक्खें।

* * *

सेठीजीका भेद खुल गया।

महासमरका अंत आया और सुलह भी हो गई तो भी ५॥ वर्षसे विना अपराध वेलौर (मद्रास) की जेलमें सड़ते हुए जैन समाजसेवक पं. **अर्जुनलालजी** सेठीका छुटकारा अभी तक नहीं होता। अभी तक हम यही जानते थे कि इसमें जैपुर सर्कारका ही हाथ है परन्तु अब खुल्लखुल्ला मालूम पड़ गया है कि इसमें खास हस्तक्षेप ब्रिटिश सर्कारका ही है और छोड़ना न छोड़ना उन्हींके हाथमें ही है क्योंकि अभी बड़ी व्यवस्थापक सभाकी गत बैठकमें ता. २५ सप्टेम्बरको सिमलामें बाबू अजितप्रसादजी लखनऊकी प्रेरणासे ऑ. मि. के. सी. रंगास्वामी अय्यंगरने सेठीजीके विषयमें कई प्रश्न पूछे थे जिसका उत्तर सर विलियम विन्सेंटने दिया है कि "सेठीजी प्रथम इन्दौरमें पकड़े गये, बादमें देहली भेजे गये और वहांसे जैपुर सर्कारको सौंप दिये गये। जैपुर सर्कारने पांच वर्ष कैदका हुक्म निकाला। बादमें जैपुरमें उनका रखना जैपुर सर्कारको नापसंद हुआ! जिससे ब्रिटिश सर्कारको सौंप दिया जिन्होंने पांच वर्ष हुए वेलौर (मद्रास)की जेलमें रक्खे हैं। उनकी साथ उनके लड़केको भी रहने दिया है, पुस्तकें पढ़नेको दी जाती हैं, पर

शिकायत नहीं है आदि....गवर्नमेंटने उनको पूछा है "यदि तुम जयपुर दर्बारकी विना प्रथम आज्ञाके जयपुर राज्यमें प्रवेश न करो और ब्रिटिश हकूमतमें रहनेसे तुम पर साधारण जांच रहेगी और सर्कारको संतोष हो जाने पर वह जांच भी हटा ली जायगी" ये शर्तें स्वीकार करो तो छोड देवें। सेठीजीने ये शर्तें स्वीकार कर ली हैं और अब उनको कहां और किसके पास रहने देना इसका संतोषप्रद निर्णय नहीं हुआ है आदि। "अब यह देखनेका है कि सेठीजीकी नीमच खून केस यातो देहली षड्यंत्र केसमें जुबानी तक नहीं ली गई है और न उनमें इनकी जिकर भी है। फिर सेठीजीका कोई अपराध भी नहीं बताया गया और न मामला चलाया गया है तथा सेठीजी सर्कारकी शर्तें भी स्वीकार करते हैं तब न जाने क्यों अब सर्कार इनको छोड़नेमें विलंब कर रही है?! शर्तें स्वीकार करनेको ९ माह हो चुके तो भी कहां और किसके पास रखना इसका निर्णय भी सर्कार नहीं कर सकी यह बड़ा भारी आश्चर्य है! गवर्नमेंटको पूर्ण अधिकार है कि ये इनको जब कभी जो कुछ चाहे कर सकती है और जांच भी रख सकती है तब तो एक लेश मात्र भी विलंब न करके उनको तुर्त छोड़ देने चाहिये और जैन समाजमें फैली हुई अशांतिको दूर करनी चाहिये। यह तो अब खुलंखुला मालूम होता है कि जैपुर सर्कारका अब इसमें कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। हमारे सहृदयोंका भी फर्ज है कि हरएक नगरसे एक २ तार नामदार वाइसरोय सिमलाको भेजें कि सेठीजीको शीघ्र मुक्त करो। इसी प्रकार चार पांच अग्रगण्य श्रीमानोंका एक डेप्यूटेशन भी ना० वायसरोयके पास जानेकी परमावश्यकता है। आशा है कि रा० ब० सुल्तानसिंहजी देहली, रा० सा० प्यारेलालजी, सेठ हुकमचंदजी आदि इसके लिये खास कोशिश करेंगे।

* * *

प्रांतिक सभाका अधिवेशन। कई जातीय सभाओंके वार्षिक अधिवेशन धड़ाधड़ हो रहे हैं और होनेवाले हैं परंतु हमारी बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभा और महासभाके अधिवेशनका निश्चय अभी तक नहीं हुआ है। महासभाका अधिवेशन तो रजिस्टर्ड स्थान मथुरामें अभी होते २ रह गया और आगे कहां और कब होगा उसका पता नहीं है यद्यपि नये महामंत्रीजी इसके लिये बराबर कोशिश कर रहे हैं। बंबई दि० जैन प्रांतिक सभाका अधिवेशन गजपंथामें तीन वार हो चुका। अब कहीं दूसरे स्थानपर ही होना चाहिये। कई वर्षोंसे गुजरातमें अधिवेशन नहीं हुआ है इसलिये अहमदाबाद, **तारंगाजी**, प्रांतिज, ईडर, **आबू**, आदि स्थानपर होनेकी आवश्यकता है अथवा दक्षिणमें भी अधिवेशन करनेकी आवश्यकता है। दक्षिणमें अधिवेशनके योग्य स्थान श्री **कुंथलगिरी**जी क्षेत्र है और वहां अधिवेशन होनेकी बहुत आवश्यकता है। यहां वार्षिक मेला मगसर मासमें होता है उसी मौकेपर ही

यहां अधिवेशन अच्छी सफलताके साथ हो सकेगा। अभी सोलापुरमें त्यागीजी ऐल्लक पन्नालालजीका केशलोच उत्सव होनेवाला है तब परंडा, भूम, आदिके भाई भी शामिल होंगे इसलिये आगामी अधिवेशन कुंथलगिरीमें करनेके लिये हमारे सोलापुरके भाइयोंको कोशिश करनेके लिये हम प्रेरणा करते हैं। तारंगाजीमें भी उत्सव होनेवाला है तो वहां भी अधिवेशन हो सकता है इसके लिये ईडरके भाई तथा खास वरके सेठ लल्लूभाई लक्ष्मीचंद कोशिश करेंगे ऐसी पूर्ण उम्मेद है।

*　　　*　　　*

દિગંબર જૈનોમાં ધાર્મિક તથા સંસ્કૃત શિક્ષણમાં જો કોઇ પ્રાંત પછાત હોય તો તે ગુજરાત પ્રાંતજ છે, કેમકે ગુજરાતમાંથી આજ સુધી એક પણ પંડિત તૈયાર થયો નથી કેમકે કોઇ પોતાના પુત્રોને કાશી, મોરેના, હસ્તીનાપુર બ્રહ્મચર્યાશ્રમ વગેરે વિદ્યાલયોમાં ભણવા મોકલતા નથી તેમજ ગુજરાતમાં તેવું કોઇ વિદ્યાલય પણ નથી જેથી પાઠશાળા માટે હિંદી પંડિતોજ રાખવા પડે

ગુજરાતમાં વિદ્યાલયની જરૂર.

રૂપે આપી શકાય. જો ઇડર રાયદેશ અને કાંઠાના ભાઇઓ એકત્ર મળી પ્રયાસ કરે તો એ માટે એક લાખ રૂપૈયાનું ફંડ થતાં વાર લાગે નહિ. હમણાંજ ઉજેડિયામાં એરાણ પ્રાંતિજના દશા હુમડ ભાઇઓની સભા ભરાનાર છે તો તે પ્રસંગે ઇડર, રાય દેશ અને કાંઠાના ભાઇઓને પણ આમંત્રણ કરી વિદ્યાલય ખોલવા સંબંધી ખટપટ કરવાને એના મંત્રી નેમચંદ ઉગરચંદ ગાંધીને અમે સૂચના કરીએ છિયે. બ્રહ્મચારી શિતલપ્રસાદજીના ઉપદેશ અને પ્રયત્નથી વાગડમાં વાંસવાડામાં તો ગત આસો સુદ १५ ને દિને રા. સા. વિજચંદજી દ્વારા મોટું વિદ્યાલય ખુલી ચુક્યું છે ને २६ વિદ્યાર્થી પણ દાખલ થઇ ચુકયા છે તો તેનું અનુકરણ શું અમારા ગુજરાતના ભાઇયો નહીં કરે ?

उदारताका परीचय–सिवनीसे घर पर जाते सेठ गंभीरमलजी पांड्या वर्धा ठहरे थे। वहां आपका अपूर्व स्वागत हुआ और आपने १०१) वर्धा वोर्डिंगमें धार्मिक शिक्षाके पंडितके लिये दिये तथा रायपुरको आप पधारे और वहां भी जैन बाल बोधिनी पाठशालाको तीन वर्ष तक ५) मासिक सहायता तथा १०) की पुस्तकें और मिठाई बांटी थी।

केसरगंज–(अजमेर)में वेदी प्रतिष्ठा होनेवाली है और वहांके भाइयोंका इरादा वहां बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाका वार्षिक उत्सव करानेका मालूम हुआ है।

દિગંબર જૈન હિતવર્ધક પ્રાંતિક સભાનો ११ મો વાર્ષિક મેળાવડો ઉજેડિયામાં પાટનાકુવાવાળા શા. રેવચંદ ખરેમરાભના પ્રમુખપણા નીચે કાર્તિક વદ २ પર ભરાનાર છે, તેમાં બોર્ડિંગ ... થવું હોય તેમજે ... મુનીલાલ ... પેથાપુરને તાબેદ ... કરવી. १५ વર્ષથી ... નહિ ...



जयजिनेंद्र (चित्र)—प्रकाशक, श्रीधर वामन नगरकर—नासिक। इसमें जिनेंद्र इस पवित्र शब्दमें भट्टारक, त्यागी, मुनि, ब्रह्मचारी आदिके २५ फोटो खूबीके साथ दिये हुए हैं। चित्र संग्रह करनेयोग्य और दर्शनीय है। मूल्य बड़ी साइज़ १) और छोटी साईझ आठ आने हैं।

औषधालयकी रिपोर्ट—श्री ओसवाल औषधालय अजमेरकी यह दो वर्षोंकी रिपोर्ट देखनेसे ज्ञात होता है कि दो वर्षोंमें ९२६८ रोगियोंने इसका लाभ लिया। ५०००) के स्थायी फंड और मासिक चंदेसे कार्य चलता है। खर्च १९२४≡) हुआ है।

जिनपथ रत्नावली—प्रकाशक—रावजी सखाराम दोशी, सोलापुर। इसमें दत्तात्रय भीमाजी रणदिवे कृत २० मराठी अच्छे पदोंका संग्रह है। प्रकाशकसे विना मूल्य मिलता है।

लावनी संग्रह—प्रकाशक, मूलचंद गुप्त, हिन्दी जैन ग्रंथ प्रभाकर कार्यालय, श्याम बाजार कलकत्ता। मूल्य ≈) यह संगीत जैन ग्रंथमालाका छठा ग्रंथ है। सातसे बार तकका सम्मिलित ग्रंथ भी प्रगट हुआ है।

जैनपथ प्रदर्शक—प्रकाशक, पद्मसिंह जैन मानपाडा, आगरा। यह प्रथम वर्षका सचित्र विशेषांक ८८ पृष्ठोंका है। जैन स्थानकवासी भाईयोंका पत्र होनेपर भी कई लेख सभी जैनियोंके पढ़ने योग्य है। मुखपृष्ठके चित्रमें वक्रके नामका अच्छा भाव दर्शाया है। कुल २० लेखोंमें जैन फिलोसफी, कर्मक्षेत्र, परहित साधन, जैन समाजपर एक दृष्टि आदि लेख पढ़ने योग्य है। कुल ८ चित्रोंमें लाला ननौमलजी एम० ए० जड़नका भी चित्र है।

दश धर्मामृत पान—प्रकाशक, महेंद्रप्रताप जैन, मानपाडा आगरा। मूल्य)॥ इसमें पं० इन्द्रलाल शास्त्री कृत दश धर्मोंपर उपदेशात्मक मनन है तथा बाबू जुगलकिशोर कृत 'मेरी भावना' भी प्रकट की गई है।

वैराग्य शतक—प्रकाशक जैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय—ब्यावर। मूल्य -) इसमें आचार्य गुणविजयजी (श्वे.) विरचित वैराग्य शतकका सिर्फ हिन्दी अनुवाद दिया गया है जो आत्मचिंतवनके लिये अवश्य योग्य पढ़ने है।

વ્યાયામશાળાના રિપોર્ટો—સોલાપુરની દોશી ગૌતમ નેમચંદ વ્યાયામશાળા તથા મારવાડી વ્યાયામશાળાના આ જુદા જુદા વાર્ષિક રિપોર્ટો છે જે જોતાં જણાય છે એ બંનેમાં ટૂંક ખર્ચમાં અતિ ઉત્તમ કાર્ય થાય છે. બંનેમાં દોશી હીરાચંદ મલુકચંદ કાકા ઓનરરી તરીક શીખવે છે. નિયમિત દેશી વ્યાયામ પદ્ધતિથી ઉત્તમ કસરતો શીખવાય છે તથા એવાં આસનો અને કસરતો કરાવાય છે કે જેથી શરીરનાં અનેક રોગો પણ સારા થઇ શકે છે. એવા કેટલાક રોગો સારા થયેલાના પણ એમાં દાખલાઓ છે. આપણી દરેક સંસ્થામાં આવીજ વ્યાયામશાળાની જરૂર છે. વ્યાયામશાળા સંબંધી ઉપયોગી સાહિત્ય, સાધન તથા સલાહ સર્વેને એ ભાઇ પુરાં પાડે છે. એમની આ નિસ્વાર્થ સેવા અતીવ

છે. સર્કસમાં થતી અનેક મોટી મોટી કસરતો પણ એઓ કરી શકે છે ને શીખવે પણ છે.

ઔષધાલયનો રિપોર્ટ—સખારામ નેમચંદ જૈન ઔષધાલય સોલાપુરનો આ બે વર્ષનો રિપોર્ટ જોતાં જણાય છે કે એમાં વિલાયતી થોડી અને બાકી દેશી દવા વપરાય છે. ૨૦૦૦૦) સખારામ શેઠે આપેલા છે જેથી કાર્ય ચાલે છે. ખર્ચ ૧૧૯૩ાા થયો હતો. અને ૨૫૭૩૬ રોગીઓએ બે વર્ષમાં લાભ લીધો હતો. પ્રકાશક મંત્રી છત્રરાજ ગૌતમચંદ દોશી છે, વળી એમાં સખારામ શેઠનો ફોટો પણ અપાયેલો છે.

મુનિ તિલકવિજયજી (શ્વે.) એ પનાર (નવસારી)ના જૈન બાંધવોમાં લગ્ન, મરણ, પર્યુષણ, સુતક વગેરે સંબંધી લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેનું એક પુસ્તક તથા એમણેજ ઉપદેશ આપીને ગાઢીયા વાસણના માછી મહાજનમાં લેખિત સુધારાઓ કરાવ્યા છે તેનું એક પુસ્તક એમ બે પુસ્તકો મળ્યાં છે.

વૈરાગ—પુ. ૨૦ મું૦ અં૦ ૯મો૦ વાર્ષિક મૂલ્ય ૩) આ પારસીઓને લગતું જુદું માસિક પત્ર છે અને નવસારીથી પ્રકટ થાય છે.

શ્રીજી જીવદયા કોન્ફરંસનો રિપોર્ટ—મુંબઇમાં જે 'જીવદયા જ્ઞાન પ્રસારક મંડળ' છે તેની તરફથી મુંબઇમાંજ ગત વર્ષમાં ત્રીજી વાર્ષિક સભા મોટા પાયા ઉપર મિ. એન મિસ્ટ્રી તથા જિનરાજદાસના પ્રમુખપદે થઇ હતી તેનો આ વિગતવાર રિપોર્ટ અંગ્રેજી ભાષામાં મોટી સાઇઝમાં અનેક ભાષણો તથા ૪ ચિત્રો સહિત છે તે પર મહોળો ખર્ચ કરવામાં આવેલો જણાય છે. એથી મોટા ખર્ચમાં પણ આવો રિપોર્ટ પ્રકટ થઇ શકે ખરો. આ સંસ્થાનું જીવદયાને લગતું કાર્ય અતીવ પ્રશંસનીય છે તેમ હાલમાં ગુજરાતી તથા અંગ્રેજી માસિક પણ પ્રકટ કરવા માંડ્યું છે.



उपदेशक-फिरानेके लिये हमारे श्वे० जैन भाइयोंमें अभी एक लाख रु. का फंड हो गया। ऐसा ही फंड दिगम्बर जैनीयोंमें कब होगा?

जिनवाणीकी सेवा-दानवीर सेठ माणिकचंदजीकी स्मृतिमें संस्कृत ग्रन्थमाला प्रकट होती है इसके लिये १००००) की आवश्यकता प्रकट की गई थी जिसमेंसे करीब ४०००) भरे गये हैं और अभी ही १०१) बांसवाड़ावाले खोडनिया थावरचंद पूनमचंद और १०१) सिं० पन्नालालजी अमरावतीने दिये हैं। १०१) से कम नहीं लिये जाते। धनिकोंको और सौ २ रु० भेजकर यह रकम पूरी कर देनी चाहिये। भेजनेका पता-नाथूराम प्रेमी, मंत्री, हीराबाग-बम्बई।

छः मास कैद और अपील-जैनसमाजसेवक ब्र० भगवानदीनजीको कानोड मजिस्ट्रेटने छः मासकी सादी कैदका दंड किया है जिस पर अपील हुई है। अपीलमें छूट जानेकी आशा है। बाबू अजितप्रसादजी इसके लिये भी जानसे कोशिश कर रहे हैं। बेचारे भगवानजी निरपराध मारे जाते हैं।

स्वास्थ्यलाभमें दान-सिंघई [illegible]जीने निरोगता लाभ होने पर २०००) का दान दिया है जिसमें ११००) पन्नाकी पाठशालाको दिये हैं। धन्यवाद!

जैन हितेच्छु—मुंबाइथी श्री वाडीलाल मोतीलाल शाह जणावे छे के 'जैन हितेच्छु' बंध पाडयुं नथी पण एना ४०० पानांनो मोटो अंक तैयार थवा आव्यो छे जे ८-१० दिवसमां प्रकट थशे माटे ग्राहकोए धीरज राखवी.

मफत मंगावी लो—'ज्ञानदीपक' पृ. ५४ अने पर्युषण पर्व अथवा पवित्र जीवननो परिचय पृ. ८० आ नामनां बे पुस्तको मात्र एक आनानी टीकीट बीडी नीचेने ठेकाणेथी मफत मंगावी शकाय छे—नजरअली एम मुखी, रेजी टाइप्स वर्क्स गधदेवी (वडोदरा स्टेट)

श्वे० जैन कोन्फरंस—का आगामी अधिवेशन सादड़ी (जोधपुर)में होना निश्चित हुआ है।

गोलापूर्व—जैन जातिकी भी सभा स्थापित हो गई। सभापति सिं० कुंदनमलजी और मंत्री बालचंदजी अर्जीनवीस—सागर हैं।

श्री खंडगिरी—उदयगिरी—की रक्षाके लिये और उसकी मरम्मतमें सर्कारको हस्तक्षेप न करनेके लिये कलकत्ता कमेटीने विहारके छोटे लाटको अर्ज की है।

अमरावती—में जैन नाइट स्कूल खुलना निश्चित हुआ है और शिक्षककी आवश्यक्ता है।

वर्धा—में बोर्डिंग, लायब्रेरी और मगनबाई कन्या पाठशालाका उत्सव सानंद होगया। कुछ २००)—३००) चंदा भी हुआ था।

बोर्डिंग स्थापन—बारासिवनीमें पाठशालाके साथ २ बोर्डिंग भी स्थापन हो गई। ९०००) का स्थाई फंड होगया और नवीन भवन भी बनेगा।

परवार सभा—के लिये एक उपदेशककी आवश्यकता है। वेतन ५०) मासिक तक। पता—सिं० कुंवरसेन मंत्री—सिवनी।

तिथिदर्पण मगालो—वीर सं० २४४६ का तिथिदर्पण प्रगट हो चुका है। विनामूल्य मगालो। पता—मुनीम मदामीलाल, जंवरीबाग—इन्दौर।

खुरई—के श्री० सेठ मोहनलालजीने स्या० महाविद्यालयको १००) प्रदान किये।

हिंसा बंद—मैहरमें सारदा मंदिरमें दशहराके दिन ४००० बकरोंका बलिदान प्रतिवर्ष होता था जिसको इस वर्ष हमेशके लिये महाराना व्रजनाथजू सरकारने बंद किया है और आज्ञा दी है कि यदि कोई बकराका बध करेगा तो ५) दंड और छः मास जेल होगी। यह उपदेशक पं० मौजीलालजी, त्यागी गोकुलप्रसादजी आदिके प्रयत्नका फल है।

वीरनिर्वाण—भूमि—श्री पावापुरीजीमें निर्वाणपूजन तथा रथयात्राका मेला कार्तिक कृ० अमावास्याको होगा।

बांसवाड़ामें विद्यालय और धर्मामृत वर्षा—गत आसोज सुद १५को बांसवाड़ामें वहांके दीवान मुंशी मिट्ठनलालजीके हस्तसे "सेठ चंपालाल विजयचंद बागर प्रांतीय विद्यालय और छात्रालय" बड़े समारोहके साथ खोला गया था। इस कार्यके उत्पादक ब्र० शीतलप्रसादजी खास उपस्थित हुए थे। खुलते ही बागीदौरा, आंजणा, अरथोणा, कालिंजरा, तलवाडा, नोगामा, डेडुका, परतापर, पारोदा, जेतमाल, और थोटोलके २६ विद्यार्थी दाखिल हुए हैं जिसमें ८ पेइड व १८ अनपेड हैं। पेइटसे भी सिर्फ ४) मासिक खर्च लिया जाता है। पं० कुंवरलालजी न्यायतीर्थ धर्माध्यापक

नियत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले सुप्री०की आवश्यकता है। अगले दिन दीवान साहबके सभापतित्वमें पब्लीक उपदेशक सभा हुई थी जिसमें ब्र० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था। इसमें दशहराके कारण आए हुए १५ राजपूत सरदार और ठाकोर उपस्थित थे। मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो जोशीले व्याख्यान हुए थे। अब वागड़प्रांतको इस विद्यालयका लाभ उठाना चाहिये। इसके लिए एक उपदेशकको वागड़के हरएक छोटे बड़े ग्राममें घुमाना चाहिये।

परवार सभा—का आगामी अधिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है।

सिवनी—में श्री० सेठ पूरनसावजीके पिताका स्मारक—गोपालसावजी जैन औषधालय खुल गया। व्यय १००) मासिक होगा। वैद्यका काम पं० नंदनलालजी इंदोरवाले करेंगे।

शोलापुर—में दशहरा पर गौतम नेमचंद व्यायामशालामें मर्दानी खेल हुए और वार्षिक परीक्षा ली गई थी तब त्यागी पन्नालालजीके हस्तसे सर्टिफिकट और रौप्य पदक दिये गये थे। त्यागीजी विद्यार्थियोंकी कसरतसे बहुत प्रसन्न हुए थे। यहां जैन गायन समाज है जिसके भजनादि सुन कर त्यागीजीने अच्छा रिमार्क लिखा है और भेजी छुट्टीमें गायन समाजको बाहर घुमानेका निश्चित हुआ है।

२५०००)का दान—सागरके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औषधालय और १००००) दीन मनुष्योंको मुट्ठी बांटनेके लिये दिये हैं।

सिवनीमें उत्सव और दो सभाएँ—सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रथोत्सव और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल दि० जैन सभाका उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांड्या कलकत्ताके सभापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषद्का अधिवेशन न्यायालंकार पं० मक्खनलालजीके सभापतित्वमें सफलतापूर्वक हो गया। इसमें बहुतसे खंडेलवाल तथा २०—२२ पंडितगण उपस्थित हुए थे। कई महत्वके प्रस्ताव पास हुये हैं और "जैनदर्शन" नामक मासिक पत्र शास्त्रीय परिषद्की ओरसे पं०वंशीधरजीके सम्पादकत्वमें प्रगट होना निश्चित हुआ है जिसके एक वर्षके घाटेके लिये ५००) की तजवीज हुई है तथा सभापति सेठ गंभीरमलजीने इसके लिये तीन वर्षतक १२५) वार्षिक देनेके स्वीकार किये तथा २१००) सभाको शिक्षाप्रचारके लिये और ५००) सभा सर्वको लिये दिये और ८००)—९००) सभामें भी भेर गये थे। खंडेलवालकुलभूषण पं० पन्नालालजीका इसमें विशेष प्रयास था और मंत्री जैनसुखजी छावड़ाने तो इतनी प्रशंसनीय सेवा की कि आपको १००) का मैडल सभाकी तरफसे देना निश्चित हुआ है। यहां दो ग्रुप फोटो भी लिये गये थे।

हमारी दक्षिण यात्रा।

(लेखक-मूलचन्द किसनदास कापड़िया)

(गतांकसे आगे)

मूडबिद्री-ता. १-५-१९ को पहुंचे। यह बड़ा भारी प्राचीन जैनस्थान है। सिद्धांत ग्रन्थ और अमूल्य प्रतिमाओंके लिये बहुत प्रसिद्ध है। यहांकी दि० जैन पाठशाला देखी। १५ वर्षसे स्थापित है। संस्कृत कानड़ी और इंग्लिशकी शिक्षा दी जाती है। ७० विद्यार्थी रहते हैं। अध्यापक ६ हैं जिसमें धर्माध्यापक पं० लोकनाथ शास्त्री उत्साही और परोपकारी हैं। प्रत्येक विद्यार्थीको धर्मशिक्षा जरूर देनेकी आवश्यकता है। छुट्टी होनेसे सिर्फ १६ विद्यार्थी आ पाये थे जिनकी परीक्षा ली। फल संतोषजनक रहा और ३)का इनाम बांटा गया। स्थायी फंड २८०००)का है और ३५०) वार्षिक सर्कारसे ग्रांट मिलती है। प्रोमेस बुककी आवश्यकता है। यहां जैनियोंके ५० घर हैं जिनमें २२ जैन उपाध्यायके हैं। यहां पंडिताचार्य भट्टारक चारुकीर्तिजीका निवास है। आप वृद्ध, अनुभवी और संस्कृत तथा धर्मशास्त्रके जानकार हैं। आपके मठमें परिग्रह बहुत है। आपने पाठशालाको १५०००) देनेको कहे थे वे अभीतक दिये नहीं सिर्फ १०००) ही दिये थे। पाठशालाका ट्रस्ट भी नहीं है। मंत्री पद्मनाभ सेटीको इस पर ख्याल करना चाहिये। यहां १८ छोटे बड़े प्राचीन मंदिर प्राचीन बनावटके हैं जिसमें चंद्रनाथ बस्ती (मंदिर) बहुत ही विशाल है। छहखंडमें जानेपर दर्शन होते हैं। श्री चंद्रप्रभुकी धातुकी खड्गासन विशाल और बहुत भव्य प्रतिमा विराजमान है। तीसरे मजलेपर वेदी है जिसमें स्फटिककी छोटी बड़ी ४० प्रतिमाएं हैं। इस मंदिरमें बहुत ऊंचा मानस्तंभ भी है। दूसरा बड़ा मंदिर गुरुबस्ती मंदिर है जिसमें श्री पार्श्वनाथ स्वामीकी कायोत्सर्ग प्राचीन प्रतिमा बिना लेखकी है। यह भी विशाल है और अभी इसका जीर्णोद्धार हो रहा है। इनमें ७ चौबीसी प्रतिमाएं (खड्गासन) श्याम, सफेद, धातु तथा समान वर्णके पाषाणकी अतीव दर्शनीय हैं। इसमें तो शक नहीं कि यह स्थान बड़ा प्राचीन है परंतु खेद है कि जहां देखा वहां प्रक्षालके नामका शून्य है! सिर्फ मूलनायककी प्रक्षाल और अभिषेक आरती बार बार होती है परंतु शेष सैकड़ों (सभी) प्रतिमाओंपर कभी पानीकी बूंद तक नहीं पड़ती तथा ऊपरसे धूल तक नहीं साफ की जाती इसका पारावार खेद होता है। जैन उपाध्यायोंका गुजारा मंदिरकी आयसे होता है और उनकी कमी भी नहीं है तथा प्रबंधक भट्टारकजी मौजूद हैं तौभी प्रक्षालका प्रबंध क्यों नहीं करते? भट्टारकजी यात्रियोंसे भंडारपट्टी लिखानेमें तो सिद्धहस्त हैं तब उनका प्रथम फर्ज और कर्तव्य है कि हरएक मंदिरमें हरएक प्रतिमाजीकी नित्य प्रक्षाल होनेका प्रबंध शीघ्र ही करें। मूलनायककी प्रक्षाल अभिषेक अपनेको नहीं करने देते यह रूढि भी अयोग्य है। इसी मंदिरमें एक तीजोरीमें सिद्धांत शास्त्र और अमूल्य प्रतिमाएं हैं जिनके दर्शनके लिये बहुत कोशिश करनी पड़ी। कमसे कम ५१) देनेपर ही भट्टारकजी सिद्धांत शास्त्र तथा प्रतिमाओंके दर्शन चांदीकी वेदीपर विराजमान करके कराते हैं। सामान्य रूपसे पांच दश रु० में भी प्रतिमाएं निकाल कर एक २ दिखला देते हैं। हमको तो बराबर देखना था इसलिये हमारे साथके ३० और हैदराबादके ६० आदमी आये थे उन सबने मिलकर ५१) देने स्वीकार किये तब ता० २ को दर्शन हुए। कुछ पूजनसामग्री और १२ तोला कपूर ले जाना पड़ा था। दुपहरको मंदिरके कमाड़ बंद कर दिये गये और मंडपमें सबको बिठाकर दर्शन कराये थे। भट्टारकजी चौकी पर बैठे थे और कपूर जलाते थे। भीतरके कमाड पर कुछ देर तक पड़दा लगाया था और पीछे खोला गया था। प्रथम ताड़पत्र पर लिखित सिद्धांत-शास्त्रका दर्शन कराया। कोई २ फीट लंबे पत्रे हैं। इसकी नकल देवनागरी और कानड़ी लिपिमें कागज पर हो चुकी

नियत हुए हैं और अंगरेजी संस्कृतके जाननेवाले मुंशी०की आवश्यकता है। अगले दिन दीवान साहबके सभापतित्वमें पब्लीक उपदेशक सभा हुई थी जिसमें ब्र० शीतलप्रसादजीने आत्मोन्नति पर बहुत ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था और धर्मके नाम पर जीवहिंसा न करनेका खास उपदेश दिया था। इसमें दशहराके कारण आए हुए १२ राजपूत सरदार और ठाकोर उपस्थित थे। मास्टर दीपचंदजी उपदेशक भी खास पधारे थे और आपके भी दो जोशीले व्याख्यान हुए थे। अब वागड़प्रांतको इस विद्यालयका लाभ उठाना चाहिये। इसके लिए एक उपदेशकको वागड़के हरएक छोटे बड़े गाममें घुमाना चाहिये।

परवार सभा–का आगामी अधिवेशन सिवनीमें होना निश्चित हुआ है।

सिवनी–में श्री० सेठ पूरनसावजीके पिताका स्मारक–गोपालसावजी जैन औषधालय खुल गया। व्यय (१००) मासिक होगा। वैद्यका

३५०००)का दान–सागरके मोदी धर्मचंदजीने २५०००) जैन सर्वहितैषी औषधालय और १००००) दीन मनुष्योंको मुट्ठी बांटनेके लिये दिये हैं।

सिवनीमें उत्सव और दो सभाएं।

सिवनीमें गत ता० २७ से २ तक रथोत्सव और नागपुर प्रांतीय खंडेलवाल दि० जैन सभाका उत्सव सेठ गंभीरमलजी पांड्या कलकत्ताके सभापतित्वमें और जैन शास्त्रीय परिषद्का अधिवेशन न्यायालंकार पं० मक्खनलाल[illegible] सभापतित्वमें सफलतापूर्वक हो गया। बहुतसे खंडेलवाल तथा २०–२१ पंडित उपस्थित हुए थे। कई महत्वके प्रस्ताव पास हुये हैं और "जिनदर्शन" नामक मासिक शास्त्रीय परिषदकी ओरसे पं०[illegible] सम्पादकत्वमें प्रगट होना निश्चित हुआ जिसके एक वर्षके घाटेके लिये ५[illegible] तजवीज हुई है तथा सभाको प्रतिमाओं[illegible] जीर्ण उद्धारका दफ्तर प्राप्त होता है।[illegible]

महाराजोंकी पोपलीला और पंचमकालकी ही है। रायु लक्ष्मीचंदजी आमाने पाठशा १ वर्षके लिये २) मासिक, तथा लाला [illegible]टमलजीने २) मासिक १ वर्षके लिये स्वीकार किये तथा सेठ गुलजमल अलीगढ़वालेसे [illegible] स्कोलरशीपमें दिये गये। यहांसे गामको ता० ५ को १० मील पर—

निर्माण सन् १४०२ में हुआ था ऐसा चरणपादुकाके पास लिखा है। इसकी स्थापना भैरवेंद्रके पुत्र वीर पाड्यने की थी ऐसा कहते हैं। यहां भट्टारक ललितकीर्ति रहते हैं। उम्र ६० वर्षकी है। जैन ब्राह्मण ८ और जैनके १० घर हैं। जैन पाठशाला बाबू देवेंद्रकुमार आरा द्वारा १२ वर्षसे स्थापित है। प्रबंधक नेमिराज पल्लीवाल हैं। खर्च भट्टारसे चलता है। ताड़पत्रके ४० तथा अन्य मिलकर सरस्वति भंडारमें ४०० ग्रन्थ हैं। २० विद्यार्थियोंमें ७ जैन हैं। स्थायी फंड ५०००) का है। एक मंदिरमें श्याम रत्नत्रयकी चौमुखी प्रतिमा खड्गासन, मनोज्ञ और प्राचीन है। मंदिरकी बनावट भी अच्छी है। पाठशालामें धार्मिक विशेष तथा संस्कृत शिक्षाकी आवश्यकता है। पांवको चोट होने पर भी सभी मंदिरोंके दर्शन आनंदसे किये तथा पहाड़ पर भी चढ़ आये जिससे दर्द होना तो दूर रहा परंतु पांव सीधा हो पाया और दर्द भी कम हो गया। लाला किरोडीलाल दि० जैन और जैनमित्रके ग्राहक हुए। यहांसे चलकर ता० ६ को १५ मील पर—

कारग-आये। दो प्राचीन मंदिरोंमें एक श्री नेमिनाथस्वामीका है और दूसरा तालाबके मध्यमें अति प्राचीन है जिसका जीर्णोद्धार हो रहा है। नावमें बैठकर जाना पड़ता है। यहां नमी, नेमि, पार्श्व, और महावीरकी चौमुख श्याम कायोत्सर्ग प्रतिमा बिना लेखकी प्राचीन हैं। जैन उपाध्यायके ३ घर हैं। देवेन्द्रकीर्ति भट्टारकका साम्राज्य है और सभी प्रतिमाओंकी प्रक्षाल नहीं होती। मंदिरके पास ठहरनेका सामान्य प्रबंध है। यहांसे शामको चलकर ता० ७ की सुबहको १८ मील पर—

आगुम्बी-आकर मुकाम किया। ५ मील तक घाटी खराब है। अनेक प्रकारकी वनस्पतियोंसे जंगल हराभरा होनेसे प्राकृतिक दृश्य अतीव मनोहर था। कालिमिरी, एलायची, काजू, अनास, फणस, सुपारी आदिके बहुतसे वृक्ष देखनेमें आते थे। हमारी गाड़ीका बैल निबल होनेसे हम लोगोंको बहुत चलना पड़ा था। यहांसे चलकर ता० ८को १८ मील पर—

तीर्थहल्ली-आकर मुकाम किया। बड़ा शहर है। सब चीज मिलती है। मंदिर नहीं है। यहांसे शामको चलकर फिर १८ मील पर ता० ९ को सुबेहको—

हूमच-आये। यहां पद्मावतीकी प्राचीन प्रतिमाकी बड़ी मान्यता है। १५) लेते हैं तब पद्मावतीका अभिषेक पूजन कर दिखाते हैं। इस तीर्थका नाम ही हूमच पद्मावती कहते हैं। कुल मंदिर ७ हैं और छोटी टेकरीपर एक पुराना प्राचीन मंदिर है जिसमें श्री बाहूबली स्वामीकी श्याम प्रतिमा विराजमान है। अस्वच्छता बहुत थी। टेकरीपर चढनेको मार्ग भी साफ नहीं था। बहुतसे मकोड़े व चींटी ही चींटी नजर आती थीं जिससे बहुत ही सम्हाल कर चढना पड़ा था। खेद है कि भट्टारकजी मार्ग तक नहीं बनवाते। दोको छोड़ कर पांच मंदिरोंमें कूड़ा करकट और गाय भैंसकी विष्टा ही विष्टा नजर आई थी। प्रक्षाल तो होती ही नहीं। दो तीन मंदिरमें मूलनायककी पूजा प्रक्षाल होती है। यहां ६० वर्षके वृद्ध भट्टारक देवेंद्रकीर्ति मोटे ताजे हैं। एक हाथी, घोड़े, टेबल, कुर्सी, छत्रीपलंग, हंडी, झूमर, बगीचा आदि परिग्रह गृहस्थीसे भी बढ़कर है। नाटक जैसे एक दो दरबार भी बना रखे हैं। भट्टारकके पट्टाभिषेक बार बार २ वर्षको [illegible] होता है और उसको ३६ वर्ष पूर्ण हुए थे। [illegible] तीसरा पट्टाभिषेक उत्सव जो कि ७ दिनमें होनेवाला था उसकी जोर शोरसे तैयारियां हो र[ही] थीं। मठके मंदिरमें चारों ओर रेशमी और जरीकी साड़ीएं ऐसी छा दी गई थी कि जानो बड़ी भारी दुकान ही लगी हो! भट्टारकजी अपने पास आटा, दाल, चावल, घी, तरकारी सब रखते हैं और यात्रियोंको आवश्यकतानुसार देते हैं जिसके पैसे नहीं मंगते परंतु श्रावक लोग विशेष मूल्य ही पीछेसे दे जाते हैं। वार्षिक आय भी अच्छी है। हाथी भी पलता है परंतु मंदिरोंका तो जीर्णावस्था और धूल गोबर ही स्थान २ पर नजर आते हैं। हम और पं० दीपचंदजीने भट्टारकजीसे

જેવો ચંચળ છે, આયુષ્ય વાયુએ એકઠાં કરેલાં વાદળાંના જળ જેવું ક્ષણ ભંગુર છે, પ્રાણીની યૌવન લાલસા ચંચળ છે, એમ માનીને ધૈર્ય અને સમાધિથી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય એવા ગોગમાં બુદ્ધિ પ્રેર અર્થાત્ સંસાર ત્યાગ કરી ઉત્કૃષ્ટ ધામમાં જવા બુદ્ધિવાન થા.

૬ મારેજ મને તે રસ્તો બતાવો કે જેથી હું સંસારની ઉપાધિથી બચું.

(જો કે મેં દુઃખના માર્યા વૈરાગ્ય લેવા માંડયો હતો છતાં થોડેક અંશે યુવાની વિકાર તો હતોજ.)

મહારાજ, મારા આગ્રહથી વિસ્મય પામ્યા ને વિચાર કરી કહેવા લાગ્યા કે-હજુ તું વૈરાગ્ય તરફ વળવાને પૂર્ણ લાયક થયો નથી, માટે પ્રથમ તું મારી પાસેથી ગૃહત્યાગી શ્રાવકનો ધર્મ સ્વીકાર કર ને મારી સાથે ચાલ. તું જેમ જૈન ધર્મમાં જાણકાર ને દૃઢતાવાળો થઈશ, તેમ તેમ ઉચ્ચ પદવી મેળવતો જઈશ, એવું કહી તેમણે મને શ્રાવકાચારમાંનો ગૃહત્યાગી શ્રાવકનો ધર્મ સમજાવ્યો ને મારી પાસે કેટલાક નિયમો પણ લેવડાવ્યા.

તેમના બતાવેલા રસ્તાને મેં માન્ય કર્યો ને તેમની સાથે ગૃહત્યાગી પંડિતના વેશથી ફરવા લાગ્યો. હું મહારાજ સાથે ઘણા ગામ ફર્યો ને મે માન પણ પ્રાપ્ત કર્યું.

૭ એક માસ થયા પછી હાગી રવાંરી દેખી આવી પહોંચી ત્યારે મારું મન ચકડોળે ચઢવા લાગ્યું ને મને મદન જ્વરે દુઃખ દેવા માંડયો કેમકે-મને મહારાજની સાથે શ્રાવકોને ઘેર પુષ્ટ અને સાત્વિક ખોરાક મળતો, તેમજ જુદી જુદી જાતની યુવાન-વૃદ્ધ-બાળા સ્ત્રીઓના સુવર્ણાવિંદના દર્શન થયા કરતાં હતાં? તેમાં પણ વળી મહારાજનો નવો પંડિત ને વળી સ્વરૂપવાન ને ચતુર એટલે તો પછી પૂછવુંજ શું! એટલે તો ઘણી ખરી શ્રાવિકાઓ જે ગુણસ્વરૂપની હતી તેનો મને જોવાના બહાનાથી કલાકોના કલાક સુધી મહારાજ પાસે બેસવા લાગી ને મહારાજથી મારી હકીકત પણ પૂછવા લાગી પરંતુ મહારાજ બહુજ જવાબ વાળતા.

પ્રિય પાઠકગણ, જ્યારે આમ મને રોજરોજ દિવસના રહેવાથી, ફરવાથી, પૌષ્ટિક આહાર લેવાથી મદનજ્વર સતાવા લાગ્યો. વિચારો શ્રીમત બની ગયા તેમાં પણ હું તો વળી તે સ્ત્રી પાત્રથીજ વૈરાગી ગૃહત્યાગી થયો છું તેમ મેં વિષયનો સ્વાદ પીધો છે, પણ જેઓ સંસારના તુચ્છ સુખનો આસ્વાદ લીધા સિવાય ૧૬ વર્ષ કે તેથી વધુ ઉમરે ગૃહ ત્યાગી બ્રહ્મચારી ભટ્ટારક ઇત્યાદિ થાય છે, તેમને તેમના હમેશના પૌષ્ટિક આહારથી અત્યંત સ્ત્રી સમાજમાં રહેવાથી કેમ વિષય સતાવતો નહિં હોય? શું તેઓ નપુંસક છે? શું તેઓએ પોતાની ઇંદ્રીનો નાશ કર્યો હશે? શું તેઓ ભેષ દવાથી શક્તિનો નાશ કરતા હશે? ના ના તેમ કંઈ નહિં. તેઓમાંથી સેંકડે પંચાવન જણાને તે તેથી પણ વધુને તે દુષ્ટ મદન સતાવતો હશે પણ તેમાંના થોડાક જણ મન મારી બેસી રહેતા હશે, બાકીના તમામ પોતાની દુષ્ટ વાસના પૂર્ણ કરતા હશેજ. એ તો નિસંદેહ છે કે તેઓ તે કાર્ય ગુપ્તપણે કરતા હશે ને નરકવાસનાનો મહાન દોષ બાંધતા હશે. અહા! કળીકાળ તારી અજબ બલિહારી છે.

એ પછી બેનાર હું ચારિત્રથી ભ્રષ્ટ થયો હતો અને આખરે મારું મન વૈરાગ્ય તરફ દૃઢ થયું જેથી તુર્તજ મેં નૈષ્ઠિક બ્રહ્મચારીનો વેષ ધારણ કીધો ને તે ક્રિયાઓ પાળવા લાગ્યો. [illegible] તેવી સ્થિતિમાં હું સુખે ધર્મસેવન કરી શકું છું. હાલમાં મને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ નથી. મારા [illegible] પ્રયાસે હું સમાજસેવા કરવા- [illegible] જેવા યુવાનોને મારા જેવાં સંકટોથી બચાવવા માગીશ [illegible] છું. મને મારો આત્મા પૂર્ણ રૂપથી સમજાય ગયો છે, જેથી મને હવે સંસારના ક્ષણિક સુખની લાલસા થતી નથી. વધારામાં હું પૌષ્ટિક ખોરાકનું સેવન કરું છું. છતાં મારું મન દુષ્ટ ઇંદ્રિય સુખ તરફ જતુંજ નથી. એ મારી દૃઢતાની પ્રત્યક્ષ નિશાની છે અને તેથી કરી ભવિષ્યમાં હું સુખેથી ધર્મ સાધન કરી આ દેહનું કલ્યાણ કરી શકીશ, એમ મને